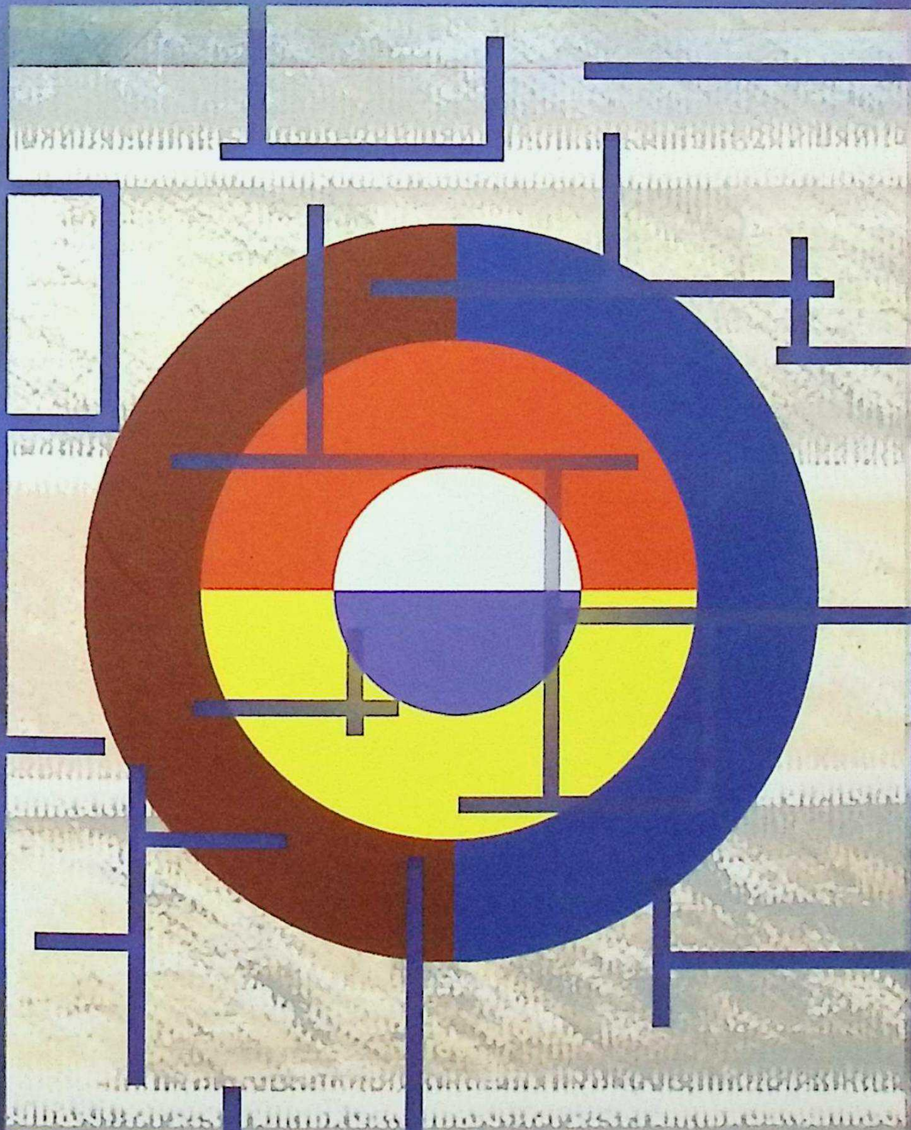
A254

रूपान्तरण

Rupantaran



नाटक विशेषाङ्क

८

अनुवादप्रधान हिन्दी, नेपाली, अङ्ग्रेजी वार्षिकी



रूपान्तरण

(अङ्क ८, वि.सं. २०७७; नाटक विशेषाङ्क)

Rupantaran

An Annual Literary Translation Magazine (Hindi, Nepali, English)

(Vol . 8, A. D. 2020)

प्रधान सम्पादक
प्रा.डा. उषा ठाकुर
(मोबाइल : ९८४९४६७८७०)

सम्पादक मण्डल
डा. रामदयाल राकेश
केशव सिग्देल
मुकेश मिश्र

कार्यकारी सम्पादक
महेश पौड्याल

प्रकाशक
नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान
कमलादी, काठमाडौं

मुद्रक
प्रज्ञा छापाखाना, कमलादी

आवरण सज्जा
वसन्तराज अज्ञात

कम्प्युटर सेटिङ
रञ्जन घिमिरे

मूल्य : रु. २५०/-

email
office@nepalacademy.org.np
वेब साइट
www. nepalacademy.org.np
फोन : ०१-४२३१७९१
फ्याक्स : ०१-४२२११७५
प्रधान सम्पादक (सम्पर्कका लागि)
इमेल : ushathakur51@gmail.com
फोन : ४२४१३०५

यस अङ्कमा

नेपाली साहित्य से हिंदी भाषा में अनुवाद

संस्कृत साहित्य से हिंदी भाषा में अनुवाद

भोजपुरी साहित्य से हिंदी भाषा में अनुवाद

नेपाल भाषा साहित्य से हिंदी भाषा में अनुवाद

थारु साहित्य से हिंदी भाषा में अनुवाद

अवधी साहित्य से हिंदी भाषा में अनुवाद

विदेशी साहित्यबाठ नेपाली भाषामा अनुवाद

English Translations from Nepali Literature

Interview

Criticism

Survey

Plays

सम्पादकीय

विश्व-साहित्य की कालजयी कृतियों का अनुवाद न केवल आज के समय की ज़रूरत है, अपितु भविष्य का सहज स्वाभाविक विकास का उपकरण भी है। वस्तुतः अनुवाद ही वह साधन है जिसके द्वारा हम विश्व के भिन्न-भिन्न भागों में रहने वाले मानव समूहों की संवेदनाओं में अपने सुखों-दुखों का साझा स्वरूप देख पाते हैं। और इस तरह पूर्वजों से प्राप्त विश्व-बंधुत्व के संकल्प को साकार रूप में उपलब्ध करते हैं। आज के विश्वव्यापीकरण के युग में अनुवाद का महत्त्व विश्व-साहित्य की अवधारणा को और भी व्यापक बनाने की दिशा में सर्वोपरि है। इसीलिए आज अनुवाद भाषिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक सेतु के रूप में विश्व में स्थापित होता जा रहा है, वैश्विक एकता को मज़बूत कर रहा है और विश्व-भाषाओं की साहित्यिक संपदा के संवर्द्धन एवं पोषण में अपना योगदान दे रहा है।

उल्लेखनीय है कि विश्व भाषिक-साहित्यिक उन्नति के लिए नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। विश्व साहित्य की अवधारणा को और भी व्यापक बनाने की दिशा में प्रतिष्ठान का अनुवाद विभाग सक्रिय है तथा नेपाली भाषा-साहित्य को विश्व रंगमंच पर प्रतिष्ठित करने के लिए कटिबद्ध है। अपनी अनेक विभागीय परियोजनाओं, अनुवाद विचार गोष्ठियों तथा अनूदित कृतियों के प्रकाशनों द्वारा विश्व साहित्यिक जगत में नेपाली साहित्य को प्रतिष्ठित करने के लिए अनुवाद विभाग सतत जागरूक और क्रियाशील है। हिंदी नेपाली और अंग्रेज़ी तीन भाषाओं में प्रकाशित 'रूपांतरण' अनुवाद पत्रिका इसी दिशा में एक ठोस प्रयास है।

हिंदी और अंग्रेज़ी संसार के व्यापक क्षेत्र में बोली जाने वाली समृद्ध और स्थाापित भाषाएँ हैं। अतः नेपाली साहित्य के विश्वव्यापीकरण के लिए इस पत्रिका के हिंदी और अंग्रेज़ी खंड में नेपाली साहित्य की उत्कृष्ट रचनाओं के अनुवाद हिंदी और अंग्रेज़ी भाषा में प्रस्तुत किए जाते हैं। एकेडमी के उद्देश्य अनुरूप नेपाली साहित्य की उन्नति के साथ ही संस्कृत साहित्य तथा नेपाल की मातृभाषा साहित्यों की भी उन्नति और प्रचार-प्रसार आवश्यक है। तदनुरूप अंग्रेज़ी और हिंदी खंड के अनुवादों के द्वारा इन साहित्यों की भी गरिमामाय प्रस्तुति रहती है। साथ ही नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान के उद्देश्य अनुरूप अनुवाद द्वारा विश्व साहित्य को नेपाली साहित्य जगत के समक्ष प्रस्तुत करना भी आवश्यक है ताकि नेपाली साहित्य जगत में विश्व साहित्य में प्रयुक्त भाव, भाषा-शैली और विचार-दर्शनों का ज्ञान हो। विगत अंकों के 'रूपांतरण' में जापान अमेरिका, ऑस्ट्रिया, चीन, इज़िप्ट, रूस, नॉर्वे, स्विट्ज़रलैंड, अजरबैजान, फ्रांस, पोलैंड, भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, स्पेन, आयरलैंड, इटली, स्वीडेन, मेक्सिको, युगोस्लाविया, हंगेरी, इराक, दक्षिण अफ्रिका, डेनमार्क, ग्रीस, नाइजीरिया, विलायत आदि की उत्कृष्ट साहित्यिक रचनाएँ नेपाली भाषा में अनूदित होकर प्रकाशित होती रही हैं।

इस अंक में भी अमेरिका, विलायत, रूस, चीन, भारत, फ्रांस आदि देशों के नाटकों का नेपाली भाषा में अनुवाद प्रस्तुत किए गए हैं जो हमें वैश्विक साहित्यिक प्रवृत्तियों का रसास्वादन करवाने में सक्षम हैं तथा हमारी लेखनी को ऊर्जा प्रदान करवाने में समर्थ और प्रेरणादायी हैं।

'रूपांतरण' का प्रस्तुत आठवाँ अंक 'नाटक विशेषांक' के रूप में प्रस्तुत करते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है।

प्रस्तुत अंक में साहित्य की विभिन्न विधाओं में नाटक विधा की सर्वोत्कृष्टता सिद्ध करने का प्रयास किया गया है। नाटक वास्तव में साहित्य की दृश्य विधा अंतर्गत पड़ने वाला जीवन का कलात्मक अनुकरण है। देश की राष्ट्रीयता, सामाजिकता, तथा सांस्कृतिकता का पात्रों के द्वारा भाषा और कार्य-

व्यापार के माध्यम से मंच पर अभिनयात्मक प्रस्तुति ही नाटक है जो साहित्य की अनेक विधाओं में सबसे अधिक प्रभावशाली है, मानव मन-मस्तिष्क को शीघ्र ही बहुत ही गहराई तक झंकृत कर देता है। साहित्य और कला का अद्‌भुत संगम नाटक की सफलता नाटककार की नाट्य लेखन कला पर मात्र निर्भर न रहकर अभिनयकर्ताओं की अभिनय कला, रंग शिल्पी की वास्तुकला तथा प्रस्तोता की प्रस्तुति कला पर भी निर्भर करता है।

प्रस्तुत अंक में विषय के आधार के रूप में पौराणिक नाटक, ऐतिहासिक नाटक, समस्या प्रधान नाटक, प्रतीकवादी नाटक, सामाजिक नाटक, सांस्कृतिक नाटक, मनोविश्लेषणपरक नाटक, आदर्शोन्मुख नाटक, तथा यथार्थवादी नाटक के सुंदर उदाहरण देख सकते हैं। इसी तरह आकार की दृष्टि से नाटक पूर्णांकी और एकाङ्की के रूप में तथा भाषा-शैली की दृष्टि से गद्यात्मक और पद्यात्मक नाटकों को भी यहाँ प्रस्तुत किया गया है। इस नाटक विशेषांक में नाटक संबंधी विभिन्न समीक्षात्मक शोधपरक लेख भी प्रस्तुत किए गए हैं जिनके द्वारा नेपाली नाटकों के विभिन्न रूप, विभिन्न मोड़, विभिन्न प्रवृत्तियों, नाटक के बारे में विभिन्न सोच, विभिन्न प्रयोग, रंगमंच की अवस्था, आवश्यकता और उपादेयता संबंधी अनेक सार्थक दृष्टिकोण प्रस्तुत किए गए हैं। प्राध्यापक जगत प्रसाद उपाध्याय 'प्रेक्षित' जी ने सम के 'अमर सिंह' नामक नाटक के बारे में जो विद्वत्तापूर्ण समीक्षा प्रस्तुत की है, वह अनुपम है। इसी तरह प्रा. डॉ. हेमनाथ पौडेल जी की गोपाल प्रसाद रिमाल के 'मसान नाटक में नारी चेतना' शीर्षक की समीक्षा उल्लेखनीय है।

नेपाली नाटक यात्रा में वि. सं. १९६३ में पहलमान सिंह स्वार का मौलिक नाटक 'अटल बहादुर' प्रकाशित होने के बाद नेपाली नाटक का पूर्व-आधुनिक काल प्रारंभ होता है। वि. सं. १९८६ में बालकृष्ण सम द्वारा लिखित 'मुटुको व्यथा' के प्रकाशन के बाद नेपाली नाटक में आधुनिकता का पूर्ण प्रवेश माना जाता है। अन्त्यानुप्रासहीन पद्यात्मक (अनुष्टुप छंद) शैली में दुखांत नाट्य लेखन आरंभ करने वाले नाट्य सम्राट सम नेपाली के सर्वोच्च नाट्य प्रतिभा हैं जिन्होंने लगभग पाँच दशकों से अधिक नाट्य साधना के क्रम में पद्यात्मक तथा गद्यात्मक शैली में विभिन्न नाट्य शिल्प का प्रयोग करते हुए दुखांत और सुखांत प्रकृति के चार दर्जन से भी अधिक नाटक लिखे। पूर्वीय और पशिचमी चिंतन तथा शैली का सुंदर संयोजनपूर्वक अपने विशिष्ट शिल्प में नाट्य सृजन करने वाले सम ने नाटक में सामाजिक, ऐतिहासिक, पौराणिक आदि विभिन्न विषय-वस्तु प्रस्तुत करने में सफल रहे हैं। सम के बाद नेपाली नाटक क्षेत्र में भीमनिधि तिवारी का उल्लेखनीय स्थान है। तिवारी भी सामाजिक सुधार चाहने वाले आदर्शोन्मुख यर्थावादी धारा के नाटककार थे।

गोपाल प्रसाद रिमाल के 'मसान' (वि. सं. २००३) से नेपाली नाटक के क्षेत्र में यथार्थवाद ने और अधिक सशक्त रूप में प्रवेश किया और एक नया युगांतर स्पष्ट रूप में दिख पड़ा। रिमाल द्वारा प्रवर्तित यथार्थवादी नाट्य धारा को गोविंद बहादुर गोठाले ने और विकसित रूप में प्रस्तुत किया, यद्यपि गोठाले के नाटकों में मनोविश्लेषणात्मक विषयों की भी सशक्त प्रस्तुति पाई जाती है। सम के बाद महान नाटककार के रूप में विजय मल्ल का नाम लिया जाता है। यथार्थवादी नाट्य धारा में अति यथार्थता तथा मनोविश्लेषणात्मकता द्वारा नवीन आयामों को प्रस्तुत करना विजय मल्ल के नाटकों की विशेषता रही है। परंपरावादी और प्रयोगवादी दोनों ही प्रकार के नाटक लिखने वाले विजय मल्ल ने परंपरा और प्रयोग के बीच सेतु बाँधने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। वि. सं. २०३० में ध्रुवचंद्र गौतम के नाटक 'त्यो एउटा कुरा' के प्रकाशन के बाद नेपाली नाटक में नव-आधुनिक युग प्रारंभ हुआ। नव-आधुनिक नेपाली नाटक की धारा को विभिन्न नाट्य प्रयोग के द्वारा व्यापक बनाने, उत्तर-आधुनिक नाट्य धारा को सचेत होकर महत्त्वपूण रूप में आगे बढ़ाने और दिशा-निर्देश प्रदान करने में मन बहादुर मुखिया, अशेष मल्ल, अभि

सुवेदी, मोहनराज शर्मा सरुभक्त, अविनाश श्रेष्ठ, गोपाल पराजुली, शिव अधिकारी, विप्लव ढकाल, गोपी सापकोटा, कृष्ण शाह यात्री, शारदा सुब्बा आदि नाटककारों का उल्लेख्य योगदान रहा है।

उल्लेखनीय है कि उत्तर-आधुनिक नाटकों में नए-नए विषय-वस्तुओं, नए शिल्पों, नए बिंबों, नए प्रतीकों, नई रंग प्रविधियों को स्थापित करने की कोशिश की गई है। आज के नाटकों में बहुल सांस्कृतिक चेतना, साइबर संस्कृति, अत्याधुनिक प्रविधि, पारंपरिक मूल्य एवं मान्यता के प्रति विद्रोह, अमूर्त शैली का प्रयोग तथा आप्रवासी चेतना को प्रस्तुत करके अत्याधुनिक नाटकों को सार्थकता देने का सुंदर प्रयास हुआ है। साथ ही समकालीन नेपाली रंगमंच की समस्याओं पर भी गंभीर विवेचना हुई है।

हमें यह बताते हुए संतोष हो रहा है कि नेपाली नाटक के विभिन्न रूप, शैली, कथ्य और प्रकृति को समेटते हुए इस नाटक विशेषांक में नेपाली नाट्य साहित्य के प्रमुख नाटककारों और नाटकों को प्रस्तुत किया गया है। साथ ही नाटक संबंधी विभिन्न पक्षों को समेटते हुए महत्त्वपूर्ण समीक्षात्मक लेख भी प्रस्तुत किए गए हैं। विश्व-साहित्य के प्रसिद्ध नाटकों को प्रस्तुत करने का हमारा उद्देश्य यह रहा है कि हम विभिन्न देशों में लिखे गए नाटकों के विषय-वस्तु, भाव शिल्प और प्रवृत्ति का ज्ञान हासिल कर सकें तथा तुलनात्मक रूप में उन नाटकों में अपने नाट्य साहित्य की स्थिति, दशा और दिशा का तटस्थ आकलन कर सकें।

हमें इस बात की खुशी है कि बालकृष्ण सम, गोपाल प्रसाद रिमाल, विजय मल्ल, रमेश विकल, गोविंद बहादुर मल्ल, प्रा. डॉ. अभि सुवेदी, डॉ. ध्रुवचंद्र गौतम, शार्दूल भट्टराई, पद्मरत्न तुलाधर जैसे नाट्य साहित्य के मूर्धन्य नाटककारों की प्रस्तुति के साथ ही इस अंक में युवा वर्ग को भी प्रोत्साहित करने का, उन्हें मार्गदर्शन करने का पुनीत कार्य हुआ है।

विद्वान नाटककार श्री अशेष मल्ल की अंतर्वार्ता इस अंक का प्रमुख आकर्षण है। मैथिली एकाङ्की के बारे में विद्वान समीक्षक प्रा. डॉ. गोविंदराज भट्टराई की महत्त्वपूर्ण समीक्षा अत्यंत सारगर्भित और खोजमूलक है। साथ ही विदुषी महिला साहित्यकारों की समीक्षाएँ भी उल्लेखनीय हैं।

इस अंक में समसामयिक नाट्य धारा के अत्यंत प्रतिभाशाली नाटककार प्रा. डॉ. अभि सुवेदी का प्रसिद्ध काव्य नाटक 'आरूका फूल का सपना' भी संगृहीत है। यह काव्य नाटक फागुन २०५७ में बांग्लादेश, ढाका के ऐतिहासिक नाट्य उत्सव में प्रस्तुत हुआ और इसे अंतरराष्ट्रीय ख्याति मिली। इतिहास और कल्पना, साहित्य और कला, संस्कृति के सुंदर समन्वय से परिपूर्ण इस काव्य नाटक में नए बिंबों और प्रतीकों के सहारे नारी मन के द्वंद्व, नारी मानसिकता और विद्रोह को अत्यंत कुशलता के साथ दर्शाया गया है। रंगमंच की सुंदर सजीव व्यवस्था और मानव हृदय का स्वाभाविक चित्रण इस काव्य नाटक की विशेषता है।

नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान के उद्देश्य के अनुसार नेपाली भाषा साहित्य की उन्नति के साथ ही संस्कृत साहित्य तथा नेपाल के मातृभाषा-साहित्यों की उन्नति भी उतनी ही आवश्यक है, तदनुरूप प्रस्तुत अंक में संस्कृत साहित्य अंतर्गत 'मालती माधव' नाटक की समीक्षा, मैथिली एकाङ्की के बारे में समीक्षा, नेपाल भाषा के प्राचीन नाटकों की समीक्षा तथा भोजपुरी, अवधी, थारू और नेपाल भाषा के नाटकों के अनुवाद प्रस्तुत किए गए हैं ताकि नेपाली भाषा-साहित्य के साथ इन साहित्यों का भी प्रचार-प्रसार हो सके।

स्मरणीय है कि अनुवाद विभाग अनेकानेक पुस्तकों का अनुवाद कार्य करके, अनुवाद संबंधी गोष्ठी कार्यक्रमों का आयोजन कर, अनुवाद पत्रिका 'रूपांतरण' का प्रकाशन करके तथा अनुवाद संबंधी अन्य कार्यों को पूर्णता प्रदान करके नेपाली साहित्य को अंतरराष्ट्रीय आँगन में प्रतिष्ठित करने के लिए कटिबद्ध है। इसी दिशा में 'अनुवादक परिचय कोश' (वि. सं. २०७५) का प्रकाशन अनुवाद अध्येताओं के लिए एक ऐतिहासिक कार्य हुआ। इसी कड़ी को जोड़ते हुए **'अनुवाद संदर्भ ग्रंथ'** तैयार किया गया जो

प्रकाशन के लिए प्रेस में भेजा जा चुका है। इसमें अनुवाद के विभिन्न पक्षों को लेकर अनुवाद विज्ञों के ३६ अनुसंधानात्मक लेख संगृहीत किए गए हैं। निश्चय ही यह बृहद् पुस्तक अनुवाद साहित्य के इतिहास में अत्यंत महत्त्वपूर्ण और उपयोगी सिद्ध होगी।

यह भी अत्यंत गर्व और संतोष का विषय है कि नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान ने 'नेपाल प्रज्ञा अनुवाद पुरस्कार' की स्थापना की है जो आगामी वर्ष से क्रियान्वित होगी।

संक्षेप में मैं यह कहना चाहूँगी कि इस नाटक विशेषांक में नेपाली नाटक का विकास क्रम, नाटकों का विविध स्वरूप, समकालीन नाट्य लेखन का परिदृश्य, प्रमुख नाटककार, नाटक के बारे में समीक्षाएँ तथा विश्व साहित्य के उत्कृष्ट कुछ नाटकों का समावेश हो सका। पत्रिका के सीमित कलेवर में और विस्तृत सामग्री समाविष्ट नहीं हो सकी। भविष्य में इस विषय पर और अधिक उपयोगी सामग्री लेकर हम उपस्थित हो सकेंगे, ऐसी आशा है। 'रूपांतरण' का यह अंक पाठकों के लिए पठनीय, ज्ञानमूलक और फलदायी होगी, ऐसा विश्वास है। प्रस्तुत अंक नेपाली नाट्य-साहित्य का सही प्रतिबंब विश्व के समक्ष उजागर करते हुए नेपाली साहित्य के विश्वव्यापीकरण में महनीय योगदान प्रदान कर सके, यही हमारा लक्ष्य है।

अनुवाद विभाग प्रा. डॉ. अभि सुवेदी जी तथा प्रा. डॉ. गोविंदराज भट्टराई जी के प्रति सदा आभारी है। इनके आवश्यक सुझाव तथा प्रोत्साहन अनुवाद विभाग के लिए बहुत बड़ा संबल है।

इस पत्रिका के लिए अपनी बहुमूल्य रचनाएँ प्रदान करने वाले विद्वान साहित्यकारों, अनुवादक साहित्यकारों के प्रति मैं हार्दिक आभार प्रकट करती हूँ।

मैं इस पत्रिका के प्रकाशन में सहयोग प्रदान करने वाले डॉ. रामदयाल राकेश जी, श्री केशव सिग्देल जी, श्री रोशन थापा 'नीरव' जी, श्री महेश पौड्याल जी, श्री मुकेश कुमार मिश्र जी को हार्दिक धन्यवाद देती हूँ। साथ ही प्रकाशन प्रक्रिया से संबंधित सभी भाई-बहनों को भी हार्दिक धन्यवाद देती हूँ। अग्रज साहित्यकारों, अनुवादक साहित्यकारों तथा सुधी पाठकों के सुझाव, सहयोग, सद्भावना की हमें अपेक्षा है।

अत्यंत दुख के साथ लिखना पड़ रहा है कि नेपाली वाङ्मय साहित्य के मूर्धन्य साहित्यकार, देश के गौरव, नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान के प्रकाश स्तंभ, राष्ट्र कवि श्रद्धेय माधव घिमिरे जी भौतिक रूप में अब हमारे बीच नहीं रहे किंतु अपनी बहुमूल्य कृतियों में वे सदा जीवित रहेंगे, हमारा पथ-प्रदर्शन करते रहेंगे।

यह मेरा परम सौभाग्य रहा है कि वि. सं. २०३६ साल से ही वे मुझे प्रेरणा और प्रोत्साहन देते रहे, मेरा मार्ग निर्देशन करते रहे। अनुवाद के क्षेत्र में उनसे प्राप्त उनके बहुमूल्य सुझाव मेरे लिए महत्त्वपूर्ण निधि हैं। उनकी दिवंगत पुण्यात्मा के प्रति इस अंक में हार्दिक पुष्पांजलि स्वरूप उनकी विश्वस्तरीय प्रसिद्ध रचना 'अश्वत्थामा' के बारे में मेरी एक समीक्षात्मक रचना अंग्रेज़ी अनुवाद के रूप में अर्पण करती हूँ– "*Aswatthama* and *Andha Yug* in their motifs to liberate this age from the catastrophe and terror of war."

नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान तथा अनुवाद विभाग की ओर से उन्हें शत-शत नमन, हार्दिक श्रद्धांजलि !!

प्रा. डॉ. उषा ठाकुर
प्रधान संपादक

समालोचना

समकालीन नेपाली नाटक में नारीवादी चिन्तन

डा. कान्छी महर्जन

लेख-सार

नारी-प्रधान, नारी-समस्यामूलक और नारी-केंद्रित नाट्य-रचनाएँ पहले से ही नेपाली नाट्यजगत् में होने के बावजूद सचेत रूप में नारीवादी सशक्त नाटकों की सृजना सन् १९६० के दशक के बाद नजर आती है। नाटककारों ने परंपरागत, पौराणिक और ऐतिहासिक आदि नारी पात्रों का मिथकीय प्रयोग करते हुए विनिर्माण का पीछा किया है। साथ ही पात्रों के चरित्र की पुनर्व्याख्या और पुनर्मूल्यांकन भी किया है। इसी क्रम में नाटककारों का नारीवादी चिंतन स्पष्ट हुआ है। प्रस्तुत लेख में निगमनात्मक शोधविधि का उपयोग किया गया है। नारीवादी चिंतन के सिद्धांतों को उपकरण के रूप में सामने रखकर आवश्यकतानुसार प्राथमिक और द्वितीय स्रोत से सामग्रियों का संकलन करके व्याख्यात्मक और विवरणात्मक ढंग से उसका व्यवस्थापन किया गया है। इस क्रम में समकालीन नेपाली नाटक का सीमा-निर्धारण करते हुए इस समयावधि में प्रकाशित नाटकों में नारीवादी चिंतन का अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत लेख के मूल निचोड़ के रूप में यह दिखाना है कि समकालीन नाटक में पितृसत्तात्मक सोच प्रतिविम्बित होने के बावजूद वैसे पुरुष तथा नारी पात्रों का भी प्रयोग नजर आता है जिसने समाज में नारीवादी चिंतन की रोशनी को फैलाया है।

शब्दकुंजी

कुंठा, नैराश्य, सह-अस्तित्व, सह-धर्मिणी, स्वतंत्रता।

विषय-परिचय

मनुष्य की अनुकरण-प्रवृत्ति के साथ नाटक का घनिष्ठ संवंध होता है। मनुष्य में अनुकरण करने की प्रवृत्ति जन्म से होती है। बच्चे जन्म के कुछ निश्चित समय के बाद अपने करीब के वस्तु, परिवार के सदस्यों का हाव-भाव और व्यवहार को गैर शाब्दिक रूप में अनुरकण करने की कोशिश करते हैं। बोली फूटने के बाद बच्चे अपनी ध्वनि से भी बोली का अनुकरण करने का प्रयास करते हैं या शाब्दिक अनुकरण करने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार मनुष्य समय के साथ-साथ सुनने, बोलने, कहने और लिखने के चार कौशल के साथ अभिनय के चारों प्रकार का अनुकरण कर सकते हैं। नाट्य समीक्षकों का मानना है कि मनुष्य की यही अनुकरणगत प्रवृत्ति नाटक का बीज है।

रूपक के भेद नाटक और नाटक से संबंधित रंगमंचीय परंपरा का इतिहास बहुत पुराना है। हरिसिद्धि पुराण के अनुसार नेपाल में सर्वप्रथम विक्रम संवत् ९४१ में 'हरिसिद्धि नाटक' लिखा गया था, और उसका मंचन भी किया गया था। नेपाली नाटक तथा रंगमंच के प्रादुर्भाव के बारे में जानने के लिए हमे मल्ल-काल (यात्री,२०६४, पृ.११-१२) में पहुंचना ही होगा। यद्यपि नेपाली नाटक और रंगमंच के प्रादुर्भाव में हमारे परंपरागत पूजा-आराधना, पर्व-त्यौहार, मेला आदि की विशेष भूमिका रही है। नेपाली रंगमंच की परंपरा और विकास में मल्लकाल की विशिष्ट भूमिका रही है। अनुवाद नाटक परंपरा की तत्कालीन अवस्था में मोतीराम भट्ट ने केवल नेपाली भाषा में नाटक प्रस्तुत करने की कोशिश भर की। निर्देशक और अभिनेता के रूप में रंगमंच पर उतरने वाले मोतीराम भट्ट लंबे समय तक जिंदा नहीं रहे। (यात्री, २०९६४, पृं १३) वि. सं. १९८६ साल में बालकृष्ण सम का 'मुटुको व्यथा' (हृदय की पीड़ा) शीर्षक नाटक के प्रकाशन से ही नेपाली नाट्य परंपरा में आधुनिक काल प्रारंभ होता है। 'मुटुको व्यथा' (हृदय की पीड़) युगांतकारी सामाजिक नाटक है और सम प्रथम आधुनिक नाटककार हैं। (पौडेल तथा अन्य, २०५९, पृ. ८३)। सम के बाद भीमनिधि तिवारी, गोपाल प्रसाद

रिमाल, विजय मल्ल, गोविंद बहादुर मल्ल, मोहनरज शर्मा, ध्रुवचंद्र गौतम, वासु शशी, मन बहादुर मुखिया, अशेष मल्ल और गोपाल पराजुली आदि अनेक नाटककारों ने आधुनिक नाटक को नई-नई प्रवृत्ति और नये-नये आयाम देते हुए आगे बढ़ाया।

समकालीन का अर्थ ही वर्तमान समय होता है। इससे अभी लिखा जानेवाला या वर्तमान समय के नेपाली नाटक का बोध होता है। वि.सं. २०३७ में ध्रुवचंद्र द्वारा स्वैरकल्पनामूलक नाट्य-प्रवृत्तियों को अपनाकर लिखा गया नाटक 'भष्मासुरको नलीहाड' (भष्मासुर का नली और हड्डी) के प्रकाशन से लेकर आज तक के समय को आधुनिक नेपाली नाटक का चौथा चरण अर्थात् समसामयिक नाट्यधारा माना जाता है। (यात्री, २०६४, पृ.२२) इसी चौथे चरण में लिखे गये नाटक ही समकालीन नेपाली नाटक हैं। इसी चरण में प्रकाशित कुछेक नाटकों में नजर आई नारीवादी प्रवृत्ति का विश्लेषण करने में यह लेख केंद्रित है।

समस्या-कथन

साहित्य का मतलब ही मानवीय अनुभूतिजन्य संवेगों की प्रस्तुति है। भाषा के माध्यम से प्रकट होने वाली साहित्य की अनेक विधाओं में नाटक विधा अभिनेयात्मक प्रदर्शनकारी कला है। ऐसा नहीं है कि मानव सभ्यता के साथ-साथ विकसित लोकसाहित्य और उसके बाद विकसित लिखित साहित्य लेखन में नारी के दुःख और पीडाओं की आवाज व्यक्त नहीं हुई है। लेकिन सशक्त रूप में नारीवादी चिंतन अपने सिद्धांत के साथ सन् १९६० में के दशक में उभर कर आया। उत्तरआधुनिकता के अनेक सिद्धांतों में नारीवादी चिंतन भी समाहित नजर आता है। साहित्य की अन्य विधाओं की तरह नेपाली नाटक में उत्तरआधुनिक नाट्यसृजनाएँ तीस के दशक में नजर आती हैं। यह लेख विशेष रूप से इस समस्या पर केंद्रित है कि समकालीन नाटक में प्रयोग हुए पात्र, उनके चारित्रिक विकास, उनकी अभिनेयात्मक भूमिका और संवाद आदि नाटकीय कार्य-व्यापार में नारीवादी चिंतन क्या और कैसे प्रयोग हुआ है ?

उद्देश्य-कथन

उपर्युक्त समस्या-कथन में उल्लिखित मूल समस्याओं के समाधान की खोज करना ही इसका उद्देश्य है। समकालीन नेपाली नाटक की सूची से प्रतिनिधि नाटकों का चयन करके नारीवादी चिंतन को रेखांकित करने के लिए निश्चित उपकरणों जैसे 'नारी अस्तित्व की तलाश','नारियों की वैयक्तिक अनुभूति, पीड़ा, कुंठा और भोगने की अभिव्यक्ति' 'मातृत्व चेतना', पितृसत्तात्मक सोच का विरोध और परंपरा के प्रति तीव्र विद्रोह उप-शीर्षक बनाना और उसके आधार पर ही नाटक में प्रयुक्त नारीवादी चिंचन का अध्ययन करना, इस लेख का उद्देश्य है।

अध्ययन की विधि

वि.सं २०३७ साल में ध्रुवचंद्र गौतम द्वारा स्वकल्पनात्मक प्रवृत्तियों को अपनाकर लिखे गए नाटक 'भष्मासुरको नलीहाड', के प्रकाशन के बाद से ही आधुनिक नेपाली नाटक के चौथा चरण अर्थात् सममसामयिक नाट्यधारा की शुरुआत होती है। इस समयाविधि में प्रकाशित समकालीन नेपाली नाटकों में से सुधा त्रिपाठी का एकाङ्की 'उनी फर्किदिनन कि ? (शायद वो नहीं लौटेंगे), अशेल मल्ल का 'कुमारी' (कुमारी) अभि सुवेदी का 'सान्दाजुको महाभारत' (छोटे भैया का महाभारत), कृष्ण शाह यात्री का क्रमशः 'नायिकाहरू' (नायिकायें) और 'शारदा' सुब्बा का 'यशोधरा' नाटक आदि को प्राथमिक स्रोत सामग्री के रूप में संकलित किया गया है। इन नाटक– एकांकियों के बारे में लिखे गए लेख-समीक्षाएँ अर्थात् द्वितीय स्रोत सामग्री के रूप में अध्ययन किया गया है। नारीवादी चिंतन से संबंधित सिद्धांतों के अध्ययन के लिए पुस्तकालयीय सामग्री का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार प्राथमिक और द्वितीय स्रोत से संकलित सामग्रियों की व्याख्या ऊपर उल्लेखित निश्चित उपकरणों के निर्माण और विविध शीर्षक तथा उपशीर्षक में विश्लेषण करने के बाद की गई है और इस लेख का अंतिम रूप दिया गया है।

समकालीन नेपाली नाटक

ध्रुवचंद गौतम का नाटक भष्मासुरको नलीहाड के प्रकाशन से आरंभ हुए नेपाली नाटक के चौथे चरण समसामयिक धारा में कलम चलानेवाले नाटककारों लंबी सूची है। इस लेख में २०७५ साल तक प्रकाशित कुछ प्रतिनिधि समकालीन नाटककारों के प्रतिनिधि नाटकों को ही अध्ययन के आधार के रूप में लिया गया है।

समकालीन नेपाली नाटक में नारीवादी चिंतन

विश्व साहित्य में सन् १९६० के दशक में चर्चा में आये 'उत्तरआधुनिकतावाद सिद्धांत' बहुलवादी सिद्धांत होने के कारण इसी में नारीवाद भी समाहित है। खुशी की बात है कि पिछले समय में विशेष चर्चा में रहा नारीवाद को नेपाल में गंभीरता के साथ अध्ययन का विषय बनाया जा रहा है। 'सामाजिक एवं राजनैतिक हक, हित और समानता आदि विविध संदर्भ के माध्यम से नारी के पक्ष में आवाज उठानेवाले दृष्टिकोण को नारीवाद कहते हैं। (लुइटेल, २०६७, पृ.४००) । नारीवादी लेखन केवल नारी लेखन में ही नहीं पाया जाता, बल्कि पुरुष साहित्यकारों के लेखन में भी पाया जाता है। गोपाल प्रसाद रिमाल के नाटक 'मसान' (२००२) में नारी को कमजोर और भोग्या तथा घर के चार दिवारी में रहनेवाली प्रवृत्ति के विपर्यास ही है। (एटम, २०७०, पृ १६९) यह नाटक उसी विपर्यास के रूप में लिखा गया है। समकालीन नेपाली नाटक में नारीवादी प्रवृत्ति मुख्य प्रवृत्ति के रूप में रेखांकित है। नारीवादी लेखन समाज में नारियों की क्या स्थिति है के बदले कैसी होनी चाहिए की भावना पर ज्यादा विश्वास रखता है। (बराल, २०७०, पृ १३०) नारीवादी समालोचक नारीवादी मान्यता की कसौटी पर कसकर साहित्यिक रचनाओं की समालोचना करते हैं।

साहित्य का विषय समाज और समाज में घटनेवाली घटनायें ही है। समाज में घटने वाले विषय प्रायः नारी और पुरुष से ही संबंधित होते हैं। अधिकांश समकालीन नाटककारों के नाटकों में नारियों के दुःख, पीड़ा, अवस्था, जटिलता और उनके द्वारा भोगी गई नियति ही विषय के रूप में रेखांकित हैं। लेकिन विषयवस्तु की प्रस्तुति में अंतर भी पाया जा सकता है। यहाँ निम्न नारीवादी मान्यता के आधार पर कुछ प्रतिनिधि समकालीन नाटकों की चर्चा की गई है।

नारी अस्तित्व की तलाश

शिक्षा और चेतना के अभाव के कारण नारियां पितृसत्तात्मक समाज के द्वारा सृजित सामाजिक, धार्मिक आदि कुप्रथा तथा विभेदों को अपनी नियति मानती आई थीं। उस समय बर्बरता और पाशविकता के शिकार नारियों की घटनायें आज भी इतिहास के पन्नों में सुरक्षित है। समय ने करवट बदल लिया है। समय के साथ-साथ शिक्षा में नारी की पहुंच और राजनीति में सहभागिता आदि के कारण आज नारीवादी भावना का विकास हुआ है।

नारीवादी नाटककार सुधा त्रिपाठी के एकाङ्की संग्रह 'निःश्वासका गुजुल्टाहरू' में संकलित 'उनी फर्कदिनन कि ! (शायद वो नहीं लौटेंगे) शीर्षक एकाङ्की में परिवार और प्रेम के नाम पर युगों-युगों से नारियों द्वारा दी जाने वाली अस्तित्व की तिलांजलि की परंपरा का विरोध किया गया है। 'नारी स्वतंत्रता चाहिये ! जाने क्या-क्या ! क्या चाहती हो तुम ? खुद तो बर्बाद हो ही गई हो, संसार की बेटी बहनों को भी बर्बाद करने चली हो ? नहीं चाहिये मुझे तुम्हारी राजनीति ! ' (पृ ६)। अमृत के इस संवाद में परंपरावादी पुरुष की सोच हावी नजर आती है। यहाँ यह अवस्था दिखाई देती है कि उस समय नारियां अपने मन की बात भी स्वतंत्रता पूर्वक नहीं कह पाती थीं। वे वही बोलती थीं, जो उनका परिवार चाहता था। वे उतना ही बोलती थीं, जितना उन्हें बोलने की आजादी दी गई थी। इससे ज्यादा कुछ नहीं। अगर कोई बंदिशें तोड़कर अपने मन की बात बोलती थीं, तो उसे प्रताड़ित किया जाता था। एक तरह से यह राजनीति है। समाज में ऐसी सोच है कि स्वतंत्रता और अस्तित्व की बात करने पर बेटी बहनें बिगड़ जाती हैं। अव पुरुषों को भी सोचना होगा कि ऐसी ही पुरुषवादी सोच के कारण परिवार विखंडित होने की स्थिति में पहुंच जाता है। बिंदु यह सोचकर कि अब जो खामोश रही तो युग थुकेगा, कहती है,' बल्कि आज ही मेरा नशा उतरा है। शायद आज मुझे कोई खामोश नहीं कर सकता। यदि मैं खामोश रही, तो मुझ पर युग थुकेगा। (पृ ७)।' बिंदु ने यह बात भलिभांति समझती है कि जब तब नारियां अपने अस्तित्व के प्रति सचेत नहीं होंगी, तक तक पुरुषवादी सोच का अंत नहीं होगा। इसीलिए वह प्रेम के लिए अपने अस्तित्व को दाव पर लगाने की खातिर कदापि तैयार नहीं है। वह समझ चुकी है,' बहुत देर हो गई है। अगर आज भी उसने सशक्त आवाज नहीं उठाती है, तो आने वाला समय उसे धिक्कारेगा।' इसलिए उसने आज अपने प्रत्येक पारिवारिक बातों और भूमिकाओं को ताख पर रखकर अपने अस्तित्व के विषय को ऊँच प्राथमिता में रखा है। इसी का परिणाम है कि वह आज निर्धक्क होकर बोल पा रही है। वह कहती है-

'क्योंकि तुम पितृसत्तात्मक समाज के आदमी

हो, तुम्हारे प्रत्येक आचरण को समाज ने मान्यता दे रखा है । तुम्हारी जात को भार्या चाहिए, सहधर्मिणी नहीं । तुम लोगों को खुद और अपनेपन को भुला देने वाली आश्रिता चाहिए । हमारा नींद से जगना तुम्हें पसंद नहीं । तुम लोग तो लाश को गले लगाकर जिंदा रहना चाहते हो । तुम लोग अपने ताल पर नाचने वाली कठपुतली चाहते हो । सच सहना तो मुश्किल ही होता है ।' (पृ ८)

सच्चाई यह है कि पुरुषवादी सोच वाला पुरुष नारी को अपने बराबर देख ही नहीं सकता । वे यही चाहते हैं कि चाहे जो भी हो जाय, नारियों को हाथ फैलाकर भीख ही माँगना चाहिए । वे बस यही चाहते हैं कि हर बात के लिए नारियां उनपर ही आश्रित रहें । क्योंकि ऐसा होने पर वे नारियों को आसानी से दबाकर रख सकते हैं । वे यही चाहते हैं कि उनकी जीवनसंगिनी कठपुतली की तरह संवेदना और भाव शून्य हो । वे केवल घर-परिवार के बारे में सोचे । वे यह चाहते हैं कि नारियां अपने बारे में कोई चिंतन न करें । पराश्रित के कारण ही नारियां हीनताभास का शिकार हो जाती हैं और हर तरह की हिंसा सहकर भी जिंदा रहती हैं । अमृत जैसे पुरुषवादी सोच वाला पात्र ऐसा ही सोचता है । लेकिन शिक्षित और नारी चेतनायुक्त पात्र बिंदु को ऐसी अवस्था में रहना मंजूर नहीं है । नारियों को केवल भोग्या मानने वाले और सहधर्मिणी नहीं समझने वाले पुरुषों को एक न एक दिन अपनी सोच पर पछताना ही ही होगा । क्योंकि जीवन केवल सह अस्तित्व के भाव से ही आगे बढ़ सकता है ।

नारियों की वैयक्तिक अनुभूति, पीड़ा, कुंठा और भुगतान की अभिव्यक्ति

समकालीन नाटकारों के नाटकों में नारियों की वैयक्तिक अनुभूति, पीड़ा, कुंठा और उनके भोग की अभिव्यक्ति पाई जाती है । परंपरागत लैंगिक भिन्नता, नारी से संबंधित अंधविश्वास, रीतिरिवाज और कुपरंपरा आदि के विरोध में नारी पात्रों की आवाज बुलंद हुई है ।

प्रथम सड़क नाटककार अशेष मल्लद्वारा लिखित *कुमारी* नाटक का शीर्षक ही स्त्रीलिंगी नामपद है । काठमाँडू में इन्द्रजात्रा दिखाने वाली संस्कृति से जोड़कर कुमारी को जीवित देवी के रूप में मानने की परंपरा आज भी जीवित है । और कुमारी को जीवित देवी के रूप में सम्मान भी दिया जाता है । एक निश्चित समय तक कुमारी रह सकने की परंपरा है । उसके बाद कुछ समय पहले तक जीवित देवी के रूप में श्रद्धा पानेवाली कुमारी का जीवन प्रायः सभी के लिए नेपथ्य बन जाता है । उसके बाद वह किसी की चर्चा का विषय भी नहीं बनी रहती । नाटककार ने कुमारी के उसी नेपथ्यीय पीड़ायुक्त जीवन को अपने नाटक की विषयवस्तु बनाया है । किसी समय कुमारी रह चुकी इन्द्रमाया इस परंपरागत सोच से बुरी तरह ग्रसित है कि अगर कुमारी ने जीवन में विवाह किया तो उसके पति की जल्द ही मृत्यु हो जाएगी । वह अपने ही कारण पति गंवा देने के भय से ग्रसित है । इसी भय के कारण वह मानसिक तनाव में है । 'पता नहीं, कब क्या हो जाय ? मुझे बहुत डर लग रहा है । अगर कुछ हो गया तो ? कल ही जाइये डॉक्टर के पास ? एक्स रे करा लेना होगा '(पृ २६) । कुमारी और औरत बनना दो विशेष अवस्थाएँ हैं । इन्द्रमाया ने कुमारी और औरत दोनों की जिंदगी जिया है । कुमारी होने के कारण ही वह एक सामान्य औरत बनकर जीवन निर्वाह नहीं कर सकी है । 'आपने कहा था न, देवी और औरत में अंतर होता है । मुझे पता चल गया, बहुत अंतर होता है । मैं पहले देवी थी, अभी औरत हूँ । माँ ! तुम तो हर समय औरत ही रही ... लेकिन मैं तो कुमारी भी हुई और अभी औरत भी हूँ । मैं एक इस जन्म में एक बार ही जन्मी । लेकिन हम देवियों को बार-बार मरना पड़ता है'(२९) । अवस्था में भिन्नता होने पर भूमिका में भी भिन्नता होती है । एक ही जन्म में देवी और सामान्य औरत का जीवन निर्वाह करना आकाश और पाताल जैसा है । कुमारी बनकर देवी के रूप में जीवनशैली अपनाकर जीने का अभ्यस्त हो चुकी इन्द्रमाया के औरत के रूप में जीवन निर्वाह करने के क्रम में वैयक्तिक भोगाई को इस नाटक में प्रस्तुत किया गया है । इस बात को उनके पति ने नहीं समझ पाया है । जिसके कारण इन्द्रमाया को यह डर है कि कहीं उसकी बेटी भी कुमारी न बन जाय । जबकि उसके पति रुद्रमान इस बात को खुशी के रूप में लेते हैं । इन्द्रमाया के मन में यह पीड़ा व्याप्त है कि जहाँ और जिस भी अवस्था में भी रहने के बावजूद नारियों को किसी न किसी परंपरा के बंधन कें बंधकर रहना ही पड़ता है । वह कहती है, -'सालों साल तक एक ही कमरे में कैद थी । मुक्त अवस्था में एक बार फिर कैद हो गई । हजारों साल की परंपरा भोगती आई हूँ । (पृ ३९)

नारी नाटककार वेद कुमारी न्यौपाने का विचलित

वर्तमान नाटक अपने शीर्षक के अनुरूप ही वर्तमान विचलित सामाजिक राजनीतिक अवस्था का प्रतिविम्ब उतारनेवाला जन जागरणमूलक नाटक है। इसमें नारी स्वतंत्रता और नारी सत्ता के भाव को सशक्त तरीके से उठाया गया है। 'अगर ऐसा है तो आप मेरी व्यक्तिगत बात भी सुनिए ... ! अब यदि आपने यह कहा कि मैं तुमसे शादी करूंगा, तो भी मैं आपसे शादी नहीं करूंगी, समझे ! ऐसे नैतिक और चरित्रहीन भ्रष्ट व्यक्ति से शादी करने से अच्छा है जीवन भर बिना शादी किए रहना ... '.(पृ ८९)। सत्ता में पहुंचकर फायदा लेनेवाले और अपने न्यूनतम कर्तव्य भी पूरा नहीं करने वाले रमेश को ज्योति ने अपेक्षा की है। इस नाटक में यह तथ्य उजागर हुआ है कि जिस पुरुष में केवल सत्ता और संपत्ति का नशा चढ़ा होता है, वह नारी की सत्ता का कोई महत्त्व नहीं देता है। परंपरागत रूप से देखा जाय तो शादी करने के लिए लड़की से ज्यादा लड़के की मजूरी होना अत्यावश्यक माना जाता है। किसी सामान के चयन करने जैसा लड़के लड़कियों का चयन के लिए आजाद थे। लेकिन यहाँ ज्योति अपने जीवनसाथी खुद चयन करने की स्वतंत्रता की वकालत की है। 'क्यों नहीं ? मृत्यु तो उसके पति की हुई है न, उसके मन की मृत्यु तो नहीं हुई है। उसका मन तो नहीं मरा है। वैसे भी उसकी माँग का सिंदूर ही तो मिटा है, उसका जीवन तो नहीं मिट गया ! और क्या वह अपने जीवन के बारे में सोच भी नहीं पायेगी ? इतना भी अधिकार नहीं है उसे (पृ. १२५) ? ७०-७५ सालों तक ग्रामीण जनजीवन में रहा हुआ विश्व के अपनी विधवा बहू की दूसरे लड़के से शादी कराने के क्रम में परंपरागत सोच से ग्रसित समाज को दिया गया जवाब है यह। ग्रामीण समाज में बहूओं को सताना और अनेक प्रकार से प्रताड़ित करना सामान्य माना जाता है। लेकिन वही अपनी बिधवा बहू को अपनी बेटी मानकर उसकी शादी करना तो निश्चित तौर पर एक क्रांतिकारी कदम है। ऐसा इस कारण हो पाया है, क्योंकि विश्व ने खुद पुरुष पात्र होने के बावजूद अपनी बहू की पीड़ा और अनुभूति को समझ अच्छी तरह से समझा है। उसने नारी की स्वतंत्र सत्ता को स्वीकार किया है।

ऐसा नहीं देखा गया है कि परंपरा सोच ने कभी भी नारी की स्वतंत्र सत्ता को स्वीकार किया हो। नारियों को हमेशा पुरुषों के साये में रखकर देखने की प्रवृत्ति का विश्लेषण करने से नेपाली समाज में पुरुषों का स्थान हमेशा नारियों से अव्वल है। समाज में बनाई गई परंपराएं केवल नारियों के लिए ही बनाई गई होती हैं। क्या पति की मृत्यु के बाद नारियों का जीवन भी खत्म हो जाता है ? क्या नारियों को खुश होने और जिंदा रहने का अधिकार नहीं है ? नारियों के द्वारा इन सवालों का जवाब ढूंढ़ना खुशी की बात है। लेकिन सच्चाई यह भी है कि आज इस दिशा में पुरुष भी अपनी आवाज बुलंद करने लगे हैं। यह कहना उचित नहीं होगा कि नारियों में नारी चेतना होती है, पुरुषों में नहीं। पुरुषों में भी नारीवादी सोच पाई जाने लगी है। अगर आज की बात की जाय, तो नारियों की स्वतंत्रता के लिए पुरुष भी आवाज बुलंद करने लगे हैं। यह सच है कि समसामयिक युग में नारियां अपनी क्षमता और अस्तित्व की चेतना के कारण बहुत से क्षेत्र में आगे बढ़ गई हैं। लेकिन इतना होने के बावजूद अभी भी लैंगिक विभेदपूर्ण सोच का पूरे तरीके से अंत नहीं हो पाया है। आज की हालत यह है कि आज नारी हिंसा का रूप परिवर्तित होकर आधुनिकीकृत हो गया है।

मातृत्व चेतना

मनुष्य में अनुभूतियां होती हैं। पुरुष और नारी की अलग-अलग अनुभूतियां हो सकती हैं। पुरुषों की सारी अनुभूतियों को नारियां अनुभूत कर सकती हैं, लेकिन नारियों की सारी अनुभूतियों को पुरुष अनुभूत नहीं कर सकता। नारियों की नितांत निजी अनुभूति के अंदर मातृत्व और वात्सल्य भाव आते हैं। यह कहा जा सकता है कि किसी भी नारी के पूर्ण होने में उसमें मातृत्व चेतना होना आवश्यक है। यही वह स्थिति है, जब कोई नारी पूर्ण होती है। मातृत्व शक्ति प्राकृतिक प्रदत शक्ति है। लेकिन इसे पितृसत्तात्मक समाज ने नारियों की कमजोरी के रूप में लिया है। जबकि एक माँ अपनी सृजना के लिए हर तरह का त्याग करने से पीछे नहीं होती। समसामयिक युग में नारी की मातृत्व-चेतना को कमजोरी के रूप के बदले नारी शक्ति के रूप में स्वीकार करने का संदर्भ प्रस्तुत होने लगा है।

नाटककार गणेश गौतम के *युगारम्भ* नाटक संग्रह में संगृहीत *युगारम्भ* में नारी संबंधित संकुचित सोच के समाप्ति के साथ नये युग का आरंभ होन का संकेत किया गया है। पुष्पा का यह तर्क सामने उभर कर आता है कि हो सकता है कि नारियों को मातृत्व सुख का लाभ लेने के लिए किसी पुरुष के साथ की

जरूरत हो, लेकित बच्चों की रेखदेख अकेली माँ ही कर सकती है ।' वह कहती है,-' गलत, माँ बनने के लिए किसी की पत्नी ही होना पड़े, यह जरूरी नहीं । मैंने गर्भधारण किया है, मैं इस बच्चे को जन्म दूंगी और माँ बनूंगी । यह मेरा प्राकृतिक अधिकार है । क्या एक नारी को माँ बनने के लिए किसी पुरुष के अधिन रहना और उसका जोर जबरजस्ती का वरण करना आवश्यक है ? मैं किसी की पत्नी, किसी की बहू और किसी की भाभी नहीं बनना चाहती । मैं तो सिर्फ माँ बनना चाहती हूँ और सृष्टि करना चाहती हूँ (पृ.८०) ।'

यहां पुष्पा ने कुंवारी माँ बनने का निर्णय किया है । विवाहिता सुरेंद्र ने पुष्पा के संबंध को एक गलती के रूप लिया है और बच्चे के एबोर्सन के माध्यम से सुधारने की पुरुषवादी सोच व्यक्त किया है । जबकि पुष्पा ने इसे किसी की पत्नी नहीं बनने और एक नारी के प्राकृतिक अधिकार का प्रयोग करके माँ बनने के माध्यम के रूप में लिया है । वह अपनी प्रत्येक गतिविधियों की जिम्मेदारी खुद लेना चाहती है, क्योंकि वह कमजोर बनना नहीं चाहती या वह उसे अपनी कमजोरी बनाकर समाज के सामने प्रस्तुत करना नहीं चाहती ।

नाटककार अभि सुवेदी का ***सान्दाजुको महाभारत*** (छोटे भैया का महाभारत) में विश्वेश्वर प्रसाद कोइराला की रचनाओं का विनिर्माण किया गया है । अदालत नाटक का मुख्य केंद्र है । नाटक कभी सान्दाजु (छोटे भैया) की कथा में प्रवेश करता है, तो कभी उसके उपन्यास में (रिजाल, २०७२) । अदालत से नाटक धीरे-से कोइराला द्वारा लिखित ***तीनघुम्ती*** (तीन मोड़) उपन्यास में प्रवेश कर जाता है । इन्द्रमाया अपने पति पितांबर से रमेश के साथ हुए यौन संबंध को वासनात्मक पूर्ति का खेल नहीं समझने का आग्रह करती है । वह समझाना चाहती है कि उसमें नारी की पूर्णता का अभीष्ट लक्ष्य है । वह पितांबर से यौन से ऊपर उठकर मातृत्व चेतना को समझने का आग्रह करते हुए कहती है,- 'यौन ! यौन ! क्या तुम यौन के चिंतन से कुछ पल के लिए ही सही, मुक्त नहीं हो सकते, पितांबर ' (पृ. २६) ? इन्द्रमाया ने नारियों को केवल यौन का चश्मा लगाकर देखने वाली परंपरा का विरोध किया है । पति-पत्नी का संबंध विश्वास की डोर से बंधा होता है । इन्द्रमाया का तर्क है कि जब वह विश्वास की डोर टूट जाती है, तो पति-पत्नी का संबंध भी टूट जाता है । उसे फिर सहजता से जोड़ा नहीं जा सकता । वह बेटी को रमेश के हवाले करने पर संबंध सुधर जाने की अवधारणा रखते हुए पितांबर से कहती है,-' जब मुझ पर ही तुम विश्वास नहीं करते, तो बेटी को अपने से दूर कर देने मात्र से हमारा संबंध कैसे सहज हो पाएगा (पृ. २७) ? पितांबर के द्वारा अपने और बेटी में किसी एक के चयन करने की स्थिति खड़ा करने पर वह मातृत्व के पक्ष में खड़ी होती है । वह बेटी को साथ में लेकर पितांबर को छोड़ निकल जाती है । उसका यह दृढ़ आत्मविश्वास है कि शिक्षित होने के कारण ही खुद और बेटी का जीवन सहजता के साथ जिया जा सकता है । उसकी इस सोच को निम्न संवाद पुष्टि करता है,-' हमारी चिंता मत करना । मैं थोड़ा बहुत शिक्षित हूँ । मैं अपना और अपनी बेटी का ख्याल चाहे जैसे भी हो रख सकती हूँ (पृ.२९) । मातृत्व अवस्था नारी की कमजोर और निरीह अवस्था बिल्कुल नहीं है, यह तो एक ऐसी अवस्था है, जिसमें पहुंचते ही नारियां खुद को संपूण होने के एहसास से भर जाती हैं । इतना ही नहीं, चाहे जिस प्रकार की विषम तथा प्रतिकूल परिस्थिति हो, उससे लड़ने की अद्भूत शक्ति प्राप्त करती हैं ।

पितृसत्तात्मक सोच और परंपरा का तीव्र विद्रोह

पुरुष प्रधान समाज में नारियां सदैव ही उपेक्षित और अधिकारविहीन रही हैं । आज इक्कसवीं सदी में भी नारियों को विविध सामाजिक, धार्मिक आदि प्रथा के नाम पर बर्बरता और पाशविकता का शिकार होना पड़ रहा है । अपने ऊपर लादी गई अनेक समाजिक कुप्रथाओं से चाहकर भी नारियां मुक्त नहीं होने के बावजदू उसके विरोध में अपनी आवाज बुलंद करती हुई नजर आ रही हैं ।

प्रथम संकेत नाटककार कृष्ण शाह यात्री का ***आदमी /आदमी*** शीर्षक नाटक संग्रह में संकलित ***क्रमशः नायिकायें*** में मिथकीय नारी पात्रों की उत्तर आधुनिक व्याख्या पाई जाती है । रामायण और महाभारत की तत्कालीन युगनायिकाओं को अत्याधुनिक युग की नायिका के रूप में रूपांतरित करते हुए पितृसत्तात्मक सोच और परंपरावादी विचार के प्रति विद्रोह का भाव व्यक्त हुआ है । समय के किसी कालखंड में अपना सतीत्व प्रमाणित करने के लिए दी गई अग्निपरीक्षा को सीता आज अपनी भूल मानती है । वह कहती है,- 'लेकिन आज मुझे लग रहा है, मैंने जो किया, वह मेरी मूर्खता थी । मेरा उस तरह से अग्नि में कूद जाना, उस युग की दास मनोवृत्ति

थी। क्या एक पुरुष की शंका मिटाने के लिए मुझे उस तरह जलाना उचित था (पृ. १८) ? नारियों को अपने सतीत्व की परीक्षा देने की ही स्थिति है। परीक्षा लेने वाले पुरुष ही होते हैं। लेकिन उन्हें कभी कोई परीक्षा नहीं देनी पड़ती। वे सदैव निष्कलंक होते हैं। समय के साथ परीक्षा लेने वा देने का तौर तरीका भले ही बदल गया हो, लेकिन वह क्रम आज भी जारी ही है। उसके विरोध में आजकी सीता खड़ी है। अब सीता राम की अग्निपरीक्षा लेना चाहती है। ये संवाद निश्चित तौर पर हमारे मस्तिष्क में एक झटका देने में सक्षम हैं। आज नायिकाएं नायकों के चरित्र पर सवाल करने में सक्षम हुई हैं। उन लोगों ने भले ही नायकों की तरह काम नहीं किया हो, लेकिन नायक बने रहने की परंपरा कभी नहीं बदली (पृ. १९)। यही आवाज उठाते हुए आज की सीता विरोध में खड़ी है। पुरुषवादी सोच को चुनौती देने के लिए पहले नारी स्वयं को अपने अस्तित्व को पहचानना आवश्यक दिखता है।

वि.सं. २०६५ में प्रकाशित शारदा सुब्बा का नाटक ***यशोधरा*** में नाटककार ने प्राचीन काल के सिद्धार्थ गौतम की पत्नी यशोधरा के ऐतिहासिक जीवन का पुनर्लेखन तथा पुनर्व्याखया करके उसे वर्तमान संदर्भ में विखडंति किया है। यशोधरा बुद्ध की पत्नी है। बुद्ध बोधिज्ञान प्राप्त करने हेतु अपनी पत्नी यशोधरा और पुत्र राहुल का त्याग करते हैं। आज यशोधरा अपनी भूमिका और चरित्र की पुनःर्व्याख्या और पुनः परिभाषा चाहती है। यशोधरा यह कहते हुए कि 'हां, मैं इतिहास के अक्षरों में गुम हुए रंगों की यशोधरा हूँ (पृ.४६) यह स्वीकार करती है कि प्राचीन काल में उसका स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था। यशोधरा विद्रोह करते हुए कहती है कि हमारा गर्भ युग और वंश की निरंतरता के लिए प्रयोग होता रहा है (पृ .४७)। वंश के लिए ही पुरुष नारी की कोख का प्रयोग करता आया है। नारियां अपना शरीर और अपनी कोख को अपने अधिकार में नहीं रख पाती हैं। उसमें आए नारीचेत के कारण ही वह सिद्धार्थ से जवाब माँगती है :

इसीलिये मैं सिद्धार्थ गौतम से पूछना चाहती हूँ, जीवन के मझधार में मुझे अकेले छोड़कर, ऐसे सहयात्रा में मुझे छोड़कर चले जाने का तुम्हारा निर्णय क्या सही है ? मेरे गर्भ को अपने वंश की निरंतरता के लिए प्रयोग करने का तुम्हारा साहस धृगटता है कि नहीं ? मेरे जीवन प्रति का खिलवाड़ है कि नहीं ? आज मुझे जवाब दो, सिद्धार्थ गौतम। (पृ. ४८)

सिद्धार्थ गौतम के द्वारा बोधिज्ञान प्राप्त करने के लिए अपनी पत्नी यशोधरा की उपेक्षा करना पुरुषवादी सोच की ही उपज है। यशोधरा में नारी चेत होने के कारण ही वह अपने अस्तित्व के प्रति सचेत है। यशोधरा का नारी अस्तित्व इस बात को स्वीकार नहीं कर सका है कि इतिहास में बुद्ध की महिमा तो अपार है लेकिन उसके त्याग की कोई चर्चा भी नहीं है। 'मेरी संतान के गौरव से शुरू होता है और पुरुष को आकाश में ले जाकर बिठा देता है, मगर मेरा अस्तित्व उसी पुरुष की छांव में विलय हो जाता है'(पृ. ५८)। यशोधरा ने उस परिस्थिति को व्यक्त किया है, जहाँ पुरुष की सफलता में नारियों का महत्त्वपूर्ण स्थान होने के बावजूद पुरुषवादी सोच के कारण नारी के महत्त्व को कम किया गया है। समय गतिशील है। यशोधरा का विचार है कि प्राचीन काल से वर्तमान समय तक की यात्रा में नारी की अवस्था ज्यों का त्यों है, केवल शैली में बदलाव आया है। यशोधरा यह कहते हुए कि 'सारे वैसे हैं, बिल्कुल वैसे। केवल समय ने करवट बदला है। इस समय के करवट बदलने में हमारे जीवन जीने की शैली में बदलाव आया है '(पृ. ५८), नारियों को सचेत होकर अपनी भूमिका के प्रति संवेदनशील होने की बात कही है।

निष्कर्ष

पिछले समय में पाश्चात्य जगत् में नजर आई नारीवादी प्रवृत्ति का प्रयोग समकालीन नेपाली नाटक के क्षेत्र में सशक्त रूप में हुआ है। तुलनात्मक दृष्टिकोण से महिला नाटकारों की उपस्थिति संख्यात्मक और गुणात्मक दोनों रूप में अच्छी है। इसे सकारात्मक रूप में लिया जा सकता है। ऐसा नहीं है कि पुरुष नाटककारों के नाटकों में नारीवादी अवधारणाएं सशक्त रूप में नहीं आई हैं। यथार्थवादी मान्यता है कि पुरुषों के द्वारा कभी भी अनुभूत नहीं कर सकने वाली भावना, अनुभूति, अनुभव, समस्या, कुंठा, विकार, यौन संबंधी संदर्भ, मातृत्व संबंधी विविध पक्षों आदि की सृजना महिलाओं के द्वारा ही अगर सृजित हो तो वह पुरुषों द्वारा सृजित रचनाओं से ज्यादा प्रमाणिक और वस्तुगत होगी। यह मान्यता स्थापित भी हो चुकी है। यद्यपि इस लेख में नारी तथा पुरुष दोनों नाटककारों के समकालीन नाटकों का अध्ययन किया गया है।

नारीवादी नाटककार सुधा त्रिपाठी का उनी फर्कदिनन् कि ! शीर्षक के एकाङ्की में बिंदु ने परिवार और प्रेम के नाम पर नारियों द्वारा युगों से अपने अस्तित्व की तिलांजलि देने वाली परंपरा का विरोध किया है। उसने यह भाव प्रकट किया है कि पति को पत्नी के सहअस्तित्व को स्वीकार करते हुए उसे सहधर्मिणी के रूप में मानना चाहिए। प्रथम सड़क नाटककार अशेष मल्ल द्वारा लिखित ***कुमारी*** नाटक में जीवित देवी के रूप में जीवन व्यतीत कर चुकी इन्द्रमाया की भयभीत मानसिकता को उसके पति के द्वारा अच्छी तरह से नहीं समझ पाने की अवस्था का चित्रण किया गया है। नारी नाटककार वेद कुमारी न्यौपाने का ***विचलित वर्तमान*** नाटक में शादी में लड़की से ज्यादा लड़के की स्वीकृति वाली परंपरा पर प्रश्नचिन्ह खड़ा किया गया है। इस बात पर जोड़ दिया गया है कि ७०-७५ साल के विश्व के माध्यम से स्वीकार की गई नारी की स्वतंत्र सत्ता सभी को स्वीकार करनी चाहिए। नाटककार गणेश गौतम के ***युगारम्भ*** में नारी संबंधी संकुचित सोच के अंत के साथ नया युग आरंभ होने की ओर संकेत किया गया है।

पुष्पा का यह तर्क सामने उभर कर आता है कि हो सकता है कि नारियों को मातृत्व सुख का लाभ लेने के लिए किसी पुरुष के साथ की जरूरत हो, लेकित बच्चों की रेखदेख अकेली माँ ही कर सकती है।' नाटककार अभि सुवेदी के नाटक ***सान्दाजुको महाभारत*** में इन्द्रमाया मातृत्व को ऊँच प्राथमिकता देने के कारण ही अपने पति पीतांबर का साथ छोड़कर चली जाती है। नाटककार कृष्ण शाह यात्री के नाटक ***क्रमशः नायिकाहरू*** में नायिकाओं के द्वारा नायकों की अग्निपरीक्षा लेने की स्थिति को दर्शाया गया है। शारदा सुब्बा के ***यशोधरा*** में नाटककार ने प्राचीनकाल के सिद्धार्थ की पत्नी यशोधरा केवल वंश निरंतरता के लिए नारी के गर्भ के प्रयोग किए जाने पर विरोध प्रकट करती है।

समकालीन नेपाली नाटककारों के नाटकों में नारीवादी चिंतन अंतर्गत पितृसत्तात्मक सोच का विरोध, नारियों की भोगाई, पीड़ा, असंतुष्टि, आक्रोश, आदि का प्रकटीकरण, नारी स्वतंत्रता की वकालत, सहअस्तित्व और समान अधिकार की खोज, अंधविश्वास का अस्वीकार, ऊंच मातृत्व चेतना आदि पाए जाते हैं। नारी की स्वतंत्र सत्ता की लड़ाई में वर्तमान समय में पुरुष नाटककारों ने भी सृर्जनात्मक रूप में साथ देते हुए दिखाई देते हैं।

अनुवादक : गोपाल अश्क

उत्तरआधुनिक नेपाली नाटक

कृष्ण शाह यात्री

वि.सं. १९६३ में पहलमान सिंह स्वार के मौलिक नाटक *अटलबहादुर* के प्रकाशन के साथ नेपाली नाटक के पूर्व आधुनिककाल की शुरुआत हुई है। इसके पहले मोतीराम भट्ट नाट्य-परंपरा की अगुवाई कर रहे थे। *अटलबहादुर* वि.सं १९६६ में ही दार्जिलिंग की गोरखा नेशनल थिएट्रिकल कंपनी के द्वारा धनबहादुर मुखिया के निर्देशन में मंचित होकर लोकप्रिय हो चुका था। जब यह नााटक लिखा जा रहा था, उस वक्त नेपाली नाटक और रंगमंच पर उर्दू, हिंदी और संस्कृत नाटकों का काफी हस्तक्षेप था। उस वक्त के अधिकांश नाटकों में साहित्यिक मूल्य और गरिमा की कमी होती थी। अकसर नाटकों का उद्देश्य मनोरंजन ही हुआ करता था। ऐसी स्थिति में *अटलबहादुर* का प्रकाशन और मंचन दोनों ही दृष्टिकोण से विशिष्ट था।

अटलबहादुर नाटक में आधुनिक नाटकों की कुछ विशेषताएं मिलती हैं। तत्कालीन समय के नाट्यलेखन का अभ्यास और प्रवृत्ति के अध्ययन से यह पता चलता है कि *अटलबहादुर* में चित्रित पात्र, घटना और प्रस्तुति आदि ने पूर्व आधुनिक नेपाली नाटक के अध्ययन के लिए कुछ आधार तैयार कर दिया है। लेकिन इसके कुछ दसक के बाद वालकृष्ण सम के नेपाली नाटक और रंगमंच पर उनकी सशक्त उपस्थिति के कारण स्वार की पूर्वआधुनिक नाट्यकला गुमनाम की अंधेरी गली में खो गई। उनको वस प्रथम मौलिक नेपाली नाटककार के पदवी से ही नवाजा गया।

अटलबहादुर के प्रकाशन के तेइस साल के बाद नेपाली साहित्य में बालकृष्ण सम का नाटक 'मुटुको व्यथा' (हृदय की व्यथा) नजर आया। वि.सं. १९८६ में 'मुटुको व्यथा' (हृदय की व्यथा) के प्रकाशन के वाद ही यह माना गया कि नेपाली नाटक में आधुनिकता का प्रवेश हो चुका है। अर्थात् 'मुटुको व्यथा' (हृदय की व्यथा) के प्रकाशन काल को ही आधार माना जाता है, और इसी के साथ ही नेपाली नाटक के आधुनिककाल की शुरुआत होती है। सम अपने समय का सचेत रंगकर्मी और कुशन नाट्य निर्देशक भी थे। सम के बाद विजय मल्ल ने 'कंकाल' (२०१८) और 'पत्थर की कथा' (२०२५) के माध्यम से स्वैरकाल्पनिक नाटक लिखकर आधुनिक नाटक में प्रयोगशीलता को आगे बढ़ाया। लेकिन नाटककार मल्ल परंपरागत संरचना और चिंतन से मुक्त नहीं हो सके। इसीलिए उनके ये नाटक नवआधुनिक नाटकों के अंतर्गत नहीं आते हैं। एक बात है, उनके नाटकों में असमान्य मनोविज्ञान दिखाई देता है।

आधुनिक नेपाली नाटक वि.सं २०६८ तक आते-आते अपना आठ दसक से भी लंबा इतिहास बना चुका है। आधुनिक नेपाली नाटक के इतिहास का अध्ययन करने पर विभिन्न नाट्यधारा और उपधाराओं का संदर्भ सवतः जुड़ा हुआ पाया जाता है। इस अवधि में सम के नेतृत्व में स्वच्छंदतावादी तथा आदर्शवादी नाट्यधारा, गोपाल प्रसाद रिमाल की अगुवाई में यथार्थवादी नाट्यधारा, गोविंद मल्ल गोठाले और विजय मल्ल की अग्रसरता में मनोविश्लेषणवादी नाट्यधाराओं में उल्लेख्यंपूर्ण सृजनाएं हुई हैं। नेपाली साहित्य में विभिन्न नाट्यधारा की उल्लेखनीय कृतियाँ हैं।

बालकृष्ण सम का नाटक 'मुटुको व्यथा' (हृदय की व्यथा) के चौवालिस वर्ष के वाद 'त्यो एउटा कुरा' (वह एक बात') से नेपाली आधुनिक नाटक ने करवट वदल डाली। अर्थात् वि.सं. २०३० में ध्रुवचंद्र गौतम का नाटक 'त्यो एउटा कुरा' (वह एक वात) के प्रकाशन के वाद नेपाली नाटक में नवआधुनिक युग शुरू हुआ। पूर्ववर्ती नाटककारों के नाटकों की तुलना में, घटना, पात्र और प्रस्तुति की दृष्टि से पृथक शैली में प्रस्तुत हुए 'त्यो एउटा कुरा' (वह एक वात) नाटक ने नेपाली नाटक में एक साथ नवीन सोच और भिन्न प्रयोग की

शुरुआत कर दी।

'त्यो एउटा कुरा' (वह एक बात) की मूलभूत नाट्यवस्तु 'खोज' है। इसका केंद्रीय पात्र रवि अनेक बातों की तलाश में रहता है। वह गहन बातों की तलाश और चिंतन के साथ-साथ जूता, मोजा और कोट जैसे सामान चीजों की तलाश में भी अपना समय व्यतीत करता है। उसकी निरर्थक और उपलब्धिहीन खोज ही इस नाटक का सार है।

सानु : पता नहीं ... हम क्या खोज रहे थे, इतने सालों से।

रवि : वो तो अब भी तलाश करेगे, तब तक तलाश करेंगे, जब तक उसकी मिलने की आशा बनी है, शायद वही वह चीज है, जिसे कितने घर, आदमी, पति-पत्नी खोजकर थक चुके हैं, खोजते रहे हैं, थकते रहे हैं, खोज रहे हैं, थक रहे हैं, वही जिसका नाम हमें मालूम नहीं है या वह एक ऐसी बात है जिसे (कुछ देर मौन रहने के बाद) अरे छोड़ो, हो गया। (त्यो एउटा कुरा, पृ. ११२)

'त्यो एउटा कुरामा' (वह एक बात) में बातें होती हैं। मगर काम जहाँ का तहां ही रहता है। घटना का महत्त्व नहीं दिया गया है। यह विसंगत और प्रतीकात्मक नाटक है। इस नाटक में कथानक गौण है और चरित्र ज्यादा हावी है। नाटक का सार-तत्त्व निरर्थकता, निःसारता और शून्यता के साथ-साथ अतंतकाल तक की प्रतीक्षा में केंद्रित है। इन आधारों ने भी इस नाटक को नवआधुनिक नाटक की श्रेणी में खड़ा किया है। इस नाटक में 'सिरीफस की कथा' और वेटिंग फॉर गोदो' का प्रभाव पाया जाता है।

धुवचंद्र के द्वारा शुरू की गई नवआधुनिक नेपाली नाटक की धारा को विभिन्न नाट्य-प्रयोग के मार्फत विस्तार देने का काम मनबहादुर मुखिया, अशेष मल्ल, मोहनराज शर्मा, सरूभक्त,अविनाश श्रेष्ठ, गोपाल पराजुली, शिव अधिकारी, शार्दुल भट्टराई और राजव आदि नाटककारों ने किया। इन नाटककारों के नाटकों में प्रयोग और नवआधुनिकता पर्याप्त मात्रा में मिलती है। लेकिन लेखन शैली में परंपरा का निवार्ह करने के कारण इन नाटककारों के नाटकों में उत्तरआधुनिकता नहीं मिलती है। इन नाटकों में पूर्ववर्ती नाटककारों द्वारा स्थापित मर्यादा और उनके जीवंत तत्त्व की स्वीकृति और नई मर्यादा की संभावनाओं के विकास करने का प्रयास पाया जाता है।

उत्तरआधुनिक नेपाली नाटक

नेपाली साहित्य में चालीस के दशक के आरंभ से उत्तरआधुनिकता पर विचार विमर्श होने लगा था। तीस के दशक में ही साहित्य की अनेक विधाओं की तरह नाटक में भी उत्तरआधुनिक नाट्य की सृर्जनाएं नजर आती हैं। नेपाल के परिप्रेक्ष में उत्तरआधुनिकता की मान्यताओं में विविधता नजर आती है। उत्तरआधुनिकता को समयावधि, प्रवृत्ति या प्रभाव मानने के संबंध में विवाद होने के बावजूद, इसकी पृथक अवधारणा के कारण एक वाद के रूप में स्वीकार किया गया है। यह वाद का आकार ले चुकी है। उत्तरआधुनिकता बहुल केंद्र को स्वीकार करती है, अर्थात् किसी एक केंद्र का खंडन करती है। इस अर्थ में यह कहा जा सकता है कि उत्तरआधुकितावाद विश्व साहित्य में नजर आई बहुलवादी प्रवृत्ति है। उत्तरआधुनिकता का बहुलवादी आवरण होने के कारण इसके अंतर्गत अनेक सिद्धांत समाहित नजर आते हैं।

नेपाली नाटक में उत्तरआधुनिक कार्य प्रशस्त हुए हैं। लेकिन उनका सूक्ष्म अध्ययन और विश्लेषण बहुत कम हुआ है। यहाँ उत्तरआधुनिक नेपाली नाटक के संदर्भ, पृष्ठभूमि, चर्चा और विश्लेषण पर केंद्रित होने का प्रयास किया गया है।

नेपाली नाटक में पचास के दशक से ही समसामयिक नाट्यधारा को नये ढंग से अध्ययन करने की आवश्यकता है। पचास के दशक के बाद के नेपाली नाटक, लेखन-शैली, प्रवृत्ति और प्रयोग की दृष्टि से काफी भिन्न है। इस दशक के आरंभ से ही नाटकों में नयां मोड़ दिखाई देता है, जिसे नाट्यकर्मी और समालोचकों ने परंपरा से हटकर एक भिन्न प्रकार की नाट्यधारा अर्थात् उत्तरआधुनिक नाट्यधारा कहना शुरू कर दिया है। बहुसांस्कृतिक परिपेक्ष, सीमाँतीकृत वर्ग और समुदाय को मूल धार में लाने का प्रयत्न, विधाभाजन, विनिर्माण, पात्र प्रतिक्रिया सिद्धांत का उपभोग आदि पचास के दशक के बाद की उत्तरआधुनिक नेपाली नाट्यधारा की मुख्य प्रवृत्तियां हैं। समालोचकों का यह मत है कि उत्तरआधुनिक नाट्यधारा को सचेत और

सुविचारित तरीके से आगे बढ़ाने में अशेष मल्ल, मोहनराज शर्मा, सरूभक्त, अविनाश श्रेष्ठ, अभि सुवेदी, विप्लव ढकाल, गोपी सापकोटा, कृष्ण शाह यात्री, शारदा सुब्बा और श्रवण मुकारुंग आदि नाटककारों की प्रयोगवादी नाट्यकृतियों की अहम भूमिका है।

इन नाटककारों के नाटकों में पूर्व स्थापित नाट्य-मान्यताओं का खंडन और निलंबन करने का कार्य दिखाई देता है, जिसे उत्तर प्रयोग तक कहा जाता है। स्थापित अवधारणा को पुन: परीक्षण के माध्यम से सत्य के नये आयाम का उद्घाटन करने का कार्य ही प्रयोग है। इसे इस रूप में समझा जासकता है कि यह नेपाली नाटक और रंगमंच के क्षेत्र में प्रयोगशीलता की नवीनत धारणा सहित की नाट्यसृजना या मंचन है। उत्तरआधुनिक नेपाली नाटक में एक मान्यता को बहुल मान्यता में रूपांतरण करने का अभ्यास भी हुआ है। उत्तरआधुनिक नाटक के अध्ययनोपरांत यह पता चलता है कि इनमें हुए प्रयोगों से स्थापित रूढ़िवादी मान्यता का ही मंचन हुआ है। उत्तरआधुनिक नेपाली नाटक में हुए विभिन्न प्रयोग के आधार पर उत्तरआधुनिक नाट्यधारा को इस रूप में भी विश्लेषण किया जा सकता है। उत्तरआधुनिकतावाद किसी एक विषय, क्षेत्र और सिद्धांत में सीमित नहीं दिखाई देता है। इसका न केवल परिधि, बल्कि विषय और क्षेत्र भी विस्तृत हैं। नाटक में उत्तरआधुनिकवाद के अंतर्गत मिथक की पुनर्व्याख्या, जनजातीय अध्ययन, विखंडनवाद, डायस्पोरिक लेखन, पात्र-प्रतिक्रिया सिद्धांत, साइवर-संस्कृति आदि का अलग-अलग अध्ययन किया जा सकता है।

मिथक की पुनर्व्याख्या और विनिर्माण

नेपाली नाटकों में मिथक का प्रयोग बहुत सी जगहों पर हुआ है। नेपाली नाटक में मिथक की पुनर्व्याख्या और विनिर्माण का अध्ययन बालकृष्ण सम का 'उ मरेकी छैन' (वह मरी नहीं है) के साथ शुरू करना होगा। वि.सं. १९९९ में सम द्वारा लिखित 'उ मरेकी छैन' (वह मरी नहीं है) शीर्षक का नाटक मिथक का समाजीकीकरण करते हुए प्रतीकात्मक शैली में लिखा गया पहली प्रयोगधर्मी नाट्यकृति है। इस नाटक में प्रयुक्त प्रतीकात्मक पात्र-विधान को प्रयोग की नमूना के रूप में लिया जा सकता है। इसके बाद सम के द्वारा ही वि.सं. २००७ में लिखित और २०३३ में मुद्रित 'स्वास्नी मान्छे' (औरत) में स्वैरकल्पना का बेजोड़ प्रयोग नजर आता है।

वि.सं. २००२ में मंचित तथा वि.सं. २०३५ में मुद्रित 'उ मरेकी छैन' (वह मरी नहीं है) नाटक स्कंदपुराण के केदारखंड में विद्यमान स्वस्थानी व्रतकथा पर आधारित धार्मिक एवं सामाजिक विषय पर लिखा हुआ एक नाटक है। हालांकि इसमें शिव और सती की वियोगांत कथा कोा सूत्र के रूप में लिया गया है, फिर भी यह पौराणिक कथा का ज्यों का त्यों प्रकटीकरण या रूप नहीं है। इस नाटक में शिवगिरि नामक एक योगी के प्रति शिक की सती देवी की तरह भक्ति करने वाली एक किशोरी कांति की दुखांत कहानी प्रस्तुत की गई है। इस नाटक में शिव और सती की तरह दैवी व्यक्तितवयुक्त पौराणिक चरित्र को शिवगिरि और कांति के मानवीय व्यक्तित्व में नाट्यवस्तु का विधान तैयार किया गया है। पौराणिक आख्यान में यह उल्लेखित है कि दक्षप्रजापति की बेटी सति देवी ने अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध शिव के साथ शादी की थी। 'उ मरेकी छैन' (वह मरी नहीं है) नाटक में कनकवीर की बेटी कांति अपने से सालह वर्ष बड़े योगी शिवगिरि के साथ प्रेम करती है और उसी के साथ रहना चाहती है। मिथक पात्र दक्षप्रजापति के द्वारा की गई यज्ञ की आयोजना में शिव के अलावा सभी दामादों को आमंत्रित किए जाने और शिव उनका अपमान किए जाने के कारण सती देवी यज्ञकुंड में कूद जाती है। इस सम के नाटक के पात्र कनकवीर के द्वारा कांति की शादी भुवन नामक युवक के साथ करने की बात मालूम होते ही कांति को जहर खाकर आत्महत्या करते हुए दिखाया गया है। जिस तरह शिव अपनी पत्नी सती देवी की लाश अपने कंधे पर लेकर यत्रतत्र घूमते हैं, ठीक उसी तरह इस नाटक का नायक शिवगिरि कांति का शव लेकर हिमालय की यात्रा में निकलता है।

मिथकीय पात्रों का प्रयोग, विनिर्माण और उनका समाजीकीकरण एवं पुनर्व्याख्या के आधार पर बालकृष्ण सम के नाटक 'उ मरेकी छैन' (वह मरी नहीं है) को नेपाली नाट्य क्षेत्र की एक बड़ी उपलब्धि माना जा सकता है। यह नाटक तीस के दशक में प्रकाशित हुआ है। अर्थात् वि.सं. २०३५ में इस नाटक के प्रकाशन के बाद उत्तरआधुनिक की बहस करना जायज है।

नाटककार सम के बाद ध्रुवचंद्र गौतम के नाटक 'भस्मासुरको नलीहाड' (भस्मासुर की नली हाड़) में मिथक की पुनर्व्याख्या और विनिर्माण नजर आता है। यह नाटक वि.सं. २०३७ में 'रूपरेखा' नामक पत्रिका में

प्रकाशित हुआ था। भस्मासुर ने जिससे शक्ति पाई थी, मूर्खतावश अपनी शक्ति उसी पर आजमाने के कारण भस्म हो गए थे। 'भस्मासुरको नलीहाड' (भस्मासुर की नली हाड़) इसी पौराणिक कथा पर आधारित है। इस नाटक की खूबसूरती यह है कि नाटककार ने पौराणिक कथा की सारवस्तु को स्वैरकल्पना की शैली में प्रयोग करके समकालीन सामाजिक धरातल पर उतारा है। यह 'त्यो एउटा कुरा' (वह एक बात) की तरह ही विसंगत नाटक है। इस नाटक का वस्तुविधान 'त्यो एउटा कुरा' (वह एक बात) की तरह चक्रीय न होकर परंपराधर्मी नाटकों की तरह रैखिक नजर आता है। लेकिन इस नाटक में पात्र, द्वंद्व, संवाद और प्रस्तुति में उत्तरआधुनिक प्रयोग और संकेत पाये जाते हैं।

विनय : अरे! तुम तो मोहनी रूप धारण करके अवतरित हुई औरत हो। (कठोर होता है) किसने भेजा है?

प्रीत : (त्रस्त होती है, पसीना पोंछती है) विष्णु सर ने, विष्णुभान ने।

विनय : मूर्ख विष्णु! हजारों साल बाद भी, यही समझता होगा कि मुझ में वही भस्मासुर की बुद्धि है। भस्मासुर तो था मूर्ख, लेकिन युग तो आजका नहीं था। उसके और मेरे जन्म लेने के समय का समय का दांव पेच क्या एक जैसा ही रहेगा? (मौन) मुझे मालूम था, इस तरह के प्रयत्न किए जाएंगे। इसीलिए मैंने पहले ही इसका उपाय कर लिया था। मैंने नली हाड़ फिट कराने से लेकर अनेक उपाय कर लिए थे, और अपने को नलीहाड़प्रुफ बना लिया था। मूर्ख लड़की। मेरे सर पे तो अब किसी नली हाड़ का असर ही नहीं होने वाला, लेकिन (दांत किटकिटाता है) तुम्हारे सर पे तो शत प्रतिशत होगा, समझी। (भस्मासुरको नलीहाड/ पृष्ठ ३३)

नाटक के चरित्र विनय में भस्मासुर की चारित्रिक विशेषता मिलती है। लेकिन वह आधुनिक समय का भस्मासुर है। वह समय के प्रति सचेत है और डॉक्टर तथा दवाइयों का इसलिए सहारा लेता है कि उस पर नलीहाड़ का कोई असर न हो। कार्यालय के कर्मचारी विष्णुमान में विष्णु का चरित्र नजर आता है, जो सुंदर युवती प्रीत का उपयोग करके भस्मासुर का अन्त करना चाहती है। ***'भस्मासुरको नाटक'*** में प्रारंभ से अंत तक बेजाड़ द्वंद्व है। यह पौराणिक कथा की पुनर्व्याख्या और विखंडन भी है। इस नाटक में उत्तरआधुनिक प्रयोगशीलता भी मिलती है। लेकिन यह चूंकि परंपरागत नाटक की संरचना में, इसीलिए इसे उत्तरआधुनिक नाटक न कहकर नवआधुनिक नाटक कहा जा सकता है, इसे उसी श्रेणी में रखकर अध्ययन किया जा सकता है।

सम और गौतम के बाद मिथक को अपने ही ढंग से पुनर्व्याख्या और विनिर्माण करने वाले नाटककार हैं-अशेष मल्ल। वि.सं. २०३९ में नाटककार मल्ल द्वारा लिखित तथा निर्देशित नाटक ***'रामायण'*** का दूसरा पृष्ठ इसी तरह का नाटक है। इसमें नाटककार मल्ल ने सम और गौतम की परंपरागत नाट्य-संरचना से बिल्कुल अलग होकर भिन्न रूप में रामायण के दूसरे पृष्ठ को प्रस्तुत किया है। इस नाटक में सूत्रधार होता है, जो प्रत्यक्ष रूप से दर्शकों से बातें कर रहा होता है। नाटक में दर्शक और कलाकारों के बीच की दूरी मिटाई गई है। सूत्रधार ***रामायण*** की कथा को मंच पर प्रस्तुत करने का उद्घोष करता है। नाटक में राम, सीता, लक्ष्मण, कैकेयी, दशरथ जैसे पात्र क्रमशः नजर आते हैं। सूत्रधार ***रामायण*** के पृष्ठों को क्रमशः प्रस्तुत करता जाता है। नाटक में राम के वनवास जाने से पहले के दृश्य रामायण की तरह दिखाई देते हैं। लेकिन जब राम को चौदह वर्ष के लिए वनवास जाने की बात होती है, तो वह विरोध करता है। यहीं पर नाटक का विनिर्माण होता है। नाटक का अभिनय करने वाला पात्र एकाएक अपनी प्रेमिका के साथ शादी करके ही दम लेने, अपने पिता दशरथ की गलती की सजा कदापि नहीं भोगने, भाई लक्ष्मण को राम का दास नबनाकर अपने अस्तित्व के साथ जिंदा रहने के लिए प्रेरित करने और सीता को नारी अधिकार के प्रति सचेत कराने जैसे कार्य करता है।

राम : परंपरा को गले लगाकर चिरनिद्रा में सोने वाले, सोते रहो। दशरथ! अब भी अंधेरे में ही खोए रहो। पाखंडी परंपरा में ही जीते रहो। सीता! अभी भी आग में जलती रहो, आग ही पीकर जीती रहो। ऐ लक्ष्मण! धिक्कार है कायर! परंपरा को गले लगकार चिरनिद्रा में सोनेवाले! आखिर कब जगोगे? कब? (चला जाता है) (***रामायण का दूसरा पृष्ठ*** / पृष्ठ ८१)

इस प्रकार अशेष मल्ल ने *'रामायण का दूसरा पृष्ठ'* नाटक में अपने ही तरह से पुनर्व्याख्या और विनिर्माण किया है। इसके अतिरिक्त उनके अन्य नाटकों 'कुमारजी आज्ञा गर्नुहुन्छ' (२०५१,कुमार जी आज्ञा देते हैं), 'कुमारी' (२०५६, कुंवारी) और 'रक्तबीज' (२०६०) में भी मिथक का प्रयोग और विनिर्माण किया गया है। 'स्वस्थानी की कथा' में सत्तर वर्ष का शिव शर्मा की सात वर्ष की बालिका गोमा से शादी की बात है। इसे नाटककार मल्ल ने 'कुमारजी आज्ञा देते हैं' में सामाजिकीकरण करके विनिर्माण किया है। नाटक में सात वर्षीय गोमा के ऊपर सत्तर वर्षीय वृद्ध के द्वारा की गई ज्यादती को दिखलाया गया है। इसमें बालिका से विवाह और बलात्कार करने के सामाजिक पक्ष को नंगा किया गया है।

यह नाटक कुमारी देवी प्रथा पर आधारित है। इसमें कुमारी (रजस्वला होने से पहले) रहने तक की अवस्था में देवी देवता के रूप में पूजने और कुमारी न रहने के दूसरे ही दिन से एकाएक देवता के स्थान से नीचे उतारकर मानवीय व्यवहार करने जैसी स्थिति का चित्रण किया गया है। इसी तरह 'रक्तबीज' नाटक के मूल पात्रों में हिरण्य कश्यप, हिटलर और कंश के संयुक्त चरित्र का बीजारोपण किया गया है। इस नाटक में नर्तक और नर्तकियां नाटक का आरंभ करती हैं। नायक की तलाश के समय सूत्रधार एक सामान्य व्यक्ति को नायक बनाता है। वह व्यक्ति नायक बनने के बाद निरंकुश हो जाता है। वह कभी हिटलर, कभी कंश तो कभी हिरण्यकश्य के चरित्र में दिखाई देता है। नाटक में प्रह्लाद भी मुख्य पात्र के रूप में नजर आता है, और कृष्ण की भी अप्रत्यक्ष उपस्थिति नजर आती है। 'रक्तबीज' नाटक में केंद्रभंग की अभिव्यक्ति को जीवंत रूप में प्रस्तुत किया गया है। अशेष मल्ल रंगकर्मी और नाटक निर्देशक हैं। नेपाल में सड़क नाटकों का प्रणेता अशेष मल्ल के उत्तरआधुनिक नेपाली नाटक रंगमंचीय दृष्टि से भी सबल हैं।

अविनाश श्रेष्ठ के नाटक *'समय, समय फिर समय'* (२०३९) और *'अश्वत्थामा हतोहत'* (२०४२) में भी इतिहास और मिथक की पुनर्व्याख्या और विनिर्माण करने का काम नजर आता है। नवआधुनिक नाट्यधारा में नजर आए अविनाश श्रेष्ठ के इन दो नाटकों ने उत्तरआधुनिक नाटक की प्रवृत्तियां अपनाई है। इस नाटक की नाट्यवस्तु के निर्माण में वेद, पुराण, उपनिषद और गीता क् साथ-साथ पाश्चात्य पुराकथा, धर्मप्रथा और इतिहास से भी सामग्रियां ली गई हैं। इस नाटक के पात्रों में कृष्ण, युधिष्ठिर और भीमसेन भी नजर आते हैं। नाटक में शेखर और नीरा की प्रेमकथा आधुनिक युग की कथा लगती है, मगर हकीक़त यह है कि यह प्राचीन काल की ही प्रेमकथा है। इसने आदम और इव, अर्फियस और युरिडाइस, मनु और श्रद्धा, दुष्यंत तथा सत्यवान और सावित्री के भावनात्मक प्रेमाख्यान का प्रतिनिधित्व किया है।

इसी प्रकार अविनाश श्रेष्ठ के नाटक *'अश्वत्थमा हतोहत'* में महाभारतकालीन पात्र अश्वत्थामा की कथा और महाभारत में निहित मिथक की नये ढंग से पुनर्व्याख्या की गई है। इस नाटक का कार्य-व्यापार महाभारतकाल की पृष्ठभूमि से शुरू होता है और उसी पर जाकर अंत होता है। लेकिन बीच में आधुनिक काल की राष्ट्रीय भूमि नजर आती है। नाटक में मिथकीय पात्र अश्वत्थामा का विद्रोह और महाभारत के आख्यान का विखंडन किया गया है।

अश्वत्थामा : (चिल्लाता है) कृष्ण ! नहीं चाहिए मुझे तुम्हारा उपदेश ! पहले तुम खुद झांककर देखो, अपनी आत्मा की गंदे जलाशय में कृष्ण ! किस मुंह से घोषित कर रहे हो तुम मुझे क्रुर, अन्यायी और आतातायी ? कृष्ण ! तुम उस वक्त कहाँ थे, जब धर्मराज युधिष्ठिर ने असत्य बोलकर मेरे वृद्ध पिता महारथी द्रोणाचार्य को किया था हतोहत ?और किंकर्तव्यविमूढ़ पुत्रशोक मग्न निहत्थे मेरे पिता मारे गए धर्महीन धृतद्युम्न के द्वारा ? कहाँ थे कृष्ण उस वक्त तुम ?(*अश्वत्थामा हतो हत* / पृष्ठ ५०)

नाटक में अश्वत्थामा का संवाद आधुनिक समय के बुद्धिजीवी, दलाल, उद्योगवति और किसानों के साथ कराया गया है। अश्वत्थामा इस अपने पिता युधिष्ठिर के अर्द्धसत्य और खुद को कृष्ण के अन्याय का शिकार होने की शिकायत करते हुए निरर्थकता का दर्शन प्रस्तुत किया है और कहा है कि संसार के सभी मानव अपने-अपने परिवेश के अर्द्धसत्य में उलझे है, इसीलिए सभी बातें निरर्थक हैं।

इस तरह, अविनाश श्रेष्ठ अपने नाटक *'समय, समय फिर समय'* और *'अश्वत्थामा'* के मार्फत नवआधुनिक

के साथ-साथ उत्तरआधुनिक चेतना के नाटककार के रूप में नजर आते हैं। अविनाश के नाटकों में युद्धजन्य संत्रास और पीड़ा नजर आती है। इन्होंने अपने नाटकों में मेलोड्रामा, लोकनाटक के तत्त्व तथा माइम का उपयोग किया है। विषयवस्तु क ाचयन, प्रस्तुति, चरित्र चित्रण, दृश्य विधान जैसे पक्षों में नवीनता भरने का प्रयास किया है। इसीलिए इन्हें उत्तरआधुनिक नाटककार के रूप में लिया जा सकता है।

वि.सं. २०५१ में विप्लव ढकाल द्वारा लिखित तथा मिमिरे (पत्रिका) में प्रकाशित नाटक *'अंतिम नायिका'* भी उत्तरआधुनिक नाटक है। वि.सं. २०५४ में प्रकाशित 'अंतिम नायिका'नाटकसंग्रह का शीर्ष नाटक भी है। यह महाभारत की द्रौपदी, स्वस्थानीव्रत कथा की सती, भारतीय मुस्लिम इतिहास की मुमताज और सुंदरी नायिका रेनाता की दुखांत घटना को लेकर लिखा हुआ नाटक है। नाटक में युधिष्ठिर, शाहजहाँ और बेनेडकेटो का नाम है। नाटक में प्रसंगवश आइकमैन, हान्स स्पाइडे, औरंगजेब और हिटलर जैसे कुख्यात पात्रों का भी संदर्भ जोड़ा गया है। इसी प्रकार इसमें कृष्णकथा के अंतर्गत की पुतनाबद्ध और कालीय नाग से संबंधित भयावह घटना का भी उल्लेख किया गया है। पौराणिक, ऐतिहासिक और आधुनिक प्रख्यात घटनाओं को एक ही संरचना के अंतर्गत प्रस्तुत किया गया है। नाटककार ढकाल के इस नाटक में उत्तरआधुनिक चिंतन और प्रयोग पाए जाते हैं।

१.:मुझे नहीं मालूम- तुम रेनाता हो या मुमताज हो या सती देवी हो। लेकिन मुझे इतना मालूम है कि सती देवी मुमताज नहीं है। मुमताज भी रेनाता नहीं है। और मुझे एक और बात मालूम है- प्रेम के अर्थ में ये समान हैं। मृत्यु के अर्थ में ये समान हैं। प्रत्येक युग में भयानक त्रासदी बनकर जिंदा रहने वाली ये नायिकाएं मृत्यु के अर्थ में समान हैं। (*अंतिम नायिका* / पृष्ठ ९८)

विप्लव ढकाल प्रवृत्ति की दृष्टि से विसंगतिवादी-अस्तित्ववादी परंपरा के निकट नजर आते हैं। लेकिन शैली और प्रस्तुति की दृष्टि से उनके नाटकों में चरित्र, परिवेश और विषय में पूर्ववर्ती नवआधुनिक नाटक की सभी सिमाएं तोड़ी गई हैं। विप्लव ढकाल के इस नाटक के अलावा *'इडिवस के श्रापित कंकाल'* और *'अस्तित्व पीड़ा'* में भी उत्तरआधुनिक प्रवृत्तियां मिलती हैं। काव्यात्मक संवाद और परंपरागत लेखन का पूण बहिस्कार, अद्भूत और प्रतीकात्मक पात्रों का चयन तथा नवीन घटनाएं और विसंगत पक्ष आदि विशेषताओं के कारण विप्लव ढकाल को उत्तरआधुनिक नाटककार के रूप में लिया जा सकता है।

इतिहास की पुनर्व्याख्या और विनिर्माण

उत्तरआधुनिक नाटक के श्रेणी में *'यलंबर'* भी आता है। श्रवण मुकारूंग द्वारा लिखित यह नाटक वि.सं. २०५३ में प्रकाशित हुआ है। इस नाटक में मुकारूंग ने प्रथम किराती राजा यलंबर का विनिर्माण किया है। इस नाटक में यलंबर के साथद्दसाथ राधा, बुद्ध और ऋणी सहित अन्य मिथक पात्र नजर आते हैं। नाटक का मुख्य पात्र यलंबर ने जनजातीय पक्ष को भी समेटा है। नाटक ने जनजातीय पक्ष को संबोधित किया है। नाटक में किरात संस्कृति, हाप्पारे लोकगीत, साकेवा थान का संदर्भ और घटनाएं चित्रांकित हैं। श्रवण ने इस नाटक में यलंबर की ऐतिहासिकता का विनिर्माण करके आज के युग को एक चरित्र के रूप में प्रस्तुत किया है। नाटक में प्राचीन यलंबर के द्वारा वर्तमान समय में अपने अस्तित्व की तलाश करने का संदर्भ है।

यलंबर : मैं उस कलंकित समय का संहार कर दूंगा
उसका सर काटकर
हर वक्त टूटते रहने वाला पहाड़ बना दूंगा
उसके हाथ-पैर काटकर
हर वक्त रोनेवाली शहनाई बना दूंगा
वह नालायक वक्त
पहले से ही आदमी से लड़ने का
बहाना ढूंढ़ रहा है।
वह जान बूझकर
आदमी के वर्तमान को इतिहास बना रहा है
इस पृथ्वी की प्रत्येक आधुनिकता को पुरातन बना रहा है
आग लगा रहा है- वह
अब उसकी गुंडागर्दी नहीं चलने वाली
मैं उसे किसी भी सूरत में नहीं छोड़ूंगा, राधा!
बिल्कुल नहीं छोड़ूंगा।

(*यलंबर* / पृष्ठ ७)

'यलंबर' नाटक में इतिहास, वर्तमान यथार्थ और स्वैर कल्पना का अच्छा संयोजन है। इसमें यलंबर और बुद्ध जैसे पात्रों की ऐतिहासिकता समाहित है। इसके विपरीत राधा, नारी, डॉक्टर आदि जैसे पात्रों

वर्तमान जीवन से संबंधित यथार्थों को जीया है और आधुनिक जीवन की विविध विसंगतियों का सामना किया है। इस नाटक में नाटककार ने यह संदेश देने का प्रयत्न किया कि यलंबर कभी नहीं मरते हैं। नाटक में यह दिखाया गया है कि एक यलंबर बुद्ध के साथ एकाकार होकर जब विश्रांति लेता है, तब एक बाल उसका धनुर्वाण ले लेता है और एक दूसरे यलंबर का जन्म हो जाता है। इस प्रकार इसमें यह भी दिखाने की चेष्टा की गई है कि यलंबर समयानुकूल रूपांतरित होकर पैदा होता है। इन सभी आधारों के चलते इस नाटक *'यलंबर'* को उत्तरआधुनिक नाटक कहा जा सकता है।

पचास के दशक में समसामयिक नाट्यपरंपरा में अभि सुवेदी की प्रभावशाली उपस्थिति दिखाई देती है। उनकी नाट्य-यात्रा *'आरूका फूल का सपना'* (२०५८, आरू के फूल का सपना) के साथ शुरू होती है। नाटककार सुवेदी के नाटक 'नाटकपछिको यात्रा' (२०६०, नाटक के बाद की यात्रा) में वर्तमान समय के पात्र और पचीस वर्ष पहले की ग्रिसेली पुराकथा के पात्र क्रियोन एक साथ नजर आते हैं। *'युमा'* (२०६०) उनका एक दूसरा प्रमुख उत्तरआधुनिक चेतना से भरा नाटक है। इसमें लिंबू जाति का पारंपरिक विश्वास, जीवन-शैली और संस्कृति का कथावस्तु के रूप में उपयोग किया गया है।

साम्बा: हे तागेरा निडबाफू, हे यूमासाम्माँग ! नाफेती की रक्षा करो। वह एक चिट्ठी में बहुत लंबी कहानी लेकर चल रही है। वह चिट्ठी सुनने के बाद दूसरी ओर बढ़ती है। नाटक शुरू होता है। उसने उस चिट्ठी में एक दूसरा रंगमंच इस तरह से सजा रखा है, कि पता ही नहीं चलता। उसमें समय की आवाज है। लोगों को पता ही न चलता कि वे उस चिट्ठी में कहाँ से कहाँ पहुंच चुके हैं। बेचारी नाफेती, मैं तुम्हारे लिए रक्षा का कवच लेकर आऊंगा। धीरे-धीरे चलते जाओ। (*युमा / पृष्ठ* १८०)

इस नाटक ने जनजाति की आवाज को बूलंद किया है। इससे पहले श्रवण मुकारूंग ने किराती पुराकथा को अपने नाटक *'यलंबर'* (२०५३) में लिख चुका था। नाटककार सुवेदी के वि.सं. २०६० में *'पांच नाटक'* (नाटक संग्रह) और वि.सं २०६५ में *'तीन नाटक'* (नाटक संग्रह) प्रकाशित हुए थे। *'अग्निको कथा'*(*आग की कहानी*) को इनकी सबसे ज्यादा लोकप्रिय नाटक माना जाता है। दार्शनिक चिंतन, संस्कृति-मोह और लोकनाट्यपन नाटककार सुवेदी के नाटक की विशेषताएं हैं। इन्हें पचास के दशक की समसामयिक नाट्यधारा के प्रभावशाली नाटककार माना जाता है।

शारदा सुब्बा के नाटक *'यशोधरा'* (२०६५) में भी प्रशस्त उत्तरआधुनिक प्रवृतियां और संकेत मिलते हैं। वि.सं २०६५ में प्रकाशित इस नाटक में प्राचीन काल की बुद्ध पत्नी यशोधरा और आज की आधुनिक युवती स्नेहा और अनामिका की एक ही जगह पर मुलाकात कराई गई है। स्नेहा और अनामिका साइवर युग की नारियां हैं। एक ओर ये नाटक में कम्प्यूटर का उपयोग करती नजर आती हैं और टेलिफोन और इमेल के माध्यम से संवाद करती हैं तो दूसरी ओर यशोधरा अनादिकाल से नारी आवाज को सुनते और उनकी भावनाओं को समझते हुए वर्तमान धरातल पर पहुंची हुई हैं। नाटक ***यशोधरा*** की पृष्ठभूमि में प्राचीन तिलौराकोट दरबार, राहुल, शाक्यवंश की राजधानी आदि नजर आते हैं। यह यशोधरा के ऐतिहासिक जीवन से अभिप्रेरित होकर उसे वर्तमान के संदर्भ में बिखंडित करके लिखा गया नाटक है।

अनामिका :तुम्हारा बलिदान और संयम इतिहास में
अमर हैं।

यशोधरा : मैं उन इतिहास के स्वर्ण अक्षरों में अस्तित्वहीन
होकर लिखी गई हूँ।
इस राज्य के गौरव में मेरा मातृत्व आवाजहीन
होकर टकटकी लगाए हुए युगों से।
तुम मेरे इतिहास पर गर्व करती हो,
लेकिन इतिहास के पन्नों में जरा मुझकर
ढूंढ़कर तो देखो,
कि तुम्हें मेरा गौरव कहाँ मिलता है ?
(मौन) क्या तुम्हें मालूम है ?
मेरे गर्भाशय ने खुले आकाश की चाहत
रखते हुए
कई बार मुझसे न्याय माँग चुका है।
(*यशोधरा / पृष्ठ* ४७)

नाटक ***यशोधरा*** नारीवादी नाट्यरचना भी है। पच्चीस वर्ष पहले की यशोधरा का आज के अत्याधुनिक

युग में खड़े होकर समस्त नारियों के पक्ष में बोलना इस नाटक का गहन भाव है। इसमें नारी विद्रोह और समय प्रति की वितृष्णा नजर आती है। नाटक में नारी देह के अनेक पक्षों के साथ उसके शोषण की कथा भी समाविष्ट है। काव्यात्मक संवाद, आदमी का निकृष्ट व्यवहार का शल्यक्रिया, चिंतन की व्याख्या, जीवन की भिन्न दृष्टिकोण से प्रस्तुति, नाटककार शारदा के नाटकों की विशेषताएं हैं। इसके पहले, वि.सं. २०५५ में शारदा का प्रयोगशील नाटक *'अघोषित नीलो पीडा'* (अघोषित नीली पीड़ा) प्रकाशित हुआ था।

यंत्र मानव का प्रयोग और साइबर संस्कृति

चालीस के दशक के आरंभ से नेपाली नाटक और रंगमंच पर अजीब प्रयोग देखने को मिलते हैं। यंत्र मानव का प्रयोग उत्तरआधुनिक परिधि के अंदर आता है। यंत्र मानव का प्रयोग और विज्ञान नाटक उत्तरआधुनिक नाट्य-प्रवृति के विशिष्ट गुणों को अपने में समाहित करते नजर आते हैं।

नवआधुनिक नाट्य-धारा में मोहनराज शर्मा का विशिष्ट योगदान है। *'जेमन्त'* (२०३९) और *'वैकुण्ठ एक्सप्रेस'* (२०४२) ने उन्हें नवआधुनिक नाटककार के रूप में स्थापित किया है। लेकिन वि.सं. २०४० में नजर इनका 'यमा' तो उत्तरआधुनिक नाटक है। इस नाटक में यंत्र मानव का पृथक ढंग से प्रयोग हुआ है। इस्वी की बीसवी सदी के अविष्कार यंत्र मानव (रॉबट) को विषय बनाकर लिखा गया नाटक ***यमा*** नेपाली नाट्य-कला में सर्वथा नवीन उत्तर प्रयोग है। यह वासनात्मक प्रेम से लेकर घृणा और भावनात्मक प्रेम के आकर्षणों को नाट्यवस्तु के रूप में उपयोग करके लिखा गया नाटक है। नाटक में नौकर, जोकर, मालिक, प्रेमी आदि विभिन्न वर्गों के यंत्र मानव को बाजार में रखा गया होता है। नाटक में यंत्र मानव मानवीय क्रियाएं करते हैं। नाटक में एक यंत्र मानव दार्शनिक व्यक्तित्व का प्रतिनिधित्व करता है। इस नाटक में यमा दो सैनिक व्यक्तित्व, यमा तीन नेता व्यक्तित्व, यमा चार खिलाड़ी व्यक्तित्व और दरबान बिगड़ा हुआ रॉबट तथा नाइन ओ नाइन कर्मचारी रॉबट के रूप में काम कर रहे होते हैं। नाटक में क्लियोपेट्रा, सिकंदर, सीता, राम, हनुमान का संदर्भ भी संवाद के मार्फत आता है।

यमा १ : (फिर से रहस्यपूर्ण ढंग में) और इसी तरह जिस रोज चारों तरफ घनघोर बारिश हो रही थी, बिजलियां कड़क रही थीं, और बादल गरज रहे थे, और परम सुंदरी क्लियोपेट्रा अपनी जीभ को सर्प से कटवा रही थी, उसी वक्त मैंने उसे इसी घड़ी की आवाज सुनाई।

(***यमा* / पृष्ठ ७४**)

मोहनराज शर्मा का ***यमा*** नाटक उनके अन्य नाटकों से भिन्न नाटक है। इसमें किए गए विशिष्ट प्रयोगों को देखने के बाद इसे उत्तरआधुनिक नाटक माना जा सकता है। नाटककार हशर्मा के नाटक में प्रचलित नाट्य-मान्यता के विपरीत विषय, भाषा और चरित्र को स्वैरकल्पनात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया होता है।

नव आधुनिक नाट्य-धारा के प्रमुख नाटककार हैं सरूभक्त। वे वि.सं. २०३९ में शून्यवादी दर्शन की अवधारणा के साथ नाटक के क्षेत्र में एक अलग धार के रूप में प्रस्तुत होते हैं। इस अवधारणा की प्रायोगिक नमूना के तौर पर उन्होंने अपने नाटक ***'इतिहासभित्रको इतिहास'*** (२०३९, ***इतिहास के अंदर का इतिहास)*** का प्रकाशन करवाया। इसे ही सरूभक्त का पहला नवआधुनिक नाटक माना जाता है। यह आख्यानहीन नाटक है। वि.सं. २०४४ में प्रकाशित ***'इथर'*** सरूभक्त का प्रयोगवादी विज्ञान नाटक है। नाटक ***इथर*** का रंग-विधान और पात्र-विधान विशेष प्रकार का दिखाई देता है। वि.सं. २०४६ में सरूभक्त ने बुद्ध की जीवनकथा पर आधारित होकर *'एस धम्म सनन्तन* लिखा। इस नाटक में उन्होंने ऐतिहासिक सामग्री का सूक्ष्म अध्ययन किया, मगर घटना की पुनर्व्याख्या अपने तरीके से किया। पचास के दशक के बाद वे शून्यवादी रंगमंच के मोह से मुक्त होते नजर आते हैं। इस अवधि में उन्होंने लोकजीवन पर आधारित होकर बहुत सारे प्रयोगधर्मी नाटकों की रचना की। इस क्रम में उनके ***'मलामीहरू'*** (२०५१,अंतिम यात्रा में शामिल होनेवाले), 'मलामी' (२०५५), 'सिरूमा रानी' (२०६१) आदि नाटक प्रकाशित हुए। इन सभी को नवआधुनिक नाटकों की श्रेणी में ही रखना आवश्यक है। क्योंकि इनमें नवआधुनिक प्रयोग के साथ-साथ परंपरा का भी निर्वहन उतनी ही प्रधानता के साथ किया गया है।

वि.सं. २०५५ में सरूभक्त ***'निवाविय'*** नामक नाटक प्रकाशित हुआ। इस नाटक में उत्तरआधुनिक प्रवृत्ति मिलती है। यह एक विज्ञान नाटक भी है। यह नाटक अंतरिक्ष विज्ञान संबंधी अनुसंधान को विषय

बनाकर लिखा गया है । ***निमाविय*** नाटक में डॉक्टर अल्फा, बिटा, ओमेगा जैसे मानवीय पात्रों के साथ-साथ चार यंत्र मानव भी होते हैं । नाटक में यंत्र मानव मनुष्य के जैसे ही क्रियाकलाप करते हैं,सोचते हैं और संवाद करते हैं ।

निमा ३: हे मनुष्य ! हमारी उपयोगिता शक्ति और आवादी से भयभीत हो रही है । आखिर मानव के पास उल्लेखनीय है ही क्या, तीन पौंड के जैविक मस्तिष्क और उसके अंदर के सेरेब्रुम के अलावा ?

निमा २: कृपा करके ऐसी बातें नहीं कीजिए । (डरकर इधर-उधर देखते हुए) ये अनावश्यक बातें हैं । हम आवश्यक कार्य के लिए उत्पादित निमा हैं ।

(***निमाविय / पृष्ठ १३६***)

नाटक में जहाँ एक ओर ज्ञान और विज्ञान का रोमांचक और कौतूहल वातावरण दिखाई देता है, तो दूसरी ओर सुखद, दुखद, त्रासद और वीभत्स का चित्र भी दिखाई देता है ।

वि.सं. २०५६ में प्रकाशित तथा मंचित गोपी सापकोटा का नाटक 'लासघर' (२०५६, शव-गृह) भी उत्तरआधुनिक नाटक है । इस नाटक में साइवर कल्चर का प्रयोग हुआ है । नाटक में शव-गृह की लाशें पुनर्जीवित होने के लिए अपनी-अपनी आत्मा का कोड नंबर पता लगाने के क्रम में साइवर का प्रयोग करती हैं ।

लाश १: हाँ, हमें हमारी आत्मा की तलाश है ।

लाश ३ : मैं कम्प्यूटर में सर्च करती हूँ कि हमारी आत्मा कहाँ है ?

लाश १ : सर्च ही क्यों ? रिसर्च ही कीजिए न !

लाश ३ : क्या आप में से किसी को भी यूनिवर्स में प्रवेश करने का पासवर्ड मालूम है ? यदि हम कम्प्यूटर से यूनिवर्स में चले जाते हैं,तो हम हमारी आत्मा को पता लगा सकते हैं । और उसके बाद यी अपनी आत्माओं को इस कम्प्यूटर के माध्यम से यहाँ ला पाने में सक्षम हो जाते हैं, और हमें छोड़कर जानेवाली आत्माओं को फिर से अंदर कर पाने में सक्षम हो पाते हैं,तो हम लाश से आदमी बन सकते हैं । (***लासघर / पृष्ठ ५५***)

नाटक 'लासघर' (शव-गृह) में नई प्रविधि का प्रयोग अजीब तरीके से हुआ है । नाटककार सापकोटा के इस नाटक के अतिरिक्त ***'पूर्णविराम'*** (२०५५) और ***'कालो आकृति'*** (२०६४,***काली छाया)*** नाटक संग्रह में भी कुछ प्रयोगशील नाटक संगृहीत हैं ।

नाट्यविद् केशव प्रसाद उपाध्याय ने उल्लेख किया है कि 'भृकुटी' (पत्रिका) में प्रकाशित कृष्ण शाह यात्री के नाटयरचना में भी समकालीन बहुलवादी उत्तरआधुनिक नाट्य-वस्तु-विधान और रंगधर्मिता का प्रयास देखा जा सकता है । उपाध्याय के अनुसार यात्री की नाट्य-कला प्रयोगवादी होने के बावजूद उन्होंने उसमें अपनी पहली पहचान प्रस्तुत की है और नई नई नाट्यविधि,प्रविधि और नये-नये लेखन-सिद्धांतों का प्रवर्तन भी किया है ।

समालोचक उपाध्याय ने कृष्ण शाह यात्री के नाटक 'मृत्यु संपादन' (२०५९) के बारे में लिखा है, - 'विभिन्न स्रोतों से पात्र और उनसे संबंधित कथांश लेते हुए विभिन्न नाट्यवस्तु का संयोजन करके आख्यानीकृत किए गए 'मृत्यु संपादन' में मिथक का सामाजिकीकरण और सामाजिकी का मिथकीकरण किया गया है और आख्यानीकरण तथा नाट्यवस्तु का विनिर्माण के क्रम में अपनी दृष्टि और प्रयोजन के अनुरूप आवश्यक परिवर्तन किया गया है । इसी प्रकार उन्होंने यात्री के नाटक ***'समय अवसान'*** (२०६१) के बारे में कहा है, -"युद्ध और विनाश को मूल विषय बनाकर लिखा गया नाटक ***'समय अवसान'*** समकालीन सशस्त्र द्वंद्व का बान्की प्रस्तुत करता है । इस नाटक में समकालीन सामाजिक जीवन से युद्ध पीड़ित जनता का प्रतिनिधित्व करने वाली एक वृद्धा पात्रा तथा इतिहास से भिन्न-भिन्न देश और काल के भिन्न-भिन्न चरित्र गौतम बुद्ध और हिटलर जैसे प्रख्यात व्यक्तियों तक को समावेश करके नाट्यवस्तु का विधान तैयार किया गया है । सियार और गिद्ध की कथा तथा वृद्धा की कथा निर्मित नजर आती हैं तो गौतम बुद्ध और हिटलर की कथा विनिर्मित नजर आती हैं । नाटक ***'मान्छे युद्ध र शान्ति'*** (२०५९, आदमी, युद्ध और शांति) भौतिक, अभौतिक, दैविक, अर्द्धदैविक तथा मानवीय शक्तिओं के सहकार्य दिखाने वाला नाटक है । उपाध्याय के अनुसार यह एकाङ्की नाटककार यात्री का उर्वर स्वतंत्र परिकल्पना से प्रस्तुत नवमिथकीय नाट्यरचना के रूप में नजर आता है ।

कृष्ण शाह यात्री के नाटक में यंत्र मानव और

साइवर सामग्री का भी बहुत ज्यादा प्रयोग हुआ है। नाटक *'बारूद शताब्दी '*(२०६०) युद्ध और शांति को विषय बनाकर लिखा गया नाटक है, जिसमें आदमी की तरह ही बोल सकने और हाव-भाव कर सकने वाले रॉबट १ और २ प्रमुख पात्र के रूप में चित्रांकित हैं। यात्री के नाटक *'अंतिम नायक'*(२०६५) और *'आवरण अनावरण'* (२०६७) के संबंध में केशव प्रसाद उयाध्याय लिखते हैं,-" नारीवादी के साथ-साथ पशु अधिकारवादी नाटक के रूप में नजर आने वाली इस कृति में एकाङ्कीकार यात्री ने यंत्र मानव के प्रयोग के साथ-साथ उत्तर प्रयोग धर्मिता की भी नई झांकी दिखाई है।

बंदर : मैं तुम्हारे प्रयोगशाला की सामग्री नहीं हूँ, डॉक्टर। हमें कभी डार्विन ने प्रयोग किया, प्रसिद्धि पाने के लिए। हमें कभी राम ने प्रयोग किया, रावण के विरुद्ध लड़ने के लिए। हम आज भी केवल प्रयोग ही हो रहे हैं, कभी रसायनशास्त्रियों के द्वारा तो कभी मानवशास्त्रियों के द्वारा। डॉक्टर ! तुम्हें यह हक किसने दिया ? मुझे वर्षों से प्रयोगशाला की वस्तु के रूप में प्रयोग करनेवाले तुम महास्वार्थी हो। डॉक्टर ! अब मैं इस आयातीत पीड़ा में और नहीं रह सकता। मैं अब हिटलर, बुद्ध या यंत्र मानव की प्रतीक्षा नहीं कर सकता। (*आवरण अनावरण* / पृष्ठ ६२

इसी तरह यात्री के द्वारा संकेत नाटक *'मान्छे र मान्छेहरू'* (२०५७, आदमी और आदमी) लिखे जाने और उसमें बधिरों से अभिनय करवाने, नाटक *'विस्थापन'* (२०६२) में आप्रवासी जीवन (डायोस्पोरा) को उतारने, नाटक क्रमशः *नायिकाहरू* (२०६२,नायिकाएं) में पौराणिक पात्र सीता में उत्तरआधुनिक नारी चेतना का आरोपण कराने, नाटक ***शब्द सङ्ग्रामका योद्धाहरू*** (२०५९? ***'शब्द संग्राम के योद्धा)***, 'महापात्र' (२०६३) और ***'सनाखत नभएको नाटक'*** (२०६४, सनाख्त नहीं हुआ नाटक) में पात्र प्रतिक्रिया सिद्धांत का प्रयोग करने, नाटक ***'पीड़ा आरोहण'*** (२९६५) में साइवर कल्चर का प्रशस्त उपयोग करने, नाटक *'अर्थात् असमाप्त अध्याय'* (२०६७) में मिथकीय पात्रों की पुनर्व्याख्या और विर्निर्माण करने, नाटक *'बामियानका चिसा बुद्धहरू'* (२०६७, बामियान के ठंडे बुद्ध) में बहुल संस्कृति और नव प्रविधि का उपयोग करने आदि संदर्भों के कारण समालोचक इन नाटकों का विश्लेषण उत्तरआधुनिक नाटक के रूप में करते आए हैं।

रमेश के.सी. के ***अपात्र र म प्रेयसी*** (अपात्र और मैं प्रेयसी), ***नानीहरू प्लस मिसाइल बराबर जीरो (लड़कियां प्लस मिसाइल बराबर जीरो) नाटक*** को भी उत्तरआधुनिक नाटक के रूप में लिया जा सकता है। इन दोनों नाटकों में अंतर्वस्तु और शिल्प में नवीनता की खोज की गई है । इस नाटक में आज के आदमी के द्वारा भोगी गई पीड़ा को अभिव्यंजित करने का काम किया गया है। ये अति यथार्थवादी नाटक हैं। पचास के दशक में लिखित तथा मंचित इन नाटकों की शिल्प-चेतना में भी नवीनता खोजने का प्रयास किया गया है।

इसी तरह शिवानी सिंह थारू का ***'भर्चुअल रियालिटी'*** (२०६४) भी उत्तरआधुनिक नाट्यधारा के उल्लेख्य नाटकों में आता है। यह नाटक शिवानी के ही निर्देशन में मंचन भी हुआ था। ***'भर्चुअल रियालिटी*** 'साइवर संस्कृति पर आधारित नाटक है।

यहाँ विशेष रूप में चर्चा किए गए नाटकों के अतिरिक्त भी अन्य नाटककारों के नाटक में भी उत्तरआधुनिक प्रवृत्ति मिलती है। नेपाली नाटक में प्रयुक्त उत्तरआधुनिक प्रवृत्ति के अध्ययनोपरांत निम्न विशेषताएं मिलती हैं।

- नई विषयवस्तु, नई शिल्प और नई रंगप्रविधि की खोज करना।
- इतिहास या पुराकथा को आधार मानकर उसे समकालीन सामाजिक संर्दभ में प्रस्तुत करना।
- नये-नये विंवों और प्रतीकों की स्थापना करना।
- पारंपरिक नाटक में सर्वाधिक महत्त्व दिए जाने वाले आख्यान की तुलना में चरित्र या प्रस्तुति पर जोड़ देते हुए आख्यानहीन नाट्य सृजना करना।
- नाटकों में साइवर संस्कृति का उपयोग करना।
- मिथक को वर्तमान आधुनिक संदर्भ में रूपांतरण करके विनिर्माण करना।
- पात्र या चरित्र के नामकरण में संकेत या प्रतीक का महत्त्व देना।
- अंक या दृश्य योजनाओं का बहिस्कार करते हुए प्रकाश परिवर्तन के माध्यम से अंतराल करना।
- कथा को अकथा या चरित्र को अचरित्र बनाते हुए नाटक को अनाटक के रूप में प्रस्तुत करना।
- अमूर्त शैली का प्रयोग करना।

- लेखक के द्वारा पात्रों को मनमाने ढंग से प्रयोग किए जाने के विरुद्ध पात्रों या चरित्रों या लेखक स्वयं को भी खड़ा करना।
- नाटक में बहुल सांस्कृतिक चेतना का आरोपण करना।
- सीमांतीकृत, जनजाति की बातों को आधुनिक समय में सार्थक प्रयोग के मार्फत प्रस्तुत करना।
- नाटक में अत्याधुनिक मल्टिमिडिया (नवआधुनिक प्रविधि) का उपयोग करना।
- विचित्र प्रकार की बातें करने वाले अद्भूत पात्रों को पैदा करना।
- शैली एवं शिल्प के साथ-साथ पारंपरिक मूल्य और मान्यता के प्रति विद्रोह दिखाना।
- यंत्र मानव को मानवीय चरित्र के रूप में प्रस्तुत करना।
- आप्रवासी (डायस्पोरा) को नाटक में उतारना।

निष्कर्ष

इस तरह निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि पहलमान सिंह स्वार और बालकृष्ण सम से शुरू हुआ मौलिक तथा आधुनिक नेपाली नाटक लेखन विभिन्न उतार-चढ़ाव के साथ यहाँ तक आ पहुंचा है। ध्रुवचंद्र गौतम के द्वारा शुरू की गई नवआधुनिक नाट्यधारा को उनके बाद के अन्य नाटकारों ने सबल बनाने का कार्य किया है। उत्तरार्ध के कालखंड में नेपाली नाटक में उत्तरआधुनिक नाट्यधारा में उल्लेखनीय कार्य हुए हैं। इस लेख का उद्देश्य उत्तरआधुनिक नेपाली नाटक के बारे में, थोड़ी ही सही, चर्चा करनी है। नेपाली नाटक और रंगमंच पर उत्तरआधुनिकता का प्रवेश 'ऊ मरेकी छैन' (वह मरी नहीं है) नाटक से होता है। इसमें पौराणिक आख्यान का विनिर्माण किया गया है। नाटक में साइबर कल्चर का उपयोग, डायस्पोरिक जीवन, मिथक की पुनर्व्याख्या, विनिर्माण, पात्र प्रतिक्रिया सिद्धांत, नाटक में अन्य विधा-सम्मिश्रण, अनाटक, अपात्र, अकथा, मल्टिमिडिया का उपयोग आदि बहुत सारे प्रयोग और उत्तर प्रयोग उत्तरआधुनिक नेपाली नाटक के क्षेत्र में हुए हैं।

मौलिक नेपाली नाटक का एक शताब्दी का लंबा इतिहास है। यह कालखंड छोटा नहीं है। इसीलिए नेपाली नाटक का परंपरागत से कहीं ज्यादा तये तरीके से अध्ययन और विश्लेषण होना आवश्यक है। उत्तरआधुनिक समालोचना इसकी एक सार्थक दृष्टि हो सकती है। उत्तरआधुनिकता को अच्छा नहीं कहना या फिर उत्तरआधुनिकता की बातें करना, दोनों अतिवाद है, इससे बचकर उत्तरआधुनिकता की सोच को आगे बढ़ाने की आवश्यकता है।

साहित्य या नाटक में सिर्फ कोई एक वाद ही केंद्र में नहीं रह सकता है। अगर ऐसा होता है, तो साहित्य या नाटक में भी अधिनायकवाद उत्पन्न हो जाएगा। इसीलिए बहुलता, अनेक प्रयोग और प्रस्तुति को स्वीकार करने वाली उत्तरआधुनिक प्रवृत्ति, चिंतन आवश्यक है। इसी से हम आज के नये युग के नाटक के धरातल को सबल और सार्थक बना सकते हैं।

अनुवाद : गोपाल अश्क

समालोचना

रंगमंच पर प्रदर्शित नेपालभाषा के प्राचीन नाटक

डा. चुन्दा बज्राचार्य

१. भूमिका

नेपाल मंडल के तहत बसोवास करनेवाले आदिवासी नेवार प्राचीन जाति है। उनकी भाषा भी उतनी ही पुरानी है। गोपालराज वंशावली के अनुसार नेपाल में सर्वप्रथम राज्य करने वाले 'गोपाल' और उसके बाद के महिषपाल हुए हैं। इनके बाद राज्य करने वाले किराँती गोपाल और महिषपाल को 'डे-हे-पा' कहते रहे हैं। लिच्छवियों ने उसी आधार पर संस्कृत से 'नेपाल' नाम लेकर राष्ट्र का नाम का नामकरण किया है (मल्ल 'नेपाल' रजत अंक १)। किराँतियों ने जिन्हें 'डे हे पा' कहा था, वे आज भी नेपालभाषा और नेवार संस्कृति को मानते रहे हैं। वर्तमान में इनका विशेष रूप से चंद्रागिरी पहाड़ के अगल-बगल अर्थात् थानकोट, टिस्टुंग, पालुंग, कुलगाँव, दामन और शिखरगोठ आदि जगहों पर बसोवास है। ३०-४० वर्ष पहले तक बाहर के नेवार उपत्यका को नेपाल कहा करते थे। उपत्यका या नेपाल में बसोवास करने वालों की भाषा नेपालभाषा है। मल्लकाल के अभिलेखों में भी नेवारद्वारा बोली जानेवाली भाषा को नेपालभाषा, राष्ट्रभाषा, देशभाषा निर्देशित भाषा के रूप में उल्लेखित किया गया है।

हुयंग चेयांग के द्वारा नेपाल भ्रमण के बाद लिखी गई 'चीन की तांग वंशावली' में यह उल्लेख है कि नेवार 'प्याखं' को सबसे अधिक पसंद करते हैं (मल्ल, १९८१ : ८४)। नेपालभाषा में 'प्याखं' का अर्थ नाटक, चर्या नाच, नृत्य, देवी नाच, गीति नाट्य और सिनेमा है। नेवारों के समाज में 'प्याखं' को जीवन के अभिन्न अंग के रूप में माना जाता है। धर्म संस्कृति से लेकर निर्माण और मनोरंजन तक में 'प्याखं' से संबंधित प्रसंग पाए जाते हैं। 'प्याखं' को जहाँ एक तरफ कला-कौशल के रूप लिया जाता है, तो वही दूसरी तरफ मनोरंजन के रूप में लिया जाता है।

नेवारों में विभिन्न संस्कारगत क्रियाकलाप से लेकर पाटी, पौवा, रास्ता, मंदिर, बहाल, चौक आदि के निर्माण करते वक्त भी नाटकों का निर्माण करके विभिन्न उत्सवों पर मंचित करकर मनोरंजन और हर्षोल्लास मनाने की परंपरा है। इनमें सर्वसाधारण से लेकर शासक और अन्य व्यक्तियों के कलाकार के रूप में सहभागी होकर नाटक मंचन करने की परंपरा है। पहले-पहले संस्कारगत क्रियाकलाप, धर्म, कर्म, पूजापाठ, निर्माण आदि कार्य संपन्न होने के बाद उसकी खुशीयाली मनाने के क्रम में शासक और जनता दोनों द्वारा नाटक मंचन करने की परंपरा थी। मनोरंजन के लिए नाटकों का मंचन होने के कारण उन नाटकों में कथावस्तु के साथ-साथ गीत और विभिन्न प्रकार की ताल और संगीत भी समावेश हुआ करते थे। गीत और संगीत को ज्यादा महत्त्व देने के कारण नेवार समुदाय में अन्य भाषा के नाटकों के मंचन में भी दर्शक अधिकाधिक मनोरंजन प्राप्त करते हैं। दर्शकों की भावना को केंद्रीकृत कराने के लिए मंचित किए गए नाटक अन्य भाषा के होने के बावजूद उनमें बीच-बीच में निर्देशित वाक्य नेपालभाषा के ही होते थे। गीत और संगीत के साथ-साथ अभिनय भी होने के कारण निर्देशित वाक्य नेपालभाषा में होने के बावजूद दर्शक आसानी से समझ जाते थे।

नाटक मंचन करने के लिए ही नेवारों के दरबार और मुहल्ले-मुहल्ले में डबली की व्यवस्था नजर आती है। कलाकारों को रंगमंच पर किसी भी नाटक का मंचन करने से पहले अनुशासित रूप से नाट्येश्वर की पूजा करके सिद्धि प्राप्त करनी होती थी। रंगमंच पर नाटक प्रस्तुत करने के लिए डबली पर जाकर अभिनय करने वाले कलाकार तो होते ही थे, साथ ही साथ उन कलाकारों को रंगमंच पर प्रस्तुत कराकर दर्शकों को आकिर्षत करानेवाले वाद्यवादक और गीत गाने वाले भी कलाकार ही होते थे।

उद्देश्य

इस लेख का उद्देश्य रंगमंच पर प्रदर्शित नेपालभाषा के प्राचीन नाटक का परिचय देना है।

सीमा

प्राचीन रंगमंच पर प्रदर्शित नाटक की जब हम बात करते हैं, तो उसमें **हरिसिद्ध नाटक** से लेकर राजेन्द्र वीर विक्रम शाह द्वारा रचित नाटक की बात आती है, और उसी आधार पर विश्लेषण किया जाता है। अर्थात् प्राचीन नाटक के अध्ययन के क्रम में राणाओं के द्वारा नेपालभाषा के विकास को अवरोध करने से पहले या ज्यापु प्याखं के प्रादुर्भाव होने से पहले मंचित नाटकों ही लिया गया है। प्रकाशित और अप्रकाशित सामग्रियों के आधार पर यह लेख तैयार किया गया है।

२. हरिसिद्धि नाच

नेपाल का सबसे पुराना या पहला मंचित नाच **हरिसिद्ध नाच** ही है। यह ललितपुर के हरिसिद्धि के नेवारों द्वारा प्राचीनकाल से अव तक प्रत्येक वर्या मार्ग शुक्ल पूर्णिमा 'यःमरि पुन्हि' और फागुन शुक्ल पूर्णिमा अर्थात् फागुन पूर्णिमा के दिन हरिसिद्ध में मंचित किया जाने वाला नृत्य है। १२ वर्ष में एक बार नेवारों की बस्ती के सभी डबलियों पर इस नाच को नचाने की परंपरा है। हरिसिद्ध नाच को देवी नाच भी कहा जाता है। अन्य देवी नाचों की तरह इस नाच में भी देवी-देवताओं का मुकुट पहनकर नाचने के बावजूद यह अन्य देवी नाचों से अलग है। यह मुकुट पहनकर तथा गीत गाते हुए वाद्यवादन के ताल पर नाचते तथा देव-देवियों के संवाद बोलते हुए मंचित किया जाने वाला नाच है। इसीलिए हरिसिद्ध नाच न होकर हरिसिद्धि नाटक है। बाद में जाकर इसे नाच कहने की परंपरा चली है।

विश्व नाटक साहित्य को दृष्टिगत करने के बाद यह पता चला है कि भावनृत्य से नाटक की परंपरा की शुरुआत हुई है। लेकिन हरिसिद्ध नाच पहले नाटक, उसके बाद नृत्य और फिर उसके बाद नाटक के रूप में विकसित हुआ है। हरिसिद्धि पुराण के अनुसार नेपाल में सबसे पहला 'नाटक' कालिगत वर्ष २६९० अर्थात् विक्रम संवत् के शुरू होने से ९४ वर्ष पहले सृजित हुआ था। यह धार्मिक नाटक है। यह नाटक सूत्रवीर द्वारा उग्रतारा और नील सरस्वती को मुख्य पात्र मानकर नागेंद्र के बध करने वाली कथास्तु पर आधारित है। इस नाटक को विक्रमसेन राजा ने उग्रतारा देवी की आज्ञा से लिखा था (कसा : १०८४ : ६)। स्व. प्रेमबहादुर कसाःजी ने जयप्रकाश मल्ल द्वारा लिखित नाटक रत्नेश्वर प्रादुर्भाव का संपादन किया है और उक्त संपादित पुस्तक की भूमिका में उल्लेख है कि कलिगत संवत् ३७०४ में विश्वकर्मा ने हरिसिद्धि नाटक को नृत्य में परिवर्तन किया था। इतिहास में यह भी उल्लेख है कि वि.सं १००३ में यह नृत्य वंद हो गया था, और कांतिपुर का मल्ल राजा प्रताप मल्ल ने इसे फिर से मंचित करने की परंपरा की शुरुआत कराई थी, और इस नाच को देखते हुए ही खून डकरकर उनकी मृत्यु हुई थी। बाद में पाटन के गयोजुजु ने इस हरिसिद्धि नाच को नाटक के रूप में लिखकर मंचित कराया। गयोजुजु द्वारा नाटक के रूप में लिखे गए थ्यासफू का फोटेस्टैट इतिहासकार श्री हरिराम जोश के पास सुरक्षित है। मुकुट पहनकर संवाद के साथ दिखाए जानेवाले इस नाटक में पात्रों के द्वारा वोले जानेवाले किसी भी संवाद को नहीं समझा जा सका है। यहाँ तक कि मंचन करनेवाले कलाकार या नाट्यगुरु तक भी संवाद की भाषा नहीं समझ सके हैं। इतना होने के वावजूद इस नाटक का एक अलग पहचान स्थापित है।

भाषा वंशावली में भी यह उल्लेख है कि विक्रमादित्य राजा को उग्रतारा देवी के कथनानुसार कथावस्तु रखकर नायक वनाया गया था (भाषा वंशावली, १ : ६४)। देवमाला वंशावली के अनुसार भी यही पता चलता है कि नाटक विक्रम संवत् की शुरुआत में विक्रमसेन द्वारा स्थापित किया गया। लिंडा का कथन है कि यह सूत्रवीर द्वारा नागेंद्र का बध करने वाली कथावस्तु पर आधारित नाटक है।

VS I Vikramsen established drama based on the story of Sutrabir killing Nagengra (Linda 1988:5)

बाद में सिद्धिनर सिंह मल्ल ने केवल हरिसिद्ध में ही इस नाटक का मंचन कराने की परंपरा स्थापित की। संवत् ... ८... में योगेंद्र मल्ल ने १२ वर्ष में एक बार नेवारों की सभी डबली में इसका मंचन कराने की परंपरा चलाई, जो आज भी कायम है (बज्राचार्य, ११०२ : ७०)। गोपालराज वंशावली में भी उल्लेख है कि यह नाच ने.सं ४९५ में पाटन में मंचित हुआ था (बज्राचार्य और मल्ल १९९५ : ६४)। लिंडा का The Jai Pyakhan

in Historical and Cultural Prespective नामक आलेख में थ्यासफू को संदर्भ में प्रस्तुत करते हुए कहा गया है कि गयोजुजु और हरिसिद्धि के नाच में संबंध था । डॉ. जनकलाल वैद्य ने आम आदमी की तरह हरिसिद्धि नाच को भाव नृत्य कहा है (वैद्य, १०९८७ : ३८) । इस नाटक की विशेषता यह है कि इसके संवाद की भाषा अबुझ होने के बावजूद संवाद बोलकर मंचित किया जानेवाला नाटक है । यह नाटक बहुत पुराना और जीवंत होने के कारण इसका उल्लेख अभिलेखों, थ्यासफू, घटनावली और धर : पौ के साथ-साथ अन्य ऐतिहासिक सामग्रियों में पाया जाता है ।

३. पूर्व प्राचीनकाल

पूर्व प्राचीनकाल का मतलब नेपाल संवत् की शुरुआत से उपत्यका राज्य के विभाजन होने के पूर्व तक का समय है । ताड़पत्र, थ्यासफू, घटनावली, वंशावली, शिलापत्र, धर:पौ आदि ऐतिहासिक सामग्रियो के अध्ययन से यह पता चलता है कि पूर्व प्राचीनकाल में नाटक का संबंध यहाँ की संस्कृति से रहा है । यह पाया गया है कि विवाह, व्रतबंध, दीक्षा,उपनयन, विहार निर्माण करते समय सांस्कृतिक क्रियाकलाप के अंतर्गत दरवार और जनता दोनों का मनोरंजन कराने के ख्याल से कलाकारों द्वारा नाटकों का मंचन कराया जाता था । नाटक मंचन सांस्कृतिक पक्ष है । इसकी साहित्यिक पक्ष से प्रस्तुति करने के वदले सांस्कृतिक पक्ष से जनता का मनोरंजन कराना अधिक महत्त्वपूर्ण बात है । नाटक मंचन कराने का मतलब है उस समय में इसका जीवन से अभिन्न संबंध को स्वीकार करना । ऐसा नहीं है कि राजा स्वयं के द्वारा रचित नाटकों में ही कलाकार बनकर अभिनय करते थे, बल्कि वे अन्य किसी के द्वारा भी रचित नाटकों में अभिनय करते थे । यह एक बहुत सुंदर और प्रजातांत्रिक परंपरा के रूप में दिखाई देता है ।

ने.सं. ३७६ में जयदेव का नागपदुबन्ध की विधि-विधान करने के समय में **नही प्याखं** का मंचन किया गया था (बज्राचार्य और मल्ल, १९८५ : ४७) । पंडित शंपलखुं द्वारा लिखित नाटक **रत्नगत** में श्री जयरूद्र मल्ल देव ने खुद कलाकार बनकर ने. सं. ४४० में मंचन किया था । उस नाटक को देखने के लिए जयरि मल्ल भी उपस्थित हुआ था (उही, ४५) । ने. सं. ४९७ में धर्म मल्ल देव के जातोत्सव कर्म में **चतुर रामायण** नामक नाटक का मंचन किया गया था । श्री चंपादेव के द्वारा फुरो विहार बनाकर चैत्य की स्थापना करने के उपलक्ष्य में **चार अंक का रामायण** का मंचन कराया गया था (उही,२९) । ने.सं. ५०३ में ललितपुर के श्रीधर्म मल्ल के विवाह के उपलक्ष्य पर तिरहुत के भारदारों द्वारा लिखे गए ग्रंथ को देखकर माणिक्य ने **भैरवानंद** नाटक लिखकर तथा २४ दिनों तक उसका अभ्यास कराकर विभिन्न दरवारों में और उसके बाद सर्वसाधारण जनता के लिए विभिन्न स्थानों पर मंचन करवाया था। इस नाटक में चार भारदारों ने भी अभिनय किया था।

उपर्युक्त नाटक संस्कृत भाषा में लिखे गए थे। इसके बावजूद मल्ल राजाओं ने अपने दरवार के अंतर्गत के विभिन्न सांस्कृतिक उत्सवों में दरवार के साथ-साथ सर्वसाधारण जनता को मनोरंजन कराने के उद्देश्य से उन नाटकों का मंचना कराया था ।

राम भारो द्वारा लिखा गया **वीरवाहु** नेपालभाषा में लिखा गया पहला नाटक है, जो ने.सं. ५३८ में ललितपुर के इवहलि बनाए जाने के उपलक्ष्य में मंचित हुआ था । ने. सं. ५४७ जेठ एकादशी के दिन इस नाटक का मंचन छह भाई भारदारों द्वारा नाटक लिखे जाने के ९ वर्षों के बाद इबहिल बनाने का कार्य संपन्न करके गजूर रखे जाने के उपलक्ष्य में किया गया था। इस नाटक को देखने के लिए व्योतिर मल्ल भी इबहिल आए थे (हृदय, ने. सं १०९१ : १३-१४) ।

अभिलेख स्थापना करने की परंपरा लिच्छविकाल में शुरु होने पर भी मध्यकाल में प्रचुर मात्रा में अभिलेखों की स्थापना की गई । नेवारों के मुहल्लों में नासःद्यः (नासल-देवल) की स्थापना करते वक्त अभिलेख रखने का चलन है । राजा, राजपरिवार या सर्वसाधारण जनता के द्वारा भी किसी देवालय, मंदिर, पाटी के निर्माण या मंदिर, देवालय, पाटी का जिर्णोद्धार करते वक्त अभिलेख रखने की परंपरा थी । अभिलेख रखते वक्त निर्माण,जिर्णोद्धार करने वाले,पूजा करने वाले व्यक्ति या गुठी अंशधारियों के नाम उल्लेख करने की परंपरा थी। ऐसे कुछ अभिलेखों में सिद्धिदायक नासः द्यः (नाट्यश्वर) पूजा करने वाले, नासः द्य : निर्माण किए हुए स्थान पर प्याखों के प्रदर्शन करने की बात लिखी गई है । किसी-किसी अभिलेख में तो नाटककार, नाटक, नाटक में भाग लेने वाले कलाकार, वाजा बजाने वाले कलाकार, नाटक सिखाने वाले गुरू और भेषभूषा की व्यवस्था करने वाले व्यक्तियों के नाम उल्लेख किया हुआ पाया जाता है। इतना ही नहीं, निर्देशक, बाजा बजाने वाले, अभिनय

करने वाले कलाकारों को विशेष उपाधि भी दी जाने की परंपरा नजर आती है। जैसे बाजंगुरू (वाद्यगुरू), कल्यागुरू (आभूषण गुरू), तिलाहिला गुरू (भेषभूषा गुरू) आदि उल्लेख है। इस तरह विभिन्न कलाकारों को उपाधि देने का अर्थ नाटक से संबंधित सभी का सम्मान करना है।

४. उत्तर प्राचीनकाल

इतिहास में यह उल्लेखित है कि काठमाँडू उपत्यका के विभाजनोपरांत के स्थापित मल्ल राजाओं के अंतिम कालखंड को उत्तर प्राचीनकाल कहा जाता है। लेकिन इसके साथ-साथ एक और मान्यता भी जीवित है। उस मान्यता के अनुसार राजेंद्र वीर विक्रम शाह मल्ल के द्वारा मल्ल राजाओं के मानिंद ही विषयवस्तु, प्रस्तुति, भाषा-शैली, गीत-संगीत को समावेश करके महात्सव नाटक लिखे गए नाटक के कारण वहाँ तक की समयावधि को उत्तर प्राचीनकाल कहा जाता है।

प्राचीनकाल में स्थापित नाटक और संस्कृति का संबंध उत्तर प्राचीनकाल में भी कायम ही रहा। इस समय भी पहले की तरह ही धार्मिक और सांस्कृतिक क्रियाकलापों के अवसर पर मनोरंजन प्रदान करने की दृष्टि से नाटकों का मंचन किया जाता था। विवाह, व्रतबंध, उपनयन जैसे संस्कारगत क्रियाकलापों के साथ-साथ देवी-देवताओं के मंदिर निर्माण, जिर्णोद्धार, **पाटी-पौवा** और रास्ते वनाए जाने के उपलक्ष्य में उत्सव मनाकर मनोरंज प्रदान कराने की दृष्टि से नाटकों का मंचन किया कराया जाता था। भक्तपुर के मल्ल राजाओं में अपने युवराजों के विवाह के अवसर पर स्वयं द्वारा लिखे गए नाटकों का मंचन कराने की परंपरा नजर आती है। जैसे कि ने. सं ८०७ में भूपतींद्र मल्ल के विवाह में जितामित्र मल्ल ने **मदालसा** हरण नाटक लिखकर मंचन कराया था और इसी भूपतींद्र मल्ल ने ने. सं. ८३३ में रणजीत मल्ल के विवाह में **उषाहरण** नाटक लिखकर मंचन कराया था।

इतिहासकार स्व.धनवज्र बज्राचार्य ने श्री ५ वीरेन्द्र वीर विक्रम के राज्याभिषेक के अवसर पर प्रकाशित गोरखापत्र के विवाह विशेषांक में अपने आलेख **'साहित्य, संगीत और कला की अभिवृद्धि में राजकीय विवाहोत्सव का प्रभाव'** में लिखा है कि राजाओं के उत्तराधिकारियों के विवाह के अवसरों पर राजाओं द्वारा नाटक लिखकर मंचन कराने की परंपरा थी।

विभिन्न उत्सवों में मंचित नाटकों को देखने के लिए एक राज्य का राजा दूसरे राज्य में भी जाया करते थे। इससे जहाँ एक तरफ नाटक मंचन कराने वालों को प्रोत्साहन मिलता था तो दूसरी तरफ एक राज्य के दूसरे राज्य का राजनैतिक और सामाजिक संबंध मजबूत होता था। ने.सं. ७९४ में भक्तपुर के जितामित्र मल्ल के भाई उग्र मल्ल के विवाह के उपलक्ष्य में मंचित 'दरशण' नाटक देखने के लिए ललितपुर के राजा श्री निवास मल्ल भक्तपुर जाकर पांच दिनों तक रहकर वापस लौटे थे। (Regmi III, 1966 : 90)

एक राज्य के दरवार में सांस्कृतिक अवसरों पर आयोजित नाटक को दूसरे राज्य में ले जाकर मंचन कराने की भी परंपरा थी। उस समय आयोजकों द्वारा नाटकों की उत्कृष्टता के आधार पर पुरस्कारादि देने की भी व्यवस्था होती थी। भुपींद्र मल्ल के विवाह के उपलक्ष्य में कांतिपुर और ललितपुर दरवार के नाटक को भक्तपुर में ले जाकर मंचन कराया गया था। इतना ही नहीं, विभिन्न स्थान और गाँव के जनता भी नाटक ले जाकर मंचन कराते थे। भूपींद्र मल्ल के विवाह में नाटकों के बीच प्रतिस्पर्धा कराई गई थी जिसमें कांतिपुर के नाटक को ने रू. २०, नादल के नाटक को ९ मोहर, ठिमी, साँखु, गोल, चांगु आदि से लाए गए नाटकों को ६-६ मोहर और पनौती, नाला और श्रीखंडपुर के नाटक को २-२ मोहर पुरस्कार के रूप में प्रदान किया गया था। राज्य स्तर से लेकर ग्रामीण स्तर तक की प्रतिस्पर्धा हुई थी।

इतना ही नहीं, सर्वसाधारण जनता के द्वारा तैयार किए गए नाटकों को देखने के लिए राजा-रानी भी आया करते थे। ठिमी के देगुत्वाः के अभिलेख के अनुसार ने. सं ७०६ में पुमागत राजा के द्वारापाल नरसिंह के द्वारा तैयार किया गया नाटक **कथःप्याखं** को देखने के लिए भक्तपुर की गंगा देवी, त्रैलोक्य मल्ल और त्रिभुवन मल्ल जनता के बीच उपस्थित थे। उक्त अभिलेख में बाजा बजानेवाले गुरुओं, अभिनय करनेवाले कलाकारों और संगीत देनेवाले कलाकारों के नाम भी उल्लेखित हैं।

'कथा प्याखन ... पिदना। गुरूजि... गायन...प्याखनम्हे ... पुम्हांगत राजाया पान दयका प्याखन श्री श्री श्री जयगंगा देवी थुकुरिनि श्री श्री श्री जय त्रैलोके मल्ल देव श्री श्री श्री जय त्रिभुवन मल्ल देव त्रिभय प्रभु थाकुरस वैगसे दयेका नरसिंह दुवारन दयेका...ने.सं ७०६

कार्तिक शुक्ल एकादश्या तिथौ पुस्य नक्षत्रे सौभाग्य योग वृहस्पतिबार (धनबज्र बज्राचार्य, अप्रकाशित मध्यकाल का अभिलेख प्रोजेक्ट)

सर्वसाधारण जनता द्वारा अपने मुहल्लों के सड़कों पर समाज में व्याप्त कुरीति और परंपरा पर व्यंग्य करके नाटकों के प्रदर्शन का उदाहरण '**कथ प्याखं**' भी है । जयप्रकाश मल्ल के समय में काठमाँडू के तँलाछि के कुमालों ने अपने मुहल्ले में 'कथ : प्याखं' का नाट्य-प्रदर्शन किया था । काठमाँडू के ऊपरी भाग में रहने वाले कुमालोंने छह वर्षो तक 'कथ: प्याखं' का नाट्य-प्रदर्शन किया था, जबकि काठमाँडू के नीचले भाग में रहने वाले कुमालों ने **बाथ प्याखं** का नाट्य-प्रदर्शन अपने मुहल्ले, सड़कों और नाट्यशवर आदि जगहों में लगातार छह वर्षो तक किया था । यह परंपरा वि.सं २०२५-२६ तक कायम थी ।

काठमाँडू के नीचले भाग में प्रदर्शित होने वाले 'बाथ प्याखं' और ऊपरी भाग में प्रदर्शित होने वाले 'कथ प्याखं' दोनों को प्रत्येक १२ वर्ष में एक साथ सड़को पर प्रदर्शित किया जाता था । वर्तमान में यह परंपरा बंद हो चुकी है । लेकिन इन नाटकों का मंचन करने वाले कुमाल का वंश आज भी जीवित हैं ।

ललितपुर के हरिसिद्ध गाँव के बादे मुहल्ले में विद्यमान कुमारी दीवार के अभिलेख में यह लिखा गया है कि ने. सं ८३० में वहाँ की जनता ने संयुक्त रूप में श्री कलंक देवता से श्री ३ गणेश तक के रास्ते में पत्थर बिछाकर **राक्षेस प्याखं** का प्रदर्शन किया था । ने. सं. ८४१ में **टोखा के तपरा** के बाद के मुहल्ले में स्थापित डबली का मरम्मत करके **ज्ञानवति नाटक** का प्रदर्शन किया गया था । इस तरह के नाटक तैयार करके उसके मंचन में जनता के साथ-साथ राजाओं की भूमिका और सहभागिता रहती थी । ने.सं ८६६ में भक्तपुर के महेश्वरी देवी के मंदिर में गजूर रखकर ङकबार पाटी बनाने के क्रम में रणजीत मल्ल और पंचे समूह के द्वारा '**रूकमणि हरण**' तैयार करके मंचन कराया गया था (बज्राचार्य, ने.सं. ११०९ : १४) । उसी प्रकार कांतिपुर के जयप्रकाश मल्ल ने ने.सं ८७७ में पशुपति में रहे डबली की मरम्मत करके **श्री ३ पशुपति प्रादुर्भावादि धर्म** नामक नाटक का मंचन कराया था (वही, १४) ।

दरवार के अंदर आयोजित सांस्कृतिक उत्सवों के अवसर पर विभिन्न स्थानों से भी नाच एवं नाटक ले जाकर उनका मंचन कराने की परंपरा थी । ने.सं १८०७ में भूपतींद्र मल्ल के विवाह में चाँगु, टोखा, नादल, ठिमी, साँगा, चपलिगाउँ आदि से नाच और नाटक ले जाकर मंचन कराया गया था । राज्य की सुरक्षा के लिए व्यवस्था किए गए क्वाठों ने भी यह काम किया । वैसे अवसरों पर व्यक्तिगत तौर भी नाटक तैयार करके मंचन करने की परंपरा रही है । रणजीत मल्ल के विवाह के उपलक्ष्य में बासुदेव थुलु द्वारा लिखित '**हग्गंल**' और '**भैरव प्रादुर्भाव**' नामक नाटकों का मंचन कराया गया था ।

४ (क) उत्तर प्राचीनकाल के नाटक

वीर पुस्तकालय में विद्यमान वृहत्सूची पत्र में १४५ नाटक नजर आने के बावजूद केवल ४४ नाटक ही नेपालभाषा के नाटक के रूप में दिखाई देते हैं। शांतहर्ष बज्राचार्य के 'मल्लकालया मुक्क' नेपालभाषाया नाटक धल:' में उल्लेखित १०७ नाटकों में कुल २२ और आशा सफूकुथि के प्याखं धल: के अनुसार ५८ नाटकों में कुल १५ नाटक ही नेपालभाषा के नाटक हैं । दूसरी सूची में नाटकों के नाम की पुनरावृत्ति होने की संभावना है । उत्तर प्राचीनकाल में जितने भी नाटक हैं, वे सभी मल्ल राजाओं के द्वारा लिखे गए हैं । प्राचीनकाल में जितने भी नाटक पाए जाते हैं, वे विभिन्न उत्सवों के अवसर पर मंचन कराने के उद्देश्य से ही लिखे गए थे। मल्ल राजाओं में सबसे ज्यादा नाटक भक्तपुर के राजाओं द्वारा लिखे गए । भक्तपुर के जयप्रकाश मल्ल द्वारा लिखित '**मूलदेव शशिदेव**' पहला पूर्णांकी नाटक है और सबसे ज्यादा नाटक लिखने वाले भूपतींद्र मल्ल हैं। इतना होन के बावजूद ने.सं ८२६ में लिखित **विक्रमचरित**, **मयूरध्वजोपाख्यान**, **पदमावती** और **श्रीखण्ड चरित** ही नेपालभाषा में लिखे गए थे । मल्ल राजाओं में सबसे ज्यादा नाटक भक्तपुर के अंतिम मल्ल राजा रणजीत मल्ल ने लिखा था । उनके द्वारा नेपालभाषा में लिखे गए नाटकों में प्रमुख हैं, **शनेश्वर रोहिण्युपाख्यान** ने.सं ८६२, **चन्द्रोगदोपाख्यान** नाटक ने.सं ८६५, **हरगण कथा** ने.सं ८७५, **ययात्युपाख्यान** ने.सं ८८१, **गणेश दिक्पाल** ने.सं ८८५, **कृष्ण चरित्रोपाख्यान**, **मदन चरित्र नाटक**, **गोरक्षोपाख्यानम् दिक्पाल**, **गणेशोपाख्यानम्**, **पृथूपाख्यानम्**, **सुब्रम्हव्योपाख्यानम्**, और **षड्दर्शन** ।

कांतिपुर की ओर दो मल्ल राजाओं जगजय मल्ल और जयप्रकाश मल्ल ने कुल ५ नाटकों की सृजना की है, जिसमें जगजय का **सुन्दर कुमार** और जयप्रकाश

मल्ल के **वीरध्वजोपाख्यान** ने.सं ८७७, **रत्नेश्वर प्रादुर्भाव** ने.सं ८८०, **स्वस्थानी व्रत कथा** और **माधवोपाख्यान** हैं ।

एक पत्र प्राप्त हुआ है जिसमें यह बात लिखी गई है कि ललितपुर के मल्ल राजा सिद्धिनर सिंह ने ने.सं ७५१ में **'एकादशी व्रत'** नाटक लिखा था (बज्राचार्य, ने. सं ११०९ : ३६) । विक्रम संवत् के संस्थापक विक्रमादित्य की जीवनी पर **'विक्रमादित्य'**नाटक मिलता है ।

उत्तर प्राचीनकाल में मल्ल राजाओं ने जिस शैली में नाटक लिखा था, उसी शैली में शाह राजा राजेंद्र वीर विक्रम ने भी ने. सं ९५१ में **महासत्व** लिखा था (महासत्व, १०८७ : ९२) । उक्त महासत्व नाटक का बाद में भी दबू प्याखं के रूप में गाईजात्रा से लेकर इन्द्रजात्रा तक मंचन कराने की परंपरा जीवित रही । क्योंकि यह नाटक किसानों के सांस्कृतिक धरोहर के रूप में स्थापित हो चुका था ।

उत्तर प्राचीनकाल में सर्वसाधारण जनता के द्वारा लिखे गए नाटकों की संख्या बहुत न्यून है । उस वक्त सर्वसाधाराण जनता के द्वारा नाटक लिखे जाने पर भी नाटककार के रूप में राजाओं के नाम लिखे जाने की परंपरा थी । चाहे जनता कितने भी महत्त्वपूर्ण कार्य कर दे, राजाओं के गुणगान गाने की ही परंपरा थी । यहाँ तक कि सर्वसाधारण जनता के द्वारा प्रदर्शित किए जाने वाले नाटक 'कथः' और 'बाथ' में भी शाह राजाओं के समय में मल्ल राजाओं की स्तुति गान करने की परंपरा थी ।

ने.सं ८१६ में रत्न बज्राचार्य ने बौद्ध धर्म में उपासना की जाने वाली बसुन्धरा देवी के नाम पर **'बसुन्धरा'** नामक नाटक लिखा था । इन्द्रजात्रा में बौद्धों के द्वारा भाद्र शुक्ल तृतीया के दिन बसुन्धरा की पूजा करने की परंपरा होने के कारण **बसुन्धरा** नाटक की सृजना करना स्वाभाविक नजर आता है । हो सकता है, यह नाटक बौद्ध समुदाय में बसुन्धरा देवी की महिमा का ज्ञान दिलाने के लिए लिखा और प्रदर्शित कराया गया हो । आशासफू कुथि के प्याखं धलः में ने.सं. ७६४ में लिखित बसुन्धरा नाटक दिखाई देता है । इन्द्रजात्रा में बसुन्धरा देवी के नाम पर उपासना करने वाले नेवार समुदाय में बसुन्धरा नामक नाटक का लिखा जाना और बाद में उसका मंचन होना स्वाभाविक ही है ।

आशासफू कुथि के ही प्याखं धलः में ने.सं. ९२० में यह उल्लेख है कि देवपानन्द ने **हनुमान** नामक नाटक लिखा था । भक्तपुर में आज भी इन्द्रजात्रा के अवसर पर हनुमान नाच को कांतिपुर के हनुमानढोका के महालक्ष्मी नाच के साथ नचाने की परंपरा जीवित है । पहले नाटक के रूप में मंचित किये जाने वाले इस नाटक को वर्तमान में नृत्य के रूप में मंचित करने की परंपरा है । पृथ्वीनारायण शाह द्वारा भक्तपुर के शासकों को भगाने पर एक समूह बाग्लुंग पहुंचा था । वह समूह आज तक हनुमान नाच नचाते आया है । पिछले साल चैत महीन में बाग्लुंग के नेवारों ने भक्तपुर और कांतिपुर में हनुमान नाच का मंचन कराया था । यह अनुमान है कि रामायण के रामभक्त हनुमान कथा से संबंधित यह नाच पहले नाटक के रूप में और बाद में नृत्य के रूप में स्थापित हुआ होगा । इसमें प्राचीन नाटकों की तरह गीत, ताल और संगीत पाये जाते हैं और उसी आधार पर इसका मंचन-प्रदर्शन होता है ।

ने.सं ८३१ में रूद्र सिंह देवज्ञ ने **'धान्यवति'** और ने.सं ८३६ में शिवनारायण ने **रत्नावती हरण** नामक नाटक नेपालभाषा में लिखा था । सर्वसाधारण जनता के द्वारा लिखे जाने वाले नाटकों का विषयवस्त का आधार प्राचीन ग्रंथ महाभारत,रामायण, पुराण और जातक हुआ करते थे । उनका मंचन विभिन्न उत्सव और पर्व-त्योहारों पर होता था ।

४ (ख) नेपालभाषा के साथ अन्य भाषाओं का प्रयोग

चाहे पूर्व प्राचीनकाल हो या उत्तर प्राचीनकाल, एक ही नाटक में दो या तीन भाषाओं का प्रयोग पाया जाता है । विभिन्न भाषाओं के प्रयोग का उद्देश्य यही था कि नाटककार यह बताना चाहते थे कि उनमें नेपालभाषा के अतिरिक्त अन्य भाषाओं का भी ज्ञान है । इसके साथ-साथ अन्य भाषा-भाषी भी ऐसे नाटकों को बड़े आनंदपूर्वक देखते थे । इतिहास में यह बात स्पष्ट रूप से उल्लेख है कि मल्ल राजा उपत्यका के बाहर और भारत के मैथिली विद्वानों से साहित्यिक विचार विमर्श किया करते थे । विभिन्न भाषाओं के प्रयोग करके लिखे व मंचन कराए जाने वाले नाटकों में निर्देशित वाक्य नेपालभाषा में रखना स्वाभाविक है । उस वक्त के नाटकों में गीत और संगीत का बुहत ज्यादा प्रयोग होता था । इसलिए उन नाटकों के विवरण, दृश्य, संगीत, गीत आदि के प्रयोग के बारे में नेपालभाषा में बताने पर सर्वसाधारण जनता ज्यादा आनंदित होती थी और मनोरंजन प्राप्त करती थी । नेपाल राष्ट्रीय अभिलेखालय के माइक्रोफिल्म रील नं वि. ६/३ में यह पाया जाता है कि

सर्वप्रथम जयस्थिति मल्ल ने नेपालभाषा और मैथिली भाषा के माध्यम से १२३ पृष्ठों का नाटक **रूक्माँगद चरित्र** लिखा था। उसी प्रकार ने.सं ७६१ में सिद्धिनर सिंह मल्ल ने भी नेपालभाषा और मैथिली भाषा का प्रयोग करके **कार्तिक नाच** लिखा था। ने.सं ८०६ में जितामित्र मल्ल ने **नवदुर्गा नाटक**, ने.सं ९०९ में **जैमिनी भारत** नाटक नेपालभाषा और संस्कृत भाषा में लिखे थे। इस परंपरा को भूपतीन्द्र मल्ल ने भी कायम रखा (बज्राचार्य, ने.सं ११०५ : ३५-४३)।

ने.सं. ४८०४ में जितामित्र ने संस्कृत, नेपालभाषा और मैथिली तीन भाषाओं का प्रयोग करके **कालिका मंथनोप्याख्यान** और ने.सं ८१० में बंगाली, संस्कृत, मैथिली और नेपालभाषा यानी कि ४ भाषाओं का प्रयोग करके **गोपीचन्द्र नाटक** लिखकर उनका मंचन कराया था।

प्राचीनकाल के नाटकों में सबसे ज्यादा यानि कि ४ भाषाओं का प्रयोग करके लिखा गया नाटक गोपीचन्द्र ही है, जिसका रचयिता जितामित्र हैं। सर्वसाधारण जनता के द्वारा नाटक लेखन में केवल नेपालभाषा और संस्कृत का ही प्रयोग किया गया है। केवल राजाओं ने ही अपने नाटकों में मैथिली भाषा का प्रयोग किया है।

४(ग) एक ही नाटक विभिन्न व्यक्तियों के द्वारा लिखा जाना

प्राचीनकाल में यह भी देखा गया है कि एक ही नाटक को विभिन्न व्यक्तियों ने लिखा है। लेकिन एक ही नाटक को विभिन्न व्यक्तियों ने अपने-अपने तरीके से लिखा है। इन नाटकों में कथावस्तु की प्रस्तुति, दृश्य, अंक एवं गीत और संगीत में पृथकता है। जगज्योतिर मल्ल, जगतप्रकाश मल्ल, भूपतीन्द्र मल्ल और रणजीत मल्ल ने एक ही नाम का नाटक **'उषाहरण'** नेपालभाषा और मैथिली भाषा में लिखा है। इसके बावजदू प्रत्येक नाटकों में भिन्नता पाई जाती है। जहाँ भूपीन्द्र मल्ल के द्वारा लिखा गया नाटक **उषाहरण** सात अंको था तो वहीं रणजीत मल्ल का नाटक नौ अंक का था। इसी नाम से सुरेन्द्र वीर विक्रम के राज्यकाल में किसी अज्ञात व्यक्ति ने भी लिखा था (बज्राचार्य, १११५ : ५०)। ने.सं. ८०७ में जितामित्र मल्ल ने **मदालसता हरण** लिखा था । ललितपुर के श्रीनिवास मल्ल ने भी यही नाटक लिखा था। न केवल शासक, बल्कि सर्वसाधारण जनता के रूप में त्रिरत्न मुनि गुभाजु ने भी इस नाटक को लिखा था। योगनरेन्द्र मल्ल ने भी **मदालसता हरण** नाटक नेपालभाषा और मैथिली भाषा में लिखा है।

जगतप्रकाश मल्ल ने **मूलदेव शशिदेव** नामक नाटक नेपालभाषा में लिखा था और इसी नाटक को भूपीन्द्र मल्ल ने ने.सं ८२६ में संस्कृत और मैथिली भाषा में लिखा था।

नल चरित्र नाटक को केवल सिद्धिनरसिंह मल्ल ने ही नहीं लिखा था, बल्कि ने. सं. ८३३ में रणजीत मल्ल के विवाह के उपलक्ष्य में ठिमी से लाकर दरवार में इस नाटक का मंचन कराया गया था। ने.सं ८४५ में रणजीत मल्ल के द्वारा लिखे गए नाटक **नल चरित्र** का मंचन कराया गया था।

५. प्राचीन नाटकों की विशेषताएं

प्राचीन नेपालभाषा के नाटक संस्कृत नाटकों से प्रभावित होने के बावजूद उनसे काफी भिन्न हैं। प्राचीन नेपालभाषा के नाटकों की सृजना साहित्यिक दृष्टि से नहीं, बल्कि मनोरंजन और आनंद प्रदान करने की दृष्टि से लिखे गए हैं। इस प्रकार नेपालभाषा में अपनी खुद की पहचान वाले नाटक प्रशस्त हैं।

५(क) कथावस्तु

प्राचीन नाटकों की कथावस्तु पौराणिक ग्रंथ जैसे महाभारत, रामायण, पुराण और जातक आदि पर आधारित है। उस वक्त प्राचीन ग्रंथों की कथावस्तु का हूबहू नक्कल नहीं करके घटना और व्यक्तित्व का नाटकीकरण करके नाटक लिखे गए हैं। उस वक्त आदमी धर्म में विश्वास करते थे। इसीलिए उस वक्त के नाटक अधिक प्रचलित हो गए।

कथावस्तु में राजा-रानी, युवराज, राजकुमारी आदि दो परिवार होता है। राजकुमारी को खास करके दैत्य तंग करते हैं, भगाते हैं। दैत्यों के प्रकोप से राजकुमारी को राजकुमार के द्वारा बचाकर उनके मातापिता को सौंप दिया जाता है। राजकुमारी के मातापिता अपनी पुत्री का विवाह उसी राजकुमार से कर देते हैं। बहुत से नाटकों को संस्कृत नाटकों की तरह ही संयोगांत दिखाया गया है। लेकिन नाटक की कथावस्तु एक होने के अतिरिक्त उसकी प्रस्तुति और दृश्य में काफी भिन्नता है।

प्राचीनकाल के कुछ नाटकों के विषयवस्तु में

भिन्नता भी पाई जाती है। जैसे जगतप्रकाश मल्ल के द्वारा लिखे गए नाटक मूलदेव शशिदेव नाटक में महादेव और पार्वती मर्त्यमंडल के मनुष्य के चरित्र का अवलोकन करके भेष बदलकर आए दो ब्राह्मण भाईयों के द्वारा बंद व्यापार में लगे व्यापारी की पत्नी को पटाने की घटना दिखाई गई है। भूपतीन्द्र मल्ल के द्वारा भक्तपुर की तलेजु भवानी को ११ गजूर चढ़ाने के समय लिखकर मंचित किया गया नाटक **विक्रमचरित** विक्रमादित्य के न्यायिक स्वाभाव के आधार पर लिखा गया नाटक है। भुपतीन्द्र मल्ल के द्वारा लिखे गए नाटक **चोर चक्रवर्ती** में एक साधारण व्यक्ति चोर होकर मेहनत करने के बाद चक्रवर्ती राजा बनने की कथा है।

५(ख) पात्र

प्राचीन नेपालभाषा के नाटकों के पात्रों में देवगण, मनुष्यगण, राक्षसगण एवं पशुपंक्षी आदि नजर आते हैं। हाँ, यह जरूर है कि नाटकों के मुख्य पात्र संस्कृत नाटकों की तरह साधारण व्यक्ति न होकर विशेष गुण संपन्न धीर, वीर, साहसी नजर आते हैं। जैसा कि जयप्रकाश मल्ल के नाटक **रत्नेश्वर प्रादुर्भाव** का रत्नचूड़, भूपतीन्द्र मल्ल के नाटक **विक्रमचरित** का विक्रमादित्य, राजेन्द्र वीर विक्रम के नाटक **महासत्व** का महासत्व राजकुमार का चरित्र साधारण व्यक्तियों से पृथक है। नाटकों में प्रयुक्त देवगण अन्य पात्रों की अपेक्षा अलौकिक शक्तियुक्त होते हैं और राक्षण गण कोधित होते हैं और बुरे कार्य करते हैं। जैसा कि **मूलदेव शशिदेव** में महादेव पार्वती ने ब्राह्मण भाईयों के रूप में भेष बदलकर व्यापार में लगे व्यापारी की पत्नी के चरित्र अवलोकन करने गए हैं।

५(ग) संघर्ष

प्राचीन नेपालभाषा के नाटकों के मंचन कराने के क्रम में दर्शकों में देवगणं के प्रति श्रद्धाभक्ति-भाव और और राक्षस गण के प्रति घृणा उत्पन्न कराने के ख्याल से राजाओं को गुणी, विचारवान आदि व्यक्तित्व के रूप में चित्रित करते हुए उनके और दैत्यगण के बीच द्वंद्व दिखाया जाता है। दैत्य गण नाटकों में शक्ति प्रदर्शन करते हैं। लेकिन मनुष्य के शरीर में राक्षसों से सामना करने की शक्ति नहीं होने के कारण वहाँ बौद्धिक पक्ष का महत्त्व देते हुए बाहरी शक्ति को बौद्धिक शक्ति से पराजित करने की कला दिखाई जाती है। और अंत में बाहरी शक्ति को वैचारिक शक्ति से पराजित होते हुए दिखाया जाता है। नाटकों में सत्य और असत्य में द्वंद्व दिखाकर असत्य के ऊपर सत्य का विजय दिखाते हुए नाटक का अंत किया गया होता है।

५(घ) नाटक का अंत

यह सच है कि प्राचीन नेपालभाषा के नाटकों में सत्य की जय, असत्य का पराजय दिखाया गया है। लेकिन इन नाटकों का अंत संस्कृत नाटकों की तरह संयोगांत या वियोगांत के रूप में नहीं, बल्कि संयोगांत और वियोगांत दोनों का आभाष कराते हुए किया गया है। **विक्रम चरित, रत्नेश्वर प्रादुर्भाव** और **ययात्युपाख्यान** नाटक में संयोगांत का आभाष होते हुए भी संस्कृत नाटक के संयोगांत से भिन्न है। **महासत्व** और **मूलदेव शशिदेव** संयोगांत नाटक नहीं है, किंतु यह लोककल्याण की भावना से प्रेरित है।

५(ङ) अंक विभाजन

प्राचीन नेपालभाषा के नाटकों में प्रत्येक अंक में भी विभिन्न दृश्य पाए जाते हैं। संस्कृत नाटकों की तरह ५ से १० अंकों का संयोजन आवश्यक नहीं है। बल्कि यहाँ आधुनिक नाटकों की तरह ३ अंकों के संयोजन में विभिन्न दृश्यों को दिखाया गया है। आधुनिक नाटकों की तरह इन नाटकों में ३ अंकों के भीतर विषय प्रवेश, मध्य और अंत को आधार बनाया गया है। प्रत्येक अंक में १५, २०, ७१ दृश्य भी रखे गए हैं। उदाहरण -

मूलदेव शशिदेव
अंक१दृश्य ८
अंक२दृश्य १५
अंक३दृश्य २०

विक्रम चरित
अंक १दृश्य ७
अंक २दृश्य ८
अंक ३दृश्य १६

ययात्युपाख्यान
अंक १दृश्य ८
अंक २दृश्य १४
अंक ३दृश्य २२
अंक ४दृश्य ३६
अंक ५दृश्य ५३

५(च) मंचित डबली (रंगमंच)

प्राचीन नेपालभाषा में जितने भी नाटक हैं, सारे के सारे मंचन कराने के उद्देश्य से लिखे गए हैं। दर्शक नाटकों को अच्छी तरह से देख सकें, इस खयाल से डबली (रंगमंच) की व्यवस्था की गई होती है। नेवारों के मुहल्ले से लेकर दरवारों के अंदर के रंगमंच सभी के लिए उपलब्ध होते थे, आज भी हैं। नाटकों को अच्छी तरह देखा जा सके और उसका पूरा आनंद लिया जा सके, इस ख्याल से रंगमंच पर केवल एक तरफ से ही नाटक प्रस्तुत नहीं किया जाता। बल्कि तीन तरफ से नाटक की प्रस्तुति की जाती है। नाटकों को और अधिक मनोरंजनात्मक तथा आनंददायी बनाने के लिए गीत और संगीत का प्रयोग किया जाता है। वाद्ययंत्र बजानेवाले कलाकार चौकोर डबली (रंगमंच) के एक कोने में रहते हैं। सामने के खाली जगह में दर्शक होते हैं। डबली का आकार इस प्रकार का होता है :

पर्दा

द्विकोण मार्गप्रकोण

विलोमलोम

अभिनय करने वाले कलाकार

वाद्यक तथा गीत गाने वाले कलाकार प्र वे श द्वा र वाद्यक तथा गीत गाने वाले कलाकार

डबली का आकार चौकोर होने से दक्षिण दिशा की ओर वाद्यक और गीत गाने वाले गुरु या कलाकार होते हैं, बीच में नाटक करने वाले कलाकारों के आने-जाने के लिए रास्ता बनाया गया होता है। नाटक करने वाले कलाकार प्रवेशद्वार से होते हुए डबली के केंद्र में जाते हैं, उसके बाद अभिनय करने के लिए त्रिकोण आकार बनाते हैं। फिर वहाँ से अभिनय करते हुए दक्षिण से पूर्व के प्रथम कोण में जाते हैं, जिसे लोम कहा जाता है। प्रथम कोण में बैठकर अभिनय करने के बाद प्रथम कोण से द्वितीय कोण में जाकर अभिनय करते हैं। उसे मार्ग कहा जाता है। फिर वहाँ से द्विकोण से होते हुए शून्य या प्रवेशद्वार के सामने वाले कोण में अभिनय किया जाता है। द्विकोण से शून्य में पहुंचने वाले मार्ग को विलोम कहा जाता है। उसके बाद प्रवेशद्वार से ही डबली से बाहर निकल जाते हैं। प्रारंभ में अभिनय करने वाले कलाकार जब तक प्रवेशद्वार से डबली के अंदर नहीं चले जाते, तबत क त्रिकोण के सामने पर्दा गिराकर रखा जाता है। कलाकारों के अंदर प्रवेश करने के बाद पर्दा उठा दिया जाता है।

इस प्रकार शून्य से लोम होते हुए प्रथम कोण, प्रथम कोण से द्वितीय कोण औ द्वितीय कोण से प्रवेशद्वारा की तरफ वाली शून्य में जाकर तथा विलोम करके दो-दो बार अभिनय करने से हर कोई आसानी से नाटक देख पाता है। एक कोण से दूसरे कोण में जाने के क्रम में गीत और संगीत की धुन चलती रहती है। कलाकारों को त्रिकोण के अंदर ही सीमित होकर अभिनय करना पड़ता है।

नाटक के संवाद लोम, मार्ग और विलोम में बैठकर बोले जाते हैं, जिससे डबली की तीनों दिशाओं में बैठे हुए दर्शक स्पष्ट तरीके से देख पाते हैं और समझ पाते हैं।

५(छ) दृश्य संयोजन

प्राचीन नेपालभाषा के नाटकों में अधिकाधिक दृश्य होने के बावजूद मंचन करते वक्त दृश्य रखने का चलन नहीं है। दृश्य रखने की संभावना भी नहीं होती

है । आवश्यकता अनुसार के दृश्यों को समझाने के लिए पेड़, पहाड़, नदी, चैत्य आदि को रखा जाता है, और नाटक का यथार्थ समझाने की कोशिश की जाती है । उसके अतिरिक्त के सभी दृश्य का कलाकार अपने अभिनय के द्वारा दर्शकों को महसूस कराते हैं ।

५(ज) वाद्यवादन

नेपालभाषा के प्राचीन नाटकों का मंचन में केवल संवाद के माध्यम से ही नहीं किया जाता है । नाटकों के मंचन में गीत, संगीत और संवाद तीनों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है । गीत और संगीत होने के कारण नाटक में नेपालभाषा के अतिरिक्ति अन्य भाषा में भी संवाद होने से दर्शकों को समझने में कोई अंतर नहीं पड़ता, मनोरंजन में कोई कमी नहीं होती । क्योंकि नाटक के दृश्य और कथावस्तु को नेपालभाषा में समझाया गया होता है । नाटक में अभिनय के माध्यम से कथावस्तु, भाषा और संवाद अच्छी तरह से समझ लिए जाते हैं ।

नाटक के मंचन के क्रम में संगीत में प्रयोग किए जाने वाले वाद्ययंत्रों में ताः, खिं, याकःखिं, ज्वःखिं, पःखिं, दाफाखिं, प्वंखिं, देसिखिं, मृदंग, धाः, नाय्‌खिं, पोंगा, म्वाहिली आदि प्रमुख हैं । उस वक्त के नाट्य-मंचन में विभिन्न ताल में गाए-बजाए जाते थे । जैसे चो, एकताल, पलिमा, प्रताल, जति, थकताल, झताल, लंताल, खजति, ब्रम्हताल आदि ।

रंगमंच पर पात्रों के प्रवेश होते ताल से ही अच्छे और बुरे पात्र के प्रवेश के बारे में बता दिया जाता है । जैसे अच्छे चरित्र के पात्र के प्रवेश पर एक ताल बजाया जाता है, तो बुरे चरित्र के पात्र के प्रवेश पर कोई दूसरा ताल । इससे दर्शक ताल वजते ही समझ जाते हैं कि कैसे पात्र का प्रवेश हो रहा है ।

उस वक्त नाटक देखाने से पहले वाद्य कलाकार, नृत्य कलाकार, अभिनय कलाकारों के द्वारा श्रीनाट्येश्वर की महानाटक पूजा करने का चलन था । (प्रजापति, ने.सं ११२५ : २६)

५(झ) गायन

संगीत और गायन से यह स्पष्ट रूप से पता चल जाता है कि नाटक के कौन से अंक या दृश्य का मंचन हो रहा है । नाटक के मंचन के क्रम में अनुशासित तरीके से गीत और संगीत को रखा जाता है, जिससे दर्शक आसानी से उपर्युक्त बातें समझ जाते हैं । नाटक के मंचन के क्रम में निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना दिया जाता है :

(क) शून्य म्ये (शून्य गीत) : नाट्य-मंचन की शुरुआत होने से पहले दर्शकों को आकर्षित करने के लिए गीत और संगीत के कलाकार डबली के नीचे एक दिशा में बैठकर शून्य म्ये (खाली गीत) गाते हैं । इस गीत में किसी भी देवी-देवता की स्तुति गाई जा सकती है ।

(ख) नान्दि म्ये (नान्दी गीत): नाट्य-मंचन की शुरुआत होने से पहले नाट्येश्वर की स्तुति कर गाए जाने वाले गीत को नान्दि म्ये (नान्दी गीत) कहा जाता है ।

(ग) देशवर्णन, राजवर्णन : शून्यम्ये और नान्दि म्ये गीत गाने के बाद स्वर्ग के किसी कोने में बैठकर देश का वर्णन करते हुए गीत गाया जाता है । इसमें देश के राजा को प्रतापी, प्रजापालक, शूरवीर, धीर, बुद्धिमानी आदि कहकर उनकी शक्ति का वर्णन किया जाता है । देश का वर्णन **नटी** के द्वारा किया जाता है, जबकि **राज का वर्णन** नट के द्वारा किया जाता है (श्रेष्ठ, ११२४ : ३) । देश-वर्णन और राज-वर्णन के बाद सभी कलाकार रंगमंच पर आकर अपना परिचय प्रस्तुत करते हुए अपनी भूमिका के बारे में बताते हैं । इस क्रम में नाटक का संक्षिप्त परिचय भी दिया जाता है । यह परिचय देने का कार्य कलाकार द्वारा होता है ।

(घ) आरती म्ये (आरती गीत) : नाटक की समाप्ति के बाद कलाकार रंगमंच पर आते हैं, और आरती गीत गाते हैं । आरती गीत के समापन के साथ नाटक की समाप्ति होती है (महर्जन, ने.सं ११२४, भूमिका) ।

(ङ) अन्य गीत : नाट्य-मंचन के क्रम में विभिन्न गीत गाए जाते हैं । प्राचीन नाटक के गीत राग और ताल पर आधारित होते हैं । ऋतु महीना, दिन के प्रहर तक को ध्यान में रखकर राग और ताल का प्रयोग किया जाता है ।

६.निष्कर्ष

नेपालभाषा के प्राचीन नाटकों का अध्ययन करने से यह पता चलता है कि यह विश्व के किसी भी नाट्य-विधा से नहीं मिलता है । इसके अपने ही गुण, स्वभाव और परंपरा हैं । अभी तक के अध्ययन से विश्व में परंपरागत शैली के नाटक, शेक्सपियर शैली के नाटक

नजर आते हैं। विषयवस्तु की दृष्टि से कुछ समानता दिखाई देने के आलावा और कोई समानता नजर नहीं आती। ये नाटक किसी भी ऐतिहासिक घटना आधारित होकर नहीं लिखे गए हैं। इन नाटकों में पौराणिक धार्मिक ग्रंथों के आधार पर विषयवस्तु होने के बावजूद, उनकी प्रस्तुति में काफी भिन्नता है। इसमें गद्य और पद्य दोनों का प्रयोग है,और उसे अधिक मनोरंजनात्मक बनाने के लिए गीत और संगीत की बड़ी भूमिका रहती है। एक ही संवाद को दोहरा-तेहरा कर प्रस्तुत करने के कारण नाटक एक दिन में पूरा नहीं होता, और दो-तीन दिन से महीनों तक की अवधि लेते हैं।

प्राचीन नाटक की इसी परंपरा के कारण नेवार समाज में गाईजात्रा और इन्द्रजात्रा को एक सप्ताह तक मंचन कराने की संस्कृति ही बन गई है। इन नाटकों का साहित्य से ज्यादा संस्कृति के रूप में विकास होता आया है। वर्तमान के कलाकारों में प्राचीन नाटकों में प्रयोग क़िए जाने वाले कई गीत और संगीत के बारे में समुचित ज्ञान नहीं होने के कारण पहले की तरह की प्रस्तुति नहीं हो पाती है। नाटकों में गीत संगीत के बारे में संक्षिप्त में लिखने के कारण आज उसे समझने वाले कलाकारों का अभाव है।

प्राचीन शैली संस्कृति से आवद्ध होने के कारण वुद्धिजीवियों ने अपनी बुद्धि और क्षमता से प्राचीनता को अर्ध आधुनिकता में विकसित करके मंचन करने का प्रयास किया है। और उनका यह प्रयास वि.सं. २०४१ तक दिखाई देता है। आज सिनेमा और टेलीविजन जैसे मनोरंजनात्मक और बौद्धिक ज्ञान प्रदान करने वाले साधनों की उपलब्धता के कारण नाटकों के मंचन-प्रदर्शन में काफी कमी आ गई है। नाटकों के मंचन का क्रम लगभग समाप्त ही हो गया है। ऐसी स्थिति में सुरेश किरण मानन्धर द्वारा भूकंप से बचने के उपाय को लोगों के बीच पहुंचाने के उद्देश्य से लिखे गए और रमेशकाजी स्थापित द्वार निर्देशित किए गए नाटक **आरया बाबा** मुहल्ले-मुहल्ले में हो रहे मंचन को देख प्राचीन स्मृति ताजी हो उठती है।

पाटी-पौवा : बैठने के लिए सार्वजनिक जगहों पर बनाया गया एक विशेष प्रकार का काठ का घर, जो खुला होता है

"श्री सुमति जय जितामित्र मल्ल भारदिसमत मदारस हरन प्याखन धरोत। सं ८०७ आषढ वदि ५ श्री २ भूपतींद्र मल्लया विवाहयात..." (जितामित्रकालीन धरःपौ, ३३६ ख)

"श्री श्री जय भूपतींद्र मल्लदेव सनाथ राजकुमार श्री श्री जयरणजीत मल्ल देवयात इहियात उषाहरण सम्तमात्त प्याखनयात दयेकंसा विज्याङ.ाया धन्ति दयकाव चोस्य तस्य बिज्याङा। सं. ८३३ कार्तिक वदि १ शुभम् (वृहत्सूची पत्रम् : ८)

संदर्भ ग्रंथ

कसाः, प्रेमबहादुर : 'रत्नेश्वर प्रादुर्भाव' यें, च्वसापासा, ने.सं १०८४

तमोट, काशीनाथ : 'मल्लकालया नेपालभाषाया प्याखं साहित्यया सम्वन्धय्' ज्वला न्हायुक' दँ १८,पृ.११-१४

'लिच्छवि अभिलेखय् संस्कृत मखुगु खँग्वःया ल्याःचाः', खेलुइताः२,१३१-१३६

ऐतिहासिक सन्दर्भय् राम भारोया वीरबाहु प्वाखं' जः ७, १६१-१६७

तुलाधर,प्रेमशान्ति (सं) : 'नेपालभाषा व ध्वया साहित्य विभागीय ेष्ठी', काठमाण्डौं, लाकौल पिथना, ने.सं. १११०

नेपालभाषा साहित्यया इतिहास' यें नेपालभाषा एकेदमि, ने.सं ११२०

पौडेल, नयननाथ (सं.) : भाषा वंशावली भाग १ नेपाल राष्ट्रीय पुस्तकालय, वि.सं २०२०

प्रजापति, सुभाषराम : 'नेपालमण्डलया पुलांगु नेपालभाषा नाटकया संगीत पक्ष

: छगू अध्ययन' त्रिविवि मानविकी तथा सामाजिक शास्त्र संकाय अंतर्गत स्नातकोत्तर तगिंया शोध प्रबंध, ने.सं११२५

बज्राचार्य, आकाशाजी : 'मल्लकालीन गं प्याखं' स्वयं, ने.सं. ११०२

बज्राचार्य, चुन्दा : मल्लकालया छुं संस्कृति ने.भा. अध्ययन व अनुसन्धान केंद्र, ने.सं. ११०५

: नेपालभाषा नाटक साहित्यया इतिहास छठू परिचय , शोध प्रबंध, अनुसन्धान महाशाखा, त्रिविवि, ने.सं ११०९

: 'रणजीत मल्लया विवाहया धरःपौ (अप्रकाशित), नेपाल एशियाली अनुसंधान केन्द्र, वि.सं. २०४२-२०४३

: 'जितामित्रकालीन धरःपौ', कीर्तिपुर, नेपाल और एशियाली अनुसंधान केंद्र, त्रिविवि, वि.सं. २०५३

: 'नेपालभाषाया आधुनिक नाटकया प्रवृत्ति व प्रवाह' विद्यावारिधी शोध ग्रंथ, मा.भ्मा. श.सं. त्रिविवि, ने.सं १११२

वज्राचार्य, धनवज्र : 'लिच्छविकालको इतिहासमा किरातकालको प्रभाव' पूर्णिमा १७,पृ १-८,वि.सं २०२६

: 'साहित्य,संगीत र कलाको अभिवृद्धिमा राजकीय विवाहोत्सको

प्रभाव' गोरखापत्र शुभ विवाहोत्सव, १६ फागुन
: 'मध्यकालको अभिलेख योजना' (अप्रकाशित)
बज्राचार्य, शान्तहर्ष : 'मल्लकालीन नेपालभाषाय प्याखं साहित्य छगू सर्वेक्षण' नेपाल, ३१:२-३,३-१८
: मल्लकालया मुक्कं नेपालभाषाया नाटक' विमला बज्राचार्य, ने.सं ११०५
बज्राचार्य, शान्तहर्ष (सं.) : 'लुन्तभद्रया चाप विकासिनी' नेपालभाषा परिषद्, ने.सं ११०७
: 'षड्-दर्शन' यें,साहित्य क्यब, ने.सं ११०८
वैद्य, जनकलाल : 'नेपालभाषा नाटकया प्राचीनता, नेपालभाषा नाटकया प्रवाह',नेपाल रजत जयन्ती तपं पौ, ३९-४२, ने.सं १०९४
मल्ल, कमलप्रकाश : 'ङे हे पा' नेपाल ऋतुपौ रजतजयन्ती तपंपौ, १-६, ने.सं १०९४
मल्ल, विजयबहादुर : 'नाटक एक चर्चा' पांगा, सुशिला महर्जन, ने.सं. ११२४
महर्जन, जीवनकुमार (सं.) : 'कर्पावती चरित्र' पांगा, सुशिला महर्जन, ने.सं ११२४
रंजीत, कुमार (सं.) : 'नासःदबू, यें, नासः दबू, ने.सं. ११५०
शर्मा, बृद्धिसागर(अध्यक्ष) : नेपाल राजकीय वीर पुस्तकालय स्थित पुस्तकनाम वृहत सूचीपत्रमा नाटक ग्रन्थ विषयक तृतीया भाग पुरातत्व प्रकाशन माला ९
शाह, चन्देश्वर : 'मल्लकालीन मैथिली नाटक', काठमाण्डौं, नेपाल राजकीय प्रज्ञा प्रतिष्ठान, वि.सं. २०५५
शाहदेव, श्री ५ राजेंद्रविक्रमः 'महास्व', काठमाण्डौं, मानदास सुगतदास, ने.सं. १०८९
श्रेष्ठ, रजमाइल : 'जिगु मिखाय् मैथिल नाटक काशीविजय', यें नेवाःपोष्ट, दँ १ ल्याः १२ नथिंलागा पारू, ने.सं. ११२४
हृदय, चित्तधर : 'नेपालभाषा साहित्यया जात'
: कान्तिपुर, नेपालभाषा परिषद्, ने.सं. १०९१
ज्ञवाली, सूर्यविक्रम : 'नेपाल उपत्यकाको मध्यकालीन इतिहास',काठमाण्डौं, रोयल नेपाल एकेडमी, वि.सं २०२९
Linda L. Ilits : *'The Jala Pyakha in Historical and Cultural Perspective'* नेपालभाषा व ध्वया साहित्य विभागीय गोष्ठी,ने.सं. १११०, ४१-१६८
Malla,Kamal Prakash : *Classical Newari Literature : A Sketch.* Kathmandu, Nepali Study Centre, A.D. 1981.
Regmi, D.R. : *The M ediaval Nepal III.* Calcutta, Firma K.L. M ukhapadhya, A.D.1986
Vajracharya,Dhanvarja: *Gopalraja Vamshavali.* Kirtipur, Nepal Reseach Centre & M all Kamal Prakash A.D. 1985.

अनुवाद : गोपाल अश्क

नेपाली नाटक के क्षेत्र में नारियों की उपस्थिति और उनका योगदान

डा. रजनी ढकाल/डा. गीता त्रिपाठी/ज्ञानु अधिकारी

पूर्वीय साहित्य-परंपरा में नाटक सर्वप्राचीन विधा है। प्रस्तुति के हिसाब से साहित्य की दृश्य विधा के अंतर्गत आनेवाली इस विधा में लेखकीय जिम्मेदारी श्रव्य विधा की तुलना में ज्यादा होती है। इसीलिए नाटक-लेखन में न केवल नेपाली नारी लेखन, बल्कि विश्क का ही नारी लेखन तुलनात्मक दृष्टि से थोड़ा पीछे है। यह कहना सरासर गलत होगा कि नाट्य-लेखन कठिन होने के कारण नारियों की उपस्थिति कम है, या नहीं है। हाँ, यह जरूर है, कि नाट्य विधा मंचन के बिना अधूरी होती है। सामाजिक संरचना और लेखकों के द्वारा मंचनीय जिम्मेदारी के दायित्व का निर्वाह करने के कारण अभी भी नारियों के लिए प्रतिकूल अवस्था ही है।

दूसरा पक्ष है आर्थिक कारण। आर्थिक कारण से भी यह विधा में नारियों की पहुंच से दूर रहती है। कहने का मतलब यह है कि नाटक लेखन में उत्साहित होने के बावजूद नारियां अलग ही रहीं। उनके लिए यह विधा लंबे समय तक अछूत ही रही। यह एह संवादात्मक प्रस्तुति वाली विधा है और इसमें सामाजिक पात्रों के साथ परस्पर संवाद किया जाता है। इस दृष्टि से नारी नाट्य लेखिकाओं के प्रति उदार श्रोता समाज की आवश्यकता होती है। लेकिन सच्चाई यह है कि महिलाओं के लिए समाज के सभी पात्रों के साथ सहकार्य करने में सहजानुभूति की स्थिति नहीं है, जबकि यह पात्रानुकूल अभिव्यक्ति के लिए पूर्वाधार माना जाता है। हमारे जैसे पितृसत्ता की जड़ मजबूत रहने वाले समाज में नारी की चेतनशील आवाज को 'मुरगे की बांग' का संज्ञा देने के कारण पारिवारिक विघटन की संभावना होती है। और इसका संपूर्ण दोष नारियों पर ही मढ़ दिया जाता है। इन्हीं विविध पारिवारिक और सामाजिक कारणों से नारियां बहुत लंबे समय तक नाटक-लेखन और इसकी विशिष्ट शैली को अपनाने से पीछे रहीं। संतान का पालन-पोषण और परिवार की देखरेख में व्यतीत होने वाला इनका समय नाट्य-सृजना के लिए अनुकूल भी नहीं हो सकता। यसर्थ नेपाली नाटक लेखन में नारियों की उपस्थिति बहुत बाद में जाके नजर आती है, इनकी यात्रा बहुत बाद में शुरू होती है। इसके विकास का अध्ययनार्थ 'पृष्ठभूमि चरण और विकास विस्तार का चरण' का अध्ययन उपयुक्त होने के कारण, यहाँ उसी आधार पर नेपाली नाटक में नारियों की उपस्थिति और उनके योगदान का निरूपण किया गया है :

(१) पृष्ठभूमि चरण : २०१० से २०१९ तक (अभ्यास-काल)

(२) विकास और विस्तार चरण : २०२० से अभी तक

नेपाली नाटक में नारी लेखन का योगदान सीमित है। इसका व्यवस्थित अध्ययन करने के लिए उल्लेखित दो चरणों में विभाजन करना उपयुक्त है। उसी आधार पर संबंधित चरणों की नारी नाट्य-प्रतिभा की कृतियों और प्रवृत्तियों का निरूपण निम्नानुसार किया गया है :

१. पृष्ठभूमि चरण : प्रतिभा, कृति और प्रवृत्ति

नेपाली नाट्य-परंपरा में नारी-लेखन का आरंभ और अभ्यास २००७ साल के प्रजातंत्र की प्राप्ति और रेडियो नेपाल की स्थापना के बाद ही नजर आता है। २०१०-२०११ से पहले इसकी प्रस्तुति होने पर भी इसके प्रकाशन का कोई दस्तावेज सुरक्षित नहीं होने के कारण इसका प्रकाशन का क्रम कुछ समय बाद अर्थात् राधिका राय के एकाङ्की के प्रकाशन के बाद ही शुरू होता है। अभी तक के अध्ययन से यही अवस्था सर्वमान्य है।

आधुनिक नेपाली नाट्य की यात्रा नब्बे वर्ष पार कर जाने के बाद ही नेपाली नाटक में नारी-लेखन का आरंभ दिखाई देता है। इसका श्रेय राधिका राय के भारती पत्रिका में प्रकाशित एकाङ्की **जीवनको इच्छा** (सन् १९५४, **जीवन की इच्छा**) को जाता है। इसके बाद

मायादेवी सुब्बा का एकाङ्की **पागल** (२०१४), जो हस्तलिखित पत्रिका **पालुवा** में प्रकाशित हुई थी, नजर आता है। इस प्रकार आधिकांश एकाङ्की लेखन से ही नेपाली महिला नाटक की गति बढ़ती नजर आती है। खास तौर पर रेडियो नाटक लेखन में नारियों की सहभागिता उल्लेख्य नजर आती है। रेडियो नाटक लेखन में केवल संवाद-लेखन में कुशलता की आवश्यकता होने और अन्य प्राविधिक संयोजन में झंझट नहीं होने के कारण नारी नाटक लेखिकाओं के लिए सहज होने की स्थिति दिखाई देती है। यही इतिहास है।

सुभद्रा देवी दंगाल (सावित्री पोखरेल) का **कलंकी समाज** (२०१५) नाटक पृष्ठभूमि चरण की उल्लेखनीय कृति है। २३ भागों में रचे हए इस नाटक में अंकों और दृश्यों का विभाजन नहीं किया गया है। इस नाटक की विषयवस्तु एक नारी के द्वारा भोगी गई बाल विधवा परंपरा,यौवन-काल में भागे गए सामाजिक लांछन और उससे मुक्त होने के लिए की गई आत्महत्या है। इस नाटक में सरल भाषा और छोटे-छोटे संवादों के माध्यम से नारी चरित्र के ऊपर उठाए गए सवाल और उसके जवाब के रूप में आत्महत्या करने के लिए विवश हुए नारी-पात्र का कारूणिक मनोदशा का चित्रण है, इसी वजह से इस नाटक ने वियोगांत परिणति दी है। वि.सं २०५० में इस नाटक में कुछ परिमार्जन करके, सावित्री पोखरेल के नाम से यह नाटक पुनर्प्रकाशित होता है। लेकिन इतिहास यही है कि नेपाली नाटक-लेखन का आरंभ वि.सं. २०१५ में पहली बार प्रकाशित इसी नाटक से होता है। उसके पहले तो केवल एकांकियां प्रकाशित होने का इतिहास है।

शांता श्रेष्ठ की नाट्य-यात्रा वि.सं. २०१६ से शुरू होती है। उनके 'तृष्णा', 'प्रायश्चित', 'अन्त्यहीन अन्त्य', 'हिमा तथा नहीं है' और 'शाम के बाद की रात' नामक पांच रेडियो नाटकों का संग्रह 'दिन नहीं है, शाम के बाद की रात'(२०४६) प्रकाशित है। लेकिन उनके **'कला किन मर्छ'** (कला क्यों मरती है ?) नाटक का २०२६ में ही मंचन होने का इतिहास है। (लुइटेल, २०६९:१८७)। इनके नाटक में नारी को वासना-पूर्ति का साधन मानने वाली पुरुष वृत्ति का विरोध, धोखाबाज नारी की हताश मनस्थिति, विधवा के पुनर्विवाह की संभावना, माता-पिता के संवंध में आनेवाली दूरियों के कारण बच्चों पर पड़ने वाला मनोवैज्ञानिक असर जैसे सामाजिक यथार्थ समस्यामूलक विषय की प्रस्तुति की गई है। सरल और सहज भाषिक संवाद तथा बाह्य और आंतरिक द्वंद्व का जीवंत प्रयोग होने के कारण इनके नाटक नाट्य-मूल्य के हिसाब से भी प्रभावकारी बन पड़े हैं।

२. विकास और विस्तार का चरण : प्रतिभा, कृति और प्रवत्ति

नेपाली नारी नाटक-लेखन को बेंजु शर्मा का एकाङ्की ने एक नया मोड़ दिया है। उनका पहला एकाङ्की **विवाह** (२०२०) कस्तुरी पत्रिका में प्रकाशित होने के बाद नेपाली नारी नाटक-लेखन ने एक नई शैली प्राप्त की। जहाँ एक ओर नारी की सांस्कृतिक और सामाजिक समस्या को केंद्रीय विषय बनाकर रची गई इस नाट्य-रचना में स्वाभिमानी चरित्र का निर्माण करने का अभीष्ट नजर आता है, वहीं दूसरी ओर वहुविवाह का विरोध और ह्रासोन्मुख मानवीय मूल्य के प्रति सचेतना नजर आती है। इनके अनेक विषय हैं- द्वैध चरित्र वाले नेता और प्रेम में धोखा खाने से विक्षिप्त हुए पात्रों का प्रतिशोध और आपराधिक मनस्थिति का चित्रण। बाह्य द्वंद्व की प्रबलता और आंतरिक द्वंद्व का आंशिक निर्वहन होने के कारण इनका नाटक मंचनीय दृष्टि से भी प्रभावोत्पादक और जीवंत है।

सावित्री सिलवाल का **'कल्पना'** नाटक २०२० में प्रकाशित नजर आता है। इसमें पारिवारिक-सामाजिक विषयवस्तु के द्वारा नारी-जीवन की पीड़ा प्रस्तुत की गई है। इस नाटक में संक्रमणकालीन नारी-मनोविज्ञान और दमन के विरुद्ध आवाज उठाई गई है। नारी स्वतंत्रता के लिए विद्रोह और उसे दबाने वाली सामाजिक कुचाल के बारे में लिखे गए इस नाटक में वैचारिकता की प्रस्तुति सशक्त है।

किरण शाक्य का **दीपमाला** (२०२३) नाटक ग्यारह दृश्यों में विभाजित है। शैक्षिक परिवेश और युवाओं की आकांक्षा का सम्मान किए गए इस नाटक में शिक्षित और दक्ष युवा वर्ग को देश और विकास के आधार मानने का केंद्रीय भाव प्रकट किया गया है। पुस्तागत अंतराल और उससे उत्पन्न हुए द्वंद्व को दिखाए गए इस नाटक में युवाओं की जीत दिखाई गई है। छोटे-छोटे, किंतु प्रभावशाली संवादों के कारण यह नाटक बोधगम्य बन पड़ा है।

पारिजात की नाटक-यात्रा रूपरेखा नामक पत्रिका में प्रकाशित **एक कठिन निष्कर्ष** (२०२३) शीर्षक एकाङ्की से शुरू हुई है। इनका **पारिजात के नाटक**

(२०६७) प्रकाशित है । इसमें इनके **एक कठिन निष्कर्ष, अंधेरी नदी**, और **अपनी रात** शीर्षक के एकाङ्की और **एक जोड़ी अंतरात** शीर्षक का पूर्णांकी नाटक संकलित हैं । इनके नाटकों में विसंगतिवादी-अस्तित्ववादी जीवन-दर्शन होने के साथ-साथ नारी के विद्रोही स्वरूप की प्रस्तुति, आदमी की आदिम प्रवृत्ति, समाज में व्याप्त वर्गीय असमानता की समाप्ति जैसी प्रगतिशील सोच पाई जाती है । इसने नेपाली नाटक में नारी का वैचारिक प्रतिनिधित्व किया है और इसमें प्रयोगवादी शिल्प का प्रयोग मिलता है ।

हजुर बजै अर्थात् विद्या देवी दीक्षित का **तीजको दर** (तीज का पकवान) २०२४ में प्रकाशित हुआ है । इनका एक 'विद्या गद्यसंग्रह' (२०३६) संग्रह प्रकाशित है, जिसमें **पार्टीको कुरा** (पार्टी की बात), **चन्द्रसूर्य वार्ता** (चंद्र सूर्य वार्ता), **तीजको दर** (तीज का पकवान); **ढीट छोरो** (ढीट वेटा) और **भट्केको ठिटो** (भटका हुआ लड़का) शीर्षक के पांच एकाङ्की संगृहीत हैं । इनके नाटकों ने राजनीति और संस्कृति में नजर आई संक्रमणकालीन अवस्था, पुस्तागत द्वंद्व और विसंगतिपूर्ण जीवन को विषय बनाया है । इसी प्रकार इस नाटक में विदेश जाने की इच्छा रखने वाले युवाओं को अपने देश में ही रहने और अवसर की तलाश करने के लिए प्ररित करने वाले संवादों का प्रयोग किया गया है, जिससे राष्ट्रीयता की सुगंध आती है ।

कमला न्यौपाने की नाटक-यात्रा **बिसाएको भारी** (२०२६/२७, उतारा हुआ बोझ) नाटक के मंचन से आरंभ होती है । यह नाटक कालिम्पोंग के प्रणामी मंदिर हाइस्कूल में मंचित हुआ था (लुइटेल, २०६९:१८९) । इनका प्रथम प्रकाशित एकाङ्की **सुंदरी की विवशता** (रत्नश्री, २०२९) है । बाद में उनके छह एकांकियों का संग्रह **बिसाएको भारी** (२०२६/२७, उतारा हुआ बोझ) प्रकाशित हुआ । इनके नाटक तथा एकांकियों में नारी-पीड़ा की प्रस्तुति पाई जाती है । इसके साथ-साथ देश की राजनीति और समाज, विधवा का मार्मिक जीवन, वर्गीय विभेद का विरोध जैसे विषयों की प्राथमिकता नजर आती है ।

माधुरी भट्टराई का **मूक वेदना** (२०३८) प्रकाशित है । इसमें प्रतीकात्मक प्रस्तुति है । इसमें रामायण में कम महत्त्व दी गई उर्मिला के पति की वन-यात्रा के समय में पारिवारिक प्रसन्नता की ख़ातिर व्यक्तिगत इच्छा को मारकर विवश रहने के प्रसंग को गद्य और पद्य दोनों शैली में प्रस्तुत किया गया है ।

शारदा सुब्बा का पहला मंचित नाटक **देउरालीमा एक थुँगा फूल** (२०४१, पहाड की चोटी पर खिला फूल) है । इसके बाद उनके नाटक **अघोषित** (अघोषित २०५४) और **नीलो पीड़ा** (नीली पीड़ा,२०५५) और **यशोधरा** (यशोधरा, २०६५) प्रकाशित हैं । बाद में भी इनके नाटकों का मंचन होने की जानकारी मिलती है । इनका **यशोधरा** पौराणिक विषयवस्तु पर आधारित किंतु आधुनिक जीवन की विसंगतियों का चित्रण करने वाला नाटक है । बौद्धिक और तार्किक रूप में ख्यात इस कृति के अंदर सुब्बा के नाटक की उच्च मूल्यांकन करने के बहुत आधार हैं ।

रश्मि खतिवडा के तीन एकांकियों का संग्रह **लघु नाटक** (२०४९) प्रकाशित है । मानव समाज का आडंबर चरित्र इनके नाटक का विषय है । इसी तरह इनके नाटकों में महिला अधिकार संबंधी आवाजें भी सुनने को मिल जाती हैं । भाषिक संवाद के प्रयोग में इनके नाटक सफल माने जाते हैं ।

भारती खरेल का **भाइटीका** (,२०४९, भैया-दूज) नाटक प्रकाशित है । इसमें **भाइटीका** (भैयादूज) और **घमंड** (घमड) नामक दो नाटक हैं । नारी शिक्षा की व्यवस्था पर जोड़ दिए गए नाटक में बाल मनोविज्ञान की प्रस्तुति भी है । समसामयिक जीवन में व्याप्त विकृतियों और विसंगतियों को मुख्य विषय बनाकर लिखे गए खरेल के नाटकों में सामाजिक यथार्थ का आदर्शोन्मुख पक्ष भी पाया जाता है, इसकी भी प्रस्तुति नजर आती है ।

वेद कुमारी न्यौपाने की नाटक-यात्रा **पश्चात्ताप** नाटक के मंचन (२०५०) से आरंभ होती है । इनकी दो नाट्यकृतियाँ- **एउटा कथाको अन्त्य** (२०५३, एक कथा का अंत) और **विचलित वर्तमान** (२०५८, विचलित वर्तमान) प्रकाशित हैं । इनकी नाटकों में नारी को कमजोर बनाने वाली बाल-विवाह प्रथा का अंत और बालविधवाओं को पुनर्विवाह करने की सामाजिक और कानूनी अधिकार देने पर जोड़ दिया गया है । समाज में व्याप्त असमानता और विसंगतियों के विरुद्ध आवाज बुलंद करना इनके नाटकों का उद्देश्य है । इनके नाटकों का यही सार है कि लैंगिक विभेद समाजिक विकास का अवरोध होने के कारण इसका अन्त्य होना आवश्यक है । इस हिसाब से इनके नाटक सशक्त हैं ।

भद्र कुमारी घले की नाटक-यात्रा **केही गीति नृत्य नाटिका** (२०५१, कुछ गीति नृत्य नाटिका) से शुरू होती है । पौराणिक नारी पात्रों के माध्यम से वर्तमान समाज का चित्रण किए गए इनकी नाट्य-कृतियों में

नारी सशक्तीकरण के लिए चेतना प्रवाह करने का प्रयास नजर आता है।

बाबा बस्नेत नेपाली रेडियो नाटक में बहुत सुना हुआ नाम है। उनका नौ दृश्यों में विभाजित **योद्धा** (२०५३) नाटक प्रकाशित है। इनके नाटक में प्रेम, घुणा और कमजोर मनोविज्ञान के पात्रों का चित्रण होने के साथ-साथ शारीरिक रूप से अशक्त होने के बावजूद तारों सी चमक सकने वाली प्रतिभा के सत्य की प्रस्तुति है। इनके नाटकों ने युद्ध, हिंसा और त्रासदी का विरोध किया है। वियोगांत प्रेम का आदर्श भी एनके कुछ एक नाटकों में प्रकट हुआ है। बौद्धिक और तार्किक होने पर भी सरल भाषा में संवाद योजना बाबा बस्नेत के नाटकों की विशेषता है।

सुधा त्रिपाठी की नाट्यकृति **निःश्वासका गुजुल्टाहरू** (२०५५, निःश्वास की उलझी डोरियां) प्रकाशित है। उनके सात नाटकों के इस संग्रह की मुख्य विशेषता नारीवादी चेतना और लैंगिक विभेद का विरोध है। इसी प्रकार इनके कुछेक नाटकों में कुलत में फंसे युवकों के परिवार का मार्मिक चित्रण भी पाया जाता है। इनके नाटकों में पितृसत्ता का विरोध और समाज में नारी और पुरुष दोनों वर्ग के समान अधिकार और सहयात्रा के विचार को सरल और स्पष्ट संवाद के प्रयोग से प्रस्तुत किया गया है। इनके मध्यम आयाम के नाटक मंचन के हिसाब से भी सफल हैं।

जयंती स्पंदन और विजया स्मृति का **दिदी बहिनी** (२०५९, बहनें) प्रकाशित है। ग्यारह एकांकियों के इस संग्रह में संगृहीत एकांकियों का विषय सामाजिक जीवन और राजनीतिक परिवेश की विसंगति, नारी की घर के अंदर और घर के बाहर की समस्याएं है। द्वंद्व में फंसता जा रहा देश और नेताओं का द्वैध चरित्र के कारण पश्चगमन हो रहा देशे की चिंता भी इनके नाटकों का विषय बनी हुई है। इनके नाटकों में अन्याय के विरुद्ध एक जुट होने का आह्वान किया गया है, तथा इनके नाटक संदेशमूलक हैं।

हरिमाया भेटवाल की नाट्य-यात्रा उनका पहला मंचित नाटक **सहिद रोएको देश** (२०५५ शहीद रोआ हुआ देश से) शुरू होती है। 'उपक्रम' पत्रिका में प्रकाशित **हराएकाहरूको** (गुम हुए लोगों का) उनका पहला प्रकाशित नाटक है। इनका एक और नाटक **'इतिहासको पुनर्आगमन'** (२०५६, इतिहास का पुनर्रागमन) प्रकाशित है। इन दिनों इनके बहुत से नाटक मंचित हो रहे हैं। जहाँ एक ओर इनके नाटक गुरुकूल, नाचघर तथा सर्वनाम आदि नाटक-घरों में मंचित हो रहे हैं, वहीं दूसरी ओर सड़क नाटकों के रूप में भी इनके नाटक मंचित हो रहे हैं। इनके नाटकों की लोकप्रियता भी काफी है। इनका एक ही नाटक सात-सात बार मंचित हुआ है। **मृत्युपत्र** (२०६३, मृत्यु-पत्र), और **आहाल** (२०६४, गाय भैसों का तालाब) उच्च नाट्य-मूल्य के नाटक हैं। संग्रह के रूप में इनके तीन नाटक संग्रह प्रकाशित हैं। इनका **माया नाटक** (माया २०६५ नाटक) और आहाल नाटक क्रमशः चौबीस तथा सात बार मंचित हो चुके हैं। इनके **बेचिएकाहरू** (बिके हुए लोग) और **बोक्सीहरू छैनन** (डायन नहीं है) प्रतीकात्मक और चेतनामूलक नाटक हैं। इनके एक नाटक **कतामरी** (२०६५, कतामरी) नेपाल सरकार की तरफ से दक्षिण कोरिया में मंचन कराया गया था। भेटवाल के नाटकों में वर्तमान समय की विसंगतियां, राजनीतिक समस्याएं, द्वंद्वकालीन त्रासदी में पड़ी निर्दोष जनता की पीड़ा, दरबार के अंदर की महिलाओं की अवस्था जैसे महत्त्वपूर्ण विषय समाविष्ट हैं। ऐतिहासिक मिथक के सूत्र में आधुनिक समय को चित्रांकित करने में इनके नाटक सफल हैं। ये नेपाली महिला नाटक-लेखन में बहुत ही सक्रिय है और उच्चता की ओर बढ़ रही हैं।

२०६० के दशक के बाद नारी-साहित्य-लेखन में अधिकाधिक प्रयोग के रूप में दिखाई देने वाली उत्तरआधुनिक शैली को शिवानी सिंह थारू ने अपनाया है। इस हिसाब से इनका **भर्चुअल रियालिटी : परोक्ष यथार्थ** (२०६४) नितांत प्रयोग है (भट्टराई, २०६४)। इस नाटक में नई यांत्रिक जीवन-शैली की प्रयोगात्मकता के लिए वर्तमान यथार्थ की अजीबोगरीब परिकल्पना और प्रस्तुति की गई है। इनके नाटक में यही सार दिखाया गया है कि आज की यांत्रिक जीवन-शैली बॉक्स के अंदर कैद होती है, त्रिशंकू बनके लटक रही होती है और मृगमरिचिका के पीछे घूमते-घूमते खत्म हो जाती है। इस नाटक ने यह भी दिखाया है कि आज का आदमी हृदय की संवेदना से नहीं, बल्कि किबोर्ड से निर्देशित और संचालित होता है। इनके नाटक मंचन के हिसाब से भी सफल हैं और नेपाली नाटक को नया मोड़ और सोच दिए हैं।

शारदा सिलवाल का **माटोको इज्जत** (२०४८, मिट्टी की इज्जत), कमला प्रसाई ढकाल का **चितामाथिको लास** (२०४९, चिता पर की लाश), जमुना गुरुंग का

छोरीलाई अंश (२०६४, बेटी का अंश), प्रतिमा श्रेष्ठ का **सुन्दर संसारको परिकल्पना** (२०६५, सुंदर संसार की परिकल्पना), कल्पना घिमिरे का **मान्छे ताक्छ मुढा** (आदमी ताकता रहता है मूढ़े को) आदि वैयक्तिक और सामाजिक पीड़ा, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समसामयिक परिस्थिति, नारी चेतना और नेपाली सांस्कृतिक सामाजिक जीवन की असमानता आदि के बारे में लिखे गए नाटक हैं। लेखकों से यह भी जानकारी मिल रही है कि ऐसे कई रेडियो नाटक हैं जो संरक्षण के अभाव के कारण अप्राप्य हैं। गीता केशरी के रेडियो नाटक २०२०-२२ में रेडियो नेपाल से प्रसारित होने के बावजूद प्रमाण के अभाव में गुमनामी के अंधेरों में खोए हुए हैं।

३. भारतीय नेपाली नारी नाटक-लेखन का सर्वेक्षण

नेपाली नारी नाटक लेखन में भारतीय नेपाली नारी नाटककारों का भी कुछ योगदान रहा है। इस पंक्ति में इन्द्रमणि दर्शन का **ययाति** (सन् २००२), **अक्षि-भू** (सन् २००६, गीति नाटक-संग्रह) और **कृष्णा** (सन् २००९) जैसे प्रकाशित नाटकों का नाम लिया जा सकता है। इसी प्रकार आशा रानी राई का **विराटसभा**, लक्खी देवी सुनदास का **विजय आश्रम, अन्वेषण, आधुनिक युवती**, अस्मिता नाछिरिसंग राई का **भुपडीको व्यथा** (झोपड़ी की व्यथा), सरिता प्रधान का **यहाँ इतिहास दोहोरिन्छ** (सन् १९७६, यहाँ इतिहास लौटता है), शारदा सिलवाल का **माटोको इज्जत** (२०४८, मिट्टी की इज्जत), चन्द्रकला नेवार का **सीताको वनवास** (सीता का वनवास), **नेपाली जीवन** (रेडियो से प्रसारति) कमला प्रसाईं ढकालका **चितामाथिको लास** (२०४९, चिता पर की लाश), जमुना गुरुंग का **छोरीको अंश** (बेटी का अंश), लक्ष्मी मीनु का **कर्तव्य** (नि् २००३), और सविता छेत्री का **अधिकार** (सुन २००५) आदि नाटक प्रकाशित हैं।

४. नेपाली डायस्पोरा नारी नाटक लेखन का सर्वेक्षण

नाटक तथा एकाङ्की लेखन में डायस्पोरा नारी लेखन शून्य ही नजर आता है। समग्र डायस्पोरा लेखन में ही अल्प लेखन होने के कारण इस विधा ने विश्व के व्यस्त जीवन के उपक्रम में नारी लेखन के प्रति अवसर और सचेतना नहीं दिला सकी है।

५.नेपाली नारी नाटक लेखन की प्राप्ति और मूल्य

नेपाली नारी नाटक-लेखन के आरंभ और विकास की यात्रा आधी शताब्दी का समय पार कर चुकी है। इस अवधि में संख्यात्मक हिसाब से बहुत कम नाटक लिखे गए हैं। संख्यात्मक रूप से ही कम होने पर गुणात्मक पक्ष में प्रतिस्पर्धात्मक अवस्था होने का सवाल ही नहीं उठता। साहित्य की कविता और आख्यान विधा में अन्य विधा की तुलना में महिलाओं की उपस्थिति अधिक है, महिला लेखन ज्यादा है। लेकिन यह स्वीकार करना ही होगा कि प्राविधिक पक्ष और पात्रों की मनस्थिति का पूर्ण आकलन और अनुभव के लिए बाह्य जगत् के साथ व्याप्त दूरी होने के कारण महिला लेखन में कमी है। ऐसी चुनौती के बीच जितने नाटक लिखे गए, उसका ऐतिहासिक महत्त्व है। आधी शताब्दी की इस नाट्य-लेखन की यात्रा में दिखाई देने वाली महिला नाटकों की प्रवृत्तियां विविधता से भरी हुई हैं। इसने नेपाली नाटक के विकास में एक स्पष्ट रास्ता बना लिया है।

नेपाली नारी रचना के नाटक में नेपाली समाज का आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष का दयनीय चित्रण पाया जाता है। इन नाटकों में महिला और पुरुष के बीच खड़ी पितृसत्तात्मक सोच की दीवार और उससे सृजित पीछड़ेपन का विषय जीवंतता के साथ का संयोजित नजर आता है। मातृत्व और राष्ट्रीयता दोनों की संकटमय वर्तमान अवस्था की मार्मिक प्रस्तुति नारी लिखित नाटकों में पाई जाती है और समसामयिक प्रवृत्तियां भी रेखांकित हैं। इसी तरह जहाँ एक ओर पारिवारिक जीवन में नारी और पुरुष का मनोविज्ञान प्रस्तुत है, वहीं दूसरी ओर परंपरा और आधुनिकता के बीच का द्वंद्व चित्रांकित है।

नेपाली नारी नाटकों में संवाद में सरल भाषा का प्रयोग, बौद्धिकता से ज्यादा हार्दिकता की प्रस्तुति, राजनीतिक अस्थिरता और असमंजस की अवस्था का चित्रण, विदेश में पलायन हो रहे बच्चे और उनके माँ-बाप की विवशता का मार्मिक चित्रण, अमूर्त शैली में हो रहा मानवता का ह्रास, और वर्तमान समय की त्रासदी का चित्रण पाया जाता है। रंगमंचीय हिसाब से नाटकों में कम दृश्य और अंक रखे गए हैं। नेपाली नाटकों में एकांकियों की बुहलता, संरचना में सर्तकता, पात्रों की संख्या, वेशभूषा और पात्र अनुसार के संवादों पर ध्यान देने के बावजूद छुवाछूत और भेदभाव के कारण सिर्जित वर्गीय जीवन की पीड़ा का उत्खनन् और समाप्ति की कामना तथा रंगमंचीय शिल्प के हिसाब से कम सफल नजर आते हैं। लेकिन बाद के चरण में उदित हरिमाया भेटवाल तथा शिवानी सिंह थारू के नाटक की शक्ति विषय और मंचन दोनों ही हिसाब से काफी है और

ये सफल हैं।

६. निष्कर्ष

नेपाली नारी नाटक लेखन में विषयगत विविधता है। महिला नाटककारों ने पात्रों की जटिलता और मनोविज्ञान को सहजता के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। संस्कृति के प्रबर्द्धन के लिए सर्वाधिक उपयुक्त और विश्व परिवेश में लोकप्रिय विधा होने के बावजूद आज यह नाटक विधा दयनीय अवस्था में ही है। इसकी लेखन शक्ति और सीमा के बारे में चिंतन करन से यह बात स्वतः प्रमाणित हो जाती है। वास्तव में महिला से संबंधित विषय महिला के ही चिंतन और कलम से लिपिबद्ध होने पर ज्यादा सार्थक हो सकता है। लेकिन नाटक लेखन के क्रम में अभिनय और महिला कलाकारों की कमी का पक्ष सामने उभरकर आ जाता है। इसीलिए नाटकों में नारी चरित्र कम रखने की या सिर्फ नारी चरित्र का संकेत भर करने की परंपरा अभी भी जीवित है। यसर्थ नाटक में अब चाहे अभिनय करने की बात हो, चाहे नाटक लिखने की बात हो, दोनों ही नेपाली महिला नाटककारों के लिए असहज है। इसी दुर्भाग्य का शिकार नेपाली आधुनिक नाटक हुआ है। आज नाटक लेखन केवल महिलाओं के लिए ही नहीं, बल्कि पुरुष लेखकों के लिए भी दुसाध्य बनता जा रहा है। लेकिन ऐसी स्थिति में नाटककारों का योगदान देश की अवस्था को परिवर्तित करने में काफी बड़ा हो सकता है। महिला नाटक लेखन के उल्लेखित योगदान ने नेपाली जनजीवन का सही मूल्यांकन करने में मदद की है। अतः नेपाली नारी नाटक की विकासकालीन प्राप्ति को विशिष्ट प्राप्ति के रूप में देखने की आवश्यकता है। इसे इसी रूप में देखना चाहिए।

(विश्व नारी नेपाली साहित्य परम्परा र प्रवृत्ति शीर्षक पुस्तक से)

अनुवाद : गोपाल अश्क

नेपाली बाल-नाटक का इतिहास

प्रभा भट्टराई आचार्य

१. पृष्ठभूमि

बाल-बालिकाओं के लिए अनौपचारिक और औपचारिक शिक्षा के क्रम में लिखी गई सामग्री या साहित्य को बाल-साहित्य के अंतर्गत लिया जा सकता है। नेपाली बाल-साहित्य का इतिहास बहुत पुराना नहीं होने के बावजूद इसकी मौखिक परंपरा बहुत पुरानी है। यदि बाल-बालिकाओं के लिए निर्मित साहित्य बाल-साहित्य है तो यह निश्चित तौर पर लिपि से पहले का होगा। बाल साहित्य की विभिन्न विधाओं जैसे बाल-कविता, बाल-गीत, बाल-कथा, बाल-उपन्यास, बाल-जीवनी, बाल-निबंध, बाल-चित्र-कथा, बाल-नाटक इत्यादि में से बाल नाटक अलग विधा है। अन्य विधाएं पाठ्य और श्रव्य हैं, जबकि बाल-नाटक दृश्य-बाल-नाटक है।

बाल-नाटकों में संवाद, मंचन और वेशभूषा की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। साहित्य का आधार लोक-साहित्य होने की वजह से बाल-साहित्य का भी आधार लोक-साहित्य ही है। साहित्य का आरंभ बाल-साहित्य से होने के कारण बाल-नाटक का भी आरंभ बहुत पहले से अलिखित परंपरा के रूप में बाल लोक-नाटक के रूप में हुआ है। लेकिन यह भी सच है कि लिखित साहित्य की शुरुआत होने के बहुत बाद बाल-साहित्य ने आकार प्राप्त किया है। नेपाल में बाल-बालिकाओं के लिए पृथक पाठ्य सामग्रियों के उत्पादन करने की धारणा तो बहुत बाद में विकसित हुई है। कथा और कविता आदि की तुलना में बाल-नाटक का इतिहास तो और छोटा नजर आता है।

बाल-बालिकाएं भाषा के प्रारंभिक प्रशिक्षार्थी हैं। उनमें भाषिक बोध और संप्रेषण की समस्या होती है। नाटक में केवल बोली की प्रधानता ही नहीं रहती, बल्कि हाव-भाव की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। इसलिए नाटकों की प्रस्तुति में अभिनय के द्वारा अबुझ शब्दों को भी बड़ी आसानी से समझाया जा सकता है। लोक-साहित्य में स्थापित खेल-गीत बाल-बालिकाओं की बोली, मनोविज्ञान और भावभंगिमा की ओर संकेत करते हैं। ऐसे गीतों में गायन और अभिनय दोनों साथ-साथ होने से मनोरंजन के साथ-साथ बाल-विकास की उपलब्भि भी एक साथ प्राप्त किया जा सकता है। जैसे निम्त सक्रिय अभिनय के साथ गाए जाने वाले खेल-गीत :

"इतना-इतना पानी, कुंभ की रानी"

"इतना-इतना पानी, कुंभ की रानी" बच्चों द्वारा गोल घेरा बनाकर और अपने सर तक के अंगों को निदेर्शित करते गा-गाकर खेले जानेवाला एक खेल-गीत है। इसी प्रकार बच्चों को भोजन कराते वक्त गाए जाने वाला गीत देखिए :

"कौन खाएगा ... कौन ख़ाएगा दूध भात
मेरा लाड़ला खाएगा... खाएगा एक साथ"

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि बच्चे अभिनय के साथ छोटे-छोटे गीतों को सुनकर ज्यादा प्रभावित होने के कारण बाल-नाटक की आवश्यकता की अनुभूति बहुत पहले से की गई होगी। लेकिन औपचारिक तौर पर बाल-नाटकों के लेखन की शुरुआत बहुत बाद में हुई।

बाल साहित्य के अन्वेषक प्रभात सापकोटा ने अपनी पुस्तक **नेपाली बाल-नाटक का ऐतिहासिक अध्ययन** में कहा है," प्राप्त तथ्य को देखने के बाद यह पता चलता है कि २०१६ में श्यामदास वैष्णव का 'अगुल्टो' (जलता हुआ जरावन) एकाङ्की (प्रहरी पत्रिका) के प्रकाशन के बाद ही नेपाली बाल-नाटक का पहला पाठ्य और मंचन-सामग्री प्राप्त होती है। २०३७ में रमेश विकल का "सात थुँगा' (सात गुच्छे) बाल-नाटक प्रकाशित हुआ (सापकोटा, २०६८ : १)। नाटककार एवं अन्वेषक कृष्ण शाह यात्री ने "माटाको गन्ध" (मिट्टी की गंध) बाल-नाटक संग्रह की भूमिका में लिखा है कि उसके (सात थुँगा के प्रकाशन) बाद ही बाल-नाटकों का प्रकाशन होने लगा। यात्री ने

अपनी उस भूमिका में यह भी लिखा है कि २००७ साल में रेडियो नेपाल की स्थापना होने के बाद नाटककार श्यामदास वैष्णव ने २००८ साल में उसी रेडियो के लिए 'ए भात् चाँडो पाक्' (ऐ भात ! जल्दी पको) नामक बाल-नाटक का निर्देशन किया था । यही पहला नेपाली बाल-नाटक है । प्रथम प्रकाशित बाल-नाटक भी श्यामदास वैष्णव का ही 'अगुल्टो' (एकाङ्की) है जो २०१६ साल में प्रहरी पत्रिका में प्रकाशित हुआ था ।" इस प्रकार प्रथम बाल नाटक के लेखन और प्रकाशन की दृष्टि से पृथक विचार दिखाई देता है ।

नेपाली साहित्य में बहुत बाद बाल-नाटकों के लेखन की शुरुआत होती है । और संख्यात्मक दृष्टि से भी यह सबसे पीछे आने वाली विधा है । कहने का तात्पर्य यह है कि बाल-नाटकों की संख्या और साहित्यिक विधाओं से कम है । हो सकता है, बाल-नाटक के मंचन और प्राविधि पक्ष में जटिलता होने के कारण यह लोकप्रिय होने के बावजूद सर्वसुलभ नहीं हो सका हो । समीक्षक प्रमोद प्रधान ने 'नेपाली बाल साहित्य का इतिहास' नामक पुस्तक में लिखा है, "नेपाली बाल-नाटक का क्षेत्र अत्यंत दयनीय स्थिति में है । वि. सं. १९५८ में राणा प्रधानमंत्री देव शमशेर द्वारा पहली बार विद्यालय की स्थापना होने के बाद बाल-बालिकाओं को औपचारिक रूप में शिक्षा देने के लिए नेपाली भाषा में पाठ्य सामग्रियों की आवश्यकता महसूस की गई और इस कार्य में राजा जय पृथ्वीबहादुर सिंह (१९३४-१९९७) ने प्रयास किया । इसी क्रम में उन्होंने अक्षरांक शिक्षा (१९५८) बालबोध (भाग १ और २) के साथ-साथ अन्य बहुत-सी बाल पाठ्य पुस्तकों की रचना की । नेपाली बाल पाठ्य सामग्री की पहली पुस्तक 'अक्षरांक शिक्षा' के प्रकाशन के उनासी वर्षों अर्थात् २०३७ में पहला नेपाली एकाङ्की संग्रह 'सात थुँगा' प्रकाशित हुआ ।" (प्रधान, २०६१ : ११४)

२. नेपाली बाल-नाटक का कालक्रमिक अध्ययन

इस अध्ययन में नेपाली बाल-नाटकों के सर्वेक्षण के बाद उनका ऐतिहासिक कालक्रम में अध्ययन करने का काम किया गया है । इस अध्ययन में प्रकाशन के आधार पर कृति की जेष्ठता को ध्यान में रखकर पुस्तकाकार कृतियों प्रस्तुति की गई है, जिसका ऐतिहासिक विवरण निम्न है ।

२.१ रमेश विकल और "सात थुँगा"

साझा प्रकाशन के द्वारा २०३७ साल में प्रकाशित इस संग्रह में **शम्भु दाइ निर्दोष छ** (शंभु भैया निर्दोष है), **देवदूतको मद्दत** (देवदूत की मदद), **किसान र बाघ** (किसान और बाघ), **गीता भेट्टिई** (गीता मिली), **ऊ हाम्रो साथी हो** (वह हमारा दोस्त है), **सिद्धार्थको करुण र नदेखिने दान** (सिद्धार्थ की करुणा और गुप्त दान) मिलाकर सात बाल-एकाङ्की संगृहीत हैं । रमेश विकल के एकांकियों में बाल-बालिकाओं का धैर्य, समझदारी, व्यवहारिकता, सक्षमता, निर्दोष भाव इत्यादि प्रस्तुत हुए हैं । । रमेश विकल ने अपने बाल-नाटकों के माध्यम से प्राकृतिक और सांस्कृतिक पर्यावरण को प्रस्तुत किया है ।

२.२ विजय चालिसे और 'बादलका बुट्टाहरू'

नेपाल बाल साहित्य समाज द्वारा २०५२ साल में प्रकाशित विजय चालिसे के **'बादलका बुट्टाहरू'** (बादल के टुंकड़े) ने बाल-बालिकाओं को अंतर्राष्ट्रीय प्रतिभा और प्रसिद्ध विदेशी कथाओं से परिचित कराया है । 'बादलका बुट्टाहरू में **बुद्धिमान न्यायाधीश, गुग्लिएल्मो मार्कोनी, अल्बर्ट आइन्स्टाइन** और **राजा मिडास** मिलाकर कुल चार एकाङ्की संकलित हैं । विजय चालिसे के बाल-एकांकियों में प्रतिभाशाली व्यक्तियों के प्रेरणादायी प्रसंग पाए जाते हैं ।

२.३ सरुभक्त और "बाल-बालिकाओं का नाटक"

रत्न पुस्तक भंडार द्वारा २०५३ साल में प्रकाशित सरुभक्त के **"बाल-बालिकाओं का नाटक"** संग्रह में **'भ-भ-भ-भ-भूत, यती** और **खेल** मिलाकर कुल तीन नाटक संकलित हैं । **'भ-भ-भ-भ-भूत** अंधविश्वास को हतोत्साहित करने वाला नाटक है । दूसरा नाटक **यती** ने हिमाल को समझने में सहायता की है और तीसरा नाटक **खेल** जीवन के खेल से संबंधित है ।

२.४ जयराज रेग्मी और "अब हम लोग भी पढ़ पायेंगे"

एशिया पब्लिकेशन्स द्वारा २०५८ साल में प्रकाशित **'हामीले पनि पढ्न पाउने भयौँ'** (हम लोग भी पढ़ पायेंगे) संग्रह में १९ बाल-नाटक संकलित हैं । इसमें मौलिक और रूपांतरित दो खंड हैं । मौलिक अंतर्गत **श्रीपंचमी** (श्रीपंचमी) **सबरीको भक्ति** (सबरी की भक्ति), **साँचो बोल्नुपर्छ** (सच बोलना चाहिए),**शरीर दान** (शरीर दान), **दिदी बहिनीहरूको खेल** (बहनों का खेल) **मेरो छोरो चोर होइन** (मेरा बेटा

चोर नहीं है), **बल्ल धैटामा घाम लाग्यो** (अब सूझ आई), **गोठाला हुन नपर्ने भो** (चरवाहा होने से बच गये), **अब पो कुरो बुझें** (अब जाके बात समझ पाया), **बकबक गर्नेले काम गर्दैन** (बकबक करने वाला काम नहीं करता), **अक्कल** (अक्ल) **रिकापीभरिको हलुवा र कान्छीको खुसी** (थाली का हलुवा और कान्छी की खुशी) मिलाकर तेरह बाल-एकाङ्की संकलित हैं।

अनूदित खंड के अंतर्गत सतिशको बुद्धिमानी (सतीश की बुद्धिमानी), उपहार (उपहार), दाजुभाइमा प्रेम (भाईयों में प्रेम), जस्तालाई तस्तै (जैसा को तैसा) और सम्झने शक्ति र परीक्षा (समझने की शक्ति और परीक्षा) छह एकाङ्की समामेश किए गए हैं। इन बाल-नाटकों में चित्र नहीं रखा गया है।

२.५ दिनेश अधिकारी और "जंगल की कथा और जंगल की व्यथा"

विश्व वन्यजंतु कोष नेपाल कार्यक्रम द्वारा २०५८ साल में प्रकाशित **'जङ्गलको कथा र जङ्गलको व्यथा"** (जंगल की कथा और जंगल की व्यथा) दिनेश अधिकारी का बालगीति-नाटक है। प्रकृति के संरक्षण के बारे में लिखे गए इस नाटक में नाटककार अधिकारी ने **रुखदेवी** (पेड देवी), **फलदेवी** (फल देवी), **बाँदर** (बँदर), **घोरल** (मृग), **हरिणका बच्चाहरू** (हिरण के बच्चे), **बँदेल** (जंगली सुअर), **खरायो** (खरहा), **मयूर** (मोर) और **मान्छे** (आदमी) को पात्र के रूप में प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत नाटक मंचन की दृष्टि से भी सशक्त हैं। इस बाल नाटक में देवेन्द्र पांडे द्वारा बनाए गए चित्र प्रस्तुत किए गए हैं।

२.६ शारदा रमण नेपाल और "हमारा अभियान"

विवेक सिर्जनशील प्रकाशन प्रा. लि. द्वारा २०५८ साल में प्रकाशित **'हाम्रो अभियान'** (हमारा अभियान) शारदा रमन नेपाल का बाल-नाटक है। यह सांस्कृतिक बाल-नाटक है। इसमें यह संदेश दिया गया है कि पर्व त्यौहारों को भारी नहीं बनाना चाहिए और उसमें समयानुकूल सुधार करना चाहिए।

२.७ रमेश विकल और अब तुम मत रोओ किरण

रमेश विकल का **'अब तिमी नरोऊ किरण** (अब तुम मत रोओ किरण) साझा प्रकाशन द्वारा २०५९ साल में प्रकाशित पुस्तक है। प्रस्तुत एकाङ्की संग्रह में **आमा ! मेरी आमा,** (माँ ! मेरी माँ), **अब तिमी नरोऊ किरण** (अब तुम मत रोओ किरण), **माया दी ! मलाई पनि स्कुल लैजानोस् है** (माया दीदी ! मुझे भी स्कूल ले चलिए न) **हराएका आमाबाबु र राजाबाबु** (गुम हुए माता-पिता और राजा बाबू) कुल पाँच बाल-एकाङ्की संकलित हैं। इस संग्रह में रवींद्र भट्टराई द्वारा बनाए गए चित्र हैं और सारे एकाङ्की छोटे और सुंदर और मंचनीय हैं।

२.८ शारदा रमण नेपाल और "खलाँती बाजे"

विवेक सिर्जनशील प्रकाशन प्रा.लि. द्वारा २०५९ साल में प्रकाशित **"खलाँती बाजे"** शारदा रमण नेपाल का दूसरा एकाङ्की संग्रह है। इसमें **खलाँती बाजे** (खलाँती बाबा), **रमेश सरको जादु** (रमेश सर का जादू) और **कुरैकुरा** (बातें ही बातें) तीन एकाङ्की संकलित हैं। इस संग्रह के एकांकियों में चित्र युवक श्रेष्ठ द्वारा प्रस्तुत किया गया है और पुस्तक का आवरण के.के. कर्माचार्य ने बनाया है। इस कृति में जाति-प्रथा, छुवाछुत और भेदभाव के विरुद्ध आवाज उठाई गई है।

२.९ शारदा रमण नेपाल और 'प्रण'

एकता प्रकाशन द्वारा २०६१ साल में प्रकाशित **"अठोट'** (प्रण) शारदा रमण नेपाल का तीसरा एकाङ्की संग्रह है। शारदा रमण द्वारा रचित और केशव सुवेदी द्वारा संपादित इस एकाङ्की संग्रह में आठ एकाङ्की हैं। इसमें **हजुरबाको पाठ** (दादाजी का सबक), **अठोट** (प्रण), **नानीको बजार यात्रा** (लाड़ली की बाजार यात्रा), **अर्काको रचना** (दूसरे की रचना),**पक्षपात** (पक्षपात), **जे.आर.सर** (जे.आर.सर) **लागेको बानी** (लगी हुई आदत) और **छोराको घर** (बेटे का घर) संकलित हैं। कीर्ति कौशल जोशी के चित्रों ने रचनाओं को और अधिक संप्रेष्य बनाया है। शारदा रमण के ये बाल-एकांकियों ने संस्कृति में सुधार लाने का संदेश देने की कोशिश की है। इसमें यह संदेश दिया गया है कि ज्ञान के विकास करना चाहिए, चाकड़ी और चापलुसी में न फंसकर स्वाभिमानी और स्वावलंबी होना चाहिए और भेदभावरहित समाज और परिवार की स्थापना करनी चाहिए।

२.१० विजयराज आचार्य और 'रोशनी की तलाश में"

विवेक सिर्जनशील प्रकाशन प्रा.लि.द्वारा २०६१ साल में प्रकाशित **'उज्यालोको खोजीमा'** (रोशनी की तलाश में) विजयराज आचार्य द्वारा रचित राजनीतिक समस्याओं को प्रस्तुत करने वाला नाट्य कृति है।

२०६२-६३ के आंदोलन की पृष्ठभूमि ही इसका परिवेश है। इसमें पिता, पुत्र और आंदोलन में लगे नेताओं का अभिनय और भूमिका हैं। नाटकों में स्वंबर हाङ का चित्र प्रस्तुत किया गया है।

२.११ कृष्ण प्रसाद पराजुली और "इन्द्रिनी"

रत्न पुस्तक भंडार द्वारा २०६२ में प्रकाशित कृष्ण प्रसाद पराजुली के **"इन्द्रिनी" (इन्द्रिनी)** नाटक संग्रह में **भविष्यका तारा** (भविष्य का तारा), **आजको ताजा खबर** (आजकी ताजा खवर), **कान्छो घर्ती छिँडीमा** (छोटा कान्छा सीढ़ी तले), **जागरण** (जागरण), **छोरीले पढ्नुपर्छ** (बेटियों को पढ़ना चाहिए), **नयाँ वर्ष कसरी मनाउने ?** (नया साल कैसे मनाया जाय ?) और **आमाको महिमा** (माँ की महिमा) सात एकाङ्की संकलित हैं। इसमें सूर्यनारायण के चित्र रखे गए हैं। कृष्ण प्रसाद पराजुली के एकांकियों में बाल-वालिकाओं का मनोविज्ञान, पढ़ाई का महत्त्व, सामाजिक मर्यादा जैसी वातों को प्रस्तुत किया गया है।

२.१२ श्यामदास वैष्णव और "शैक्षिक नाटक"

सहयोगी परिवार द्वारा २०६३ साल में प्रकाशित श्यामदास वैष्णव का **'शैक्षिक नाटक"** (शैक्षिक नाटक) में सत्रह एकाङ्की संकलित हैं। इसमें **अगुल्टो** (जलता हुआ जरावन), **पैसाको चुम्बक** (पैसे का चुंबक), **कुरा गर्ने चरा** (बातें करने वाले पंछी), **उडेको चरा** (उड़े हुए पंछी), **चङ्खेको हुर्मत** (चंखे की करतूत), **सस्ताको खोजी** (सस्ता की तलाश), **धेरैको नापो** (बहुतों का नाप), **लक्ष्मीको बास** (लक्ष्मी का वास), **उल्टो बाजी** (उलटा बाजी), **दुई उल्लुहरू** (दो उल्लू), **मुसेकाजी** (चूहा महाराज), **को हुस्सु** (कौन धूंध), **बिजायँ सजायँ** (दण्ड सजा), **असल कमसल** (बुरा भला), **चाहने नचाहिने** (आवश्यक अनावश्यक), **डोको** (डोको : एक पहाड़ी डेली) और **बझौटे छोरो** (झगड़ालू बेटा) सहित सतरह एकाङ्की प्रस्तुत किए गए हैं। अंदर के पन्नों में कोई चित्र नहीं है। इस पुस्तक का आवरण अग्निराज पौडेल ने बनाया है।

२.१३ छायादत्त न्यौपाने और "बाल दिवस"

विवेक सिर्जनशील प्रकाशन प्रा.लि. द्वारा २०६३ साल में प्रकाशित **"बाल दिवस"** (बाल-दिवस) छायादत्त न्यौपाने द्वारा लिखित उनकी पहली नाट्यकृति है। प्रस्तुत बाल एकाङ्की संग्रह में **नाति जन्मेपछि** (नाती के जन्म लेने के बाद), **अब यस्तो नगर्नुहोस् है ?** (अब ऐसा मत कीजिएगा ?), **कोठाभरि उज्यालो** (पूरे कमरे में रोशनी), **केटाकेटी मुस्कुराउँछन्** (बच्चे मुस्कुराते हैं), **साथी साथीलाई** (दोस्त दोस्त के लिए), **एक हातले ताली बज्दैन** (एक हाथ से ताली नहीं बजती), **ताप्के नताती बिँड तात्दैन** (तावे का बिना गरम हुए मूठा गरम नहीं होता), **सही बाटोमा हिँड्छु** (सही राह पर चलूंगा), और **बाल दिवस** (बाल-दिवस) शीर्षक के नौ एकाङ्की संकलित हैं। इसमें उमेशचंद्र अधिकारी के द्वारा बनाए गए चित्र हैं। इसमें बाल-बालिकाओं के लिए शिक्षामूलक नाटक संगृहीत हैं।

२.१४ राम प्रसाद ज्ञवाली और "संपत्ति"

जम्को प्रकाशन प्रा.लि. द्वारा २०६३ साल में प्रकाशित राम प्रसाद ज्ञवाली का **"सम्पत्ति"** (संपत्ति) एकाङ्की संग्रह में **बडादसैं** (दशहरा), **सफा वातावरण : स्वच्छ जीवन** (शुद्ध वातावरण : स्वच्छ जीवन), भानुभक्तको काठमाडौं भ्रमण (भानुभक्त का काठमाँडू भ्रमण), सम्पत्ति (संपत्ति) और रहस्य (रहस्य) नामक वाल एकाङ्की संकलित हैं। उमेशचंद्र द्वारा बनाए गए चित्रों से सजी हुई इस पुस्तक में शहरी प्रदूषण, संस्कृति, वातावरण के साथ-साथ इतिहास और वर्तमान को विषयवस्तु के रूप में प्रस्तुत किया गया है। बाल-बालिकाओं को भानुभक्त को भानुभक्त को प्रत्यक्ष मंच पर देखकर अच्छा लग सकता है। इतिहास और वर्तमान के सम्मिश्रण से नाटक रुचिकर साबित हुआ है। इस संग्रह में नैतिक संदेशयुक्त नाटक भी शामिल हैं।

२.१५ सौरभ किरण श्रेष्ठ और "पेटुपेन"

प्रतिभा रश्मि प्रकाशन द्वारा २०६३ साल में प्रकाशित **पेटुपेन** (पेटुपेन) सौरभ किरण श्रेष्ठ द्वारा रचित बाल नाटक है। इस नाटक में कलम के गुम हो जाने और मिल जाने से उत्पन्न मानसिक उतार-चढ़ाव को सूक्ष्म तरीका से चित्रांकित किया गया है। प्रमुख पात्र कलम को कार्टुन चरित्र के रूप में प्रस्तुत किए गए इस नाटक में **पेटुपेन** के अलावा **किरण** (किरण), **टीका** (टीका), **सुशीला** (सुशीला), **आमा** (माँ) , **साथी** (दोस्त) , **विक्रम** (विक्रम), **बिपना** (यथार्थ) और **हरि** (हरि) जैसे मानवीय चरित्र भी शामिल हैं। पेटुपेन वहुत सी जगह पर मंचित हो चुका नाटक है। इसमें काष्ठमंडप आर्ट की चित्रकला है।

२.१६ रमेश विकल और "गुम हुई चिट्ठी"

रमेश विकल का "हराएको चिठी" (गुम हुई चिट्ठी) विवेक सिर्जनशील प्रकाशन प्रा. लि. द्वारा २०६४ साल में प्रकाशित हुआ है। प्रस्तुत एकाङ्की संग्रह में **हराएको चिठी** (गुम हुई चिट्ठी), **एउटा कुरो नि** । (एक बात है !), **के ल्याऊँ हजुर ?** (क्या लाऊँ हुजूर ?), **जेरी, स्वारी, तरकारी ?** (जलेबी, पूड़ी, तरकारी ?), **ऊ ज्ञानी भैहाल्छ नि** । (वह ज्ञानी हो ही जाएगा !), **हजुरआमा भन्नुहुन्थ्यो** (दादी कहती थी), **एकादेशमा** (एक देश में), **राजा हिमवन्तको निसाफ** (राजा हिमवंत का इन्साफ), और **डा. सर्वज्ञमान एन.के.** (डॉ. सर्वज्ञमान एन. के.) शीर्षक के तहत नौ एकाङ्की संकलित हैं। इसमें युवक श्रेष्ठ के द्वारा बनाए गए चित्र हैं। इस संग्रह में यह घोषित किया गया है कि **राजा हिमवंत का इन्साफ** किंगसलिम का रुपांतरण है और डा' **सर्वज्ञमान एन. के.** भी विदेशी भाषा का स्वतंत्र रूपांतरण है।

२.१७ शर्मिला खड्का और "उजाला रास्ता शिक्षा का"

स्वर्णिम नव साहित्य प्रकाशन द्वारा २०६४ साल में प्रकाशित "**उज्यालो बाटो शिक्षाको**" (उजाला रास्ता शिक्षा का) शर्मिला खडका का बाल एकाङ्की संग्रह है। इसमें **कसको पीडा** (किसकी पीड़ा), **असम्भव सम्भव** (असंभव संभव), **हाम्रो दायित्व** (हमारा दायित्व), **उज्यालो बाटो शिक्षाको** (उजाला रास्ता शिक्षा का) शीर्षक के छह एकाङ्की संकिलत हैं। इस कृति में कहीं नेताओं के चरित्र पर सवाल खड़े किए गए हैं तो कहीं बाल-शिक्षा के पक्ष में बहस की गई है। "**उजाला रास्ता शिक्षा का**" एकाङ्की ने शैक्षिक उन्नति की इच्छा को मुख्य विषय बनाया है। शशी किरण के चित्रों से सजी हुई इस पुस्तक में बाल-बालिकाओं को उत्तरदायित्व-बोध की तरफ सचेत कराया गया है।

२.१८ कृष्ण शाह यात्री और "छोटा रा'बट"

ऐरावती प्रकाशन प्रा.लि. द्वारा २०६५ साल में प्रकाशित "**फुच्चे रोबोट**" (छोटा रॉबट) विज्ञान नाटक है। प्रस्तुत संकलन में **फुच्चे रोबोट** (छोटा रॉबट), **हारुनको मुरली** (हारुन की मुरली) , **गुनी खरायो** (गुणी खरहा), **हाम्रो राम्रो पहिचान** (हमारी अच्छी पहचान) और **पुन्टे गुगल** (पुन्टे गुगल) , यानी कि पांच एकाङ्की संकलित हैं। प्रस्तुत कृति में राजेश मानन्धर के द्वारा बनाए गए चित्र शामिल किए गए हैं। **छोटा रा'बट** विज्ञान नाटक है। इसमें मानवेतर पात्र रॉबट और बाल पात्र की ही भूमिका शीर्ष स्थान पर है। अन्य नाटक भी बाल जिज्ञासा, बाल मनोविज्ञान और बाल समस्याओं के अगल-बगल में घूमते रहते हैं।

२.१९ कृष्ण शाह यात्री और "हिङमाङको चौंरी"

बी. एन. पुस्तक संसार द्वारा २०६५ साल में प्रकाशित "हिङमाङको चौंरी" में कृष्ण शाह यात्री के **हिङमाङको चौंरी** (हिंगमाँग की चौरी), **भकुन्डोको मन** (गेंदा का दिल), **अब सानी हाँस्छिन्** (अब छोटी हँसेगी) और **बाटो बिराउँदा** (राह भटक जाने पर) चार बाल नाटक हैं। बाल मनोविज्ञान और नेपाली परिवेश के द्वारा विशिष्ट बनाए गए नाटक मंचन की दृष्टि से भी उल्लेख्य हैं। इसमें रवि बस्नेत के चित्रों ने नाटकों को और अधिक सुबोध्य और मनोरंजक बना दिया है।

२.२० तेज प्रकाश श्रेष्ठ और "उपहार क्या दिया जाय ?"

बुक पैलेस द्वारा २०६५ साल में प्रकाशित तेज प्रकाश श्रेष्ठ का '**उपहार क्या दिया जाय ?** बाल एकाङ्की संग्रह के रूप में प्रकाशित है। इस संग्रह में **उपहार के दिने ?** (उपहार क्या दिया जाय ?), **के मैले बेठिक गरें ?** (क्या मैंने गलत किया ?), **ज्ञानी हुन पनि जान्नुपर्छ** (ज्ञानी होना भी जानना होगा), **ठन्ठा बरफ** (ठंढा बर्फ) **उज्याला धर्साहरू** (रोशनी की लकीरें) जैसे एकाङ्की संकलित हैं। 'उपहार क्या दिया जाय' शीर्षक के नाटक ने यह संदेश दिया है कि उपहार देने के लिए सबसे अच्छी सामग्री पुस्तक ही होती है। **ठंढा बर्फ** में बाजार में मिलने वाली खाने-पीने की चीजों की ओर से बच्चों का ध्यान हटाने की कोशिश की गई है। **क्या मैंने गलत किया** में बच्चों को यह संदेश देने की कोशिश की गई है कि रास्ते में मिली चीजों को नहीं छुना चाहिये और होशियार होना चाहिए। इस पुस्तक में समग्र में बाल उपयोगी संदेश दिए गए हैं। प्रस्तुत कृति में एकाराम सिंह ने चित्र बनाए हैं।

२.२१ अशेष मल्ल और "जंगल में एक दिन"

डिकुरा पब्लिकेशन द्वारा २०६७ साल में प्रकाशित अशेष मल्ल का "**जङ्गलमा एक दिन**"(जंगल में एक दिन) बाल नाटक संग्रह के रूप में आया है। इस संग्रह में **गङ्गारामको न्याय** (गंगा राम का न्याय), **अँध्यारो अँध्यारो**

(अँधेरा अँधेरा), **जङ्गलमा एक दिन** (जंगल में एक दिन) **खेलहरूको खेल** (खेलों का खेल) और **माछाहरूको बैठक** (मछलियों की बैठक) शीर्षक के पांच एकाङ्की संकलित हैं। नाटककार खुद रंगकर्मी होने के कारण उनके नाटक मंचन की दृष्टि से विशेष आकर्षक और परिपक्व हैं। तार्किक, मनोरंजक और संदेशमूलक बाल नाटकों के प्रस्तुत संकलन में इशान परियार की चित्रकारिता है।

२.२२ कृष्ण शाह यात्री और "जलपरी"

डिकुरा पब्लिकेशन द्वारा २०६७ साल में प्रकाशित **"जलपरी"** (जलपरी) कृष्ण शाह यात्री की तीसरी नाट्यकृति है। इस संकलन में हराएको अङ्क (गुम हुए अंक),, लक्ष्मीपूजा (लक्ष्मीपूजा), जलपरी (जलपरी), भाइरस किलर (वाइरस किलर), परीक्षाको भूत (परीक्षा का भूत) शीर्षक के तहत पांच एकाङ्की संकलित हैं। मेनुका राई और रवि बस्नेत के चित्रों ने प्रस्तुत कृति के नाटकों को जीवंत बनाया है।

२.२३ छायादत्त न्यौपाने और "मोटरसाइकल की शादी"

स्वदेश प्रकाशन द्वारा २०६७ साल में प्रकाशित "मोटर साइकलको बिहे" (मोटरसाइकल की शादी) छायादत्त न्यौपाने की चौथी नाट्यकृति है। इस संग्रह में मोटरसाइकलको विहे (मोटरसाइकल की शादी), रवि मुस्कुराए (रवि मुस्कुराया) और बालगृहमा सडक बालकहरू (बालगृह में सड़क के बच्चे) मिलाकर तीन एकाङ्की नाटक संकलित हैं। इसमें राज कुमार प्रजापति के द्वारा बनाए गए चित्र हैं। न्यौपाने के बाल नाटकों ने बाल जीवन की समस्याओं की ओर संकेत किया है। इनके नाटकों में सामाजिक और शैक्षिक समस्या भी प्रस्तुत हुई है।

२.२४ पुण्य प्रसाद प्रसाई और "कथा दादी की"

वि.सं. २०६८ में प्रकाशित **"कथा हजुरआमाको"** (कथा दादी की) दो दृश्यों में संयोजित किया गया लघु बाल नाटक है। इस नाटक में नैतिक चेतना को केंद्र बनाया गया है। पिज्जा खाने के लिए रेस्टुरेंट में गए बच्चों ने अपने हिस्से का भोजन भूख से छटपटाती एक बूढ़ी माँ को देकर दया और प्रेम का उदाहरण पेश किया है। इस नाटक ने नये पुस्ते को अच्छा संदेश दिया है।

२.२५ राजव और "चूहे मामा के यहाँ चल पड़े"

बाल संसार द्वारा वि.सं. २०६८ में प्रकाशित "मुसाहरू मामाघर हिँडे" (चूहे मामा के यहाँ चल पड़े) राजव की बाल नाट्य कृति है। इस कृति में **मुसाहरू मामाघर हिँडे** (चूहे मामा के यहाँ चल पड़े), **मेरो पुच्छर मसँगै हुने** (मेरी पूँछ मेरे साथ ही रहेगी), **हो हामी हेप्दैनौं** (हाँ, हम नहीं सताते) और **नाम** (नाम) शीर्षक के तहत चार बाल नाटक संकलित हैं। चूहे मामा के यहाँ चल पड़े में मानव और मानवेतर दोनों चरित्र एक साथ चित्रांकित हुए हैं। इस नाटक में एक मनोरंजनात्मक प्रसंग है। रात में सोने के समय एक बूढ़ा अपने दाँतों को निकालकर रख देता है और उसे चूहे ले जाते हैं। उसके के बाद आदमी चूहों को खत्म करने का षडयंत्र करता है और अपनी जान बचाने के लिए चूहे मामा के यहाँ जाते हैं। इस नाटय कृति में यह संदेश दिया गया है कि सामाजिक समानता रहनी चाहिए और हमें दूसरों का आदर करना चाहिए। इस संग्रह में इशान परिया के चित्र समावेश किए गए हैं।

२.२६ महेश पौड्याल और "माँ बिना की एक शाम"

केटाकेटी मिडिया प्रा. लि. द्वारा २०६८ में प्रकाशित **"आमा नहुँदा एक साँझ"** (माँ बिना की एक शाम) महेश पौड्याल का बाल एकाङ्की संग्रह है। इस कृति में **आमा नहुँदा एक साँझ** (माँ बिना की एक शाम), **बिगौती त खाने खाने,** (फेंसा तो खाया ही जाएगा), **विजय** (विजय), **आकाश** (आकाश) और **कैद आवाज** (कैद आवाज) शीर्षक के तहत पांच बाल नाटक संकलित हैं। इसमें विनिता बुद्धाचार्य के द्वारा बनाए गए चित्र हैं और कार्तिकेय घिमिरे ने इस कृति का संपादन किया है। महेश के बाल एकाङ्की बाल मनोविज्ञान और बाल समस्याओं को लेकर प्रस्तुत हुए हैं।

२.२७ कृष्ण शाह यात्री और "डमरू और लड़का"

बुक साइन पब्लिकेशन द्वारा २०६९ साल में प्रकाशित **"डमरु र केटो"** (डमरू और लड़का) कृष्ण शाह यात्री की चौथी बाल नाट्य रचना कृति है। इस कृति में **शैलीका नयाँ साथी** (शैली का नया दोस्त), **डमरु र केटो** (डमरू और लड़का) तथा **हराएको रोबोट** (गुम हुआ रॉबट) तीन एकाङ्की संकलित हैं। इसमें इशान परियार के द्वारा बनाए गए चित्र हैं। नाटककार कृष्ण शाह यात्री ने बाल बालिकाओं का ध्यान विज्ञान और

प्रविधि की तरफ आकर्षित करने की कोशिश की है। **शैली का नया दोस्त** में शैली लैपटॉप, पेंसील और पेन को चरित्र के रूप में प्रस्तुत किया गया है। दूसरे एकाङ्की **डमरू और लड़का** में माँ गेंड़ा और पिता गेंड़ा के मरने के वाद उसके बच्चे की की कारुणिक कथा है।

२.२८ ललिता दोषी और "पारू की प्रतिज्ञा"

बी.एन. पुस्तक प्रकाशन प्रा.लि. द्वारा २०७० साल में प्रकाशित **"पारूको प्रतिज्ञा"** (पारू की प्रतिज्ञा) ललिता दोषी द्वारा लोक-लय में रचित वाल गीतिनाटक है। इसमें बाल चरित्र के रूप में पारू, प्रवीण और गोपी उपस्थित हैं। इसके साथ-साथ विरू, धाई माँ, वृद्ध आदि प्रौढ़ चरित्र भी हैं। इस कृति का केंद्रीय चरित्र पारू परीक्षा में असफल होने की वजह से खिन्न होकर जंगल की ओर जाती हुई दिखाई देती है। गोपी सहित अन्य विभिन्न पात्रों के सहयोग से पारू सकुशल मिल जाती है और पढ़ाई नहीं करने की जिद्द ली हुई पारू अपने अभिभाव और दोस्तों के समझाने-वुझाने पर पढ़ने के लिए उत्प्रेरित होती है। और अंत में पारू के द्वारा अच्छी तरह से पढ़ाई करने की प्रतिज्ञा लेने की घटना के साथ नाटक की समाप्ति होती है।

२.२९ गार्गी शर्मा और "काव्यगुरु सिद्धिचरण"

युगकवि सिद्धिचरण प्रतिष्ठान द्वारा २०७२ साल में प्रकाशित गार्गी शर्मा का **'काव्यगुरु सिद्धिचरण"** युगकवि सिद्धिचरण श्रेष्ठ के विषय पर लिखा गया बाल नाटक है। यह नाटक कक्षा के परिवेश में लिखा गया है। युगकवि सिद्धिचरण के जन्म दिन के अवसर पर कक्षा में विद्यार्थियों द्वारा बलराम सर के सामने रखी गई जिज्ञासा से नाटक शुरू हुआ है। ऐतिहासिक एवं साहित्यिक विषय पर संरचित इस बाल नाटक में उर्मिला, शारदा, अनुज्ञा, बलराम सर आदि चरित्र के रूप में उभर कर आए हैं। तीन दृश्यों में संयोजित प्रस्तुत कृति साहित्यसेवी सिद्धिचरण श्रेष्ठ के जीवन और साहित्यिक योगदान से संबंधित है। बाल-बालिकाओं को सिद्धिचरण श्रेष्ठ के बारे में जानकारी देने और उन्हें उनके करीब लाने में इस पुस्तक की सार्थकता रही है।

२.३० यशु श्रेष्ठ और "पहरेदार सिंका और बोरा"

परिचय पब्लिकेशन द्वारा २०७२ साल में प्रकाशित यशु श्रेष्ठ का **"पहरेदार सिन्का र बोरा"** (पहरेदार सिंका और वोरा) सर-सफाई अभियान से संबंधित वाल नाटक है। इसमें कमल, वुनु, काका, यात्री और ग्रामीण आदि चरित्र हैं। यात्री ने सफाई अभियान के अभियंता की भूमिका निर्वाह की है। कमल, वुनु और काका आदि उसी के सहयोगी के रूप में दिखाई देते हैं। गंदगी से प्रदूषित गाँव में यात्री चरित्र ने वाल-वालिकाओं को सफाई की शिक्षा देकर गाँव को स्वच्छ बनाने का जो काम किया है, वह काफी प्रेरणाजन्य नजर आता है।

२.३१ वासुदेव मुनाल और "तीन नाटक"

रत्न पुस्तक भंडार द्वारा २०७२ साल में प्रकाशित वासुदेव मुनाल का **"तीन नाटक"** तीन बाल नाटकों का संग्रह है। इस संकलन में **आमाको माया** (माँ की ममता), **हैजाबाट बँच र बचाऊ** (हैजा से बचो और वचाओ) एवम् **आँखाको ज्योति अनमोल मोती** (आँख की ज्योति अनमोल मोती) जैसे तीन नाटक संकलित हैं। इसमें सूर्यनारायण श्रेष्ठ के द्वारा बनाए गए चित्र हैं। वासुदेव मुनाल रेडियो नेपाल में बाल कार्यक्रम का संचालन करने वाले एक दक्ष, अनुभवी और लोकप्रिय व्यक्तित्व हैं। साथ ही ये बाल-बालिकाओं के प्रिय साहित्यकार भी हैं। तीन रेडियो नाटकों का यह संकलन अन्य नाटकों से भिन्न है। इसमें संवाद और आवाज की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

२.३२ डा. विष्णु के.सी. और "मिट्टी की गंध"

वृहस्पति पुस्तक प्रकाशन द्वारा २०७२ साल में प्रकाशित डॉ विष्णु के.सी. का **"माटोको गन्ध"** (मिट्टी की गंध) सात वाल नाटकों का संग्रह है। इस संकलन में **भ्रमको पर्दा** (भ्रम का पर्दा), **हर्षको हुरी** (खुशी की अँधी), **राम्रो काम** (अच्छा काम), **दसैं** (दशहरा), **माटोको गन्ध** (मिट्टी की गंध), **पुच्छरको स्वाद** (पूँछ का स्वाद) और **पश्चात्ताप** (पश्चात्ताप) शीर्षक के तहत सात एकाङ्की संकलित हैं। इसमें सुशील थापा के द्वारा बनाए गए चित्र हैं। इस नाट्य कृति में सामाजिक समस्या, वातावरण संरक्षण और संगत के प्रभाव जैसे विषयों को बाल-बालिकाओं के लिए प्रभावकारी ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

२.३३ रामेश्वर राउत मातृदास और "बाग्मती की वेदना"

स्वदेश प्रकाशन द्वारा २०७२ साल में प्रकाशित रामेश्वर राउत मातृदास का **'बाग्मतीको बेदना"** (बाग्मती

की वेदना) पांच बाल नाटकों का संग्रह है । इस संकलन में **जीवनको बलो सबैको भलो** (जीवन का आधार सभी की भलाई), **बागमतीको वेदना** (बागमती की वेदना), **कोइलीको बोली** (कोयल की बोली), **सङ्कल्प** (संकल्प) और **पंक्षी संसार** (पंक्षी संसार) जैसे पांच एकाङ्की संकलित हैं । इस संग्रह में वातावरण संरक्षण, समाज सुधार, प्रकृति के विविध विषय जैसे पंक्षियों की दुनिया, फलफूल, सब्जी की दुनिया को बाल - बालिकाओं के लिए रोचक तरीके से प्रस्तुत किया गया है ।

२.३४ टंक चौलागाई और "सोने की कुल्हाड़ी"

कथालय इन्क द्वारा २०७३ साल में प्रकाशित टंक चौलागाई का "**सुनको बन्चरो**" (सोने की कुल्हाड़ी दो अंकों में संरचित बाल नाटक है । इस नाटक में लकड़ीहार और कुल्हाड़ी की प्रचलित कथा को आधार बनाया गया. है । इस संग्रह में ईमान्दार और लोभी लकड़हार के प्रमुख पात्र के रूप में होने के साथ-साथ जलपरी, हाथी, घोड़ा, पेड़ आदि भी पात्र के रूप में चित्रित हैं । यह नाटक बच्चों के लिए रोचक के साथ-साथ संदेशमूलक भी है । शाश्वत पराजुली के द्वारा संपादित इस नाटक में विनिता बुद्धाचार्य के द्वारा बनाए गए चित्र शामिल किए गए हैं ।

उपर्युक्त प्रस्तुत पुस्तकें बाल नाट्य क्षेत्र के विशेष पुस्तकाकार कृतियाँ हैं । इनमें से गार्गी शर्मा का 'काव्यगुरु सिद्धिचरण', दिनेश अधिकारी का 'जंगल की कथा जंगल की व्यथा', पुण्य प्रसाद प्रसाईं का 'कथा दादी की', यशु श्रेष्ठ का 'पहरेदार सिंका और बोरा', विजयराज आचार्य का 'रोशनी की तलाश', सौरभ किरण श्रेष्ठ का 'पेटु पेन' और ललिता दोषी का लोकलय में रचित बाल गीतिनाटक पारू की प्रतिज्ञा और टंक चौलागाईं का 'सोने की कुल्हाड़ी' एक ही विषय पर केंद्रित नाट्य रचनाएं हैं और अन्य कृतियाँ नाटक संग्रह हैं ।

उल्लेखित कृतियों के अतिरिक्त विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित विभिन्न स्रष्टाओं के फुटकर नाटकों ने भी नेपाली बाल नाटक के इतिहास में उल्लेख्य योगदान दिया है । कुछेक नाटक संग्रहों ने तो बहुत से छोटे-छोटे नाटकों को संकलित करके बाल-बालिकाओं के लिए नाटक प्रस्तुत करने के लिए सहयोग किया है । ऐसी पुस्तकाकार कृतियों ने नेपाल के बाल एकांकियों की नमूना भी प्रस्तुत की है । ऐसी कृतियों का सामान्य परिचय इस प्रकार है ।

(क) प्रतिनिधि नेपाली बाल नाटक (सं.)

कृष्ण शाह यात्री द्वारा संपादित और बी.एन. पुस्तक संसार, काठमाँडू द्वारा प्रकाशित प्रतिनिधि **नेपाली बाल नाटक** (२०६५) में उन्नीस नाटक संकलित हैं । इस संग्रह में अशेष मल्ल, कृष्ण शाह यात्री, छायादत्त न्यौपाने, तेज प्रकाश श्रेष्ठ, मोहनराज शर्मा, रमेश विकल, राजव, राम प्रसाद ज्ञवाली, विमल भौकाजी, श्यामदास वैष्णव, शर्मिला खडका दाहाल, शारदा रमण नेपाल, शिव अधिकारी और सरूभक्त के बाल नाटक संगृहीत हैं । उपर्युक्त नाटकारों में से किसी के दो और किसी के एक नाटक संकलित है । नेपाली बाल नाटक के क्षेत्र में अपने तरह का यह पहला संग्रह है ।

(ख) प्रतिनिधि नेपाली बाल नाटक (सं)

विजय राज आचार्य द्वारा संपादित एवम् विवेक सिर्जनशील प्रकाशन प्रा. लि. द्वारा प्रकाशित **प्रतिनिधि नेपाली बाल नाटक** (२०६६) में जम्मा चौदह नाटकारों के नाटक प्रस्तुत किए गए हैं । इस संग्रह में अशेष मल्ल, कृष्ण प्रसाद पराजुली, जयराज रेग्मी, तेज प्रकाश श्रेष्ठ, मोहनराज शर्मा, रमेश विकल, राजव, रामबाबु सुवेदी, विजय चालिसे, विजयराज आचार्य, विमल भौकाजी, वासुदेव मुनाल, शर्मिला खडका और सरूभक्त के बाल नाटक संगृहीत हैं । इसमें सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, बाल विकास से संबंधित, राजनैतिक, स्वैर काल्पनिक जैसे विविध विषयों पर लिखे गए नाटक संगृहीत हैं । इस नाट्य कृति का आवरण कलाकार के.के. कर्माचार्य ने बनाया है और नाटकों से संबंधित चित्र उमेश श्रेष्ठ ने । इस संग्रह के प्रायः सभी नाटक मंचन योग्य हैं और प्रभावकारी हैं ।

(ग) हमारे एकाङ्की (बाल एकाङ्की संग्रह-१)

वि. सं. २०६६ में ध्रुव घिमिरे द्वारा संपादित एवम् बाल संसार प्रा. लि. द्वारा प्रकाशित **हाम्रा एकाङ्कीहरू** (हमारे एकाङ्की) में जम्मा चौदह नाटककारों के चौदह बाल एकाङ्की संगृहीत हैं । इसमें अशेष मल्ल, कृष्ण प्रसाद पराजुली, जयराज रेग्मी, तेज प्रकाश श्रेष्ठ, शर्मा, रमेश विकल, श्यामदास वैष्णव, रामबाबु सुवेदी, विमल भौकाजी, सरूभक्त, शारदा रमण नेपाल, शारदा अधिकारी ढकाल, छायादत्त न्यौपाने और सौरभ किरण श्रेष्ठ के बाल नाटक संकलित हैं । प्रकाशक की भूमिका में यह स्वीकार किया गया है कि इसमें विशेष तौर पर

आठ से बारह साल के बच्चों को लक्षित करके लिखे गए नाटकों को ही संगृहीत किया गया है। ये एकाङ्की बच्चों की जिज्ञासा, सामाजिक दायित्व, बाल मनोवैज्ञानिक और बाल विकास से संबंधित विषयों पर ही आधारित हैं। इसमें कलाकार रविन कोइराला और सुदन कुमार सिंह के द्वारा बनाए गए चित्र शामिल किए गए हैं। इस संग्रह के लगभग सभी नाटक सुंदर, कम समय में मंचन होने वाले और मंचन की दृष्टि से योग्य हैं।

(घ) हमारे एकाङ्की (बाल एकाङ्की संग्रह-२)

वि.सं. २०६७ साल में विजय चालिसे द्वारा संपादित एवम् बाल संसार प्रा. लि. द्वारा प्रकाशित **हाम्रा एकाङ्की** (हमारे एकाङ्की) में जम्मा सतरह नाटककारों के सतरह बाल नाटक प्रस्तुत किए गए हैं। इस संग्रह में कार्तिकेय घिमिरे, डॉ. घनश्याम न्यौपाने परिश्रमी, टीकानाथ शर्मा, दिनमान गुर्मछान, प्रभा भट्टराई, मोहनराज शर्मा, रंजु मार्ग, राजव, राम प्रसाद पौडेल, राम प्रसाद ज्ञवाली, वसन्त कुमार शर्मा नेपाल, विजय चालिसे, विजय राज आचार्य, विश्वम्भर चंचल, शर्मिला खडका (दाहाल), शिव अधिकारी और सरयु श्रेष्ठ के बाल नाटक संगृहीत हैं। इस पुस्तक के प्रकाशक की भूमिका में यह स्वीकार किया गया है कि इसमें संगृहीत नाटक विशेष तौर पर आठ से बारह वर्ष के बच्चों को लक्ष्य में रखकर लिखे गए हैं। इस संग्रह के नाटक बच्चों की जिज्ञासा और बाल मनोविज्ञान से संबंधित हैं। कलाकार इशान परियार के द्वारा बनाए गए चित्र हैं और प्रायः सभी नाटक मंचनयोग्य हैं।

२.३ निष्कर्ष

प्रस्तुत की गई कृतियाँ बाल नाटकों पर केंद्रित होकर लिखी गई पुस्तकाकार कृतियाँ ही हैं। इन कृतियों ने बाल नाटकों को केंद्र बनाया है। संख्या की दृष्टि से देखा जाय तो यह कविता, कथा, चित्रकथा की तुलना में अत्यंत न्यून है। इस अध्ययन से यह तथ्य भी प्रष्ट होता है कि बाल-बालिकाओं के लिए नाटक मंचनार्थ पर्याप्त सामग्रियां उपलब्ध नहीं हैं। इन पुस्तकाकार कृतियों के अलावा भी बाल नाटकों ने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में स्थान पाया है। सच्चाई यह है कि एकाङ्की-नाटक अपने आप में एक छोटी और प्रभावकारी विधा होने की वजह से साहित्यिक विधाओं में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। इस अध्ययन में पत्र-पत्रिकाओं में फुटकर रूप में प्रकाशित और रंगमंच पर मंचित नाटकों को समावेश नहीं किया जा सका है। लेकिन इसकी तरफ ध्यान जाने और इसके लिए एक स्वतंत्र शोध अध्ययन कराने की आवश्यकता है।

नेपाली साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में अभी तक ऐसी कोई पत्रिका नहीं है, जिसने बाल-नाटक पर केंद्रित हो। लेकिन यह भी सच है कि नेपाल में विभिन्न साहित्यिक पत्रिकाओं ने अपने विभिन्न स्तंभो के माध्यम से बाल नाटकों को उचित और सम्मानजनक स्थान दिया है। इस क्रम में नेपाल बाल संगठन द्वारा प्रकाशित "बालक", बाल कोसेली द्वारा प्रकाशित "बाल कोसेली ", हातेमालो संचार द्वारा प्रकाशित "सुनकेस्रा", वीणा प्रकाशन प्रा. लि. द्वारा प्रकाशित "मेला" जैसी पत्रिकाओं की बाल नाटक के संबर्धन में विशृष भूमिका देखी जा सकती है। "मुना" पत्रिका से प्रकाशित **बाल नाटक विशेषांक** भी बाल एकाङ्की के प्रकाशन में अच्छा सहयोगी बना है।

यह सच है कि बाल नाटकों की पुस्तकाकार कृति के कृतिकारों की संख्या अन्य विधा के कृतिकारों की तुलना में काफी न्यून है। लेकिन उन कृतिकारों को नहीं भुला जा सकता है, जिन्होंने फुटकर नाटकों का प्रकाशन और मंचन कराकर नेपाली बाल नाटक के संबर्धन में विशेष योगदान दिया है। उन्हें विशेष रूप से स्मरण करना चाहिए। मोहन राज शर्मा, वसन्त कुमार शर्मा नेपाल, विश्वम्भर चंचल, शिव अधिकारी, सरयु श्रेष्ठ, रामबाबु सुवेदी, विमल भौकाजी, शारदा अधिकारी ढकाल, कार्तिकेय घिमिरे, डॉ. घनश्याम न्यौपाने परिश्रमी, टीकानाथ शर्मा, रंजु मार्ग, राम प्रसाद पौडेल, दिनमान गुर्मछान, प्रभा भट्टराई आदि स्रगटाओं ने अपने अन्य लेखन के साथ-साथ नाट्य विधा के फुटकर लेखन में शामिल किया है।

यह सच है कि बाल नाटक का लेखन ही न्यून है। जब बाल नाटकों का लेखन ही न्यून है, तो इसका मंचन पक्ष कैसै समृद्ध हो सकता है। कहने का मतलब यह है कि बाल नाटकों का मंचन पक्ष भी स्वाभाकि रूप से कमजोर है। यह एक दृश्य विधा होने की वजह से इसमें न केवल लेखक की आवश्कता होती है, बल्कि निर्देशक, कलाकार, रंगमंच, वेशभूषा, दर्शक आदि के समन्वय की भी पुरजोर आवश्यकता होती है। और यह कार्य सहज नहीं है। अनेक प्राविधिक पक्षों के चलते नाट्य प्रदर्शन न केवल कठिन कार्य, बल्कि चुनौतीपू

भी है। विद्यालय के वार्षिकोत्सव और अभिभावक दिवस पर प्रस्तुत किए गए नाटक ही बाल नाटक के संबर्धन के प्रमुख स्रोत हैं। लेकिन इनके अभिलेख रखने और इन्हें इतिहास के रूप में सम्मान देने का संस्कार हमारे यहाँ नहीं है। लेकिन यह सच है कि अगर ऐसे नाटकों के अभिलेखों को सुरक्षित रखा जा सके तो निश्चित तौर पर बाल नाटक के इतिहास को सुरक्षित रखा जा सकता है।

नाट्य संस्था सर्वनाम और इसके संस्थापक नाटककार अशेष मल्ल के द्वारा इस क्षेत्र में किए गए प्रयास बाल नाटकों के संबंधन और विकास के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। यह सच है कि वि. सं. २०४३ साल में सर्वनाम के द्वारा आयोजित "नानीहरूको नाटकमेला"(बच्चों का नाटक मेला) ने बच्चों को रंगमंच की तरफ काफी प्रोत्साहित किया था। लेकिन इस क्रम ने निरंतरता नहीं पा सका। उसके बाद सर्वनाम अपने सड़क नाटकों के द्वारा बाल-बालिकाओं के बीच नाटक को ले जाने का काम करता आया है। हातेमालो संचार के माध्यम से अशेष मल्ल और वासुदेव मुनाल के बहुत से बाल नाटकों का प्रसारण होने की जानकारी स्वयं नाटककार अशेष मल्ल ने दी है। लेकिन इसका भी अभिलेख बनाकर सुरक्षित नहीं किया जा सका है।

इसी प्रकार बाल चेतना समूह, के द्वारा काठमाँडू में, २०५७ के भाद्र महीने में आयोजित "राष्ट्रीय बाल नाटक महोत्सव" ने भी नेपाली बाल नाटक के संबर्धन में विशेष योगदान दिया है। लेकिन इस तरह के क्रियाकलापों को निरंतरता नहीं मिल पाना, इस क्षेत्र के लिए दुःख की बात है। अगर बाल नाटक के क्षेत्र में विकास करना है, तो छोटे-छोटे कार्यों का भी अभिलेखीकरण करके आगे बढ़ना होगा। वरना इस क्षेत्र में हुए अच्छे कार्य भी बीच में ही दम तोड़ देंगे। और हम हमेशा के लिए दीनता का प्रदर्शन करते रह जायेंगे। इसीलिए कल के भविष्य बच्चों को इस क्षेत्र में विकास करने के लिए जागरुक करना आवश्यक है और समय पर ध्यान केंद्रित कराना भी आवश्यक है।

वि. सं. २०१६ साल में प्रकाशित श्यामदास वैष्णव का 'अगुल्टो" एकाङ्की को नेपाली बाल नाटक का पहला पाठ्य और मंच-सामग्री के रूप में इतिहासविदों ने प्रस्तुत किया है। उसके बहुत समय के बाद, अर्थात् वि. सं. २०३७ साल में रमेश विकल का "सात थुँगा" प्रकाशित होता है, जिसे बाल नाटक की पहली पूर्ण कृति होने का गौरव प्राप्त है। लेकिन इस संवंध में अध्येताओं के बीच मतैक्य नहीं है। इसलिए यह आशा की जाती है कि इतिहास लेखक इस विषय पर मनन करेंगे।

इस अध्येता का यह दावा है कि वि.सं २०१३ में प्रकाशित विजय मल्ल का ."कोही किन बरवाद होस्" (कोई क्यों बर्बाद हो) नाटक ही पहला बाल नाटक है। डॉ. केशव प्रसाद उपाध्याय ने अपनी कृति 'नेपाली नाटक र नाटकार" (नेपाली नाटक और नाटककार) में यह लिखा है कि विजय मल्ल का यह नाटक वि. सं. २०११ में ही लिखा गया था। समीक्षक उपध्याय का कहना है कि 'कोही किन बरबाद होस' नाटक में मातृ स्नेह नहीं मिलने के कारण हीन भावना का शिकार हुए बालक का मनोविश्लेषणात्मक चित्रण करके उसे उस ग्रंथी से मुक्त कराकर जीवन के प्रति सकारात्मक बताया गया है।'

बाल समस्या, बाल-पात्र, बाल मनोविज्ञान, बाल-रुचि, बाल-बोध्य भाषा इत्यादि के कारणा " कोही किन बरबाद होस" को बाल नाटक के रूप में लिया जा सकता है। और यदि ऐसा किया जाता है, तो हमारे बाल नाटक के इतिहास की अवधि भी थोड़ी बढ़ सकती है। उसी तरह वि. सं. २०१२ में प्रकाशित हृदयचंद्र सिंह प्रधान का "खैताँती मास्टर" (फोकटिया मास्टर) को भी बाल नाटक के रूप में लेना उपयुक्त होगा। इस कृति में उपर्युक्त उल्लेखित विशेषताएं होने के कारण इसे बाल नाटक मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए। ऐसा बिल्कुल नहीं होना चाहिए कि बाल साहित्य का अस्तित्व स्वीकार करने में देर हो जाने के कारण हम बाल साहित्य की सामग्रियों की पहचान करने में भी दुविधाग्रस्त हों। इसी प्रकार अन्य पुरानी रचनाओं की खोज और विश्लेषण करके बाल साहित्य की उपलब्धियों को यथायोग्य स्थान देना उचित दिखाई देता है। यह एक प्रस्ताव भी है और अध्ययन के क्रम में अनुभूत की गई बातों के आधार पर तैयार की गई धारणा भी है। आशा है कि इस विषय से संबंधित निकायों और विज्ञजनों का ध्यानाकर्षण होगा और नेपाली बाल साहित्य के इतिहास का पुनः परीक्षण भी होगा।

अनुवाद : गोपाल अश्क

आडू के फूल का सपना

प्रा.डा. अभि सुवेदी

(भक्तपुर दरबार का दृश्य । लकड़ी की वास्तुकला और पैगोड़ा शैली की छतों वाला यह शहर एक काष्ठ परिवेश से युक्त स्थान होने के कारण यहाँ का आकाश भी काष्ठनिर्मित ही प्रतीत होता है । ऊपर काँड़ी (टुँडाल) और छत के ऊपर भी दृष्टि जाने के उद्देश्य से रंगमंच का ऊर्ध्व आकार भी है । पात्र-पात्राओं की दृष्टि और उनकी बातचीत में भी यह बात दृष्टिगोचर होती है । दृश्य में दरबार के भीतर प्रवेश करने वाले दरवाज़े के पास चौकीदार के सोने के लिए पलंग है । पुराने पत्थरों से निर्मित नल और पीछे की ओर बड़ी-बड़ी चपटी चट्टानें मौजूद हैं । दृश्य खुलने पर चौक के अंदर बजता संगीत सुनाई देता है । संगीत ध्यान और गीति भावना के सम्मिश्रण का अहसास कराता है । गार्ड रंगमंच के बीचोबीच मूर्तिवत् खड़ा है । इस दौरान धिमे बाजा और जात्रा के नृत्य और भाव-भंगिमा के साथ लोगों की एक मंडली आ पहुँचती है । धिमे बाजा महिलाएँ बजा रही हैं जो कि महिलाओं की पृष्ठभूमि में आने वाले भाव और कथानक को अभिव्यक्ति देता है । वे कुछ देर रंगमंच पर बाजा और नृत्य प्रदर्शन के बाद उसी उत्सव की मुद्रा में अंदर प्रविष्ट होते हैं । इसके बाद लंबे बाल, चमकदार आँखों और दुबले चेहरे वाला कवि रंगमंच पर आता है और चारों ओर अपनी दृष्टि घुमाने लगता है ।)

कवि

विंव सुगबुगाते हैं !
इस काठ रंग के आसमान के नीचे
आडू के फूलों की तरह
सघन बने हुए
इन लोगों के बीच
सितार में धुन वजाने और
तबला बजाने में असमर्थ
उँगलियों पर समय जम जाता है

धूप और इंद्रधनुष में न्यातपोल
आकाश को पाँच
चमकीले उजाले खंडों में विभाजित करता है

टाँड़ियों में की गई नक्काशी के आकार में
प्रेम-राग वोलता है
ध्वनि के आकार

यहाँ सपने थे
आज भी हैं
लेकिन उस ज़माने में ये
नक्काशी वाले कठखंडों के भीतर रहने वालों के
सपने थे ।

सुनो !
शुष्क सरोवर के भीतर
पानी के चलने की आवाज़ सुनो !

उजाड़ कोठी में याद
छाया की तरह उठे हुए पेड़ों पर
हवा की सरसराहट को लो सुनो !

(चौकीदार को संकेत करते हुए)
यहाँ समय एक छायाकृति है
वह संज्ञाहीन अभिव्यक्ति में उसी समय की बात
करता है

वह उन्हीं आकृतियों को देखता है
कान लगाकर सुनता है
और सुनी हुई बातों को

शब्दों में बयाँ करता है

(इस समय कुछ संकेत करते हुए इस पुराने दरबार का चौकीदार जड़वत् खड़ा हो जाता है। उसका चेहरा भावविह्वल है उसका। इसी समय तेज़ कदमों से चलते हुए बहुत-सी युवतियाँ रंगमंच पर प्रविष्ट होती हैं और चारों तरफ़ फैल जाती हैं। रंगमंच के चारों तरफ़ चलते हुए वे चौकीदार के चारों तरफ़ आकर वैसी ही मुद्रा में जम जाती हैं। उन्होंने पूर्व काल में नेवार महिलाओं द्वारा लगाए जाने वाले वस्त्र पहन रखे हैं। चौकीदार इस तरफ घूमता है, सुगबुगाता है। युवतियाँ भी एक-एक कर उसी का अनुसरण करती हैं। इसके बाद वह बोलता है।

लो सुनो !
(उसका चेहरा प्रकाशमय होता है।)

लो सुनो !
वहाँ संगीत
आड़ू के फूल की तरह सर्वविदित-सा फैलता है

कवि

(नेपथ्य में बाँसुरी की आवाज़ धीरे से गूँजता है, इसके बाद सितार की आवाज़ आती है और तबला भी बजता है। संगीत के विषय में बोलते जाने पर कवि का स्वर धीरे-धीरे उच्च होता जाता है।)

पत्थरों के पनघट आसपास
नल की सूखी शिलाओं के ऊपर के
प्रकाश की तरह ही गूँजता है संगीत
(संगीत)
पूर्व के गुंबद वाली छत के ऊपर से घाम की तरह ही पसरता है संगीत
(संगीत)
पूर्व की सरसराती हवा की तरह उठता है संगीत
(संगीत)
लहर की तरह नाचने वाली स्त्रियों की तरह नाचता है संगीत
(संगीत)
पसरती धूप की किरणों की तरह लुढ़कता है संगीत !!

(इस दौरान संगीतकारों की मंडली रंगमंच पर आती है। अपने-अपने आसन लेकर वे क्रमशः उच्च स्वर में संगीत बजाते हैं। संगीत बजने के दौरान युवतियाँ रंगमंच भर घूमती रहती हैं, इस समय चौकीदार और कवि जड़वत् हो जाते हैं। संगीत कुछ समय तक बजता रहता है।)

चौकीदार

(संगीत निरंतर बज रहा है, लेकिन उतनी ही आवाज़ में जो कि चौकीदार की आवाज़ को ढक न सके)

लीजिए सुनिए !
एक दिन आज के ही दिन की तरह
अथवा किसी भी दिन
इस आकाश के नीचे इस भक्तपुर नगर में जो होता है
वह कंथा होता है।

(इस समय रंगमंच पर कथा का प्रवेश होता है। यहाँ कथा पात्र-पात्राओं की गति, मुद्रा, लय और चाल में दिखती है। रंगमंच पर युवतियाँ और उनके प्रेमी कलाकार आते हैं। उनकी बातों से अधिक हाव-भाव होता है, संगीत होता है और गति होती है। जाते हैं और फिर आते हैं। लौटकर एक युवती और एक प्रेमी आते हैं और साधारण बातचीत की भाव-भंगिमा दिखाते हैं। नृत्य जैसी मुद्रा में वे एक दूसरे के अर्द्धवृत्त में घूमते हैं।)

युवती

तुमने आज कहाँ की यात्रा की ?

युवक

आज दिन भर पत्थरशिलाओं पर यात्रा की
स्नेहपूर्वक नक्काशी की और आकाश चीरकर आकार बनाया

युवती

तुमने इस बिख़रे हुए धुन को किसमें उठाया ?

युवक

तुम्हारी इस छाती में और इसी काठ और पत्थर के संसार में

(इस समय एक-दो व्यक्ति आकर युवक को पकड़ने की कोशिश करते हैं। युवती अपने शरीर से उसे ढक देती है। दूसरी ओर से पकड़ना चाहता है, तब एकदम क्रोधित और विश्वस्त नृत्य मुद्रा में ढक देती है। यह क्रम बहुत देर तक चलता है। पकड़ने आने वाले की मुद्रा भी नृत्यमय है। सभी लोगों की गति नृत्य की होती है। इनका नृत्य होता है रंगमंच पर, धिमे के लय में। संगीत जल्दी-जल्दी बजता है। आखिर में कलाकार

को पकड़ लेता है। युवती बहुत विरोध करती है और पीछे-पीछे जाती है। दूसरी युवती रोती हुई आती है। उसी समय रंगमंच पर अन्य लड़कियों के साथ मय्जु का प्रवेश होता है।

मय्जू

क्यों ये प्यार करने वाली आँखें आँसू में नहाती हैं
क्यों ये फटती हैं
धूप के हाथों से दबकर फूटने वाले दाड़िम जैसे मन

(मय्जू के बैठने पर लड़कियाँ आकर चारों तरफ से एक वृत्त बनाती हैं। मुद्रा नृत्य की ही है। संगीतकारों की मंडली रंगमंच पर आती है। अपने बाजे लेकर बैठते हैं, एक दूसरे को समझने के भाव से देखते हैं और संगीत बजाने लगते हैं। इस संगीत में आहिस्ता नृत्य के भाव में लड़कियाँ नाचती हैं। लड़कियों को संबोधित करते हुए) :

मय्जू

कितने लोग गए यहाँ से
क्या यहाँ का इस धरती के साथ
प्रेम का कोई नाता नहीं होता ?

लड़कियाँ एक स्वर में

होता है, तुम्हें यहाँ से जुगनू की तरह डूबना नहीं चाहिए
इन चोक और बहाल के कोने-कोप्चे से छाया की तरह खोना नहीं चाहिए
भृकुटी की तरह राज उपहार बनकर जाना नहीं चाहिए
सुई देने वाले को बेटी देने वाले माँ-बाप की यहाँ एक नहीं चलनी चाहिए

(कहते-कहते यह बोली गीत की तरह हो जाती है। वे इसी बोली को गीत की तरह दोहराते हुए मय्जू के अगल-बगल चलने लगती है। उनी गति रुकने पर दूर से रोती हुई कलाकार की प्रेमिका युवती का प्रवेश होता है। वह मय्जू के आगे कुछ देर स्तब्ध होकर खड़ी हो जाती है और फिर मय्जू को आलिंगन कर रोने लगती है।)

मय्जू

अपना संसार कहाँ छोड़कर आ गई ?
काठ और शिलाओं पर अंकित होने वाले अपने सपनों को कहाँ विसर्जित कर आई ?

लड़की

जहाँ उनके मन रहते हैं
प्रेम रहता है पर नक्काशी वाले हाथ नहीं रहते
जिस मिट्टी, पत्थर और आकाश को उन्होंने
हम जहाँ रहते हैं, उस संसार का रूप दिया
इससे वे हमेशा के लिए खो गए

मय्जू ! अब मैं क्या करूँ !!

(रोती हुई लड़की को सब लोग स्नेहपूर्वक घेर लेते हैं)

मय्जू

(विश्वास और क्रोधमिश्रित स्वर में)
इस प्रश्न का उत्तर हम नदी में जाकर ढूँढ़ेंगे
नदी के पार ढूँढ़ेंगे
इस काठ और पत्थरशिला के ब्रह्मांड में ढूँढ़ेंगे
आँसू सिर्फ हार ही नहीं है
हम इसे लेकर ही एक दिन जीतेंगे
एक दिन मिलेंगे उनसे
जिन्होंने यह प्रेम का आकाश बनाया है
इस प्रेममय धरती पर !!

(मय्जू के साथ ही सभी लड़कियाँ उठती हैं। धिमे बजाने वाली लड़कियाँ आगे-आगे, पीछे-पीछे मय्जू और लड़कियाँ रंगमंच से धीरे-धीरे अंदर घुस जाती हैं। कुछ लड़कियाँ रंगमंच पर ही मूर्तिवत् रहती हैं। इसी समय कवि का प्रवेश होता है।)

कवि

(दर्शकों को संबोधित करते हुए मंच पर घटी घटना को दिखाते हुए)

वो
भक्तपुर गुंबद वाली छत के नीचे
ओट में बसी हुई
कथाएँ बुनता है
(इसी समय रंगमंच के पीछे से दो पात्र आते हैं। नेपाली लहजे में बोलता है। संगति रुक जाता है)

गाइड १

आइए आइए !
यह अति सुंदर दरबार है
सच्ची
यहाँ शौचालय नहीं है
तो क्या हुआ, खेत तो हैं ही
कोई नहीं देखने जाता

गाइड २

समझ गए यह बहुत सुंदर लिंग है
राजा इसकी पूजा करते थे
रानी भी करती थीं

कवि

बिक्री का मतलब यही है
सपने दिन में बेचे जाते हैं
पुराने पोतड़ों में फैलाए हुए सपने
खंडित शब्दों में बेचे जाते हैं

स्त्रियाँ

(बारी-बारी करके आगे आकर बारी-बारी से बोलती है)

पहली

चाँदनी में कुछ हद तक झुकी हुई इस छत के नीचे
मैं नाची

दूसरी

मैंने आड़ू के फूल की तरह गाया

तीसरी

स्वरहीन

चौथी

वे आकर मुझसे मिलेंगे, इस आशा से मैंने गगरी भरी
पर वे कभी नहीं आए
मैंने सुना है
चूँकि उन्होंने बड़ी मज़बूती से
काठ को बोलने, चमकने और आकार में गाने वाला बनाया
इसलिए उन्हें इस स्थान पर कभी न लौट पाने के हिसाब से निर्वासित कर दिया गया

(धीमे स्वर में बाँसुरी बजती है और इसके बाद इसी अंदाज़ में सितार भी बजने लगता है। स्त्रियाँ गीत गुनगुनाती हैं लेकिन शुरू में उतना समझ में नहीं आता है। एक-एक कर गाते हुए फिर वे समूह में गाने लगती हैं।)

मैंने आड़ू के फूल की तरह गाया
पनघट पर पानी भरते समय
गगरी टूट गई
मैंने रानी को
पत्थरनुमा नल पर नहाते हुए देखा

बिलकुल न पढ़ी जा सकने वाली रेखाओं में
मैं बहुत देर पहले खोई
कोठी में
नक्काशी की गई शिलाओं से
इस दरबार की छत दिखती है
समय के घुमाव का बाट जोहती आँखों की तरह
मैंने सितार की ध्वनियों में
लाखों आँसू की बूँदें बहाई हैं।

कवि

उसने काठ के ऊपर एक संसार अंकित किए होंगे
उसने गुंबद की छत के नीचे
आकारों के बीच खाली स्थान पर
एक आकाश बनाया होगा
उसका प्रियतम कलाकार
अभी भी यही सब कर रहा होगा
यहीं कहीं

गाइड १

यह दरबार राजा ने बनाया है
बहुत अच्छे राजा, समझे ?
उनकी बीस रानियाँ थीं
पर ठहरिए,
पता नहीं, लोग तो यही कहते हैं
जो भी हो, पर दरबार सच में उन्होंने बड़ा सुंदर बनाया है

गाइड २

यह देखिए नक्काशीदार शैली
यह आकाश का चित्र है
यह अति सुंदर मूर्ति
इसकी कीमत मात्र अस्सी रुपए
देखिए, इसे तंत्र कहते हैं
यह एक सृष्टि की मैथुन लीला
इसका अर्थ

अनाज उठाने के समय
भगवान और किसान स्त्रियाँ मिलने पर
ऐसी मैथुन लीला होती है
पर मुझे कहाँ उतना पता है
लीजिए, यह पुस्तिका खुद पढ़िए

(पर्दा गिरता है। इसके बाद गार्ड कथा सुनाने के लिए बाहर आता है। नकाब पहने हुए पात्र-पात्राएँ आते-जाते हैं। कोई-कोई वृत्त बनाकर रंगमंच पर ही रहता है।)

चौकीदार

एक रात
एकदम सर्द रात
इसी काठ के पलंग पर सोने जा रहा था
अचानक बहुत-से लोगों की धमाचौकड़ी सुनी
क्या बातें हो रही हैं, कहाँ बातें कर रहे हैं
यह जानने की कोशिश की
इतने में ही मेरे कान तक ध्वनि प्रवाहित होती हुई आई
भाषा, कुछ नई-सी थी
इनसे मिलना चाहिए, यह सोचकर उतरा
और चाँदनी से स्निग्ध बनी कोठी के मैदान में
पनघट के आसपास नज़र घुमाई
वहाँ संगीत था
वहाँ नृत्य था
वहाँ आशाएँ थीं और
वहाँ उच्छ्वास थे

(पर्दा खुलता है। संगीतकारों की मंडली संगीत बजा रही है। बहुत सारे लोग– उत्सव वाले कपड़े पहने हुए पुरुष, स्त्री और लड़कियाँ बातें कर रहे हैं। लेकिन वे ऐसी बोली में बातें कर रहें हैं जो अर्थहीन गीतिकथा की तरह सुनाई देती है। पर समय-समय पर स्पष्ट रूप में कुछ कपड़ों और फूलों की प्रशंसा, शिष्टाचार की नेवारी अभिव्यक्तियाँ जैसे कि 'छि न्हाबले', 'ध्व हाकुपार्सी छित गज्यागु ल्होगु', 'अथे हे छी थुला दीगु स्वह', 'तारेमाम्' इत्यादि सुनाई देती हैं। नए लोग प्रवेश करते जाते हैं। इस दृश्य में लोगों की एक प्रकार की स्वतंत्र आवाजाही दिखती है। दर्शकों में से भी रंगमंच पर प्रवेश कराया जा सकता है इस दृश्य में। यह एक भोज से पहले की चहलपहल है। एक सुंदर कपड़े पहनी हुई युवती बीच में बैठी होती है। वह उतनी खुश नहीं दिखती। उसके आसपास बैठी स्त्रियाँ उसे कुछ समझा रही हैं, ऐसा भान होता है। बातचीत समझ में नहीं आ रही है। संगीत तेज़ होता जाता है। कोई ऐसे ही खड़ा दिख रहा है तो कोई अपनी ही धुन में नाच रहा है। लोग स्वतंत्र हैं। संगीत धीमा होता जाता है।)

कवि

इन्हीं काठों ने
उसके सपने बनाए
वह खपड़ा और काठ के रंगों वाले आकाश के नीचे
पली-बढ़ी
वह धर्मशालाओं और पत्थरों से बनी सड़कों पर
खेलकर बड़ी हुई
मनुष्य और ईश्वर के वीच का सेतु
लाखे नाच और इसकी सृष्टि की भंगिमाएँ
देखकर चकित
वह भीड़ के किनारे जा खड़ी हुई

चौकीदार

आज वह खुद पले हुए संसार को छोड़कर
कहीं जाना नहीं चाहती
वह दूसरे स्थान
दूसरे पत्थर से बने देवता
पत्थरों के गुंबद और
अलग किस्म के शिलाखंडों वाले शहर में जाना
बिलकुल ही नहीं चाहती

वह तो इस भक्तपुर नगर की बेटी है
वह इस काठ के विश्व की बेटी है
उसका स्थान यहाँ हमारे पास सुरक्षित है
वह अभी भी हमारी आँखों में नाचती रहती है
बेचारी मय्जू
मैं कैसे उसे भूल सकता हूँ

(स्त्रियाँ एक-एक करके आगे आती और बोलती जाती है)

पहली

पर यह तो बहुत पहले की घटना है

दूसरी

नहीं, यह घटना अभी की है, आज वह इन पत्थरों की आँखों में रोती है।

तीसरी

आज उनके बैठे हुए इन रंगों में

चौथी

वह मेरे हृदय की देवी बनी हुई है
सभी एक ही स्वर में
हम सब उनके लिए ही गाती हैं
इस पत्थरनुमा नल के आसपास
हम उन्हीं की प्रतीक्षा करती हैं

चौथी

वह आकर भरेंगी, इस चिर प्रतीक्षा में
उनकी गगरी हमेशा खाली रहेगी
संगीत उनका ऐसा स्थान होगा
जहाँ वह पत्र ही पत्र हो चुकी प्राचीन छतों पर
चमकने वाली
चाँदनी लय के समान ही रहेंगी

(राजमती का संगीत आहिस्ता बढ़ता जाता है। यहाँ और लोग भी यह गीत गुनगुना सकते हैं। गार्ड जब बोलने लगता है तो संगीत थोड़ा धीमा हो जाता है।)

चौकीदार

यह लड़की विवाह करके
हमेशा के लिए यहाँ से जा रही है
ऐसी जगह जा रही है
जहाँ जाकर उसे
कभी न सुनी हुई भाषा सुनकर
चुपचाप रहना होगा
वह अभी शायद उसी समय की चिंता कर रही होगी

कवि

हाँ, बिलकुल सही
वह समय बेचारी को स्वयं बनाना होगा
वह आकाश और पृथ्वी दोनों में ही
अपना स्थान बनाएगी
वह एक गुंबद होगा
पृथ्वी और आकाश का सेतु
जिसके ऊपर बादल की तरह
उसका मन उड़ेगा

जहाँ वह
खुद से नापे हुए समय और
खुद से जोड़े हुए स्थान रखने के लिए
और इन सभी मनों का
या कहें हमारे भी मन के अजस्र स्रोत
भृकुटी कन्या
रुई जैसे बादल के देश में रखने के समान ही रखने के लिए मंडलों की रचना करेगी।

मय्जू

इन सबका आरंभ कहाँ है ?
इसक अंत कहाँ है ?
मैं क्या हूँ, नदी या स्त्री ?
समय का एक आनंद या
काठ के आवरण के पीछे छिपने वाली पीड़ा
कौन बताएगा मुझे ?

कवि

हाँ, ये ही हैं मूल प्रश्न
जो उस समय उसने किसी से पूछा
केवल इन निर्जीव काठ के तने
इन्हीं पत्थरों और ईंटों से पूछा
इसी नदी और इसी काठ के कोरो पर लटकने वाली
गौरैयों जैसी
शाम से पूछा
(कुछ देर विचार कर)

अब इस तरीके से नहीं होगा
बल्कि इन समयों को लाँघते हुए
मय्जू से बात करनी चाहिए और
इतिहास भर फैले हुए इन स्त्रियों के समय के ऊपर
के श्मशासन-खंड के समान
सन्नाटों को चीरना चाहिए
इसके लिए राजा की ही पोशाक पहननी चाहिए
जिस राजा की कथा आज हम
इन स्त्रियों के
जीवंत, उदास और प्यारी कथा से भी अधिक कहा करते हैं

(कवि राजा की पोशाक लगाता है। लोग राजा के विभिन्न परिधान, जैसे कि मुकुट से लेकर जामा आदि लाते हैं। कोई मुकुट पर कलगी लगा देता है और कोई राजदंड लाकर हाथ में थमाता है। एक व्यक्ति गद्दी को दौड़ाते हुए लाता है जहाँ कवि

थोड़ी देर बैठता है और फिर उठता है। वह अनेक बार इस प्रकार उठता-बैठता है। इसके बाद वह मय्जू से बात करने लगता है।)

राजा

कवि तो ये सभी बातें तो नहीं देख सकता
लेकिन मय्जू के समय का बोध ज़रूर कर सकता है
कविता पुराने कोरो में बनाए गए गोरैया के घोंसले से बढ़कर और कुछ नहीं है
पर यह मय्जू के भाग्य के ऊपर
बादल की तरह उड़ भी सकता है
(मय्जू के आगे जाकर)

प्रिय बालिके !
क्यों इस प्रकार आर्तनाद कर रही हो ?
किस बात ने तुम्हारे मन को व्याकुल बनाया है ?

मय्जू

महाराज !
मैं क्यों रो रही हूँ, यह बात
आपको पता होगी ही
आपने मुझे ऐसा समय दिया है
जिसे मैं न ले सकती हूँ न छोड़ सकती हूँ
फिर आप मुझे कहाँ भेजना चाहते हैं ?
जहाँ मैं किसी को पहचानती नहीं, उस वीरान देश में जाकर
मैं कौन-सी भाषा बोलूँगी, यह कभी सोचा है ?

राजा

स्त्री एक ऐसी सर्वव्यापी प्राणी है
जहाँ भी जाए, वह अपनी भाषा स्वयं बनाती है

मय्जू

हाँ, मुझे पता है, वह पीड़ा की भाषा है
स्त्री एक ऐसी शहीद है
जिसकी कथा लिखी नहीं जाती
केवल उसकी टूटी हुई शामें
अपनी ही अखंडता में बंदी बनी नदी पर
उसकी गाथा गाती हैं
आप को कभी ज्ञात था मेरा अपना ही आकाश है ?
आप ने कभी विचार किया था मैं गीत की संतान हूँ ?
आप ने कभी सोचा था, मैं अपने सपनों के साथ बड़ी हुई हूँ ?

आप की रुचि ऐसा इतिहास है
जिसे तलवारों से लिखा जाता है
मैं ऐसी प्रतिष्ठा हूँ जिसे आप
अपने हथियार की चमक पर दाँव पर लगाते हैं

खून खुद बहाते हैं और कहते हैं
यह स्त्री ने किया है
निर्दोषों को मारते हैं और कहते हैं
यह इतिहास में स्त्री की खेली हुई भूमिका है

आपका इतिहास एक श्मशान है
जिसके ऊपर आप ऐसा शिलापत्र लिखकर रखते हैं-
"इसके भीतर की स्त्री सदा अदृश्य थी।"

राजा

तुम्हारे कथन में मुझे क्या करना चाहिए ?
मैं तुम्हारे इतिहास की गति कैसे उलट सकता हूँ ?
मैं कैसे नदी की दिशा मोड़ सकता हूँ ?

मय्जू

हे राजन्, आपको कुछ नहीं करना पड़ेगा,
मुझे पता है इतने वर्षों तक
आप जो कहते आए हैं मेरी वह कथा बदलने के लिए
आप कुछ नहीं करेंगे !
(दो युवतियाँ आगे आकर बारी-बारी से बोलती है।)

पहली युवती

इन काष्ठकलाओं में
मेरे प्रियतम के हृदय पर
आपने अपना इतिहास लिखा है !

दूसरी युवती

आपने
मेरे आँसू से इतिहास लिखा है !

सभी युवतियाँ

(एक ही साथ)

आपके इतिहास में हम सभी अदृश्य हैं
आपके इतिहास में हम सब
इस गीत में टूटी हुई शाम हैं
(वे सब समझ में न आने वाली धुन गुनगुनाती हैं। सिर्फ लय पता चलता है।)

राजा

रहने दो, मैं अपने असली रूप में लौटता हूँ!
मैं यह आवरण खोल देता हूँ,
दूर से ही
प्रातःकालीन हवा की मधुर आवाज़ में कविता लिखना अधिक आसान और सुरक्षित होता है
(लड़कियाँ मय्जू के अगल-बगल उठती-बैठती हैं। मय्जू के पहने हुए परिधान की चिंता करती हैं, बाल में फूल को सँवार देती हैं। इस समय स्निग्ध लहजे में संगीत बज रहा है। धिमे नहीं बजता। कुछ देर यह क्रम चलता रहता है। अचानक अपने स्थान से उठकर शोक और आक्रोश मिश्रित स्वर में।)

मय्जू

हम अपने ही इर्द-गिर्द मिलकर दीवार बना रही हैं

अन्य लड़की

हम मिलकर अपनी ही विदाई की तैयारी कर रही हैं

अन्य लड़की

हम जहाँ रहती हैं और जिसे जानती है, वह सीमा रेखा आँसू से खींचती हैं

पहली लड़की

वह रेखा नदी है

दूसरी लड़की

हम सब यहाँ नक्काशी किए गए चेहरे हैं

पहली लड़की

हमारी रेखाओं में धूप गिरकर टूटती है

दूसरी लड़की

इसीलिए हम देदीप्यमान होते हैं

मय्जू

हो गया अब जिस-जिस जगह अंकित हैं, हम वहीं रहें
मैं अक्षर और यादों में अंकित हूँ
इसीलिए मैं नदी होकर जाती हूँ
तुम लोग शिलाखंडों और काठों पर अंकित हो
इसीलिए तुम लोग धूम ओढ़कर रहो

कलाकार की प्रेमी

आँसू हम सब का संगम है
(लड़कियाँ उठ जाती हैं। सभी नृत्य के भाव में उठती हैं और मय्जू के आगे चलने पर सभी पीछे-पीछे धिमे के ताल पर अंदर प्रवेश करती हैं। वहीं मंच पर मूर्तिवत् खड़े गाइड बोलने लगते हैं। राजा एक-एक करके पोशाक निकालते हैं और अपने वास्तविक रूप में लौट आते हैं।)

कवि

उनकी कथा के नज़दीक मुझे पहुँचाने वाली यह यात्रा
मैं हमेशा याद रखूँगा

गाइड पुरानी मूर्ति और सामान झोला भर रखे हुए चिल्लाते हुए आते हैं

गाइड १

भृकुटी नेपाल की वड़ी बेटी हैं

गाइड २

नहीं महान् बेटी

गाइड १

और तिब्बत की बहू हैं

गाइड २

ओए, ऐसी बात मत कर!
भृकुटी किसी की भी बहू नहीं हो सकतीं

गाइड १

बेटी हो सकती हैं तो बहू भला क्यों नहीं हो सकतीं

गाइड २

आइए, आइए भृकुटी माँ भी हुईं या नहीं, यह जानिए!

गाइड १

फ्रिक स्ट्रीट में हमारी ऑफिस में आइए, ड्रैगन का संसार देखिए !

गाइड १

भृकुटी ये सारे गुंबद लेकर गईं ।

गाइड २

नहीं, तिब्बत और चीन में वे यहाँ से सिर्फ कलाकार लेकर गई थीं ।

गाइड १

चीन या तिब्बत, हमें उतना नहीं पता मगर वे यहीं कहीं अपने मायके से बहुत-से कलाकारों को लेकर गई थीं ।

गाइड २

मायके का मतलब वे जहाँ पैदा हुईं उनके माता-पिता का घर है ।

गाइड १

'भृकुटी मोमो केंद्र' में स्वादिष्ट मोमो खाने आइए ।

गाइड २

और कैलासपति सेकुवा कॉर्नर पर सेकुवा खाने आइए ! टोल ...

गाइड १

कलात्मक खिड़की के पीछे जहाँ छोटे बुद्ध और शिवलिंग हैं

गाइड २

पत्थर छपे हुए सड़क की तरफ !!

कवि

हाँ, मैंने भी फ्रिक स्ट्रिट में
कंबल बिछाकर सगरमाथा की प्रतीक्षा कर बैठते हुए देखा है
इस दरबार को भी धूल का खोल ओढ़कर
प्रेमियों के स्पर्श की प्रतीक्षा करते हुए देखा है
भृकुटियों की चूड़ियाँ
और ये लड़कियाँ, जिनके प्रेमी
और ऐसी कृतियाँ न बनाएँ, यह सोचकर उनके हाथ-पैर काटे गए
जी हाँ, उनकी बालियों को भी यहाँ प्रतीक्षा करते हुए देखा है ।
समय के पोतड़े लपेटकर
हम सपने बेचते हैं
संस्कृति का अर्थ
प्रेम और पीड़ा से कई बार फटे हुए
आकाश की कथा है

गाइड १

नेपाल की कैसी गौरवमय परंपरा है, देख चुके
यहाँ अपनी यात्रा का आनंद उठाइए !
यह जगह उतनी खर्चीली नहीं है
एकदम सस्ती है
ब्यासिली की तुलना में

गाइड २

वेनिस के सैनमार्को की तुलना में

गाइड १

मिलानो के दुओमो की तुलना में

गाइड २

ल्हासा के पोताला की तुलना में

गाइड १

आगरा के ताजमहल की तुलना में

गाइड २

लंदन के सैंट पॉल की तुलना में

गाइड १

आदि इत्यादि समझिएगा

गाइड २

(गंभीर स्वर में)
राजा किसी दिन लौटेंगे सोचकर
एक बड़ी चिड़िया
दरबार के बाहर इंतज़ार में बैठी है

नहीं नहीं, इसे ज़रा कविता के लहजे में कहता हूँ–
लौटेंगे राजन् एक दिन यह सोचकर दरवार के पीछे
बाट जोहती मुनिया विनीत भाव से शेषनाग के
नीचे

कैसा लगा ?

गाइड १

अच्छा, हम विदा हों अब
पुराने आकारों के ब्रह्मांड ठमेल में मिलते हैं
लेकिन उतने पुराने भी नहीं है, कहना चाहिए

(पर्दा गिरता है। गार्ड पर्दा के बाहर आकर बोलता है। विशेष परंपरागत लोक धुन नेपथ्य में बजती रहती है।)

गार्ड

इस तरह मेरे देखे हुए और खुशबू लिए हुए
आड़ू के फूल की तरह ही
इस कथा का अंत होगा
मेरे सपने बुनने वाला संगीत
इसी तरह गूँजता रहेगा
इस आँगन और चौक पर
घटनाएँ इसी तरह घटती रहेंगी-
सभी विगत की जीवंत-

गुज़री हुई पानी की धारा
बीती हरियाली
बीते हुए आइने
गुज़रे हुए मय्जू के गीत
जो सभी इन क्षणों की कथा कहने के लिए
जीवंत रेखाओं में अंकित हैं
उसी वक्त उन्हें देखकर
प्रेम और विरह वश मैं रोया हूँ और
उन्हीं की कथा मैंने इस तरह आज आपको सुनाई
है।

(पर्दा खुलता है। संगीत उच्च स्वर में बजने लगता है। मय्जू अकेले नदी को देखकर खड़ी है।)

मय्जू

(मय्जू जब बोलने लगती है तब संगीत धीमा हो जाता है। वह फूट-फूटकर रोती है, इसके बाद वाग्मती का पानी अंजली में लेकर मुँह धोती है, धूप को पानी देती है, और शोकमय स्वर में बोलने लगती है।)

वाग्मती नदी !
मेरे विस्थापन की तरह बहने वाली
तुम एक सपना हो,
बहती जाने वाली अपनी जगह नहीं बना सकी तो
तुम नदी नहीं मानी जाओगी,
मैं भी सपनों के नित्य प्रवाह में
अपना ही रास्ता बनाऊँगी

वाग्मती, हे कंचन आदिम नदी
तुम ऐसा रंगमंच हो
जहाँ मैं अपना नाटक स्वयं मंचन करूँगी !

कवि

(दौड़कर आता है।)
बेचारी वाग्मती !
उसके सपने ही बस कंचन हैं
अपने रास्ते में उसने एक कहानी भी रची है
सत्य है

(आज की उस वाग्मती का पानी उठाकर अंजलि में भरती है। गंदा पानी मुँह-नाक सिकोड़कर बिखेरती है।)

लेकिन मय्जू जो कि पहले की तरह सोच रही है
वैसी वाग्मती आज नहीं है
मय्जू की कथा इसी तरह बनी है
संस्कृति का तात्पर्य
इस काठ के ब्रह्मांड की तरह
एक प्रतीक्षा है-
यहाँ से अनंत तक
नित्य प्रवाहित होने वाले समय के समान ये अजस्र
आँखें
मैंने जिन्हें हृदय में सँजोया
उन युगों में जीवन की आतुरता में
एक दिन आ गिरने की प्रतीक्षा !

(पर्दा)

अनुवादः मुकेश कुमार मिश्र

एकाङ्की

गृहस्थी

बालकृष्ण सम

(लड़की मक्के भून रही है। लड़का आता है और पास में बैठ जाता है)

लडका : माँ कहाँ है ?

लडकी : उधर।

लडका : अच्छा, तो दूर बैठी धूप सेंक रही हैं। लगता है, धूप ने मन मोह लिया है माँ को; अरे वाह ! कितनी बड़ी चोटी !

लडकी : उई माँ, उफ् यह क्या घोड़े के लगाम की तरह पकड़ रखी है ! छोड़िए इसे।

लडका : मैं नहीं छोड़ने वाला।

लडकी : मैं कहती हूँ, छोड़िए भी। अभी माँजी झट से आ गई तो पता नहीं क्या ...

लडका : क्या करेगी ?

लडकी : क्या करेगी ! देखो तो, शर्म भी नहीं आती क्या ? अपने बेटे को शायद कुछ न करें पर दूसरे की बेटी की तो ऐसी की तैसी कर देंगी, दो दिनों से थोड़ा कान गर्म हुआ है, ऊपर से चोटी खींच-खाँच ...

लडका : अजी चोटी कहाँ, ये तो याल हैं।

लडकी : हुँह ! अपने बाल होंगे घोड़े की याल की तरह घुँघराले।

लडका : तो फिर गंजा हो जाऊँ ?

लडकी : ऊपर से राख भी लेप लें तो और भी अच्छा।

लडका : अच्छा तो अब लगाम खींचता हूँ।

लडकी : उफ् ! ज़रा मेरी मूँगा की माला तो टूटे, फिर दिखाती हूँ।

लडका : क्या दिखाएगी ? मक्के-भटमास की तरह मूँगा भी भून के दिखाएगी शायद, है न ? एक बार और आँखें तरेर के दिखाओ तो ज़रा, हाय ! कितनी प्यारी लग रही है, आग के पास बैठकर तो गाल भी लाल-लाल हुए पड़े हैं।

लडकी : हाँ तो माँजी से कहकर फोड़वा भी दीजिए, तो और भी अच्छे हो जाएँगे।

लडका : कितनी खूबसूरत है मेरी बीवी ! यह सब काजल का कमाल है या ..., अभी नाच होता तो बाजा बज उठता और तीन-चार मिनट गा भी लेता।

लडकी : हाँ तो गाइए न, मैं डुगडुगी तो बजा ही रही हूँ हँड़िया में।

लडका : अच्छा तो उस दिन हमने जो नाच देखा, उसमें किस तरह बोला था, बोल के दिखाऊँ ?

लडकी : ठीक है, मैं भी देखूँ ज़रा कलाकारी।

लडका : आज मैं अपनी प्राण प्यारी को अपने पारस्परिक प्रेम से उत्पन्न विवादग्रस्त विवरण सुनाता हूँ।

लडकी : लो, हो गया न ? टूट गई न मेरी मूँगा की माला ? मैं तो नहीं चुनने वाली।

लडका : अब चिल्लाओ मत, मैं चुन देता हूँ। वैसे कितने दाने थे ?

लडकी : चाहे जितने भी हों।

लडका : अब बता भी दो न, विनती करता हूँ।

लडकी : अस्सी दाने हैं।

लडका : चल झूठी, उस दिन मैंने गिने थे तो सिर्फ सोलह दाने ही थे। मुझसे झूठ ?

लडकी : मैं कुछ नहीं जानती। अगर अस्सी दाने नहीं हुए तो मैं मानूँगी ही नहीं।

लडकी : यह लकड़ी भी न, इतनी सर्द है कि जलने का नाम ही नहीं लेती।

लडका : अब तुम आग को फूँको, मैं देखूँगा।

लडकी : भला आग फूँकना भी कोई देखने की चीज़ है ?

लडका : आग के उजाले में तुम्हारा चेहरा मुझे और भी बड़ा अच्छा लगता है, ज़रा फूँको तो सही।

लडकी : ओहो, अब सर को इतने पास लाएँगे तो चिनगारी उड़ने पर बाल नहीं जलेंगे क्या ?

लडका : अब तुम्हारा मुँह आग की चिनगारी की तरह हो गया है तो उसे बुझाने के लिए मेरे बाल पानी जैसे हो गए होंगे। आय हाय, कितना चमक रहा है ! चमकदार ठुड्डी के नीचे, होठ पे नाक के नीचे, आँखों की पुतलियों में, भौंहों पे और गालों और

आँखों के बीच की छाया, मैं तो मर ही जाऊँ !

माँ का प्रवेश

माँ : क्या है वो ? मिर्च ?

लडकी : नहीं, मूँगा की माला । टूट गई तो रख दी ।

माँ : टूटी कैसे ? चाल-चलन अच्छे हों, तो नहीं टूटती न ? तेरा घरवाला आया कि नहीं ?

लडकी : मुझे क्या पता ?

माँ : तो फिर यह टोपी किसकी है ओए छम्मकछल्लो ? भला माला कैसे न टूटे ? उतावली गाय, बाघ खाय । अभी-अभी यहाँ कौन हँस रहा था ?

लडकी : पता नहीं कौन हँस रहा था । उधर के बच्चे होंगे ।

माँ : हाँ हाँ बड़े आए बच्चे । अब तो ऐसे ही निगलेगी । चल ज़रा ढकनी से नमक लेके आ । ज़रा देखो तो नमक ही हालत ! कैसे गंदा हुआ पड़ा है । ढकना जाने तब तो ! ज़रा खरोच लग गई थी तो सोचा नमक-घी लेप लूँ, पर घी की एक बूँद भी मिले तब तो ! उसी दिन लाई थी । कहाँ रखा है ओए संहारनी ? कहीं उठाके पी तो नहीं गई ?

लडकी : वो तो यहाँ भगौना में है ही न ।

माँ : हाँ हाँ, होगा क्यों नहीं भगौना में ? पानी की तरह खर्च जो करती है महारानी । अब मैं ही उठाकर सर पर उँडेलूँ या रखोगी शीशी में ?

लडकी : रखने के लिए कहतीं तो रख ही देती न ?

माँ : इसका थूथन बजाना तो देखो । (बरतन गिरने की आवाज़) हाँ हाँ, गिरा दे, गिरा दे । बरतन फोड़, और ये भी देख कि तेरा सर कैसे फूटता है ।

लडकी : इतना मन कर रहा है तो फोड़ ही दीजिए ।

माँ : ये तेरा जानकर अंजान बनना मुझे बिलकुल पसंद नहीं है । खींच के दूँगी एक झापड़, तब मालूम होगा आटे दाल का भाव । ज़ुबान चलाती है, काम की काज की, दुश्मन अनाज की ।

लडकी : कहे हुए काम तो करती ही हूँ । और भी जितना देंगी, कर लूँगी, और क्या ?

माँ : हाँ हाँ, खूब करती है काम । मुखड़ा सिंगारने से फ़ुर्सत हो, तब तो काम करती । तकिया का खोल निकालकर धोने के लिए नहीं कहा था ? सौ बार कह चुकी मैं । सुनी मेरी बात ? देखो तो ज़रा, हे राम ! कितना गंदा हुआ पड़ा है ! तेरी आँखें फूट गई हैं क्या ? खुद नहीं देख सकती थी ? मुझ बूढ़िया को नरक में रखना चाहती है ?

लडकी : उस रजाई का खोल कल धोया था, उसे अब कल धो लूँगी ।

माँ : चाहे एक रात बुढ़िया धूल में ही पड़ी रहे ?

लडकी : अभी मैं मक्के, भटमास भून रही हूँ, भला किस हाथ से धोने जाऊँ ?

माँ : तेरे मक्के भटमास तू ही खा, मेरे दाँत तो चबा भी नहीं सकते । यहाँ की चाबी का गुच्छा कहाँ रख दिया ?

लडकी : क्या पता, मैंने तो देखा भी नहीं है ।

माँ : मैं अभी-अभी इसके सामने रख के गई थी और यही कह रही है 'क्या पता' ।

लडकी : मुझे तो नहीं दिया था न, मुझे कैसे पता हो ?

माँ : तो मैंने कब कहा कि तुझे दिया था ? मैं तो यही कह रही हूँ कि तुझे दिखाकर रखा था ।

लडकी : मैंने तो नहीं देखा ।

माँ : हाँ हाँ, तू क्यों देखने लगी भला ?

लडकी : होता तो यहीं होता, या हो सकता है कहीं और रखकर भूल गई हों ।

माँ : तू भी देख संदूक खोलकर, कहीं तूने ही तो इधर-उधर नहीं घुसा दिया ?

लडकी : बाहर बारी की तरफ़ जाते वक्त तो नहीं गिरा दिया आपने ? उधर जाके ढूँढूँ ?

माँ : हाँ हाँ, तेरी जैसी अक्ल है न मेरी जो बारी में धान की तरह रोप आई हूँ ताकि बड़ा होकर जब पकेका तो खाऊँगी । जल्दी से ढूँढ़के ला कहीं से ।

लडकी : हे भगवान ! अब मैं आसमान में ढूँढ़ने जाऊँ या पाताल में ?

माँ : कहाँ छिपाकर रखा है, वहाँ से ढूँढ़कर ला वरना मैं तेरे बाप के घर भेजूँगी ढूँढ़ने के लिए । मुझे जानती नहीं है तू । तू समझती होगी तू बच जाएगी । छोटी-मोटी लकड़ी से जलने वाली बेटी नहीं हूँ मैं । ढूँढ़कर लाने को कहा है तो ढूँढ़कर ला, और मैं कुछ नहीं जानती ।

लडकी : मुझे पता होता तो क्या मैं ले नहीं आती ?

माँ : तूने नहीं देखा तो क्या गली के काले कुत्ते ने छिपा लिया ?

लडकी : माँजी, कहीं आपकी डोरी में तो नहीं है, उस दिन की तरह ?

माँ : ज़रा देखूँ तो, मुआँ यहीं तो पड़ा है । झट से याद दिलाने वाला कोई ढंग का इंसान तो हो ! हे भगवान ! लो, अब मैंने इतना कह दिया तो तेरा कुछ बिगड़ तो नहीं गया न ? हाँ हाँ, फूट-फूटकर रो ले चिल्ला ले, लोगों को सुना । मेरी चुगली अपने मर्द से भी तो करनी है न तुझे, चल यह भी कर ले । तू क्या समझती है, मैं डर जाऊँगी । मेरा बेटा है, कहूँगी उठ तो उठेगा और जो कहूँ बैठ तो बैठेगा भी । हो गया न तेरा ? ऐसे ही तो बेटा मुँह नहीं दिखाता, ऊपर से

लुगाई का रोना-धोना सुनके तो ... हे भगवान !

(बच्चे शोर मचाते हैं)

बच्चे : सुनो सुनो भैया, मैं बतलाऊँ

सास बहू का झगड़ा सुनाऊँ

माँ : हे राम ! ये गली के कुत्तों का झुंड तो देखो । बूढ़े हो जाने पर तो ये मक्खियाँ भी मज़ाक उडाएँगी । क्या मैं अपनी चाबी के बारे में भी पूछ नहीं सकती । चल दिखा ले मटरगस्ती । अब देखोगे तुम लोग भी । ... देखना है ? बता, देखना है ? मर जा सबके सब ... !

बच्चे : सुनो सुनो भैया, मैं बतलाऊँ

सास बहू का झगड़ा सुनाऊँ

सुनो सुनो माता, मैं बतलाऊँ

सास बहू का झगड़ा सुनाऊँ

हा हा हा हा

बच्चा : अरे बाप रे ! बुढ़िया ने तो मार ही डाला था यार, खिड़की से डंडा घुसा दिया था, मैं तो बाल-बाल बच गया ।

×××

लडका : इधर देखो न ।

लडकी : क्यों ?

लडका : देखो न ।

लडकी : नहीं, छोड़िए मुझे ।

लडका : मिन्नत करता हूँ, ज़रा देख लो न ।

लडकी : छोड़िए मुझे, आपको क्या है, अपना बेटा टोपी छोड़के जाता है, और उतावली की पदवी मुझे सुननी पड़ती है ।

लडका : देखूँ ज़रा, रो रही है या स्वांग रचा रही है, काजल भी कहाँ लथपथ है ।

रामे की माँ : छोटू, ए छोटू ! अरी बहू ! ये क्या होता रहता है तुम्हारे यहाँ ? जब देखो तब खलबली मची रहती है । पड़ोसियों में जगहँसाई कराके क्या अच्छा लगता है तुम लोगों को ? क्या किया बहू ने, हाँ बेटा ?

लडका : कुछ भी तो नहीं किया है इसने । माँ ऐसे ही जब देखो खिच-खिच करती रहती है । अब देखिए न, चाबी अपनी डोरी में लटका रखी थी और चोरनी इसे बना रही थी । भात गीली हो जाए, तब भी आसमान सिर पर उठा लेती है । कपड़े एक दिन नहीं धोए, तो भी हंगामा खड़ा कर देती है । इसके जितनी गाली तो दासियों को भी नहीं सुननी पड़ती होगी । अब तो अति हो गया । आप ही कुछ उपाय बताइए न ।

रामे की माँ : हाय, अब मैं भला क्या करूँ ?

लडका : सच्ची कह रहा हूँ, कुछ कीजिए आप ही ।

रामे की माँ : सच में ?

लडका : हाँ बिलकुल ।

रामे की माँ : तो क्या बहू मानेगी मेरी बात ?

लडका : मानेगी क्यों नहीं ?

रामे की माँ : तो ठीक है दुलहन, तू कहीं जाके छिप जा । मैं छेमा को ठीक करती हूँ । जब वो जगह पर आ जाएगी, तब तुम आना और जो कहना होगा, कहना । चलो-चलो, तुम निकल ही लो ।

लडका : हाँ, हाँ, ... खिसक लो ।

रामे की माँ : तू भी चला जा । मौका देखके ऐसे आना, जैसे कुछ पता ही न हो ।

×××

रामे की माँ : छेमा, ओ छेमा !

माँ : क्या हुआ ? कौन है ? रामे की अम्माँ ?

रामे की माँ : हाँ, हाँ मैं ही हूँ । ज़रा इधर आइए तो जल्दी ।

माँ : क्यों ? वहाँ से नहीं बता सकती ?

रामे की माँ : बता सकती तो बता ही देती न ? जल्दी आइए तो सही ।

माँ : बात क्या है ? पता नहीं अब क्या कहेगी सहेली भी, हे भगवान !

रामे की माँ : बात भला क्या होगी ? बहू कहाँ है ?

माँ : यहीं तो थी, पता नहीं कहाँ गई ।

रामे की माँ : बहू तो चलती बनी । यही बताने के लिए आई हूँ ।

माँ : कहाँ गई ? कहीं कूदने तो नहीं गई ? अपने मायके ही तो गई होगी । चलो ... ।

रामे की माँ : क्या 'चलो' ? मैं बार-बार न कहती थी, कि जब देखो तब खिच-खिच होगा तो चाहे जैसा भी इंसान हो, बात लग ही जाती है, समझीं आप ? मैं तो आपको ही दोष दूँगी । चाहे बुरा लगे या अच्छा ।

माँ : उसका सब सहती आई हूँ । कुछ कहा भी नहीं है ।

रामे की माँ : हाँ, हाँ, सब जानती हूँ मैं ।

माँ : उसी की ही मति सुधरे, इसलिए कभी-कभी सिखाती-बताती रहती हूँ । हाँ, कभी-कभी डाँट-डपट भी कर देती हूँ, कहूँ क्यों नहीं । अब किसी को बुरा लग जाता है, तो वो भी नहीं कहूँगी ।

रामे की माँ : अब कहिए चाहे मत कहिए, बहू तो चली गई ।

माँ : मैंने तो अपना समझकर कहा था ।

रामे की माँ : अपना समझकर तो और प्यार देना चाहिए न ? इस तरह दिन-रात कलह करता है

कोई ?

माँ : पता नहीं क्यों, मुझे गुस्सा आ जाता है। जितना मैं उसे बुरा-भला कहती हूँ, बेटा उतना ही दूर होता जा रहा है मुझसे। तब और गुस्सा चढ़ आता है, किस्मत ही ऐसी है।

रामे की माँ : किस्मत को मत कोसिए छेमा आप। अपनी ही बुद्धि को दोष दीजिए। मैं राँड़ ही सही, पर इतना तो जानती हूँ। छोटू को आपने पैदा किया। खुद से ज़्यादा उसे प्यार दिया, लालन-पालन किया। पाल-पोसकर बड़ा किया, पर इतने से ही नहीं हो जाता। अगर इतने से हो जाता तो भला शादी ही क्यों करनी पड़ती उसकी ? क्यों बहू को लाना पड़ता। आपका लाडला बेटा अब दिन भर अपनी दुलहन को प्यार करता है। ऐसा ही है। अब इसमें हम कर भी क्या सकते हैं ? सभी के बच्चे होते हैं। सब प्यार देते हैं। समझ गईं छेमा ? नदी जब भी नीचे की तरफ़ बहती है, ऊपर की तरफ़ कभी नहीं लौटती। यही रीत है, कहकर मनको समझाना पड़ता है। अगर किसी का ज़्यादा प्यार चाहिए तो उसे जो चीज़ प्यारी है, उसका भी खयाल रखना पड़ता है, तब बनती है बात। ... अब भला रो क्यों रही हैं ? मैं आपको रुलाने के लिए थोड़े ही आई हूँ। अब बस भी कीजिए।

माँ : ऐसा मत कहो रामे की अम्माँ। अब जैसे भी हो, बहू को समझाकर ला दो। वरना बेटा मुझे की कोसेगा।

लडका : माँ, ओ माँ (दूर से बुलाता है)

माँ : इधर आ तो बेटा ज़रा।

लडका : क्या हुआ माँ, मुझे बड़ी भूख लगी है, जल्दी से मक्के दो न।

माँ : जा, पहले बहू को लेके आ, तब दूँगी।

लडका : मैं नहीं जाता। पता नहीं वो कहाँ गई है। तू भी तो दे सकती है न।

माँ : सुना नहीं ? बहू मुझसे नाराज़ होकर मायके चली गई है।

लडका : चली गई तो जाने दे। दूसरी ले आऊँगा। माँ से नाराज़ होने वाली बहू का क्या काम ?

माँ : नहीं बिटवा, कसूर तो मेरा ही है न।

लडका : माँ का भी कसूर होता है कहीं ? उसी का कसूर होगा।

माँ : ज़्यादा मैं नहीं जानती। जा, जल्दी से बहू को बुलाकर ले आ, वरना मैं कुछ भी खाने को न दूँगी, और न ही खुद खाऊँगी।

लडका : वैसी राक्षसी को बुलाने मैं कहाँ जाऊँ, बल्कि दूसरी ले आऊँगा।

माँ : अभी डंडे से करूँगी तेरी पिटाई। वैसी लक्ष्मी तो तू सात जन्म तपस्या करेगा, तब भी नहीं मिलेगी। रामे की अम्माँ ! आज तक चाहे उसे जिनती भी गाली दी, बेचारी आँसू बहाती रहती थी। पता नहीं आज किस कुतिया के उकसावे में आकर मायके चली गई, भगवान ही जाने। आज मैं कुछ ज़्यादा ही बोल गई शायद। घी को लेकर भी बुरा-भला कहा। खोल-चादर को लेकर भी फजीहत की। कीड़े पड़े मेरे मुँह में, चाबी को लेकर भी पता नहीं क्या-क्या बक गई। तू जाता क्यों नहीं है ? भाग के जा, दूर निकल गई होगी। पकड़ के ले आ।

बहू : किसे माँजी ?

माँ : लो, ये तो यहीं है। कहाँ चली गई थी ? मेरी इतनी-सी बात का बुरा मान गई ?

बहू : मैं क्यों बुरा मानने लगी माँजी ? सुबह आप ही ने नहीं कहा था कि मटर का साग और टमाटर खाने का जी कर रहा है ? वही खरीदकर लाने गई थी।

माँ : देखा, मैंने नहीं कहा था, महालक्ष्मी है कहकर ? मायके कहाँ गई थी ?
तू ऐसे ही अनसुना करता रहेगा। मेरी बहू ही तुझसे बेहतर है।

लडका : आपकी सुनती है तो क्या हुआ ? मेरी तो एक नहीं सुनती।

माँ : तेरी क्यों सुनेगी, जब मेरी सुनती है तो। मेरा तो दिल धड़क उठा था। मुझे तो बड़ी बैचैनी-सी हो गई थी। मैं मर गई होती तो क्या करती ? मेरे मरने की घड़ी में क्या करेगी, किसे कहने जाएगी ?

बहू : हाँ, माँजी भी ! मैंने भला क्या किया है। इतनी भी नासमझ थोड़े ही हूँ ? मैं मायके चली गई, ये बात आपसे किसने कही ?

माँ : हाँ सच में रामे की अम्माँ, मेरी बहू मायके चली गई, ये बात तुम्हें किसने बताई ?

रामे की माँ : वहीं पर, पता नहीं, कोई तो कह रहा था। मेरी भी सुधी कहाँ रही, मैं भी दौड़ती हुई इधर आ गई।

माँ : पता नहीं कौन झूठा होगा। अब मुझे बताकर ही कहीं जइयो, बताए देती हूँ। नहीं तो पिटाई करूँगी तेरी। चल अब सबको खाने के लिए दे। रामे की अम्माँ के लिए भी ले आ।

अनुवादक : मुकेश कुमार मिश्र

एकाङ्की

वो रोमांचक रात

रमेश विकल

रात के ग्यारह बजे
किसी जिला का सदरमुकाम
सामान्य तौर का सोने का कमरा
(दर्शन शास्त्र के प्रोफेसर डॉ. गगन राज शर्मा विछौने पर अधलेटे हुए हैं, कोई पुस्तक पढ़ रहे हैं। उनकी पत्नी श्रीमती शैलजा कमरे में कपड़ा-लत्ता ठीक कर रही हैं।)

शैलजा : क्या हुआ जी ? अभी तक सोने का वक्त नहीं हुआ ? ... रात बीतने लगी है ...सोने के बदले यह क्या ... ! बत्ती का निर्वहन कर दूँ ?

प्रो.गगन राज : (मजाकिया लहजे में) यह समय तो नेपालियों का अपने कर्तव्य का निर्वहन करने का है। ऐसे समय में तुम वही पुरानपंथी बत्ती का निर्वहन करने की बात कर रही हो। अरे यार, ऐसा करो, तुम भी अपने कर्तव्य का निर्वहन करो और मुझे भी अपने कर्तव्य का निर्वहन करने दो।

शैलजा : आप भी न ! सीधी बात को टेढ़ी कर देते हैं। छोटी बात को बड़ी कर देते हैं।

प्रो. गगन राज : आखिर दर्शन शास्त्र का प्रोफेसर जो हूँ। जो सभी के समझ में आने वाले किसिम से बात करे, वह क्या प्रोफेसर। (नीचे कोई दरवाजा खटखटाता है।)

शैलजा : इतनी रात में दरवाजा पीटने वाला कौन आ गया ?

प्रो. गगन राज : जाकर देखो ना, पता चल ही जाएगा।

शैलजा : नहीं, नहीं। मैं नहीं जाऊंगी। जाने कौन हो ? इतनी आधी रात में कहीं चोर डांकू वगैरह होगा तो ?

प्रो. गगन राज : कहीं चोर इस तरह दरवाजा खटखटाकर आता है। अरे भाई कोई पड़ोसी होगा। कोई जरूरत होगी।

शैलजा : कहते हैं, आजकल तो चिट्ठी लिखकर चोर डांकू आते हैं। मैं तो नहीं जाऊंगी ...

प्रो.गगन राज : चलो मैं ही तकलीफ उठा लेता हूँ।

(प्रो.उठकर जाते हैं और दरवाजा खोल देते हैं। एक नकाबपोश काली आकृति आंधी तूफान की तरह अंदर प्रवेश करती है।)

शैलजा : (आतंकित स्वरमें) अरे बाप रे ! कौन है यह ... क्या चीज है यह ?

आगंतुक : (एकदम धीरे स्वर में) खामोश हो जाएये आप दोनों ! मैं आप लोगों का कोई नुकसान नहीं करूंगा। लेकिन अगर आप लोगों ने शोर मचाया तो फिर ... (एक पिस्तौल की तरह कोई वस्तु दिखाता है। प्रोफेसर की आँखों में डर नजर आने लगता है।)

प्रो. गगन राज : (लड़खड़ाती हुई आवाज में) अरे .. अरे... यह क्या बदतमीजी है ? अगर मैंने मदद की आवाज लगाई तो !

आगंतुक : ऐसी गलती मत कीजिए प्रोफेसर साहेब। मैं आप लोगों का कोई नुकसान करने नहीं आया हूँ। लेकिन आपने मेरी बात नहीं मानी और गलती की तो ... (पिस्तौल दिखाता है) चुपचाप बैठ जाइये और मुझे भी बैठने का इजाजत दीजिये।

प्रो. गगन राज : (डरते हुए) लेकिन तुम ... इतनी रात में ... नकाबपोश में ... ।

आगंतुक : (हँसते हुए) इस नकाब से मत डरिये सर। (मजाकिया लहजे में) आप मुझे बैठने का आज्ञा दें। (प्रो. गगन राज चुपचाप चौकी पर बैठ जाते हैं शैलजा उनके बगल में थर-थर कांपती हुई खड़ी हो जाती है।)

प्रो. गगन राज : लेकिन... तुम हो कौन ? यह नकाब क्यों लगा रखे हो ?

आगंतुक : इस नकाब के अंदर ऐसी कोई चीज नहीं है जो आपको भयभीत कर दे। डरने की कोई बात नहीं है सर। मुझे पुलिस शिकारी कुत्तों की तरह दौड़ा रही है। इसलिये मैं अपनी जान की रक्षा करने के लिये आप के आश्रम में आ गया हूँ।

प्रो. गगन राज : (घबराते हुए) प... प... पुलिस ... और मेरे घर में। तुम... तुम ...तुम ... ...!

आगंतुक : सर ... इतना डरने की बात नहीं है। सत्ताधारी और उनके हिमायती मुझे आतंकवादी कहते हैं। माओवादी ! लेकिन...।

शैलजा : (चिल्लाती हुई) म...म..माओवादी। हमारे घर में ! हे भगवान !

प्रो.गगन राज : तुम ... माओवादी ? मेरे घर में ?

आगंतुक : (एक बेंच पर बैठते हुए) मत डरिये गुरू माँ ! मत डरिये सर। सत्ताधारियों ने हमें जिस तरह से प्रचारित किया है, हम वैसे नहीं हैं। आप लोगों को डरने कोई वजह नहीं है। देखिये ... (नकाब उतार कर रख देता है।)

प्रो. गगन राज : (आश्चर्यचकित स्वर में) तु...तु ... तुम विकास ? ... तुम इस रूप में ?

विकास : जी सर ! मैं ही हूँ आपका प्रिय छात्र, मेधावी, जीवंत। ऐसे नकाबों के पीछे आपको ऐसे ही चेहरे दिखेंगे। इसलिए कह रहा हूँ आप डरिए मत। हम किसी का नुकसान करने के लिए नहीं बने हैं,सिर्फ आतातायियों का प्रतिकार करने के लिए अपनी कमर कसे हुए हैं।

प्रो. गगन राज : लेकिन... तुम... तुम तो एक अनुशासित मेधावी उच्च आदर्शवादी छात्र, रूप में। विश्वास नहीं हो रहा।

विकास : यहाँ ऐसी बहुत-सी चीजें हैं, जिन पर न चाहकर भी विश्वास करने के लिए बाध्य होना पड़ता है, सर। सभी के चेहरे नकाब में छुपे हुए हैं। अब वह चेहरा कैसा है ... यह बिना नकाब उतारे नहींजाना जा सकता। इसीलिए ... .

शैलजा : तुम हो विकास ? आश्चर्य ! तुम्हारे सर तो तुम्हारी तारीफ करते नहीं थकते थे। और तुम ...

विकास : इस रूप में ... (हँसता है) यही विडंबना है गुरु माँ ! यहाँ पर गुरु के प्रिय, मेधावी और देश तथा समाज के लिए कुछ करने का संकल्प लेने वाले मुझ जैसे कई विकासों को आतंक के साये में जिंदगी जीने के लिए विवश किया जाता है। क्यो ? ... आखिर क्यों ?

प्रो. गगन राज : (गंभीर स्वर में) तुम ही बताओ... क्यों ? तुम्हारे ऊपर तो इस देश और हम लोगों ने काफी भरोसा कर रखा था।

विकास : सर, मुझे यह कहने में दुःख हो रहा है कि देश ने जिन युवाओं पर आशा और भरोसा किया है, उन्हें मेरे रास्ते पर चलने के लिए विवश होना होगा। क्योंकि देश का सपना साकार करने और और जनता की आशा पूरी करने के लिए हमारे पास इसके अलावा और कोई विकल्प ही नहीं है। है क्या सर ? कहिए न !

प्रो. गगन राज : (हाथ से रोकते हुए) शैलजा, जाओ ...कीचन में जाकर देखो कुछ खाने पीने की चीज है क्या ? जाने यह लड़का कितने दिनों से भूखा प्यासा है !

विकास : इसकी जरूरत नहीं है, सर। गुरु माँ को क्यों तकलीफ दी जाय ? हमारा तो जीवन ही ऐसा है। काँटों की झाड़ियों में प्रवेश करने के बाद सेमर के भुए की मृदुता की आस भी तो नहीं किया जा सकता।

शैलजा : नहीं...नहीं... इसमें तकलीफ की क्या बात है। कोई तकलीफ नहीं है। शाम में आए हुए मेहमान को भूखे पेट सुला देना हमारी परंपरा भी तो नहीं है। ठहरो... मैं देखती हूँ। (वह कमरे से निकल जाती है।)

प्रो. गगन राज : हाँ, तो तुम क्या कह रहे थे, विकास !

विकास : मैं यह कह रहा था सर, कि आज हमारे देश में मेरे जैसे ... ...

(अचानक जोर-जोर से दरवाजा खटखटाने की आवाज सुनाई देती है। सभी अवाक् हो जाते हैं)

प्रो.गगन राज : अब कौन आया ? (उठने का उपक्रम करते हैं।)

विकास : रुकिए सर। यह अवश्य ही पुलिस होगी, मेरी गंध सुंघकर आई होगी।

प्रो. गगन राज : तो क्या पुलिस तुम्हें पहचानती है ?

विकास : चेहरे से तो शायद नहीं ... मगर हुलिया से...कहीं...

प्रो. गगन राज : तब तुम अंदर जाओ और अपना हुलिया बदलकर आओ। तुम कोई और नहीं हो ... काठमाँडू से छुट्टी बिताने आया हुआ मेरा भतीजा शंकर हो। चलो, अंदर जाओ।

विकास : धन्यवाद सर !

(विकास दूसरे कमरे में चला जाता है, शैलजा हाथ में दूध का गिलास और प्लेट में कुछ खाने की चीजें लेकर आती है।)

शैलजा : विकास कहाँ है ?

प्रो.गगन राज : विकास नहीं, काठमाँडू से आया हुआ हमारा भतीजा शंकर कहो। वह अंदर है।

(नीचे से लगातार दरवाजा खटखटाने की आवाज

आती है ।

शैलजा : फिर यह कौन दरवाजा खटखटा रहा है ?

प्रो. गगन राज : पुलिस !

शैलजा : (भयभीत आवाज में) पुलिस ? अब क्या होगा ?

प्रो.गगन राज : डरो मत । हमें डरने की कोई जरूरत नहीं है ।

शैलजा : लेकिन विकास ... विकास तो अंदर है ।

प्रो.गगन राज : अंदर विकास नहीं, हमारा भतीजा शंकर है । वह पर्सों काठमाँडू से आया है । समझी ?

शैलजा : (लंबी सांसे लेकर) जी, हाँ, समझ गई ।

प्रो. गगन राज : (ठट्टा करते हुए) अगर इतना भी नहीं समझोगी, तो फिर प्रोफेसर की प्रोफेसराइन कैसे होगी ?

(दरवाजा जोर-जोर पिटा जाता है ।)

शैलजा : लगता है, दरवाजा ही तोड़ देगा ।

प्रो.गगन राज : ठहरो, मैं देखता हूँ । (खिड़की से झाँककर देखते हुए) कौन है नीचे ? आधी रात में क्यों शोर मचा रखा है ?

आवाज : (कड़ककर) हम, हम पुलिस ! दरवाजा खोलिए ।

प्रो. गगन राज : पुलिस ? आधी रात में मेरे घर में पुलिस का क्या काम ? यह तो कॉलेज का परिसर है ।

आवाज : सरकारी काम न रात दिन कुछ नहीं देखता, और न ही परिसर सरिसर देखता है । जल्दी खोलिए दरवाजा ।

प्रो. गगन राज : ठहरिए ... मैं आ रहा हूँ । (प्रो. गगन बाहर निकलते हैं । दूर से दरवाजा खोलने और सीढ़ियां चढ़ने की आवाज सुनाई देती है । प्रोफेसर की पीछे-पीछे इन्स्पेक्टर थापा और तीन पुलिस जवान प्रवेश करते हैं । शैलजा एक हाथ में दूध का गिलास और दूसरे हाथ में खाने का प्लेट लेकर दूसरे कमरे में जाती है ।)

इ.थापा : आपके यहाँ आज शाम कोई अजनवी आदमी आया है ? (पुलिस की ओर देखते हुए) देखो,उधर ।

प्रो. गगन राज : (थोड़ी प्रतिकार की शैली में) इस देश के प्रशासन में मर्यादा नाम की कोई चीज नहीं है क्या ? कोई कायदा-कानून नहीं है ? ... आधी रात में एक इज्जतदार नागरिक के घर में जबरजस्ती घुसकर ...

इ.थापा : श्रीमान्, आज इस देश में इज्जतदार और गुंडा में अंतर कर पाना मुश्किल है । किसी के माथे पर प्रतिष्ठित या चोर नहीं लिखा होता ।

प्रो. गगन राज : क्या आप मुझे नहीं पहचानते । इस छोटे से जिला के सदरमुकाम में एक ही तो कॉलेज है, और मैं उसमें पढ़ाता हूँ । क्या आप नहीं जानते ?

इ.थापा : मैं तो पहचान भी लूँ, लेकिन मेरी यह वर्दी कैसे पहचानेगी ? आप जैसे मास्टर और प्रोफेसर ही आजकल अपने स्कूल और कॉलेजों में राजनीति सिखाकर विद्यार्थियों को भटका रहे हैं और देश तथा समाज को भाँड़ रहे हैं ।

प्रो.गगन राज : (अपमान बोध से छटपटाते हुए) इन्स्पेक्टर साहब, शक्ति मिल जाने पर किसी का अपमान करने अधिकार तो नहीं मिल जाता ? यह कोई तस्कर या भ्रष्ट कर्मचारी का घर नहीं है । .. आपके ऊपर भी कानून है ।

इ.थापा : प्रोफेसर साहब ! आप मुझे कानून न सिखायें, क्या आपको मालूम नहीं है कि इन दिनों इस जिला में आतंकवादियों ने तबाह करके रख दिया है । जनता की जान और धन सम्पत्ति सुरक्षित नहीं हैं । इसलिए सरकार के द्वारा हमें उन आतंकवादियों को समाप्त करने के लिए प्रशस्त अधिकार दिए गए हैं । समझें

प्रो.गगन राज : सुनने को तो मैंने भी सुना है । पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ा भी है । लेकिन मैंने वैसा आतंक का अनुभव नहीं किया है ।

इ.थापा : वाह ! पूरे जिला में इतना मारकाट हो रहा है इतना हाहाकर मचा हुआ है और आपको इस बात अनुभव नहीं ?

प्रो. गगन राज : (गंभीर स्वर में) हो सकता है, अगर आप लोग कहते हैं तो ... लेकिन मुझे ।

इ.थापा : इसका मतलब यह है कि आप खुद अनुभव करना चाहते हैं । अगर ऐसा है तो, यह भी कराया जा सकता है । आप चुपचाप हमारी मदद करते हैं या .

प्रो. गगन राज : जबरजस्ती कर रहे हैं आप ... मैं न चाहते हुए आपकी सहायता करूं ... यही चाहते हैं न आप कर सकते हैं । आप लोग कुछ भी कर सकते हैं । क्योंकि आपके हाथ में शक्ति का डंडा है

इ.थापा : (पुलिसों से कड़ककर बोलते हुए) ऐ साले तुम लोग गूंगे बहरे की तरह खड़े हो ? जाओ तलाशी लो, कोना-कोना छान मारो ।

(शैलजा अंदर प्रवेश करती है ।)

शैलजा : (भयभीत स्वर) वे लोग हमारे यहाँ क्या ढूँढ़ आये हैं ?

इ.थापा : माँ, हमें शंका है कि आपके घर में ए आतंकवादी छुपा हुआ है । हम उसे ही ढूँढ़ने आ हैं ।

शैलजा : (एकदम डरने का अभिनय करते हुए) आतंकवा

... हमारे घर में ?

इ.थापा : क्यों..ऐसा नहीं हो सकता क्या ? हमें पूरा विश्वास है कि वह इधर ही किसी घर में छुपा हुआ है । हम सभी घरों की तलाशी ले रहे हैं ।

(विकास अपना हुलिया बदलकर और आँख मिसते हुए अंदर आता है ।)

विकास : क्या हुआ बड़े पिताजी ? क्या हो रहा है यहाँ ? ... कितना बज रहा है ? अरे बारह बज गया ... ये लोग ?

इ.थापा : (गहरी शंका की दृष्टि से देखते हुए) यह कौन है ?

शैलजा : (स्थिर आवाज में) यह हमारा भतीजा है । मेरे देवर का लड़का । काठमाँडू में रहता है । छुट्टी में घूमने आया है । शंकर ! ये लोग पुलिस हैं । ये लोग...कौन वादी ? किसी वादी को ढूँढ़ते हुए आयेहुए हैं !

इ.थापा : (कड़ककर) आतंकवादी ... समाज का दुश्मन ! हमें पूरा विश्वास है कि वह यहीं कहीं छुपा हुआ है ।

विकास : (आश्चर्य का अभिनय करते हुए) यहाँ ? हमारे घर में आतंकवादी ? क्या कह रहे हैं आप ?

इ. थापा : हम यहाँ तलाशी लेंगे । (पुलिस जवानों की ओर खा जाने वाली दृष्टि से देखते हुए) सालों ! तुम लोगों को लकवा मार दिया है क्या ? क्या बेवकूफ की तरह खड़े हो ? जाओ, घर का कोना-कोना छान मारो । कोई भी जगह छुटने न पाये ।

(पुलिस के जवान घर में तलाश करने चले जाते हैं ।)

प्रो. गगन राज : इन्स्पेक्टर साहब ! देखिए, बुरा मत मानिएगा, मेरी बातों का गलत अर्थ मत निकालिएगा । लेकिन आम लोगों में तो यह धारणा है कि प्रशासन आतंकवादियों का उन्मूलन करने के नाम पर खुद बड़ा आतंकवादी बन बैठा है । आतंकवाद फैला रखा है । शोर, हल्ला मचाकर जनता में संत्रास फैला रखा है । भय की सृजना कर रखी है ।

इ. थापा : यह आप क्या कह रहे हैं ? प्रशासन आतंक नहीं मचाता, बल्कि अनुशासन कायम रखता है । उसी प्रशासन के अंतर्गत के हम सुरक्षाकर्मी आतंक नहीं मचाते, बल्कि आतंकवाद का निमूर्लल करके शांति सुरक्षा कायम करते हैं । देश में अशांति फैल जाय, जान माल की क्षति होने लगे तो हम हाथ पर हाथ धरकर चुप नहीं रह सकते । हम मूकदर्शक नहीं बन सकते ।

विकास : बात तो सही कह रहे हैं आप ...होना भी यही चाहिए । लेकिन यहाँ कहा-सुना जाता है कि प्रशासन ने जितना हो हल्ला मचाकर जनता में भय और त्रास फैला रखा है, हकीकत में यह सब आतंकवादियों के कारण नहीं हुआ है । हाँ, यह जरूर है कि कुछ घटनाएँ उन लोगों के द्वारा भी हुई हैं, लेकिन उनसे आम जनता नहीं , बल्कि जनता के दुश्मन, लुटेरा, अन्यायी और अत्याचारी प्रताड़ित हैं ।

इ. थापा : (तीव्र स्वर में) यह आप कह रहे हैं प्रोफेसर साहेब ? आप भी ...

प्रो. गगन राज : (हँसकर) नहीं, नहीं इन्स्पेक्टर साहब ! यह तो मेरे भतीजे की तरह का युवा जमात कह रहा है । उनके मुँह से आस जनता की भावना अभिव्यक्त हो रही है ।

इ.थापा : आप लोग सरकार की बातों को प्रचार समझ कर हाव में उड़ा देते हैं और प्रतिपक्षी के हो हल्ला को मूर्खो की तरह मान लेते हैं । तभी तो पड़ जाते हैं...दु:ख तकलीफों में ।

विकास : नहीं, इन्स्पेक्टर साहब ... (अंदर से बर्तन गिरने पड़ने की आवाज सुनाई देती है ।) क्या सही है और क्या गलत ? सरकार सही है या प्रतिपक्ष.. यह तो वे ही जाने । लेकिन हमारी यही शिकायत है कि हमें बेकार में फंसा दिया जाता है ।

इ.थापा : देखिए,...क्या नाम है आपका ? हाँ, शंकर जी । देखिए, अब गेहूँ के साथ एकाध घुन भी पीस जाते हैं । एक अलग बात है । लेकिन आप लोगों को हमें पूर्वाग्रह होकर नहीं देखना चाहिए । अगर ऐसा होता है, तो हमें मजबूरन आप लोगों की बातों में विरोध की गंध महसूस करनी होगी ।

विकास : हमारा तो बस यही कहना है कि गेहूँ के नाम पर केवल घुन को ही नहीं पिसा जाना चाहिए । (हँसते हुए) मेरी इतनी सी बात पर यदि आपको शंका लगती है, तो मैं आपके साथ चलने को तैयार हूँ । कहाँ ले जायेंगे ?

(दूसरे कमरे से खटरपटर-खटरपटर की आवाज सुनाई दे रही होती है ।)

इ.थापा : (थोड़ा झेंपते हुए) ऐसा तो मैंने नहीं कहा, लेकिन ...

शैलजा : चुप हो जाओ शंकर । तुम भी न ! जो मन में आता है, बोल देता है । कैसी आदत है तुम्हारी ?

विकास : (हँसते हुए) मैं मजाक कर रहा था, बड़ी माँ ।

शैलजा : कहीं कानून से मजाक किया जाता है ? देखो, आग और कानून दोनों एक-से होते हैं। मालूम नहीं है क्या, आग जला देती है।

इ. थापा : सही कह रही हैं आपकी बड़ी माँ, शंकरजी। उनकी बातों पर ध्यान दें। ऐसी दिल्लगी न करें, कि जान पर ही बन आय।

(तलाशी लेने गए पुलिस जवान वापस लौट जाते हैं।)

विकास : आगे से ध्यान दूंगा।

इ. थापा : (जवानों से) क्या हुआ ? नहीं मिला ?

एक पुलिस : नहीं मिला सा'ब (बुट जमीन पर मारकर सैलुट करता है)

प्रो. गगन राज : इन्स्पेक्टर साहब ! आप लोगों की शंका केवल शंका ही है। क्योंकि हम जितने हैं,आपके सामने है, लुका-छुपा कोई नहीं है।

इ. थापा : (लज्जित स्वर में) क्षमा कीजिएगा प्रोफेसर साहब। हमने आपकी नींद खराब कर दी। क्या करें, ड्युटी पर होने पर कभी-कभी अप्रिय काम करना पड़ा जाता है। इसीलिए तो हम पुलिस ...

विकास : (हँसकर) बदनाम होते हैं। यही कहना चाह रहे हैं न ? लेकिन पुलिस के बदनाम होने में क्या केवल यही वजह है ?

प्रो. गगन राज : बहुत वजह है। आप जैसे एकाध अच्छे लोगों की बात छोड़ दी जाय, तो जाने कितने ... ...

इ. थापा : अब जाने भी दीजिए, आप लोगों को कष्ट हुआ, इसके लिए क्षमा कीजिए। (पुलिस जवानों की ओर देखते हुए) चलो।(इन्स्पेक्टर के पीछे-पीछे पुलिस की टोली निकल जाती है। विकास पीछे-पीछे जाता है और दरवाजा बंद करके लौट जाता है।)

प्रो. गगन राज : गये ?

विकास : जी, चले गये सब। (दूसरे कमरे की ओर जाता है।)

शैलजा : मेरी तो जान ही निकल गई थी। अभी भी हृदय धक्-धक धड़क रहा है।

(अंदर से विकास आता है। उसने नकाव उतार रखा है।)

विकास : (प्रोफेसर के पाँव छूते हुए) धन्यवाद है, सर। (गुरु माँ के पाँव भी छूता है।) आप लोगों ने आज मुझे बचा लिया। मेरे कारण आप लोग भी मुश्किल में पड़ने वाले थे ...

प्रो. गगन राज : अब बताओ, तुम्हारी क्या योजना है ?

विकास : अब मैं आप लोगों को ज्यादा कष्ट नहीं दूंगा। अब आप हमें आज्ञा दें।

शैलजा : अरे, इतनी रात को कहाँ जाओगे। कल सुबह चले जाना।

विकास : नहीं गुरु माँ ! मैं जितनी देर यहाँ रहूँगा, आप लोगों को मशिकल होगी। मुझे जल्द से जल्द चले जाना ही ठीक है।

प्रो. गगन राजा : हाँ, विकास सही कह रहा है। लेकिन विकास, जाने से पहले तुम मेरे कुछ सवालों का जवाब देते जाओ।

विकास : सर के सवालों का जवाब तो मैं हमेशा ही देता आया हूँ। (हँसते हुए) पूछिये सर।

प्रो. गगन राज : मुझे लगा था कि तुम पढ़ लिखकर देश के लिए कुछ करोगे। लेकिन तुम तो ... .

विकास : 'ऐसे गलत काम में लगे हुए हो।' यही कहना चाह रहे हैं न, सर ? लेकिन सर...

प्रो. गगन राज : लेकिन तुम क्यों चल पड़े इस राह पर ? क्या तुम्हें विश्वास है कि तुम लोग सफल होगे ?

विकास : नहीं है सर। सौ पचास वर्ष तक हम सफल नहीं होने वाले हैं। कम से कम मुझे तो विश्वास नहीं है।

प्रो.गगन राज : तो फिर क्यों ? क्यों चल पड़े इस राह पर ?

विकास : सर, क्या आदमी को केवल अपनी इच्छा अनुसार की राह पर ही चलना चाहिये ? जबकि वर्तमान में चारो तरफ शक्ति का छांडव है, लूट है, भ्रष्टाचार है। बेरोजगारी और भूखमरी है। आज हर आदमी की जिंदगी बोझ बन गई है। वहाँ हम जैसे पढ़े लिखे युवक, जो भ्रष्ट नहीं हो सका है, उसे क्या करना चाहिये ?

प्रो. गगन राज : (व्यंग्यात्मक स्वर में) तो क्या आत्महत्या ? इसलिये तुम लोगों ने आत्महत्या की राह पकड़ी है ?

विकास : कभी-कभी आत्महत्या भी बड़े-से बड़े काम कर जाती है, सर। (हँसते हुए) लेकिन हम लोगों ने जो राह पकड़ी है, वह आत्महत्या तो नहीं है ...।

प्रो. गगन राज : तो फिर क्या है ? जब तुम स्वयं कह रहे हो कि तुम अपने प्रयास में सफल नहीं होने वाले हो। जान-बूझकर विफलता की राह पर चलना आत्मदाह ही तो है। और आज की स्थिति में तो तुम केवल खुद आत्मदाह नहीं कर रहे हो, बल्कि जनता को भी आत्मदाह की राह पर खड़े कर रहे हो।

विकास : जी, सर। कुछ हद तक मैं भी इस बात को स्वीकार करता हूँ। लेकिन सर, आप ही कहिये, जब यात्रा की सारी राहें अवरुद्ध हो जाय, तो गतिशील

यात्री क्या करे ? क्या वह हाथ-पैर बाँधकर बैठा रहे ?

प्रो. गगन राज : रास्ते तो और भी होंगे ... केवल खोजने की दृष्टि होनी चाहिये ।

विकास : खोजने वाले तो खोजे भी हैं सर । लेकिन आपने भी पढ़ा होगा कि वागमती की सफाई करने का ठिका लेनेवाले खुद ही ऊपर से नीचे तक गंदगी में डूबे हुए हैं । अब कहिये, मंजिल तक पहुँचने के लिये कौन रास्ता सही है ?

प्रो. गगन राज : बस... इसीलिये हत्या और आतंक के रास्ते पर चल पड़े हो ? क्या इससे तुम्हें तुम्हारी मंजिल मिल जाएगी ?

विकास : सर, आप भी सत्ता के इन्द्रजाली प्रचार का शिकार हो गये हैं । सर, आप ने भी अपना विवेक का प्रयोग करना छोड़ दिया है । हम लोगों ने आम जनता में आतंक की सृजना नहीं की है । उन लोगों के बीच आतंक, लूट और हत्या का माहौल तो दूसरा पक्ष ने कायम कर रखा है ।

प्रो. गगन राज : लेकिन कारक तो तुम लोग हो गये न ? तुम लोगों ने चाहा कि शासक के उस वर्ग में आतंक फैले जो अन्याय-अत्याचार और शोषण करता है, लूट मार करता है, बलात्कार करता है । लेकिन हुआ क्या ? देख रहे हो न ?

विकास : जी, सर । इतना तो मैं भी कुबूल करता हूँ । हमें ही ढाल बनाकर दूसरा पक्ष हिंसा का तांडव कर रहा है । लेकिन गौर करने वाली बात यह है कि इससे आम जनता में चेतना का विकास भी हुआ है ।

प्रो. गगन राज : कैसी चेतना ? डर, त्रास, भय और आतंक की चेतना ?

विकास : नहीं सर । दूसरी तरह की चेतना । दमन और अत्याचार के सभी तरीकों के प्रति की चेतना, राजनीति के नाम पर खेले जाने वाले खेल प्रति की चेतना । और इन गंदे खेलाड़ियो के प्रति की चेतना । यह बताने की चेतना कि शोषण और अत्याचार से मुक्ति पाने के लिये जनता किसी दूसरी राह पर चल सकती है ।

प्रो. गगन राज : लेकिन जनता का आत्मदाह कराकर दूसरे पक्ष को चेतावनी दिलाने वाला मार्ग कितना सही है ?

विकास : सर, कभी-कभी हिंसा को परास्त करने के लिये हिंसा को ही हथियार बनाना पड़ता है । कंटकनैव कंटकम । और आत्मदाह ? कभी-कभी तो यह अमोघ अस्त्र हो जाता है, हिंसा को रोकने के लिये । यदि हम जैसे दस बीस लोगों के आत्मदाह से यह देश मुक्ति के लिये जागृत हो जाता है, तो फिर यह आत्मदाह उतना महंगा भी नहीं है ।

प्रो. गगन राज : (हारे थके लहजे में) चलो, मान गया मैं । तुम लोग गर्म खूनवाले नौजवान, हम बूढ़े । तुम्हारी और हमारी सोच एक कैसे हो सकती है ? हम अपने जीवन भर के अनुभूतियों के आधार पर कहते हैं, 'जीवन केवल संघर्ष नहीं है । कभी-कभी यह समभौता भी चाहता है । चार कदम आगे बढ़ने के लिए कभी-कभी दो कदम पीछे भी होना पड़ता है । यह केवल तुम लोगों के लिये दिशा संकेत है । मानने और न मानने के लिये तुम लोग स्वतंत्र हो । क्योंकि प्रजातंत्र में स्वतंत्र निर्णय लेना व्यक्ति का अधिकार है । लेकिन निर्णय करते वक्त देश और जनता के हक हित के बारे में विवेक के साथ जरूर सोचना चाहिये ।

विकास : सर का उपदेश शिरोधार्य है सर । हम लोग भी एक प्रयोग की ही स्थिति में हैं । ...अब आगे जो हो ।

प्रो. गगन राज : हमारे देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य ही यही है । यहाँ जितने आये, सभी प्रयोग करने ही आये । सत्य का दर्शन करके उसे मूर्त रूप देने के लिये कोई भी नहीं आया ... हम लोगों ने प्रयोग के नाम पर दशकों से ज्यादा समय बर्बाद कर दिया । हमारे साथ... इतना ही नहीं ...हमसे पीछे भी जीवन संग्राम में उतरने वाले कई देशों ने विकास और उन्नति-प्रगति प्राप्त कर लिया ... आगे बढ़ गये । लेकिन हम जहाँ के तहाँ हैं । उठ ही नहीं सके हैं । चलो, जो भी हो , मेरी शुभकामना तुम्हारे साथ है ... प्रयोग का शिकार मत बनो ... सत्य का दर्शन करने में जल्दी से जल्दी सफल होखो ... जाओ ।

विकास : सर का आशीर्वाद रहा तो बहुत जल्द ही सत्य का दर्शन होगा ... बहुत जल्द ही लक्ष्य की प्राप्ति होगी ।

(विकास अपने गुरु और गुरु माँ दोनों के चरण छूकर बाहर निकल जाता है । प्रो. गगन राज और शैलजा शून्य आँखों से उसे देखते रह जाते हैं । उल्लू का कर्कश स्वर शून्यता की छाती को चिर देता है । चारो तरफ शून्यता है, सन्नाटा है ... अँधेरा है ।)

अनुवादः गोपाल अश्क

एकाङ्की

अनंत

मनिक्रम शर्मा

(पर्दा उठता है। किसी चौक का दृश्य। चौक पर आदमी और कुत्ते इधर-उधर कर रहे हैं। ऐसी ही स्थिति में तीन युवकों का प्रवेश। वे चौक के बीच भाग में पहुंचकर रुक जाते हैं और आपस में बातें करने लगते हैं। आदमी और कुत्तों का आना-जाना बंद हो जाता है।)

युवक १ : उस अनंत को क्या हो गया है ?

युवक २ : पता नहीं ?

युवक ३ : समझ में नहीं आता, क्या हो गया है उसको ?

युवक १ : वही तो। आजकल वह किसी से बात भी नहीं करता। क्या हो गया है उसको ?

युवक २ : कुछ खाता-पीता भी नहीं है।

युवक ३ : कहीं बाहर भी नहीं निकलता। केवल घर में ही निराश बैठा रहता है।

युवक १ : जब वह बेलायत से सिविल इंजिनीयरिंग की डिग्री लेकर लौटा था, तो ठीक-ठाक ही था। सभी से हंस-हंसकर बातें किया करता था।

युवक २ : सुबह जगने से रात सोने से पहले कुछ न कुछ खाता ही रहता था।

युवक ३ : हम दोस्तों के यहाँ भी लगभग रोज ही आता था।

युवक १ : जाने आजकल क्या हो गया है उसको ?

युवक २ : समझ में नहीं आता, आखिर वह क्यों ऐसा हो गया है ? उदास-निराश बैठा रहता है।

युवक ३ : वही तो !

(सभी मौन हो जाते हैं। नेपथ्य से लोगों के आने-जाने और कुत्ते भौंकने की आवाज सुनाई देती है। नेपथ्य की आवाज बंद होने के बाद युवक फिर बातें करने लगते हैं।)

युवक १ : कहीं ऐसा तो नहीं, कि उसे किसी बीमारी ने धर-पकड़ लिया हो ?

युवक २ : नहीं। उसे किसी शारीरिक रोग ने तो पक्का नहीं पकड़ा है।

युवक ३ : अरे हाँ ! मैं तो एक बात बताना भूल ही गया हूँ।

युवक १ : क्या ?

युवक २ : क्या भूल गया बताने को ?

युवक ३ : अनंत को तो मानसिक रोग लगा हुआ है।

युवक १ : मानसिक रोग ? यह क्या बक रहे हो तुम ?

युवक २ : तुम्हें किसने बताया ?

युवक ३ : और किसी ने नहीं। बल्कि अनंत के पिताजी ने ही।

(इतना सुनते ही सभी मौन हो जाते हैं। चुप्पी छा जाती है। नेपथ्य से जल्दी-जल्दी चलने और जोर-जोर से भौंकने की आवाज सुनाई देती हैं। आवाज बंद होने के बाद फिर बातें होने लगती हैं।)

युवक १ : अनंत को मानसिक रोग कैसे लग गया ?

युवक २ : पता नहीं। कहीं किसी से लव सव हो गया हो !

युवक ३ : धत्। क्या बक रहे हो ? कहीं लव होने से मानसिक रोग लगता है ? बल्कि लव होने से तो उलटे लगे हुए रोग भी खत्म हो जाते हैं।

युवक १ : कहीं ऐसा तो नहीं , कि लव ट्रेजेटी के कारण दिमाग खराब हो गया हो ?

युवक २ : हो सकता है। यह हो सकता है।

युवक ३ : अरे हाँ ! मैं तो बताना ही भूल गया था।

युवक १ : क्या ?

युवक २ : फिर क्या भूल गया बताना ?

युवक ३ : अनंत को ट्रेजेटी स्रेजेटी कुछ नहीं हुआ है। जब से वह अपने दीदी जिजा के घर से आया है, तभी से उसका दिमाग सुस्त हो गया है, खराब हो गया है।

युवक १ : यह क्या कह रहे हो तुमं ?

युवक २ : तुमको किसने कहा ?

युवक ३ : और किसी ने नहीं । खुद अनंत के पिता ने । (कुछ देर के लिए सभी मौन हो जाते हैं । नेपथ्य से लोगों के दौड़ने और कुत्तों के भौंकने की आवाज सुनाई देती है । आवाज बंद होने पर उन लोगों के बीच बातों का सिलसिला शुरू हो जाता है ।)

युवक १ : इसका मतलब यह है कि उसकी दीदी ने जरूर कोई ऐसी बात कही होगी, जिसका उस पर इतना बुरा असर पड़ा है । जरूर कोई चुभने वाली बात !

युवक १ : दीदी ने अगर नहीं कहा हो, तो जीजाजी ने कहा होगा ।

युवक ३ : अगर जीजा ने भी नहीं कहा हो, तो भांजा भांजी ने कहा होगा ।

युवक ४ : तुम सब बेकार की बातें कर रहे हो । अनंत को किसी ने कुछ नहीं कहा है । न उसकी दीदी ने, न उसके जीजा ने, और न ही उसके भांजे भांजी ने ।

युवक १ : अगर ऐसा है तो, उसे मानसिक रोग कैसे लग गया ?

युवक २ : हाँ, बताओ, बताओ । कैसे लग गया ?

युवक ३ : हाँ, कैसे लगा ?

युवक ४ : पता नहीं, कैसे लगा ।

(कुछ देर के लिए फिर सभी मौन हो जाते हैं । नेपथ्य से लोगों के दौड़ने और कुत्तों को और अधिक भौंकने की आवाज सुनाई देती है । आवाज बंद होने पर फिर बातें होने लगती हैं ।)

युवक १ : ऐसा लगता है कि किसी बड़ी चोट के कारण उसे मानसिक रोग लग गया है । ऐसा ही होना चाहिए ।

युवक २ : हो सकता है कि उसकी प्रेमिका ने धोखा दी हो, और उसी के कारण मानसिक रोग का शिकार हो गया हो ।

युवक ३ : यह भी हो सकता है कि उसके मानसिक रोग लगने के पीछे उसके जीवन में कोई भयंकर घटना घटी हो ।

युवक ४ : कभी-कभी यह रोग घर पर रहते हुए, ऐसे ही लग जाता है ।

युवक १ : फिर यह रोग अनंत को कैसे लग गया ?

युवक २ : पता नहीं ? पता नहीं किस कारण से यह रोग लग गया ?

युवक ३ : वही तो ! जाने किस कारण से उसे यह रोग लग गया ।

युवक ४ : पता नहीं कैसे लगा ? किस कारण से लगा ? (कुछ पल के लिए सभी मौन हो जाते हैं । नेपथ्य से भी कोई आवाज नहीं आती है । वातावरण शून्य हो जाता है ।)

युवक १ : हाय ! कितना मिलनसार और अच्छा था, अनंत ।

युवक २ : वह बचपन से ही अपने पिता और जीजा के तरह ईमान्दार और कर्तव्यनिष्ठ होकर देश की सेवा करना चाहता था ।

युवक ३ : अगर उसे कुछ हो जाता है, तो सच मानो, हम लोग एक अच्छा दोस्त खो देंगे ।

युवक ४ : अगर उसे कुछ हो जाता है, तो यह राष्ट्र भी एक ईमान्दार, चरित्रवान और परिश्रमी राष्ट्रसेवक खो देगा ।

युवक १ : अब हमें इस बात में नहीं पड़ना चाहिए कि उसे यह कैसे और किस कारण से लगा । बल्कि हमें उसका इलाज कराने की दिशा में जूट जाना चाहिए ।

युवक २ : हाँ ... हाँ ... इलाज कराने में जूट जाना चाहिए । (कुछ देर सोचने के बाद) उसे किसी अच्छे मानसिक रोग विशेषज्ञ के पास ले जाना चाहिए ।

युवक ३ : यदि अपने देश में नहीं हुआ तो विदेश ही ले जाना चाहिए ।

युवक ४ : अनंत के लिए हमें कुछ करने की आवश्यकता नहीं है । उसके पिता खुद ही बड़े डॉक्टर हैं । जो करना होगा, वे खुद ही करेंगे । (उसी वक्त अचानक बिजुली गुम हो जाती है और चारो तरफ अंधेरा छा जाता है । अंधेरे में कहीं कुछ नजर नहीं आता । इतने में नेपथ्य से 'पकड़ो'...'मारो' ... 'छोड़ना नहीं' 'देखना...बच न पाए' की आवाज सुनाई देने लगती है । आवाज सुनाई देने के साथ साथ बिजुली चली आती है और चारो तरफ रोशनी फैल जाती है । चौक पर पहले वाले ही युवक पात्र नजर आते हैं । वे पहले वाली जगह पर नहीं हैं । एक दूसरी जगह पर खड़े हैं । वे नेपथ्य से आ रही आवाज को बहुत ध्यान से सुनने और उसी दिशा की ओर देखने लगते हैं । इतने में अनंत को धक्का देते और लातों से पीटते हुए कुछ लोगों का प्रवेश होता है । चौक के मध्य भाग में पहुंच कर सभी रुक जाते हैं और अनंत के चेहरे पर कालिख पोतने लगते हैं । अनंत कोई विरोध नहीं करता है, और चुपचाप खड़ा रहता है । चारों युवक दुविधा में पड़ जाते हैं ।)

आदमी १ : (कालिख पोतने के बाद) अब क्या किया जाए इस पाजी का ?

आदमी २ : क्या किया जाय का क्या मतलब ? खूब पीटा जाय !

आदमी ३ : कितना पीटोगे इसे । कहीं मर न जाय !

आदमी ४ : ऐसे ही मर जाएगा । इतनी पीटाई में कहाँ मरेगा हरामी ?

आदमी ५ : अब हम कुछ न करें अनंत को ।

आदमी ६ : स्यां न कुछ करें ? इसे ऐसे ही छोड़ दें ?

आदमी ७ : मैं कहाँ कह रहा हूँ कि इसे ऐसे ही छोड़ दिया जाय । हम इसे पुलिस को जिम्मा लगा दें । जो करेगी, पुलिस करेगी ।

आदमी ८ : पुलिस इसे कुछ नहीं करेगी ।

आदमी ९ : अगर पुलिस ने कुछ नहीं की, तो फिर हम लोग करेंगे । छोड़ेंगे नहीं ।

आदमी १० : हाँ, हम इसे नहीं छोड़ेंगे ।

आदमी ११ : जो करना है, जल्दी करें ।

आदमी १२ : हाँ, अब हमें देर नहीं करनी चाहिए ।

आदमी १३ : चलें, इसे पुलिस थाना में ले चलें ।

आदमी १४ : हाँ, सबसे अच्छा यही होगा । चलें, अब देर न करें । इसे थाने में बुझा दें ।

(अनंत को पहले की तरह ही धक्का देते और लात से मारते-पीटते आगे वढ़ जाते हैं । दुविधाग्रस्त युवक दौड़कर उन लोगों के सामने जाते हैं और उनका रास्ता रोकते हैं ।)

युवक १ : (रास्ता रोककर, चारो तरफ देखते हुए) यह क्या कर रहे हैं ?

युवक २ : अनंत के चेहरे पर कालिख क्यों पोती ?

युवक ३ : अनंत को पुलिस थाने में क्यों ले जा रहे हैं ?

युवक ४ : कहिए, अनंत ने आखिर ऐसा क्या किया है ?

आदमी १ : (वताते हुए) यह बदमाश छोटे-छोटे बच्चों को भी दुःख तकलीफ देता है ।

आदमी २ : इसने मुहल्ले के प्रायः सभी वच्चों को पीटकर नौ दो ग्यारह हो गया ।

आदमी ५ : हम लोगों ने बहुत समझाया कि बच्चों को मत पीटो, लेकिन इसने बच्चों को पीटना नहीं छोड़ा ।

आदमी ६ : जब इसने सोमदत्त दादाजी के दस साल का नाती मनोहर, भीम भैया के चार साल का बेटा सुशील और हेमंत भैया की आठ साल की लड़की कौशल्या को पीट-पीटककर लहुलूहान कर दिया, तो बर्दाशत नहीं हुआ ।

आदमी ७ : हम लोगों ने अनंत को पकड़ कर पूछा कि तुम यह क्या कर रहे हो ?

आदमी ८ : लेकिन उसने हमारी बातों की अनसुनी की।

आदमी ९ : हमारे सवालों का कोई जवाब ही नहीं दिया । उलटे कुछ दूर पर बगड़ा भैया का दो साल के बेटा को पीटने के लिए दौड़ा और उसे भी पीटने लगा ।

आदमी १० : उसके बाद हमसे सहा नहीं गया और हमारा खून खौल गया । फिर हम लोगों ने अनंत को पीटते हुए यहाँ ले आए और अब थाने ले जा रहे हैं।

आदमी ११ : मनोहर, सुशील और कौशल्या को तो अस्पताल ही ले जाना पड़ा । वे अपनी मौत से लड़ रहे है । बचेंगे या नहीं, कहा नहीं जा सकता ।

आदमी १२ : कल तक हम अनंत को बहुत मानते थे, लेकिन अब नहीं । अब हम उसे नहीं मानेंगे ।

आदमी १३ : पुलिस से हम अनंन को कड़ी से कड़ी सजा देने की माँग करेंगे ।

आदमी १४ : उसे कड़ी से कड़ी सजा मिलनी ही चाहिए। क्योंकि उसने बच्चों को नहीं पीटा है, हमारे भविष्य को लहुलूहान किया है ।

(युवक उन लोगों को वहीं पर छोड़कर कुछ दूर गंभीर मुद्रा में खड़े. अनंत के पास जाते हैं ।)

युवक १ : (अनंत के करीब जाकर) यह तुमने क्या किया अनंत ?

युवक २ : तुमने बच्चों को क्यों पीटा ?

युवक ३ : तुम तो बच्चों जान छिड़कते थे । आज क्या हो गया ? तुमने बच्चों को क्यों पीटा ?

युवक ४ : बोलो, कुछ तो बोलो । तुमने बच्चों को क्यों पीटा ?

(अनंत कुछ नहीं बोलता है, पहले की भांति ही गंभीर मुद्रा में खड़ा रहता है ।)

युवक १ : तुम तो कितने दिनों से घर से बाहर नहीं निकले थे । आज कैसे निकल गये ? और निकलते ही बच्चों को क्यों पीट डाला ?

युवक २ : यह मुहल्ले वाले तो तुम्हें बहुत प्यार करते थे, बहुत मानते थे । तुम्हारी इस हरकत के कारण तुमसे नफरत करने लगे हैं । बताओ, तुमने ऐसा क्यों किया ? अगर तुम ऐसे ही खामोश रहे, तो ये लोग तुमसे घृणा करने लगेंगे ।

युवक ३ : हाँ, हाँ,घृणा करने लगेंगे।

युवक ४ : हम लोग भी तुमसे नफरत करने लगेंगे। जल्द बताओ। हमें यह बताओ कि तुमने बच्चों को क्यों पीटा ?

(अनंत इस बार भी कुछ नहीं बोलता है। पहले की तरह ही खामोश खड़ा रहता है। युवक उसे जोर से पकड़ते हैं और 'बोलो अनंत, बोलो !' कहते हुए उसे झकझोरने लगते हैं। कुछ देर के बाद अनंत खुद को छोड़ाता है, और मजबूती के साथ खड़ा हो जाता है।)

अनंत : हाँ, मैंने वच्चों को पीटा, थोड़ा-बहुत नहीं, बहुत पिटा। अब मैं मुहल्ले की औरतों और लड़कियों भी नहीं छोडूंगा। मैं उनका वलात्कार करूंगा। (युवकों की ओर देखते हुए) तुम लोग क्या करोगे ? जो चाहो करो।

युवक १ : क्या कहा ? तुम औरतों और लड़कियों का बलात्कार करोगे !

युवक २ : यह तुम क्या कह रहे हो ?

युवक ३ : आखिर क्यों करोगे बलात्कार ?

अनंत : क्योंकि मेरी इच्छा का, मेरे विचारों का, मेरी आस्था का, मेरे विश्वास और मेरे अंग-प्रत्यंगों का बलात्कार हुआ है। सुना तुम लोगों ने, मेरी आत्मा का ही बलात्कार हुआ है।

युवक ४ : यह तुम क्या कह रहे हो ?

युवक १ : किसने किया तुम्हारा बलात्कार ?

अनंत : और किसने ? किसमें इतनी हिम्मत है ? मेरे श्रद्धेय पिता और मेरे आदरणीय जीजा ने।

युवक २ : यह क्या बकवास कर रहे हो ?

युवक ३ : उन लोगों ने कैसे किया तेरा बलात्कार ?

अनंत : मैंने बचपन में अपने पिता को भूखे प्यासे रहकर भी छोटे-बड़े, अमीर गरीब, रोगी की सेवा करते हुए देखा था। उसी तरह मैंने अपने जीजा को अपने घर परिवार को त्यागकर बिना किसी भेदभाव के निःस्वार्थ सेवा करते हुए देखा था। अपनी जान की परवाह किए बिना देशवासियों के संघर्ष करते हुए देखा था। उन लोगों ने ही मुझे ईमान्दार, चरित्रवान, कर्तव्यनिष्ठ और इज्जतदार बनना सिखाया था, प्रेरणा दी थी। मैं समझता था, मुझे आदर्श और कर्तव्यनिष्ठता का पाठ पढ़ाने वाले मेरे पिता और जीजा कितने महान हैं। लेकिन हुआ ठीक उलटा। क्या सोचा था,क्या हो गया ?

युवक ४ : क्या हो गया ?

अनंत : आज मुझे मालूम हुआ कि ईमानदार, चरित्रवान, कर्तव्यनिष्ठ और इज्जतदार होने का पाठ सिखाने वाले मेरे पिता और जीजा दोनों झूठा, धोखेबाज, भ्रष्ट और लुटेरा हो गये हैं। इसीलिए मेरा दिमाग एकदम खलबला गया। मैं पागल-सा हो गया।

युवक १ : तुम्हारे पिता और जीजा कैसे झूठा, धोखेबाज, भ्रष्ट और लुटेरा हो गये ?

युवक २ : तुम उन्हें किस आधार पर बदले हुए कह रहे हो ?

अनंत : क्योंकि पहले मेरे पिताजी मन लगाकर अस्पताल में आते थे और वहुत ही अच्छे तरीके से रोगियों की जाँच किया करते थे। लेकिन आजकल वे अस्पताल में केवल खानापुरी करते हैं। रोगियों की ठीक से जाँच नहीं करते हैं और उन्हें अपने क्लिनिक में आने के लिए मजवूर करते हैं। पहले वे दैवी प्रकोप पीड़ितों की निःस्वार्थ भावना से सेवा करते थे, लेकिन आजकल बाढ़ और भूकंप पीड़ितों के सहयोगार्थ आए हुए औषधियाँ भी बाजार में बेंच देते हैं, और अपनी जेब भरते हैं।

युवक ३ : ये सब क्या कह रहे हो तुम ?

युवक ४ : हमें तेरी बातों पर विश्वास करना भी कठिन हो रहा है।

अनंत : मै सच कह रहा हूँ। पहले देश और जनता के हक और अधिकार के लिए लड़ने वाले और उनकी अच्छाई भलाई के बारे में सोचने वाले मेरे जीजा आजकल चुनाव में झूठा आश्वासन देने लगे हैं और जीत जाने के बाद जनता को भूलकर मौज मस्ती में व्यस्त होने लगे हैं। पहले जनता के दुःख-तकलीफ में अपनी ओर से आर्थिक सहयोग तक करने वाले मेरे जीजा आजकल औरों की तरह गाँव-घर में आग लगवाने, महामहारी फैला देने के नाम पर रुपये पैसे ऐंठने का काम करने लगे हैं।

युवक १ : तुम यह सब किस आधार पर कह रहे हो ?

युवक २ : हाँ, बोलो ! किस आधार पर कह रहे हो ?

अनंत : जहाँ असत्य होता है, वहाँ सत्य भी होता है, जहाँ पाप होता है, वहाँ पुण्य भी होता है। मैं बेलायत से लौटने के बाद पिताजी के बारे में और जीजा जी के घर जाने के बाद तथा गाँव में घूमने और पड़ोसियों से बातचीत करने के बाद जान पाया हूँ। पिताजी और जीजाजी के बारे में जानने के मैं काफी दुःखी

हुआ हूँ। मुझ पर बहुत बड़ा आघात हुआ है। इसीलिए मैं बोलना छोड़ दिया, खाना-पीना छोड़ दिया और घर में अपने आप को कैद कर लिया। एक टक देखता रहा। मेरे पिताजी को जब यह पता चला कि मैं उनके बारे में सबकुछ जान गया हूँ, तो वे घबड़ाकर मुझे पागल कहने लगे और मानसिक रोग-विशेषज्ञ के पास ले गये। इसीलिए मैं सचमुच के पागल की तरह बच्चों को मारने-पीटने और औरतों तथा लड़कियों का बलात्कार करने की स्थिति में पहुंच गया।

(कुछ देर के लिए अनंत और युवक खामोश हो जाते हैं। नेपथ्य से कुत्तों के भौंकने और रोने की आवाज आने लगती है। अनंत उधर बढ़ता है। कुत्तों के भौंकने और रोने की आवाज बंद होने के बाद युवकों के वीच में बातें होने लगती हैं।)

युवक १ : बेचारा अनंत।

युवक २ : उसने अपने पिता और जीजा को अपना आदर्श माना था।

युवक ३ : लेकिन सबकुछ चौपट हो गया।

युवक ४ : उसने उन लोगों को क्या समझा था, और वे क्या निकले ?

युवक १ : आजकल आदमी का कोई भरोसा नहीं है। किसी भी समय आदमी अपनी जात बदल सकता है।

युवक २ : उस पर ये सत्ता, शक्ति और पैसे के लिए तो कुछ पूछो ही मत।

युवक ३ : अब क्या होगा इस अनंत का ?

युवक ४ : अब और क्या होगा ? या तो यह पागल हो जाएगा, या फिर विध्वंसकारी।

(कुछ देर के लिए युवक शांत हो जाते हैं। नेपथ्य से कुत्तों के भौंकने और रोने की आवाज और जोर-जोर से आने लगती है। युवक विपरीत दिशा की ओर जाते हैं। जो लोग मौन खड़े थे, अब बातें करने लगते हैं।)

आदमी १ : (इधर-उधर देखते हुए) अनंत कहाँ है ?

आदमी २ : अभी तो यहीं था।

आदमी ३ : अगर यहाँ था, तो कहाँ चला गया ?

आदमी ४ : पता नहीं, कहाँ चला गया ?

आदमी ५ : वे चार लोग भी नजर नहीं आ रहे हैं।

आदमी ६ : कहीं वे लोग ही तो उसे भगा नहीं ले गये ?

आदमी ७ : सही कहा तुमने। निश्चय ही वे लोग ही उसे भगाकर ले गये होंगे।

आदमी ८ : साला कैसा आदमी है सब ?

आदमी ९ : चलें, उन युवकों को ढूंढ़ा जाय। उन्हीं लोगों के साथ होगा अनंत।

आदमी १० : चलें, उन युवकों को ढूंढ़े। अगर उसे नहीं ढूंढ़ा गया तो वह फिर से हमारे बच्चों को मारे-पिटेगा।

आदमी ११ : केवल मारे-मिटेगा ही नहीं, बल्कि औरतों और लड़कियों की दुर्दशा भी करेगा।

आदमी १२ : चलें, हम आधे इधर से चलें।

आदमी १३ : आधे लोग उधर से जायें।

आदमी १४ : चलें, जल्दी चलें। उसे पकड़ना ही होगा र।

(सभी लोग चौक की ओर से चले जाते हैं। उसके बाद पहले की तरह ही आदमी और कुत्ते आने जाने लगते हैं। पर्दा गिरता है।)

अनुवाद : गोपाल अश्क

एकाङ्की

चोरी

अर्जुन थापा

पात्रहरू : १. इन्सपेक्टर
२. रमेश
३. सरिता (रमेश की पत्नी)

समय : सुबह का समय
स्थान : प्रहरी चौकी

दृश्य :

(पर्दा खुलते जाता है दोमंजिला भवन पर अवस्थित प्रहरी चौकी । सभी अपने-अपने काम में व्यस्त है प्रहरीगण । एक कमरें मे इन्सपेक्टर पत्रिका पढ़ रहा होता है । रमेशऔर उनकी पत्नी सरिता जल्दी-जल्दी प्रहरी चौकी पहुँचते हैं और जल्दी-जल्दी प्रहरी चौकी में प्रवेश करते हैं ।)

रमेश : तुम यहीं बाहर ठहरो । मैं अन्दर जाकर सभी बातें कहकर आता हूँ ।

सरिता : ठीक है । सब कहिएगा । अभी के जो इन्सपेक्टर साहब हैं बहुत मजे के हैं ।

रमेश : नमस्कार हुजूर, बर्वाद हो गया मेरा तो सब कुछ लूटकर चलागया ।

इन्सपेक्टर : क्या बर्वाद और क्या लूटकर ले गया कह रहे हैं ? पहले वेंच पर बैठिए और फिर आहिस्ता-आहिस्ता सब कुछ बताइए । अब घबराने से कुछ भी नहीं होने वाला है ।

रमेश : हुजूर ! रमेश ठकुरी मेरा नाम है । एक हफ्ते पहले दुबई से कान की छुट्टी पर घर लौटा हूँ । यहीं आपकी चौकी से चलकर पन्द्रह मिनट की दूरी पर है मेरा घर । जब मैं और मेरी पत्नी कल विवाह भोज में गए थे, तब मौके का फायदा उठाकर चोर घर भर के सभी गहने चोरी करके ले गए । हड्डी-पसली घिसकर कमाए थे हुजूर । जैसे भी हो उन चोरों को गिरफ्तार किया जाए ।

इन्स्पेक्टर : (रमेश का चेहरा देखते हुए) कितने बजे की घटना है ? आपलोगों ने कल ही क्यों नहीं खबर की हमलोगों को ? गहने-वहने कितने थे ? और भी कुछ ले गए चोर ?

रमेश : ऐसे ही आठ नौं बजे होंगे । कल भोज में शराब थोड़ी ज्यादा हो गई थी । इसीलिए घर आकर सोने पर पता ही नहीं चला । सुबह उठने पर अलमारी का लॉकर खुला देखने पर पता चला । सोना ऐसे ही चालीस-पचास तोला और चांदी पांच-छः सौ तोला होना चाहिए । थोड़े-बहुत पैसे भी थे, पर कितने थे, यह यकीन के साथ नहीं कह सकते हुजूर ।

इन्स्पेक्टर : इतने गहने भी कोई घर में रखता है ? आपको किसी पर शंका है ? घर में इतने गहने हैं यह पता चलने पर ही चोरी हो सकती है । इसका मतलब आपको अच्छी तरह पहचानने वाला व्यक्ति ही हो सकता है ।

रमेश : (थोड़ी देर सोचकर) क्या कहें सर किसे दोष लगाएँ ।

इन्स्पेक्टर : फिर भी ऐसा कोई, जिसपर आपको शक हो ?

रमेश : (हिचकिताते हुए) अपनी पत्नी पर शंका है हुजूर ।

(कमरे में इस वक्त इंस्पेक्टर और रमेश चुपचाप हैं । रमेश इंस्पेक्टर के चेहेरे को एकटक देख रहा है । इन्स्पेक्टर अपने आगे रखी फाइलों को पलटकर पढ़ रहा है । इतने ही में एक प्रहरी अन्दर आकर इन्स्पेक्टर के कान में कुछ कहता है और बाहर निकलजाता है ।

इन्स्पेक्टर : (फाइल में कुछ लिखने के बाद) हाँ ! क्या कह रहे थे ? कैसे कह सकते हैं कि इस चोरी में आपकी पत्नी का ही हाथ है ?

रमेश : (उदासीन चेहरा बनाते हुए) घर की बातें कैसे कहें और क्या ! और फिर कहे विना काम भी नहीं बन सकता हुजूर । अपनी आँखों से तो देखा नहीं पर गाँव भर में भनक है ।

इन्स्पेक्टर : क्या भनक है ? साफ-साफ कहिए ।

रमेश : मेरी पत्नी का कोइ दूसरा ही है, इस वात की भनक है हुजूर । मैं विदेश में रहता हूँ । नेपाल में मेरे न रहने पर शाम को शाम घर में ही आता है हुजूर । लोग कहते हैं कि उन्होंने देखा है ।

इन्स्पेक्टर : और लोग जो कहेंगे उसी का विश्वास कर लेंगे क्या?

रमेश : (थोड़े जोश में आकर) नहीं हुजूर, वहुत परिवर्तन आया है मेरी पत्नी में, मेरे दो वर्ष पहले छोड़कर जाने और अभी में । जमीन-आसमान का फर्क है हुजूर ।

इन्स्पेक्टर : तो फिर पूछा नहीं कि क्यों ऐसा परिवर्तन हुआ आपकी पत्नी में ?

रमेश : बहुत बार पूछा पर सिर्फ इतना कहती है कि ऐसा कुछ भी नहीं है । क्या करें हुजूर बहुत प्यार आता है उस पर । उसके विना अकेले रह ही नहीं पाएँगे ।

इन्स्पेक्टर : अपने ही घर में चोरी ही क्यों कराना पड़ा तो ? और फिर चोरी कराने पर पता चल जाने का डर भी लग सकता है आपकी पत्नी को यदि पकड़ लिया गया तो उस खण्ड में ?

रमेश : (रुमाल से माथे का पसीना पोंछते हुए) ज़रूर किसी ने टोना-टोटका करके अकेला कर देने की सोची होगी । मैंने सुना है, दोनों विदेश जाना चाह रहे हैं । इसीलिए शायद गहने बेचकर पैसे का बन्दोबस्त किया हो । नहीं तो और कुछ भी न लेकर केवल सोना चोरी कर ले जाने का क्यामतलब ? एकदम से उसी का काम है हुजूर ।

इन्स्पेक्टर : यह तो अनुसंधान से पता चल ही जाएगा । आप सम्पूर्ण घटना का विवरण बाहर असई साहब को दर्ज करवा दीजिए । कुछ भी पता चला तो हम आपको खबर करेंगे । बिलम्ब से हो पर चोर मिलेगा ही । इस बात से निश्चिन्त रहिए । (रमेशइन्स्पेक्टर के कहे अनुसार सम्पूर्ण घटना का विवरण बाहर जाकर दर्ज करवा देता है । अन्दर अपने ऑफिस के कमरे में फोन पर व्यस्त रहता है इन्स्पेक्टर । इतने ही में हवलदार साहब कमरे में आकर उसी घटना के बारे में जानकारी देता है । हवलदार की सभी बातें सुनने के पश्चात् रमेश को प्रहरी चौकी में बुलाता है इन्स्पेक्टर)

रमेश : (पसीना बहाते हुए) घर भी नहीं पहुंच पाए थे हुजूर का फोन आने पर आश्चर्य लगा ।

इन्स्पेक्टर : आपको खुशी की खबर सुनाने के लिए जल्दबाजी की है ना । बधाई है चोर पकड़ा गया ।

रमेश : भयभीत मुँह लिए अच्छा हुजूर ? तो फिर मेरे सभी सामानों का पता चल गया ?

इन्स्पेक्टर : (हँस्ते हुए) अच्छा तो अब सभी बातें आप खुद कहेंगे या मैं कहूँ आपसे ?

रमेश : कैसी बातें, क्या बातें कह रहे हैं, मैं समझ ही नहीं पाया हुजूर ?

इन्स्पेक्टर : (दरवाजा बन्द करता है) अब और भी नाटक कर रहै हैं । आपका सामान चुराने वाला सभी बातों को उगल चुका है । खुद ही चोरी करवाकर उल्टा पत्नी पर दोष लगाना चाहते है आप ? बाहर छिपकर दूसरी पत्नी बनाकर रखने और घर की पत्नी के चरित्र पर दाग लगाने में थोड़ी भी शर्म नहीं हुई आपको ?

रमेश : इसमें मेरी कोई संलग्नता नहीं है हुजूर । वह चोर मुझे फँसाना चाहता है ।

इन्स्पेक्टर : (रमेश के गाल पर दो झापड देते हुए) और झूठ बोलोगे । हवालात में बन्द करके जब डंडे पड़ेंगे तो सारी सच्चार्य बाहर आ जाएगी । खुद बकोगे कि कोइ उपाय लगाएँ तुम्हें ?

रमेश : (लाल हुएगाल पर हाथ रखकर) जी हुजूर, यह सब मैंने ही करवाया है । दुबई में रहते वक्त दूसरी महिला से प्रेम हो गया था ! अविवाहित हूँ कहकर उससे प्रेम किया । और वहीं हमने शादी भी कर ली । बाद में नेपाल में पत्नी है कहकर उसे पता चला तभी से जमीन खरीद दो वरना नेपालजाकर सबको बतादूँगी कहकर धमकी देती थी और तुरंत पैसा न होने के कारण उसी के नाते में भाई पड़ने वाले को सोने की चोरी करने के लिए भेजा हुजूर । सभी सोने चाहिए कहने पर पत्नी शंका करेगी कहकर यह सब नाटक करना पड़ा ।

इन्स्पेक्टर : तीनों जने मिलकर चोरी कर चुके थे तो क्यों आए प्रहरी चौकी में रिर्पोट लिखाने ?

रमेश : (आगे रखी बोतल का पानी पीने के बाद) हम तीनों के सलाह अनुसार घर से सोना निकाल लेने

के बाद सभी सोने को आज सुबह मुझे वापस देकर सभी सोने को बेचकर जमीन के लिए पैसा उसके मायके में पहुँचा देना था। पर सुबह तक उसके भाइ को फोन करने पर तथा खुद जाकार जायजाालेने पर वहाभाई कहाने वाला व्यक्ति उसका भाई न होकर पति है। दुवई में दोनों पति-पत्नी ने मिलकर पैसे के लिए प्रेम का नाटक किया मेरे साथ।

इन्स्पेक्टर : (हँस्ते हुए) अधिक चालाक बनने पर खुद ठगे जाने का पता नहीं चला आपको। और अब खुद के खोदे गड्ढे में खुद ही गिरे।

रमेश : (दोनों हाथ जोड़कर) अच्छा हुजूर जैसे भी हो मेरा सोना मुझे मिलजाए ऐसा इन्तजाम मिलाना पड़ा।

इन्स्पेक्टर : सबसे पहले आपने कानून अपने हाथ में लेकर प्रहरी से ही झूठ बोला। दूसरे जिस सोने की बात आप कर रहे हैं वह तोले में नहीं किलो में बरामद हुआ है। जो गैर कानूनी रुप में नेपाल में लाया गया है, ऐसी जानकारी मिली है मुझे। जिस कारण उस सोने की बात ही छोड़िए आप को भी लम्बे समय तक जेल में रहना पड़ सकता है।

रमेश : बहुत बड़ी गलती हुई हुजूर मुझसे। हाँ, बहुत गलती की है मैंने। अब हुजूर के हाथ में है मेरी जिन्दगी। हुजूर जो कहेंगे जैसा कहेंगे करने के लिए तैयार हैं। मुझे वह सोना नहीं चाहिए बस यहाँ से निकल पाएँ। वह सोना सब आप ही रखिए।

इन्स्पेक्टर : (कागज के पन्ने रमेश के आगे रखते हुए) इस कागज पर लीखिए कि आज के उपरान्त मैं अपनी पत्नी को हमेशा मान-सम्मान के साथ प्यार से रखूंगा। मुझसे यदि किसी प्रकार का अन्याय हुआ तो वह मुझे तलाक दे सकती है और नीचे हस्ताक्षर के साथ ही अंगूठे का निशान भी लगाना है। दूसरी वात आज से हफ्ते दिन में किसी को पता न चले इस हिसाब से दुबई लौटकर जाना होगा।

रमेश : (कहे अनुसार लिखकर, हस्ताक्षर और अंगूठा छाप लगा लेने के बाद) आपके कहे अनुसार लिखा है। अब मैं जा सकता हूँ हुजूर ?

इन्स्पेक्टर : आज जो कुछ भी हम लोगों के बीच हुआ किसी से भी मत कहिएगा। यदि कह दिए तो परिणाम आप को खुद भुगतना पड़ेगा।

रमेश : आपने इतना बडा उपकार किया है। यही मेरे लिए बड़ी बात है।

(रमेश फटाफट वहाँ से निकलता है और बाहर आकर लम्बी साँस छोडता है।) रमेश सोना गुमाने से भी प्रहरी के फन्दे से निकलने में सफल होने से सन्तुष्ट है। कुछ देर बाद इन्स्पेक्टर के कमरें में एक महिला का प्रवेश होता है। दोनों एक दूसरे को गले लगाते हैं।

इन्स्पेक्टर : देखा आखिर में मैने किस प्रकार से पाशा पलट दिया। अब हमें एक होने से कोई नहीं रोक सकता।

सरिता : (खुशी होते हुए) मेरे पसन्द का व्यक्ति कहीं ऐसा वैसा हो सकता हैं।

(दोनों की हँसीबाहर तक सुनाइ पड़ती है।)

(पर्दा बन्द)

अनुवादक : पूनम झा

एकाङ्की

भूख

किशन थापा 'अधीर'

समय : अभी
स्थान : यहीं

हड़बड़ाता हुआ आया युवक इधर-उधर देखता है, पर कहीं कुछ नहीं नज़र आता । नेपथ्य से शोरगुल की आवाज़ आती हुई सुनाई देती है ।

युवक : (आश्चर्य मिश्रित भाव से) माँ ! ओ मा ! (थोड़ा रुककर) पिता जी ! पिता जी ! (कहीं से कोई प्रतिक्रिया न आने पर) कहीं मैं किसी और के घर में तो नहीं आ गया ? वर्ना माँ, पिता जी ... ? कहाँ हैं मेरे भाई बंधु ? (व्यग्र होकर इधर-उधर देखने लगता है, खोजने लगता है ।)

(एक पदयात्री लगभग दौड़ की गति में चलता हुआ दिखता है ।)

युवक : अरे भाई ! क्या तुमने मेरी माँ को देखा ?

पदयात्री : (बिना रुके ही) मुझे क्या पता ? ... वहाँ (संकेत करते हुए) क ... कैसा चल रहा है ... । (एक तरफ़ चला जाता है)

युवक : उफ् ! अपने पते पर आ चुकने के बाद भी ... घर ! (याद करते हुए) अरे हाँ, मेरा घर कहाँ चला गया भई ? जब मैं निकला, तब तो यहीं था मेरा ठिकाना । भई ये हो क्या रहा है ? कहाँ है मेरा घर ?

(नेपथ्य की शोरगुल की आवाज़ रुकी नहीं है)

घर भी गायब, माँ-पिता जी ... सब लोग गायब ! हे भगवान ! यह क्या दिखा रहे हो ?

दूसरा पदयात्री दौड़ता हुआ दिखाई देता है।)

अरे भैया ! यहाँ एक सुंदर-सा घर था न, यहाँ ... आपने देखा था न ?

पदयात्री २ : (सरासर युवक को ऊपर से नीचे तक देखते हुए) क्या-क्या है तेरे पास ? चल निकाल

युवक : (अपनी ही धुन में)एक ... एक सुंदर घर था न यहाँ ..., आपने भी तो देखा होगा न ? ... देखिए न, दिख ही नहीं रहा अभी ।

पदयात्री २ : (चाकू निकालते हुए) अबे, तेरे पास जो भी है, निकालता है या डाल दूँ अंदर ?

युवक : यह क्या ? आप तो मेरे भैया के दोस्त हैं न ? आपने मुझे पहचाना नहीं ? ... बताइए न भैया, मेरा घर कहाँ है ? मेरे माँ-पिता जी कहाँ हैं ?

पदयात्री २ : अबे, दोस्ती-वोस्ती का ज़माना गया ? तेरा भैया जब सामने हो तो ही दोस्त । ... तू तो ..., चल निकाल फटाफट ।

युवक : समझ में नहीं आता, ये चल क्या रहा है ? (इधर-उधर दौड़ता है) उफ् ! अब क्या करूँ ? (व्यग्र होते हुए)

(एक वृद्ध भी आता हुआ दिखाई देता है)

ताऊ जी, ताऊ जी, यहाँ एक घर हुआ करता था न ... ?

वृद्ध : (अटककर) कैसा घर ?

युवक : छोटा-सा, अच्छा, साफ़-सुथरा, सुंदर ।

वृद्ध : किस रंग का ?

युवक : वैसे रंग का जिसे देखते ही, किसी के भी मन का रंग साफ़ हो जाया करता था ।

वृद्ध : बनावट ?

युवक : देखते ही मन ललचा जाए, सहज ही किसी के मन में समा जाए, वैसी ।

वृद्ध : और ?

युवक : और ..., और घर की छत विश्वास से छाई हुई ।

वृद्ध : क्या वह यहीं था ?

युवक : जी, यहीं ।

वृद्ध : (उँगली से इशारा करते हुए) यहीं ?

युवक : (हड़बड़ाते हुए) जी ... जी ।

वृद्ध : (अचानक कड़कते हुए) चल भाग जा, चोर !

युवक : (हैरत में पड़ जाता है) क्या ..., क्या ... हुआ ?

वृद्ध : (पीटने के लिए हाथ उठाते हुए) यहाँ घर था कहता है ? गदहे ..., यहाँ घर था ? (गुस्से से चूर होकर) घर था ?

युवक : क.. क्यों गुस्सा हो गए ? मैंने तो अपने घर के बारे में पूछा था ।

वृद्ध : फिर बोलता है, यहाँ घर था ? तुझे ... तुझे तो (लाठी उठाते हुए मारना चाहता है) यहाँ घर था ? फिर से बोल तो ज़रा, यहाँ घर था ? (युवक बड़ा हैरान होकर देखता रह जाता हैं। वृद्ध गुस्से में अपनी ही धुन में 'घर था ? घर था ?' कहते हुए चल देता है ।)

युवक : (साँस की गति तेज़) अब तुम ही बताओ भगवान ! (ऊपर देखते हुए) मेरे घर को भला किसकी नज़र लग गई ? (एक बार चारों तरफ़ नज़र दौड़ाते हुए) मेरे घर को आसमान खा गया या ज़मीन निगल गई ? बोल भगवान, बोल । किसकी आँखें गड़ गईं मेरे घर पर ?

(एक वृद्धा दिखती है)

युवक : (झटपट) ताई ... ताई ! (हाथ जोड़कर) आपको तो पता होगा, यहाँ एक घर हुआ करता था ? (वृद्धा जड़वत देखती रहती है)

युवक : (संकेत करते हुए) यहाँ एक सुंदर, छोटा-सा घर था, जिसके सामने बगीचा भी था..., बगीचे में सुंदर-सुंदर फूल खिले थे, फूलों पे रंगबिरंगी तितलियाँ और भँवरे मँडराते रहते थे ..., बताइए न, क्या आपने नहीं देखा ?

(वृद्धा चुपचाप उसके हाव-भाव देख रही है)

विश्वास ही विश्वास से छाई हुई छत वाला हमारा यहीं था न, बताइए ने ताई जी, कहाँ गया होगा ?

(वृद्धा चुपचाप देखती है)

हमारे घर की दीवारें परिवार के भरोसे की बदौलत खड़ी हुई थी । सब लोग हँसी-खुशी के साथ जीवन गुज़ार रहे थे ... अचानक कुछ दिनों से हँसी रुक-सी गई । को ... कोई भी हँस नहीं सका । मुझे हँसी पैदा करने का तरीका सीखने विदेश भेजा गया था । और अब जब तरीका सीखकर लौटा तो यहाँ ... (व्यग्र होते हुए) बताइए न ताई !

वृद्धा सुनती जा रही है)

आपकी सारी मुरादें पूरी हों, (और अधिक व्यग्रता से) आपके बच्चे लाखों साल जिएँ ... भगवान के लिए बता दीजिए न ताई, मेरा घर कहाँ गया ?

(अचानक वृद्धा ठहाके लगाकर हँसने लगती है और दिमाग की तरफ इशारा करते हुए 'नहीं है क्या ?' का भाव दिखाती हुई चल देती है ।

युवक कभी आसमान की तरफ़ देखकर हाथ उठाते हुए अजीब-अजीब संकेत करता है, कभी जल्दी-जल्दी ज़मीन खोदने लगता है । उसी समय दूसरा एक युवक दौड़ता हुआ आता है । पहला युवक उसे कसकर पकड़ लेता है ।)

युवक : (पहचानते हुए) भैया, भैया, कहाँ खो गए थे ? और माँ-पिता जी कहाँ हैं ? कहाँ गए और भाई-बहनें ? हमारा घर कहाँ है ?

युवक २ : (गूँगे की तरह) आ ... आ ... ।

युवक : (हड़बड़ाते हुए) कहाँ गए सब के सब ? घर भी नहीं है । मैं तो कुछ समझ ही नहीं पा रहा हूँ । यह सब क्या हो रहा है ?

युवक २ : (उसी अंदाज़ में) आ ... आ ... ।

युवक : (हैरान होते हुए) यह... यह क्या हो गया ? क्यों नहीं बोल रहे ?

युवक : (घबराते हुए) क् ... क्या हुआ ? क्या तुम बोल नहीं सकते ?

युवक २ : (सिर हिलाते हुए) हाँ ... हाँ ... ।

युवक : (घुटने ज़मीन पर टेकते हुए) उफ् ! हे भगवान, यह क्या दिखा रहे हो ? क्या हुआ हमारे घर का ? क्या हुआ हमारे परिवार का ?

(नेपथ्य का शोरगुल बढ़ जाता है ।)

युवक : (हैरानी से देखते हुए) काफ़ी देर से उधर क्या हो रहा है ? (युवक २ कोई प्रतिक्रिया नहीं देता ।) (युवक २ को झकझोरते हुए) उधर क्या हुआ है ? कुछ पता है ? (युवक २ हाथ हिलाते हुए कुछ संकेत करता है, जिसे युवक नहीं समझ पाता ।

युवक : उफ् ! यह क्या हो रहा है ... कहाँ ढूँढू मैं अपना घर ? किसको कहने जाऊँ ? किससे गुहार लगाऊँ अब ?

(एक तेरह-चौदह साल का लड़का चलता हुआ दिखता है ।)

भाई ! पहले तुमने यहाँ एक घर देखा था ? (लड़का कभी युवक को देखता है, कभी युवक २ को, पर कुछ नहीं बोलता ।)

(हाथ से कुछ संकेत कर दिखाते हुए) छोटी-छोटी, सुंदर-सुंदर खिड़कियाँ थीं ..., उन में से तुम्हारे जैसे ही छोटे-छोटे बच्चे चेहरे पर मुस्कान लिए बाहर

देखते रहते थे ..., याद नहीं तुम्हें ?

(लड़का इस तरह खामोश है, मानो वह बोलना भूल गया हो)

सामने हरा-भरा मैदान था न ..., याद करो तो। आस-पास पड़ोस की गाय-भैंसें चरने आती थीं ...। कुछ याद आया ?

युवक २ : (विवश-सा होते हुए हौले से) अब रहने भी दो, बच्चे को पता नहीं है।

युवक : (हैरानी से) क्या तुम बोल सकते हो ? तो फिर इतनी देर से ... ?

युवक २ : बड़ी लंबी कहानी है। कुछ मत पूछो।

युवक : पर क्यों ?

युवक २ : कहा ना, कुछ मत पूछो।

युवक : बिना जाने मुझसे रहा नहीं जाएगा।

युवक २ : (विवशतापूर्वक देखते हुए) मैंने अपनी आवाज़ ..., आवाज़ (उँगली से मंच के बाहर के अंधेरे हिस्से को संकेत करते हुए) उधर के लिए गिरवी रख दी है।

युवक : (भयभीत मुद्रा में) यह तुम क्या कह रहे हो ?

लडका : (ज़ोरदार आवाज़ में) एक है जिसे अपना घर भी मालूम नहीं, दूसरा बोल सकने के बावजूद बोलता नहीं ... ! पागल लोग (सरपट दौड़ता हुआ दूसरी तरफ़ चला जाता है)

युवक : बोलो, क्यों ... क्यों ऐसा कर रहे हो ?

युवक २ : देख भाई, व्यावहारिक बनना सीख। हमारी ज़िंदगी एक बार का जनम है।

युवक : यह तो कोई वजह नहीं हुई ?

युवक २ : एक बार के इस जनम में भला कौन तकलीफ़ें झेलना चाहेगा, तू ही बता।

युवक : तुम्हारा मतलब है, अपनी बोली गिरवी रख देने से उधर का पड़ोसी सुख देगा

युवक : (हाथ से समझाने का इशारा करते हुए) देख, यह सब हमारे भविष्य के लिए है ... ?

युवक : (हाथ झकझोरते हुए) बड़ा बनेगा भविष्य ! भगवान के दिए हुए अपूर्व उपहार बोली को ही गिरवी रख देने से भी कहीं भविष्य बनता है ? निर्माण भी कहीं 'खामोशी' की एवज में ही होगा, ऐसा तो नहीं कहा ?

युवक २ : यह सब तुम इसलिए कह रहे हो क्योंकि तुमने खुद को पहचाना ही नहीं है अब तक। पहले खुद को पहचान। तब पता चलेगा कि अपने लिए क्या-क्या करना पड़ता है।

युवक : फिर तो यह बड़ी महँगी जान-पहचान है भई ... जिसके आगे माँ-बाप, घर ... कुछ भी नहीं है !

(एक अधेड़ चुपचाप आता हुआ दिखाई देता है, पर युवकों को देखते ही जिधर से आया है, उधर ही जाने लगता है। युवक दौड़कर उसे पकड़ लेता है)

युवक : (पहचान जाता है) चाचा जी ! क्यों आपलोग ... ऐसा कर रहे हैं ? (अधेड़ आदमी एक बारगी युवक को देखता है और फिर जाने की कोशिश करता है, पर युवक उसका हाथ कसकर पकड़ लेता है।)

युवक : क्या हुआ चाचा जी ? क्यों ... ? कहाँ है हमारा घर ? माँ-पिता जी भी दिखाई नहीं देते ? यह सब क्या हो रहा है ?

अधेड : अब क्या-क्या, कहाँ-कहाँ, यह सब पूछना बंद करो। जो भी हो रहा है, भलाई के लिए ही हो रहा है।

युवक : कैसे ? यह आप कैसे कह सकते हैं ? जबकि यहां सब कुछ अजीबोगरीब हो रहा है ... और आप कहते हैं कि सब कुछ ठीक है ?

अधेड : देखो, महज गर्मजोशी से कुछ नहीं होता

युवक : यह क्या हो गया है आप लोगों को ? जब भी घर और माँ-पिता जी की बात करता हूँ तो आप लोग बात को कहीं और मोड़ देते हैं। क्यों इस बारे में कुछ नहीं बताते ? क्या इस सवाल का जवाब हमारे लिए ज़रूरी नहीं है ?

अधेड : मैं अपने दिमाग में यह सब बातें नहीं भरना चाहता।

युवक : क्यों ?

(अधेड़ कुछ पल युवक को देखता है और इशारे से बताता है कि उसका दिमाग कहीं और चला गया है।)

युवक : क्या है इस इशारे का मतलब ?

अधेड : उन्होंने इस दिमाग की कीमत चुकाई है ताकि यह उधर के लिए ही काम करे।

युवक : उफ् ! आप भी ?

अधेड : यहाँ क्या-क्या था, क्या-क्या होना चाहिए, अब यह सब सोचने और करने का मेरा काम नहीं है।

युवक : (चिल्लाकर) क्यों ?

अधेड : (गुस्से से) इस पीढ़ी के पास ऐसे सवालों का इतना बोझ है, जिसे ढोना मुश्किल है।

युवक : जवाब भी तो नहीं मिलता।

(अचानक नेपथ्य का शोरगुल बढ़ जाता है। पाँच-छह लोग मंच पर दौड़ते हुए आते हैं। एक-दो भैंसा और बकरे के चेहरे वाले भी दिखते हैं। मंच पर मौजूद सामानों को इधर-उधर फेंकते हैं और खुद को पसंद आने वाली चीज़ों को अपनी जेबों में ठूँसते जाते हैं। एक-दो युवक युवक और युवक २ की जेबों में भी हाथ डालते हैं। युवक २ अपने छीने हुए पैसे छीनने वाले के हाथ से वापस छीनता है। वे पैसे फिर दूसरा छीन लेता है पर युवक २ उसे मुक्का मारता है। और दो लोग भी युवक २ को मुक्के मारने के लिए आगे बढ़ते हैं। वहीं अधेड़ दूसरे एक व्यक्ति के कपड़े उतारकर लेने की कोशिश करता है। युवक के गले की चेन छीन चुका एक व्यक्ति हँसने लगता है। यह देखकर दूसरा एक व्यक्ति भी उसकी जेब में हाथ घुसाने आ जाता है।)

युवक : यह ... यह क्या हो रहा है ? कौन हैं आप लोग ? (किसी पर कोई असर नहीं पड़ता, सब पूर्ववत अपने क्रियाकलाप में व्यस्त हैं)
भैया ! ... चाचा जी ! ...

युवक २ : (दूसरे एक व्यक्ति की घड़ी छीनकर) मत चिल्लाओ ना। यहाँ अब ऐसे ही है।

युवक : ऐसा ही है ..., मतलब ? यह ... यह सब क्या हो रहा है ?

युवक : तू भी इस (एक व्यक्ति के कोट से तमगा छीनते हुए) हरकत में शरीक होना चाहता है तो आ वरना जा ...। और कुछ नहीं तो कम-से-कम अपने सामानों की हिफ़ाज़त कर।
(इसी वक्त नेपथ्य से असह्य संगीत सुनाई देने लगता है। युवक, युवक २ और अधेड़ को छोड़कर बाकी सभी अपने-अपने कान बंद कर मंच से भाग जाते हैं।)

युवक : (संगीत की ध्वनि कम होने पर) इतना ज़्यादा बदलाव यहाँ ? यह सक किसने किया ?

अधेड : इसे तो ... (परेशान-सा होकर युवक २ से) ओए ! तू ही समझा दे इसे। मुझसे तो नहीं हो पाएगा। (चला जाता है)

युवक : सच में, बुद्धि-विवेक सब कुछ गिरवी रख देने पर इंसान ऐसा ही हो जाता है।

युवक २ : यहाँ चाहे जो भी हो रहा हो। तुझे क्या पड़ी है ? सिर्फ अपने बारे में नहीं सोच सकता ?

युवक : जहाँ मैं पैदा हुआ, बड़ा हुआ, वो घर तो अपनी जगह नहीं है, हमें जन्म देकर, पाल-पोसकर बड़ा करने वाले माँ-पिता जी लापता है ..., ऐसे में तुम लोग कह रहे हो- सिर्फ अपनी भलाई के बारे में सोचो। (घृणा भाव से) ऐसी भी क्या भलाई, जिसे अकेले अनुभव किया जाए ?

युवक २ : तो फिर चला जा पागल। मैं भी तेरे जैसों के लिए अपना समय बरबाद नहीं कर सकता। (चला जाता है)

युवक : जाने से पहले इतना तो बता दो, क्या अपने माँ-बाप के लिए थोड़ी भी श्रद्धा नहीं रही ?

अधेड २ : (प्रवेश करते हुए) छोड़ दे, ऐसे लोगों को भला क्या श्रद्धा होगी। दिमाग की जगह पेट लेकर पैदा होने वाला भूख के अलावा और भला क्या सोच सकता है ?

युवक : (चकित-सा) बड़े भैया ?

अधेड २ : कैसी संतानों को जन्म दिया है, सोचकर माँ रो रही थी। रोते-रोते माँ लापता हो गई। ऐसी संतति के कारण अब यहाँ क्या होगा कहकर चिंता करने वाले पिता जी भी उबरने का उपाय सोचते हुए थककर पता नहीं कहाँ खो गए। अब इन्हें न खोए हुए माँ-बाप की चिंता है और न अपने घर में क्या-क्या हो रहा है, यस सोचने का इरादा ही। अगर है तो बस अपनी भूख की चिंता।

युवक : लेकिन आप कहाँ थे ?

अधेड २ : छुप गया था।

युवक : (अचंभित होकर) छुप गए थे ... ?

अधेड २ : हाँ, क्योंकि यहाँ अकेले से कुछ होने वाला नहीं है।

युवक : सब अगर यही सोच ले कि अकेले कुछ नहीं किया जा सकता तो फिर करने वाला कोई नहीं रह जाएगा। बस इतना बता दीजिए कि हमारे घर के साथ क्या हुआ ?

अधेड २ : (हौले से) एक दिन यहाँ ऐसा आँधी-तूफ़ान आया ... उसने हमारा घर, ... हमारा परिवार (रोते हुए) सबको तहस-नहस कर डाला।

युवक : ऐसे आँधी और तूफ़ान आने का संकेत तो पहले से ही दिखाई देता होगा न ?

अधेड २ : हाँ, एक चावल तो हम अपनी ज़मीन से उपजा नहीं पाए ... हम खुद ही ऐसे हैं, दूसरों को क्या कहें। जो कुछ भी हम तो पड़ोसियों का बनाया हुआ ही झट से खरीद लेते हैं और अपने हाथों को

मकड़ियों को जाल बनाने के लिए छोड़ते रहे।

युवक : पहले भी तो वे अपनी गाय-भैंसों को ऐसे ही हमारे इधर घुसाते रहे हैं। क्या भूल गए आप ?

अधेड २ : (सुस्त स्वर में) यही क्रम अचानक अचानक बेसंभाल तौर पर इतना बढ़ गया कि हमारा घर ... (बोल नहीं पाता)

युवक : पहले भी मैंने सचेत तो कराया ही था। पर 'जिसका जौ खाते हो, उसी का रोआँ खींचत हो' कहकर मुझे बुरी तरह झिड़की देने वाले हमारे ही यहाँ के चालू-पुर्जे लोग तो थे ...।

अधेड २ : अब निर्बाध रूप में बाँध तोड़कर घुस चुके इन गाय-भैंसों से ठगी और लूटपाट के अलावा और क्या सीखेंगे हमारे भाई-बंधु ? ऊपर से समय भी आ चुका है लाचारी का ...।

युवक : तो क्या अब हमें अपनी ही ज़मीन पर शरणार्थियों की तरह रहना पड़ेगा ?

अधेड २ : उफ् (थोड़ी देर चुप हो जाता है, शून्यता फैल जाती है।) पहले की तरह घर की उन्नति करने की सोची तो खत्म कर दूँगा' अगर नहीं कहा होता तो मुझे छुपकर रहने की ज़रूरत ही क्यों पड़ती ? देख भाई, स्थिति ऐसी है कि कुछ कह नहीं सकते। तू जहाँ से पढ़-लिखकर जहाँ से आया है, वापस वहीं जाकर अपना भविष्य सँवारो।

युवक : खुद के घर में तो ... यह हाल है, भविष्य किसके लिए सँवारूँ। पढ़ने-लिखने का मतलब सिर्फ यह तो नहीं कि हर हाल में बस निजी फायदे के बारे में ही सोचूँ।

अधेड २ : तो फिर क्या चाहते हो ?

युवक : मैं अपना घर चाहता हूँ, पहले की तरह खुशहाल। माँ-बाप चाहता हूँ ...।

अधेड २ : इतना आसान नहीं है। फिलहाल इतना ही काफ़ी है कि हमें अब तक ज़िंदा छोड़ रखा है।

युवक : मेरे लिए बस इतना-सा आसमान काफ़ी नहीं है।

अधेड २ : तो फिर कैसे हासिल करोगे ?

युवक : आत्मविश्वास। उसमें हिम्मत और एकता मिल जाए तो ... क्या है जो हासिल नहीं किया जा सकता ?

अधेड २ : तो फिर ठीक है (फुरती बढ़ जाती है) मैं उन बदमास भाई-बंधुओं, चाचाओं को बुलाकर लाता हूँ। (चला जाता है)

युवक : (दृढ स्वर में) मैं अपने घर-परिवार को वापस हासिल करके ही रहूँगा। (जाना चाहता है। ठीक इसी समय एक झुंड बकरों, भैंसों और साँढ़ों का प्रवेश। साँढ़ युवक को खींचकर एक ओर बिठाता है। एक बकरा और एक भैंसा उसे घेरे खड़ा होता है।)

साँढ : सुना है तुम्हें यहाँ का परिवर्तन रास नहीं आया ?

युवक चुप रहता है

बकरा : चुप क्यों है ?

वह फिर नहीं बोलता

भैंसा : क्यों रास नहीं आया तेरे को ?

युवक : मैं जानवरों के मुँह नहीं लगता।

साँढ़ और भैंसा उसे मारने को उतारु होता है, पर बकरा उन्हें रोक लेता है।

बकरा : ठीक है, तुम लोग ही इंसान हो, यही सही, पर इससे क्या ? हमने मदद करके यहाँ इतना सारा परिवर्तन ला दिया ... इसे अस्वीकार करने की ज़रूरत क्या है ?

युवक : (आँखें दिखाते हुए) और कितना चूसना चाहते हो हमें ?

भैंसा : वह तो ... (कुटिल मुस्कान के साथ) अपने घर की उन्नति के लिए कुछ भी करना पड़ता है।

युवक : तो फिर हमें अपने घर की उन्नति करने की आज़ादी क्यों नहीं ? इसके लिए हमने कोई अच्छा कदम उठाया नहीं, कि तुम लोगों की जल क्यों जाती है। तुम लोगों के विकास के कदम पर हम कभी उँगली करने गए हैं ?

साँढ : (समझाने के भाव में) ये उँगली-वुँगली छोड़। देख भाई, अगर तेरे यहाँ सभी चीज़ों का विकास हो जाएगा तो हमारे उत्पाद बेकार नहीं हो जाएँगे ? और इससे हमारे यहाँ बेरोज़गारी और नहीं बढ़ जाएगी ?

युवक : (गुस्से से) और कारण क्यों नहीं बताया ?

बकरा : हमने तो तुम ही लोगों की सेवा के लिए खुला वातावरण बना दिया है ... तो फिर नाराज़गी किस बात की ? ऐसे में तो समझदारी से काम लेना चाहिए न। बल्कि ये बताओ कि अपना मुँह बंद रखने की एवज में खुद के लिए हमसे क्या चाहते हो ?

युवक : (दाँत पीसते हुए) तू मेरे अधिकारों की कीमत पूछ रहा है ?

भैंसा : तुझे जो समझना है समझ, पर तुम लोगों के पास और कोई उपाय नहीं है।

युवक : है क्यों नहीं ? हमें अब तक कोई अपने अधीन में नहीं रख पाया, इतिहास इस बात का गवाह है। तुम लोगों की तरह नहीं हैं हम। अब मेरे पास क्या उपाय है, जल्द ही तुम लोग देख लोगे। (सबको धक्का देकर निकल जाता है। भैंसा, बकरा और साँढ़ आपस में बुदबुदाते हैं और हाथ से 'देर न करो' का संकेत करते हुए दौड़ जाते हैं। मंच के दूसरे छोर से युवक २, अधेड़ और अधेड़ २ एक घर ठेलते हुए लाते हैं।)

अधेड : हाँ, यहाँ ठीक है, यहीं पर रख दो।

अधेड २ : नहीं-नहीं, पश्चिम की तरफ़ कहाँ घूमा हुआ था ?

युवक २ : वहाँ, वहाँ था। (घर को स्थापित करते हुए) हाँ, अब ठीक है। यहीं तो था, ठीक इसी तरह।

अधेड २ : क्या, यहीं था ? मेरा मतलब है, पहले के जैसा ही हो गया न ?

अधेड : हाँ बिलकुल हो गया।

युवक २ : अब तो भाई भी पक्का शांत हो जाएगा।

अधेड : अब कितना बड़-बड़ करने लगा यह भी ?

अधेड २ : इतना न कहता तो आप लोग सुनने वाले कहाँ थे ? आप लोगों को तो कोई मतलब ही नहीं था।

युवक २ : अब भाई कहाँ चला गया भैया ?

अधेड २ : अपने माँ-बाप को ढूँढ़ने निकला था। मैंने खबर भेज दी है, आता ही होगा।

अधेड : अब तो वो भी खुश हो जाएगा।

युवक इधर-उधर देखता हुआ आता है।

युवक २ : (हाथ पकड़ते हुए) यह देख लो भाई, हम अपने घर को वापस उसी जगह ला खड़ा करके ही छोड़ा।

(युवक उस घर को हर तरफ़ से मुआयना करने लगता है।)

अधेड : सब कुछ बिलकुल वैसा का वैसा ही है, जैसा पहले था।

युवक २ : देख, अच्छी तरह देख ले। हरा-भरा मैदान बिलकुल वैसा ही है, बाग भी पहले का ही है, घर के खिड़की-दरवाज़े सब कुछ ...।

अधेड : अब तो हम पर ऐसा-वैसा करने का दोष तो नहीं देगा न ?

युवक : (पुरुषार्थ किए होने के भाव के साथ हँसता है, फिर मंद-मंद हँसी के साथ) अब तो खुश ... ?

(उसी पल एक खिड़की से एक कबूतर फड़फड़ाता हुआ बाहर गिरता है और कुछ देर गुटर-गुटर करने के बाद शांत हो जाता है। फिर घर के भीतर से लोगों के इधर-उधर दौड़ने, डरने और रोने-चिल्लाने का शोर सुनाई देता है। दूसरी खिड़की से एक भेड़िया मुर्गे को मुँह में दबाए हुए धड़ाम से नीचे कूदता है। बाहर आ चुका भेड़िया मुर्गे को सहलाते और मुस्कुराते हुए वापस घर के भीतर घुस जाता है। साँढ़ और भैंसा घर के उत्तर और दक्षिण की तरफ ईंटों को चाट रहे हैं।)

अधेड : (युवक की तरफ देखते हुए) अब तो घर भी मिल गया। अब तो चुप रहेगा न ?

युवक २ : अब तो ठीक है न भाई ? जैसे-तैसे करके हमें हमारा घर मिल गया। (हँसने लगता है)

युवक : (भारी स्वर में) क्या घर का मतलब सिर्फ पत्थर और मिट्टी का ढेर भर है ?

अधेड : अब यह क्या बोल रहा है ?

अधेड २ : बाकी चीज़ें भी तो वैसी ही हैं न ? देख तो अच्छी तरह।

युवक २ : तू मैदान की बात करता था, वो रहा, देख ले।

अधेड : बगीचा भी है, देखो तो दाएँ-बाएँ।

युवक २ : खिड़की-दरवाज़े भी पहले की ही तरह कलात्मक हैं, खुद देख ले।

अधेड : घर भी बिलकुल पहले की ही तरह है, साफ़-सुथरा।

युवक २ : अब क्या चाहिए ? बोल तो सही।

युवक : माँ-पिता जी।

(अधेड़ और युवक २ घबराते हुए आपस में कुछ बुदबुदाते हैं।)

माँ-बाप के बिना भी घर कोई घर होता है ? सब कुछ पहले की तरह बनाने की कोशिश तो देख ली ... पर इस तरह अशांति फैली हुई घर कभी भी हमारा घर हो सकता है ? क्या हमारे घर में इसी तरह कोलाहल मचता था ?

अधेड २ : कैसी बातें कर रहा है ? माँ-बाप की अहमियत भी कभी कम होती है क्या ?

युवक : जब माँ होती थी तो हमेशा घर में शांति का वास हुआ करता था। हम बड़े आराम से पढ़, लिख और हँस पाते थे।

अधेड : वो तो अब भी ...

युवक : (बीच में ही) जब पिता जी होते थे तो हम उन्नति करते थे। पिता जी हमें तरक्की करने का तरीका समझाते थे ... हमारी हिफ़ाज़त भी करते थे।

युवक २ : वो तो अब भी ...

युवक : क्या अब भी ?(भारी आवाज़ में) अब भी ... तरक्की करने का मौका कहाँ है ? शांति कहाँ है ? (घर की तरफ़ संकेत करते हुए) क्या ऐसे स्वार्थियों के बीच रहकर भी हो पाएगी हमारी तरक्की ? हमारे घर की उन्नति ?

(घर के भीतर से निकले दो भेड़िए कुत्ते के एक पिल्ले को आपस में खींचातानी करने लगते हैं)

क्या इसी तरह बोटियों के लिए रस्साकसी करने वालों के बीच रहकर हमारी सुरक्षा हो पाएगी ? (युवक २ और अधेड़ भागने की कोशिश करते हैं, पर युवक रोक लेता है और युवक २ की कमीज़ उतारकर उसका पेट निहारने लगता है।)

बड़े भैया, चाचा जी का स्वेटर भी ऊपर को सरकाइए तो ... (अधेड़ २ अधेड़ के पेट को भी नंगा कर देता है) ज़रा देखूँ तो आपके पेट, कितने बड़े हैं ? कितनी भूख लगती है इनमें ? यहाँ जितने भी हादसे हो रहे हैं, क्या वे सब इन्ही पेटों के चमत्कार नहीं हैं। अब आप बताइए कि आपके पेट भरने के लिए और हमें क्या-क्या गँवाने पड़ेंगे ?

युवक २ और अधेड़ कसमसाते हैं, भागने की कोशिश-सी करते हैं, पर पकड़ और मज़बूत हो जाती है)

अधेड २ : गैरों को भला क्या दोष दूँ ... अपने ही यहाँ इतने भूखे लोग पैदा हो रहे हैं।

युवक : (युवक २ और अधेड़ के पेटों को सहलाते हुए) जैसे-तैसे कर घर को वापस लाकर हमारी आवाज़ों को शांत करने की कोशिश तो किसी तरह कर ली, पर अपने पेट में लगने वाली बेकार की भूख को कब शांत करेंगे ? कब ? कब ... ??? (इस प्रश्न से युवक २ और अधेड़ चौंकते हैं। (नेपथ्य में 'कब' की आवाज़ प्रतिध्वनित होती रहती है।)

पर्दा

अनुवादक : मुकेश कुमार मिश्र

एकाङ्की

शोक धुन

क्षितिज थापा मगर

पात्र

समय
बुद्ध
हिटलर
मुसोलिनी
महिला पात्र– १
महिला पात्र– २
पुरुष पात्र– १
महिला पात्र– २
नेपथ्य स्वर

पर्दा खुलता है। रंगमंच के मध्यभाग में मानवाकृति का बिंब है। उस बिंब की चौड़ी छाती पर दीवाल घड़ी टंगी है, साथ ही मेरुदंड पर भी। उस बिंब पर समय गतिमान है। जिसे समय कहने में कोई हर्ज नहीं। मानवाकृति से थोड़ी ही दूरी पर सामने रंगमंच के दाईं और बाईं ओर ग्लोब रखे हुए हैं। ग्लोब निरंतर घूम रहे हैं। स्पॉट लाइट मानवाकृति की छाती पर फोकस होती है, जहाँ टिक... टिक ... समय चल रहा है।

नेपथ्य स्वर : सुविज्ञ दर्शकवृंद ! नमस्कार।ये हैं समय, या कहें स्वचालित यंत्र। समय नदी के समान गतिमान है। समय हमेशा अपनी गति से निकल जाता है, हमारी तरह काई के समान जमता नहीं। समय गतिशील है। समय की गतिशीलता में ही खिलते हैं फूल, उत्पन्न होते हैं जीवन।

समय सिर्फ रात ही नहीं, दिन भी है। दिन ही नहीं, रात भी है। समय सृजन है। समय के सृजन अनुपम और अनमोल हैं, साथ ही वीभत्स और कठोर भी। समय में फूलों का सौंदर्य भी होता है, काँटों की चुभन भी। हम तो समय के गेंद भर हैं। हम तो समय के जूते हैं, जिन्हें पहन-पहन कर समय फाड़ दिया करता है।

दर्शक वृंद !

मैं आज इसी प्रवाहित और गतिशील समय का मंचन कर रहा हूँ। इस घड़ी समय सृजन-आसन पर है। समय की प्रसव वेदना के साथ ही, ज़रा देखिए तो, समय के गर्भ से पैदा हुए बुद्ध गण। (बुद्ध दाईं तरफ़ के ग्लोब के पास खड़े हो जाते हैं। बाएँ पार्श्व से कुछ मानवाकृतियों का 'खोदाई-जोताई' करते हुए आगमन-प्रस्थान। बुद्ध फटाफट कुछ रोपते हैं।)

और यत्र-तत्र सर्वत्र रोप दी शांति और शांतियाँ (बुद्ध सुस्ताते हैं और ग्लोब के पीछे ध्यानमग्न हो जाते हैं।) और फूल खिले, बुद्ध बनकर। नदियाँ बहीं, बुद्ध बनकर। हिमालय और पहाड़ खड़े हुए, वुद्ध बनकर। जीवन और जगत हँसे, बुद्ध बनकर।

वाह ! सच में, समय अनुपम ही है।

समय !

तुम्हें बुद्ध का सलाम।

समय !

तुम्हें नेपाल का सलाम।

तुम्हें हिमालय का सलाम।

दर्शकवृंद !

आज फिर समय सृजन में तल्लीन है। समय-प्रसूति के साथ ही यह देखिए तो समय के गर्भ से जन्मे हिटलर गण ... मुसोलिनी गण ...

(हिटलर और मुसोलिनी बाईं तरफ़ के ग्लोब के पास खड़े हो जाते हैं। दाएँ पार्श्व से कुछ मानवाकृतियों का 'साउदै, बाउसे करते हुए' आगमन-प्रस्थान। हिटलर और मुसोलिनी कुछ रोप रहे हैं।)

और गाँवों में, पहाडियों पर, चौरों में निर्भय और बेझिझक रोप दिए युद्ध .. बारूद ...

(हिटलर और मुसोलिनी ग्लोब पर बंदूक का निशाना

साधते हुए आक्रामक मुद्रा में खड़े हैं ।)

और नदियों में बहा लहू । पहाड़ों पर जमी खून की बर्फ । चौरों में खिले रक्त के फूल ।

छिः ... छिः ... सच में समय बड़ा ही वीभत्स है, भयानक है, क्रूर है ।

समय !

तुम्हें बुद्ध के रक्त के आँसू का श्राप !

क्षत-विक्षत शांति का कठोर श्राप !

समय : खबरदार !

महत्त्व से भरी जीभ को बेकार में मत पड्काओ

नेपथ्य स्वर : समय !

तुम निकृष्ट हो । तुम विध्वंसकारी हो । तुम हत्यारे हो । तुमने फूलों की हत्या की । पहाड़ों की हत्या की । निरीह शांतियों की हत्या की । सुकुमार बुद्धों की हत्या की ।

समय : मुझे हत्यारे की पगड़ी भिड़ाने वाले तुम होते कौन हो ?

नेपथ्य स्वर : मैं शाश्वत स्वर हूँ । मैं आवाज़ हूँ, जिसे तुम मार नहीं सकते ।)

समय : (कुटिल हँसी के साथ) मूर्ख आवाज़, समय के शब्दकोश में असंभव जैसा कोई शब्द ही नहीं है । मैं आदि हूँ । अनादि हूँ । (समय हरकत में आता है । अपने स्थान से आगे बढ़ता है । समय के हाथ में बंदूक है । समय की चाल गोलाकार है । समय की उंगली ट्रिगर दबाने को आतुर है ।)

मुझे मृत्यु पर्व नहीं मनाना चाहिए । लेकिन क्यों, मेरे ये हाथ मेरे विरुद्ध वंदूक चलाना चाहते हैं ।

परिस्थिति, मैं निरीह मानवजाति की असामयिक मृत्यु नहीं चाहता । प्रकृति का विनाश नहीं चाहता । तुम्हारी बंदूक तुम वापस ले जाओ । मैं विस्फोटन नहीं चाहता । परिस्थिति, मेरी विनती है, मुझसे हत्या मत करवाओ । उँगली बंदूक के ट्रिगर की तरफ़ बढ़ती है । हाथ खींचते हुए) नहीं, ... नहीं मुझसे यह असंभव है । (एकाएक बंदूक से गोली चल जाती है– बारूदों की इंद्रजात्रा)

(समय पूर्व स्थान पर जाकर फ्रिज हो जाता है)

नेपथ्य स्वर : दर्शकवृंद !

समय के गर्भ से विस्फोटन जन्मा । गुलाब के गुच्छे से बंदूक चली । इन विस्फोटों के साथ ही कितनों का सिंदूर मिट गया होगा, कितनों के ज़ीवन मिट गए होंगे ... च्च् ... च्च् ... च्च् ... बंदूक की इन आवाज़ों के साथ–

(दाएँ पार्श्व से एक महिला का प्रवेश)

महिला १ : मेरे जीने का अधिकार छिन गया । मेरी कोख सूनी हो गई । मेरा वसंत लुट गया । ऐ पत्थर के मूक देवताओ !

मुझे जीवन दान करो । मुझे मेरी कोख दान करो । मुझे ऋतु दान करो । मेरी आशा, भरोसा, जीवन का सहारा मुझे पुत्र दान करो, पुत्र दान करो ... । (आवेग में) मेरा जीवन छीनने वाले, मेरा जगत छीनने वाले, मेरे भविष्य के चीथड़े करने वाले, मुझ पर संकट थोपने वाले निष्ठुर समय, धिक्कार है तुझे । धिक्कार है तुझे । (रुदन)

(ध्यानमग्न बुद्ध की अर्चना करते हुए) बुद्ध देव ! मुझे मेरे जीने का आधार दो । मुझे टेकने वाला बैसाखी दो । मुझे मेरा जीवन दो ... (रुदन)

(बाएँ पार्श्व से महिला २ का प्रवेश)

महिला २ : मृत्यु ... मृत्यु ... मृत्यु ... । पूर्व मृत्यु, पश्चिम मृत्यु, उत्तर मृत्यु, दक्षिण मृत्यु । मृत्युओं की उर्बरता का यह मौसम.। इस दौरान मृत्यु पर्व मना रहा है समय । इस दौरान रक्त बनकर बहते समय आँसू मत बहाओ बहन । (महिला १ को इंगित करते हुए) मरुभूमि में आँसू भर बहाने से, आँसू भर रोपने से हरियाली नहीं उपजेगी ।

महिला १ : लेकिन क्यों इतनी विपत्ति मुझे ? क्यों ? खिलखिलाती धूप में उष्णता दिलाए हुए मेरे सपनों को क्यों क्षत-विक्षत बना रहे हैं बंदूक के ये कर्कश स्वर ? क्यों मेरी उष्ण धूपें निष्ठुर समय की बंदूक का निशाना बन रही हैं । आखिर क्यों ? क्यों ... मेरे प्रति ये यात्रा विपत्तियाँ ?

महिला २ : बंदूक की आवाज़ें अपनी नहीं होतीं । बंदूकें भी अपनी और पराई नहीं होतीं । हर बंदूक की हर आवाज़ के साथ ही जीवन उघड़े होते ही हैं । वसंत भी उजाड़ होते ही हैं । इस संकट और विपत्ति के भागीदार अकेली तुम ही नहीं, हम सभी हैं । बंदूकें फूलों को मसलती हैं, अपनों को छीनती हैं । बंदूक का दूसरा रूप ही मृत्यु है, विपत्ति है । बंदूक के वमन से मैंने भी अपनों को गँवाया है, परिवार को गँवाया है । बहन, बंदूकों के चलने के बाद न गँवाने वाला कोई नहीं होता, न गुमने वाला कोई कुछ नहीं होता । सभी गुमते हैं– अतीत, वर्तमान, भविष्य सभी गुम जाते हैं ।

महिला १ : क्या हम गुमने और गँवाने के लिए ही पैदा हुए हैं ?

महिला २ : बिल्कुल, हम गुमने और गँवाने के लिए ही पैदा हुए हैं। और ...

महिला १ : और ? (पुरुष १ का प्रवेश)

पुरुष १ : (महिला की आवाज़ को काटते हुए) शव यात्रा में जाने के लिए– फूलों की, पहाड़ों की, नदियों की, जीवनों की, चिड़ियों की।

जीवन की उपलब्धि ही शवयात्री होना है। अपनी उम्र कई गुना अधिक शवयात्रा पर जा चुका हूँ मैं। अभी हाल ही में मक्के के खेत से निर्वस्त्र माँ और बेटी को उठाकर उनके अस्त्वि की शवयात्रा में गया। कल ही क्षत-विक्षत आवाज़ों की शवयात्रा में गया। अब वर्तमान की शवयात्रा पर निकलूँगा और कल भविष्य की ...।

महिला १ : शवयात्री सिर्फ आप ही या हम भी हैं ?

पुरुष १ : तू, तुम, आप, हम सभी शवयात्री हैं।

महिला २ : पर मैं तो खुद को शवयात्री नहीं मानती और शवयात्रा में भी नहीं जाना चाहती।

पुरुष १ : (हँसी) शवयात्रा पर बारात की तरह चाव से नहीं जाया जाता। शवयात्री होना और शवयात्रा पर जाना मजबूरी है। हम इंसान कम और शवयात्री अधिक हैं। जगत का अर्थ ही लाशों का पहाड़ और लाशें तैरने वाली नदी है और हम विशुद्ध शवयात्री। यह शाश्वत और ध्रुव सत्य है। चाहे आप मानें या न मानें। इसीलिए आज से मानव समुदाय को शवयात्री समुदाय घोषित करें।

महिला १ : हम इंसान नहीं हैं, शवयात्री हैं, शवयात्री। सुनो गाँव वालों, सुनो। (अचानक रंगमंच पर पुरुष २ का प्रवेश)

पुरुष २ : नहीं सुना क्या ? अब भी नहीं सुनी तुम लोगों ने फूल की मृत्यु की खबर ? पहाड़ की मृत्यु की खबर। क्या तुम लोगों ने मेची को रक्तमय बहते हुए नहीं देखा ? महाकाली में लाली जमी हुई नहीं देखी ? सागरमाथा को भी रक्त के टेथिस सागर में डूबा हुआ नहीं देखा ? सुकुमार फूलों की मृत्यु पर श्रद्धा के गुलदस्ते नहीं चढ़ाए ? क्या स्वाभिमानी पहाड़ों की मृत्यु पर एक मिनट का मौन धारण भी नहीं किया ? धिक्कार है ..., धिक्कार ...।

पुरुष १ : बंधु ! यह मौन धारण करने की बेला नहीं है, शवयात्रा पर निकलने की घड़ी है। आप भी आइए, शवयात्रियों की भीड़ में समाहित हो जाइए और शवयात्रा तय कीजिए।

पुरुष २ : अवश्य (इंगित करते हुए)

वो देखो, वहाँ सड़क पर, लावारिस गिर रही हैं– लाशे शांति की। पहले शांति की ही शवयात्रा पर चलें। आइए, शांति के शवों को उठाते हैं।

महिला १ : नहीं, पहले फूलों की शवयात्रा पर चलें।

महिला २ : पहले पहाड़ों की मैयत पर चलते हैं।

पुरुष १ : पहले जीवन और जगत की शवयात्रा पर चलें, उसके बाद और...।

पुरुष २ : पहले शांति की।

महिला १ : पहले फूलों की।

महिला २ : पहले पहाड़ों की।

पुरुष १ : पहले जीवन और जगत की।

(पात्र गण आपस में उलझ जाते हैं, उलझे रहते हैं।)

पुरुष २ : (हस्तक्षेप करते हुए) आप सब चुप हो जाइए। पहले जिसकी भी शवयात्रा पर जाएँ, पर हमारे शवयात्री समुदाय में गुट नहीं होना चाहिए, फूट नहीं होनी चाहिए। इसलिए सोचें और पहले किसकी शवयात्रा पर जाना है, यह तय कर लें।

(सभी शोकमग्न हो जाते हैं)

महिला १ : तो फिर ठीक है, हम सभी अपनी-अपनी अड़ान के मुताबिक शवयात्रा पर चलते हैं। घाट तो एक ही है न, वहीं एक-दूसरे का सहयोग करेंगे बारी-बारी।

महिला २ : बहुत बढ़िया उपाय। चलो अब शवों को उठाते हैं। (चारों ज़न चारों तरफ़ निकलते हैं। रंगमंच वीरान, एकल शंख की ध्वनी गूँजती है, गूँजती चली जाती है। कुछ समय बाद पुरुष २ का प्रवेश। उसके हाथ में सफ़ेद पृष्ठभूमि में खून से लथपथ कपड़ा है।)

पुरुष २ : बेचारी शांति ...। (क्रमशः अन्य लोगों का प्रवेश। वे लोग खाली हाथ लौटते हैं।)

कहाँ हैं वो लाशें, जिन्हें आप लाने गए थे ? (अन्य पात्र मौन रहते हैं।)

पुरुष २ : कुछ तो बोलिए। कहाँ हैं पहाड़ों की लाशे ? फूलों की लाशें ? कहाँ हैं जीवन और जगत की लाशें।

महिला २ : वे लाशें लावारिस ही तो थीं। गिद्धों ने खा लीं। हमें तो अस्थिपंजर भी नहीं मिले।

पुरुष १ : आजकल दिन-प्रति-दिन सूरज के साथ-साथ मृत्युओं का भी उदय होता है और असंख्य जीवनों का अस्त । अब तो असामयिक मृत्यु ही नियति हो चुकी है । शवयात्री बंधुओ ! चलो चलें, शांति के शव को घाट ले चलें । (नेपथ्य में एकल शंख रो रहा है । वे शवयात्री कतारबद्ध होते हैं और दो-चार कदम आगे बढ़ते हैं । ध्यानमग्न बुद्ध सुगबुगाने लगते हैं ।)

बुद्ध : शवयात्रा पर निकले हो ? (शवयात्री रुक जाते हैं) क्या मुझे घाट पर नहीं पहुँचाओगे ? मेरी शवयात्रा पर नहीं जाओगे ?

महिला १ : आप तो जीवित हैं । आप तो गुंबदों में ...

बुद्ध : गुंबदों में मेरी प्रतिमाएँ हैं । गुंबदों में मेरी मूर्तियाँ शेष हैं । मैं तो कब का मर चुका, मैं तो शांति के साथ ही बीत चुका । मैं तो इतिहास हो चुका, दंत्यकथा हो चुका । बंदूक का चलना बुद्ध का मरना है । अतः हे शवयात्रियो ! मुझे भी घाट पर पहुँचा देना । मेरा भी दाह संस्कार कर देना । (एकाएक बुद्ध निःशब्द हो जाते हैं, निष्प्राण हो जाते हैं, ज़मीन पर लोट जाते हैं ।)

पुरुष २ : बंधुओ ! बारूद और युद्ध बुद्ध को लील चुके हैं । (इंगित करते हुए) बुद्ध की इस लाश को भी उठाओ और घाट पर ले चलो । (बुद्ध और शांति की लाशों को उठाकर वे प्रस्थान करते हैं । नेपथ्य में शंख की ध्वनि इकहरे तौर पर रो रही है ।)

नेपथ्य स्वर : इस समय मृत्यु पर्व मना रहा है समय । समय के मृत्यु पर्व में धूप, पानी, नदी, पर्वत, जीवन और प्रकृति क्रमशः बलि चढ़ रहे हैं । धूप और पानी की मृत्यु पर, नदी और पहाड़ की मृत्यु पर, जीवन और जगत की मृत्यु पर, बुद्ध और शांति की मृत्यु पर
ऐ रेडियो नेपाल
ऐ नेपाल टेलीविज़न
तुम दोनों तो निपुण हो शोक धुन बजाने में ।
शोकधुन बजाओ न, विनती है, शोक धुन बजाओ न ... (नेपथ्य से शोकधुन बजता है, निरंतर बजता रहता है, शोकधुन दूर दूर तक फैलता है, फैलता रह जाता है ।)

अनुवादक : मुकेश कुमार मिश्र

माँ

खिमानन्द पोखरेल

पहला दृश्य

फोन की घंटी बजती है।

मनोज : हेलो क्या है ? ... रेणु से आप कौन ? क्या...कॉलेज का मित्र थोड़ी देर हाँ। (रेणु को बुलाते हुए रेणु ऐ रेणु तुम्हारा फोन)

रेणु : हेलो कौन उत्सव। क्या है ? सब ठीक ? अच्छा सुनो मुझे अपनी नोट कापी दो ना। मैं तुमसे कॉलेज में ही मिलती हूँ ना। मैं अभी जल्दबाजी में हूँ अच्छा फोन रखती हूँ बाई।

मनोज : रेणु अब तुम्हारी कॉलेज की पढ़ाई पूरी होने वाली है क्या?

रेणु : क्यों ?

मनोज : नहीं नहीं तुम्हें खुद न जाकर साथी से पूछते देखकर ऐसा कहा। हाँ तुम इसे अन्यथा मत लेना अच्छा ?

रेण : मैंने आपकी बातों को कभी भी अन्यथा लिया है क्या ? आप भी ...।

मनोज : रेणु तुम हर बात को हल्के में कैसे ले सकती हो ? कभी कभार तो मुझसे भी गलती हो ही सकती है, क्या मैं गलत कह रहा हूँ ?

रेणु : अरे ... मेरे पतिदेव भी। मैं विश्वस्त हूँ। आपसे भी कभी ऐसी गलती हो सकती है ? यह बात मैं नहीं मान सकती।

मनोज : गलती हुई तो क्या कहोगी ? कहो तो रेणु यदि विश्वास है तो।

मनोज : क्या मैं गलती करूंगा कि ऐसा विश्वास तो नहीं है तुम्हें ?

रेणु : धत्, आप भी क्या मस्का लगा रहे हैं ? आपकी ऐसी मखौल वाली आदत मुझे जरा भी अच्छी नहीं लगती।

मनोज : अच्छी नहीं लगती कहना चाहती हो तुम ? (थोडा हँसते हुए) अच्छा हुआ बाबा अब से मैं तुम्हारे साथ कभी भी मस्का नहीं लगाऊँगा।

दूसरा दृश्य

मनोज : (अपना पर्स खोलते हुए) मैंने कल ही इस पर्स में पन्द्रह सौ रुपये रखा था। कितनी ही बार गिन चुका, पर हजार ही हैं। बाकी के पांच सौ कहाँ गये। कहीं किसी क्या पता किसी ने निकाल तो...? ज़रूर यह काम रेणु का ही होगा। रेणु (रेणु को बुलाते हुए)

रेणु : हाँ जी !

मनोज : तुम यहाँ आओ न जल्दी आओ।

रेणु : आई कह रही हूँ, अच्छा कहिए क्यों बुलाया आपने ?

मनोज : मैं तुम्हें एक बात कह रहा हूँ, गुस्सा मत करना।

रेणु : मैं गुस्सा नहीं करूँगी यह वादा तक आपसे कर चुकी हूँ।

मनोज : जो गलती कभी नहीं हुई वह आज हुई है ना।

रेणु : कैसी गलती ? क्या गलती खुलकर बताएँ।

मनोज : अच्छा सुनो मेरे पर्स से पांच सौ रुपये किसने निकाले ?

रेणु : यह तो सामान्य घटना है आप भी इसे पहली वार, सामान्य घटना मान कर चलें। क्या आपको अब पता चली पहले की घटना।

मनोज : पहले की घटना (आश्चर्य मानते हुए) क्या कहना चाहती हो रेणु तुम ?

रेणु : नहीं नहीं पहले से ही आपको ध्यान रखते आना चाहिए था कहने का मतलब।

मनोज : देखो रेणु, यह काम और किसी से नहीं हो सकता, एक दो तीन नहीं हो सकता तुम इसे अच्छी

तरह समझने की कोशिश करी समझी ?

रेणु : हरे शिव शिव क्या कह रहे हैं हजुर ? नहीं कैसे फट से कह दिया आपने हाँ ? वहुत ही निष्ठुर सपना दिखा दिया आपने आखिर उफ मुझे निकालना पडा तो चुपचाप निकालूंगी क्या ? हल्ला करके ही निकलूंगी ना । यह तो मेरा अधिकार है । फिर मुझे मेरा अधिकार प्रयोग करने में किस चीज का डर ? यदि डर मानें भी तो फिर व्यवहार चलेगा क्या ?

मनोज : तो फिर किसने निकाला किसने ? इस तरीके से घर व्यवहार एकदम नहीं चलेगा, नहीं चलेगा, नहीं चलेगा । तुम इन बातों पर खुद ही विचार करो ।

रेणु : ऐसे कहें, वैसे कहें जिधर से भी हो वही बात मेरे माथे ही मढ़ देते हैं । आप है ना, इतना समझाने बुझाने पर भी आपको मुझ पर विश्वास नहीं हुआ ?

मनोज : नहीं तुम खुद ही कहो तो अब ऐसा होने पर मैं क्या करूँ ?

रेणु : मुझे क्या कह रहे हैं आप ? इस तरह आँख वाँख मत दिखाइए हाँ, मुझे तनिक भी अच्छा नहीं लगता । यह गलती मुझसे नहीं हुइ है मैं आपसे पहले ही कह चुकी थी ना अब तो आपकी बातें सुनने पर मेरा कनपट्टी आगबबूला हो गया । अब मैं आपसे क्या कुछ हो कहूँ समझना तो दूर की बात वही घर चलाकर रहनेवाली को दबाकर भी क्या सकता है मुझे तो अब दिक लगने लगा ।

मनोज : अच्छा चलो तुमने नहीं किया मैने माना इतना होने पर नहीं हुआ तुम्हे पर ।

रेणु : पर क्या तुम्हें सब पता है यही आप कहना चाहते हैं ना ?

मनोज : तुम जो भी कहो पर फिर भी यह बात तुम्हारे सिवा और कोई नहीं जानता ।

रेणु : इस प्रकार नाना प्रकार के दोष लगाएंगे तो फिर मैं...

मनोज : मायके जाकर रहूँगी यही कहना चाहती हो ना तुम तुम्हारी मर्जी मुझे मायके जाने की धमकी सुनाने की जरुरत नहीं ।

रेणु : आप ऐसे ही घुमा फिरा के बातें करते हैं तो मैं क्या करूँ ?

मनोज : (मन ही मन) बीते कल अ'फिस जाते वक्त मेरे पाँकेट में पांच पांच सौ के तीन नोट थे । आफिस के मित्र ने उधार मांगा था वह तो कल ही चुक्ता कर दिया। (सोचते हुए) सच में रेष्टारेण्ट में नाश्ता का पैसा भी मित्रों ने ही दिया, हाँ कहीं और जगह तो खर्च किया जैसा नहीं लगता बल्कि कहीं गिर गया हो मैंने जितना भी होश किया फिर भी मेरे घर में इस तरह चोरी करने वाला आदमी है ही कौन ?

रेणु : नहीं आपके पर्स से इससे पहले भी पैसा नहीं गुम हुआ है ऐसा तो नहीं आप जरा सोचिए तो

मनोज : नहीं इससे पहले मैंने इतना ख्याल ही नहीं किया था। पर ... .पर ... .आज।

रेणु : यहाँ है ही कौन ? यही आपको मेरे सर ही दोष चिपकाने के अलावा ।

मनोज : अच्छा लो बाबा हुआ मुझे माफ कर दो हुआ ना ।

रेणु : कहते वक्त दिल खोलकर कहना और अब माफी। मैं कौन हूँ जो आप मांफी मांग रहे हैं ? मैं सब समझ चुकी हूँ क्या यह सब कुछ नारी के प्रति सिर्फ और सिर्फ उपहास है अच्छा लो मैं जरा बाहर गई

तीसरा दृश्य

नौकर : (कुछ गुनगुनाते हुए कमरे में प्रवेश) हाँ सोने की चेन छुपा पाते तो गहने के नाम पर एक चेन तो होता । मैंने यदि चाहा तो यह काम मुझसे जरुर हो सकता है पर ऐसा करने से पहले सोचना चाहिए। (मन ही मन) नहीं मुझे यह काम नहिं करना चाहिए । इस घर में रहते मुझे कइ वर्ष हो गए आज तक बिर्खे के हाथ से एक तिनका तक नहीं गुम हुआ है। इसलिए ऐसी गलती मुझसे एकदम नहीं हो सकती । कोइ मेरा मन जांचने के लिए भी ता रख सकता है इसीलिए मुझसे यह काम नहीं हो सकता , नहीं हो सकता कहते हुए मालकीन को बुलाकर चेन टेबल पर है जैसी बातों का संकेत करता है।

रेणु : अरे क्या हुआ क्यों चिल्ला रहे हो ?

नौकर : चेन टेबल पर है यहीं टेबल पर रख दिया हूँ कहीं गुम न हो जाए ।

रेणु : क्या कह रहे हो बिर्खे ? धत् तुमसे भी कहीं ऐसी बात हो सकती है क्या तुम्हारे उपर मुझे पूर्ण विश्वास है फिर बिर्खे कितना ईमानदार है अगल बगल के घरवालों से कितना नाक फूलाकर चलती हूँ मैं, मुझे निश्चिंतता है क्या तुम ईमानदार हो ईस

वात पर अच्छा अब हो गया अपना काम पर जाओ तो ।

नौकर : जी हजुर ।

सास : बहू को बुलाती हुइ, रेणु, रेणु ।

रेणु : जी मां जी ।

सास : ईधर देखो तो ।

रेणु : क्यों बुला रही हैं मुमा ?

सास : कल एकादशी है ना । व्रत रखना होगा सुबह जल्दी मुझे जगा देना हाँ फिर सुबह जल्दी मन्दिर जा पाई तो लाईन में नहीं खड़ा होना पड़ेगा और भगवान का दर्शन करके जल्दी लौट भी पायेंगे । वात समझ में आई ना ?

रेण : समझी मां जी समझी मैं आपको उठा दूंगी हुआ ना आप चिंता ना करें।

सास : हमेशा बेटा घर के अन्दर घुसते वक्त मां ने खाना खाया कि नहीं कहकर पूछ्र करता पर आज इतनी देर होने पर भी उसकी आवाज मैंने नहीं सुनी है कहीं बीमार तो नहीं पर गया बेटा ।

रेणु : नहीं मां जी ऐसा कुछ भी नहीं हुआ ।

चौथा दृश्य

रेण : सुबह के समय सास को जगाती हुई) मां जी , मां जी जल्दी उठें कहती हूँ ।

सास : हाँ ओ हो हो करती हुई, आरे बहू ओ हो हो । किस तरह निंद लगी है झलफल में ही जाकर निपटा लेना था ।

रेणु : देर हो चुकी, जल्दी किया जाए कहती हूँ ।

सास : तो फिर साकार नहीं उठा है ?

रेणु : नहीं उठे हैं ।

सास : अच्छा तुम बेटे को उठाओ में नहाने चली ।

रेणु : जी मां जी ।

पांचवाँ दृश्य

रेणु : पति को जगाती हुई एजी उठिए ना कहती हूँ । मां जी के मन्दिर जाने का वक्त हो गया उठिए जल्दी ।

मनोज : जागते हुए ।

मां : नहाकर आती हुई श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारी

मनोज : आरे मां मंदिर जा रहीं हैं ।

मां : देर हो चुकी फिर पूजा का सामान भी कहाँ रखी है ? हरिशरण, हरिशरण, हरेराम बहू ने फिर से धूपवत्ती नहीं रखा ,बहू को बुलाती हुई, आरे बहू, बहू देखो तो तुमने जो फूल,प्रसाद रखा है उसमें धूपवत्ती ही नहीं है ।

रेणु : आरे रख दिया जैसा तो लगा था ये लीजिए मां जी ।

मनोज : ईसी से मैंने मां की भूलने की आदत है कहा क्या ।

मां : अच्छा हो गया अब मैं मन्दिर चली हाँ । हरिशरण ।

रेणु : (चाय टकराती हुई) चाय लिया जाए 'चाय टेबल पर रखी है आपकी भूलने की वहुत आदत है। चाय पीजिए ।

मनोज : मसका लगाने के भाव से रेणु , रेणु यहाँ आओ ना प्लीज ।

रेणु : मसका मारकर बुलाना पड़ा क्या।

मनोज : प्लीज रेणु यह शंका तुम हटा दो ना ऐसे विचार करके यह रहस्य तुम्हारे सिवा और किसी को पता नहीं हो सकता जैसा लगा मुझे तो ।

रेणु : लम्बी सांसे भरती हुई, मैं क्या कहूँ आपसे है ना आप खुद ही सोचिए ना अनुमान कहीं लग जाए तो क्या कहूँ मैं तो ।

मनोज : रेणु पैसा गुम होने से भी मेरे घर के अन्दर ऐसा रोग घुसने पर मुझे चिंता हो रही है ।

रेणु : मन ही मन, बताउं या न बताऊं, पोल खोलें कि न खोलें आखिर मुझे बताना ही पड़ेगा ।

मनोज : तुम्हारा चेहरा पक्का ही कुछ कहना चाह रहा है जैसा लगता है मुझे पता चल गया मुझे इस वात का रहस्य तुम्हारे सिवा और किसी को भी पता नहीं कहें तो कोई फर्क नहीं पड़ेगा ।

रेणु : देखिए मैं आपको मौखिक रूप से विश्वास नहीं दिला सकती हाँ इतना कर सकती हूँ कि पैसा किसने निकाला यह प्रमाणित कर सकती हूँबस इतना होने पर हुआ ना आपको ।

मनोज : संभव हो तो आज ही कहो ना ।

रेणु : नहीं कल ही होगा उस वक्त की सम्पूर्ण घटना का दृश्य देखने पर आपको सम्पूर्ण ज्ञान हो जाएगा इतना ही है बस ।

मनोज : तुम कहती हो तो मैं स्वीकार करता हूँ । हुआ नहीं, घड़ी देखते हुए, ओहो देर चुकी है । अच्छा अभी मैं आफिस चला ।

रेणु : (पति को आफिस के लिए विदा करती हुई)

छठवां दृश्य

रेणु : सास को बुलाती हुई मांजी, मां जी ।

सास : क्यों बहू ।

रेणु : आज शाम हमें लौटने में देर हो सकती है सायद आप परेशान 'आप तो फिर परेशान होने लगती हैं ।'

सास : अच्छा-अच्छा भरसक जल्दी आना अकेले इतने बड़े घर में रहना बहुत बेचैनी होने लगती है ।

सातवाँ दृश्य

मां : (बेटे के कमरे में प्रवेश करती हुई और कोट के पैकेट में हाथ डालती हुई) आह! आज तो बेटे के पैकेट में इतना सारा पैसा है कितना विश्वासी है मेरा बेटा ।

रेणु : मां जी ने ही आपके जेब से रूपए निकाल कर अपनी पुरानी सूटकेस में रखा है । समझे आप । मां जी का यह रोग आज का रोग नहीं है बहुत पुराना हो चुका । आपको अब जा के पता चला है ।

मनोज : नहीं रेणु, वास्तव में मैंने गलती मां की नहीं देखी ।

रेणु : बेटे को मां की गलती कैसे दिखाई दे ,गलती तो जितना भी हो आप सिर्फ मेरा देखते हैं ।

मनोज : वात ऐसी नहीं है क्या रेणु हमने कभी भी मां को खर्च करने के लिए कहकर पैसा दिया है क्या, अच्छा तुम खुद ही कहो मां का हमारे अलावा और कौन है ही? कौन देगा मां को लिए ऐसे खर्च करने के लिए पैसे इस बारे में हमने कभी सोचा है क्या जरा बोलो तो ?

रेणु : वो तो है ।

मनोज : क्या इस घर की सम्पत्ति में मां का कोई हक नहीं ?

रेणु : वो तो मैं कहाँ ऐसा कहती हूँ तो अधिकार तो जितना हमारा है उतना ही मां का भी है ना ।

मनोज : हाँ रेणु, वास्तव में गलत सोच हमारी है हमें मां के प्रति ऐसा सोच रखना ही नहीं चाहिए रेणु, अच्छा चलो चलें पहले मां से हमें माफी मांगनी चाहिए चलो चलें ।

आठवाँ दृश्य

मनोज : दरवाजा खोलते हुए मां के कमरे में प्रवेश।

मां : मुझे पता है बेटा सबकुछ पता है तुम दोनों मेरे उपर कैसा शंका किया और क्यों माफी मांगने आए हो सब पता है ।

रेणु : मां जी हमें माफ कर दीजिए मां जी ।

मां : हाँ बहू मैंने तुमलोगों के खर्च में कटौती हो, और अपने संतान के लिए संपत्ति सुरक्षित हो ईस भावना से ऐसा कर्म की हूँ। अब बहू भी खर्च करे और बेटा भी खर्च करे फिर संतान के लिए कौन सोचकर रखेगा ? कम से कम मैंने तुम्हारी यह आदत छूटे यह सोचकर ऐसा काम किया हे । यह लो इस वक्से में रख दी हूँ ले जाओ ।

मनोज : मां आप महान हैं, हमने आपके प्रति जो सोच रखकर गलती किया वह गलत है। मां आपने अपने ही संतान का भला हो कहकर किए गए इस काम के कारण हमारी आँख खोली । मां हमें क्षमा कर दीजिए मां ।

मां : मैंने तुमलोगों को क्षमा किया मुंह से ही । क्या कहना होगा? अब आज ही तुम लोगों को यथार्थ भी बता देने का विचार की थी और मन ही मन माफ भी कर चुकी थी ।

बेटा : मां आज आप कितनी महान ।

मां : अच्छा हुआ हुआ अब अपने काम में लगो । मुझे फूसलाने की जरूरत नहीं है। अब भावी संतान के लिए अभी से ही पैसे बचाने की आदत डालो। अनावश्यक खर्च भी नहीं करना चाहिए अच्छा मैं खुश हूँ नहीं हुआ अब ।
(हंसती हुई)

अनुवादक : पूनम झा

माँ का प्यार

गोपीकृष्ण ढुंगाना

(एक पुरानी चारपाई के ऊपर पुरानी तोशक और रजाई पड़ी हैं। उसी चारपाई के ऊपर एक प्रौढ़ महिला सीता वेदनायुक्त आवाज में आह। आह।' करती हुई लेटी हुई है। एक छोटी सी लड़की जिसका नाम रोमी है, उसी चारपाई के समीप में बैठकर माँ के चेहरे को एकटक ताकती रहती है। उसका बड़ा भाई रामे निराशा के साथ अंदर प्रवेश करता है।)

रामे : माँ ! आपकी तबीयत कैसी है ? (समीप जाकर माँ के ललाट पर हाथ रखता है।)

सीता : मैं ठीक हूँ बेटा। कितनी चिन्ता है तुम्हें मेरी ? कुछ खाया तुमने ?

रामे : मैं तो अपने दोस्तों के साथ खा ही लेता हूँ माँ। पर आप और छोटी बहन क्या खाएँगे ? आपको तो दवा भी नसीब नहीं हुई है अभी तक।

सीता : तुम तो वहुत खयाल रखते हो मेरा, बेटा ! पर जिसे ज़्यादा खयाल रखना चाहिए वो तो कुछ करता ही नहीं।

(कुछ पल दोनों चुप रह जाते हैं।)

राम : माँ ! तुम तो कहती थी न, मनुष्य बहुत दयावान होते हैं ?

सीता : क्यों, क्या हुआ बेटा ? किसने दया नहीं दिखाई तुम पर ?

रामे : दिन भर रास्ते के किनारे भीख माँगते बैठा रहा, कुछ नहीं मिला। मुश्किल से दो-चार रुपये मिले। आज सात दिन हो गए। टाइ-सूट पहनकर हजारों धनी लोग गुजरते हैं। पर पैसे देने में तो ... ..।

सीता : (गुस्से से) मैंने तुम्हें भीख माँगकर मत खाना और भीख के पैसे से दवा मत खरीदना कहा था न ?

राम : पर मैं क्या करूँ माँ ? आप को इसप्रकार से बिस्तर पर पड़ा मैं देख नहीं सकता। मुझे रोने का मन होता है माँ। आपको क्या हुआ है माँ ? क्या हुआ है ?

सीता : क्या कहूँ कि मुझे क्या हुआ है ? कभी डॉक्टर को तो दिखा ही नहीं पाई हूँ। तेरे पिता को तो कमाए हुए पैसों से शराब पीना ही ठीक है। बिना पैसे के कौन डॉक्टर देखेगा ? कौन मुझे अस्पताल ले जाएगा ? बिना पैसे के कैसे मिलेगी दवा ?

रामे : (माँ के समीप बैठता है और धीरे से पैर दबाता है। माँ मैं फिर से माँगने चला जाता हूँ।

रोमे : माँ ! जोर से भूख लगी है। (सिसकते हुए।)

रामे : छोटी बहन भी भूख से रो रही है। आप भी तीन दिनों से भूखी हैं। मैं जाता हूँ माँ।

सीता : मत जाओ बेटा। भीख की रोटी क्या रोटी ? इससे तो भूखों मरना अच्छा है। जब तक मैं स्वस्थ थी, हाथ कभी नहीं फैलायी। आखिर अब तब दवा देखने को नसीब नहीं हुई है। आओ, मेरे पास बैठ जाओ। तुम्हारे पिता कुछ लाए तो खाएँगे।

रामे : पिताजी दवा नहीं लाएँगे माँ। देखिए छोटी बहन भूख से रो रही है। वो रोती है तो मुझे भी रोना आता है। अब तो मैं बड़ा हो चुका हूँ माँ। मैं आप लोगों को पालूँगा।

सीता : कितना करते हो मेरे लिए बेटा ? तेरे बाप को परवाह नहीं। कहने पर भी सुनते नहीं। मैं मर गई तो ज़रूर किसी और से विवाह करेंगे वो।

रामे : सही कहा माँ आपने ? पिताजी को हमारी परवाह नहीं। कितना कहें उन्हें। मैं अब निकलता हूँ माँ। **(माँ की बात को अनसुना करते हुए माँ और छोटी बहन को छोड़कर रामे दरवाजे तक पहुँच जाता है। रामे निकलने ही वाला था कि सुवास का प्रवेश हो जाता है। शराब से मस्त लड़खड़ाते हुए वह शोर मचाते हुए खाली हाथ झोपड़ी में घुस जाता है। बाप की बात सुनकर रामे उदास हो जाता है और दरवाजे के समीप छुप जाता है।)**

सुवास : रामे ! ओ रामे ! खाना बनाया ?

(रामे अनसुना करता हुआ जमीन पर बैठ जाता है। रोमी भी अपने बाप की आवाज सुनकर रोना छोड़ देती है। उसे पता है रोने पर उसका बाप और अधिक पीटेंगे। सीता भी उनसे बोलने से तो नहीं बोलना ही अच्छा होगा सोचकर दूसरी ओर करवट बदलती है।)

सुवास : अरे ! इस घर के सब लोग मर गए क्या ? किसी की आहट तक सुनाई नहीं देती।

(सुवास सीता के बिस्तर पर जाकर बुलाता है।)

सुवास : ओए सीते ! तेरे बेटे ने खाना नहीं बनाया क्या ? किधर मर गया वो ?

सीता : आप को तो कोई मतलब ही नहीं, बेचारा वो क्या बनाएगा ? कुछ होता तो वह भी कुछ खाता। मेरे लिए दवा लाए क्या ? सब्जी क्या लाए हैं ? कुछ है ही नहीं तो बेचारा क्या पकाएगा ?

रोमी : (चुपचाप से माँ के बगल में आती है।), माँ ! बहुत भूख लगी है। मैं क्या खाऊँ ?

सीता : तुम्हारे पिता को तो शराब से ही फुर्सत नहीं है। न तुम लोगों को कुछ खाने को मिल रहा है और न ही मुझे दवा।

तुम्हें क्या चाहिए ? ले लो (थप्पड़ लगाते हुए)। घर में आया नहीं कि मेरी शिकायत माँ से करती है ? (अत्यधिक भूख से शिथिल रोमी अपने बाप के थप्पड़ से जमीन पर गिर जाती है। वह सिसकने लगती है। रामे बहन को गोद में ले लेता है और प्यार से सहलाने लगता है।)

रामे : पिता जी ! आपकी बुद्धि कब खुलेगी ? आपको हम किसी पर प्यार नहीं है। इस बेचारी की क्या गलती थी कि भूख मिटाने के लिए खाना माँगने पर थप्पड़ खाना पड़ा ? माँ कितने दिनों से बीमार पड़ी हुई है। आप को तो माँ के मर जाने पर आनन्द आएगा शायद।

(सीता जो रजाई ओढकर सोई हुई थी उसकी आँखों से अविरल आँसू बहते हैं। कुछ कहना चाहती है पर कहती नहीं। रोमी को गोद मे उठाकर रामे अपने भूखे पेट पर हाथ रखते हुए माँ के बगल में बिस्तर पर बैठ जाता है। बहन को माँ के समीप रख देता है। उधर शराबी बाप भी अकेला महसूस करते हुए वहीं गिर जाता है।)

रामे : माँ ! रोमी को अपने साथ सुलाना।

सीता : पर क्यों ? तुम कहाँ जाओगे ?

रामे : माँ ! मैं भीख माँगने जा रहा हूँ। किसी ने दिया तो चावल और सब्जी लेकर आऊँगा। हम सब भूखे हैं।

सीता : मैं तुमसे पहले से कहती आ रही हूँ कि भीख माँगकर कुछ मत लाओ। मत जाओ बेटा।

रामे : नहीं माँ ! मुझे जाना ही होगा। माँग कर मुझे कुछ न कुछ खाने लिए लाना ही होगा। मैं आपको डॉक्टर के यहाँ ले जाऊँगा माँ। इसलिए भी मुझे जाना होगा माँ, मुझे भीख माँगनी ही होगी माँ।

सीता : रामे ! तुम मेरी बात क्यों नहीं मान रहे हो ? अब तो तुम ने भी मेरी बात मानना छोड़ दिया ?

रामे : माँ ! मैं आपका आज्ञाकारी बेटा हूँ। आपकी नहीं सुन रहा हूँ ऐसी बात नहीं है माँ। भूखे रहने से तो माँगकर ही सही, कुछ खाना होगा। छोटी बहन भूख से रोते-रोते सो गई है। मैं जा रहा हूँ माँ।

(रामे अपनी माँ को एक बार देख लेता है और घर से बाहर निकल जाता है। सीता कुछ बोल नहीं पाती है, वह अपने हाथ से अपना ही चेहरा नोचने लगती है। सूर्य अस्त हो जाता है। अंधेरा शुरू होने लगता है।)

पर्दा गिरता है

अनुवादक : डिल्लीराम शर्मा संग्रौला

पुरस्कार एवं सम्मान समारोह

रामकुमार पण्डित क्षत्री

पात्र :
१.प्रवीण
२.दधीचि
३.राघव
४.मोदनाथ
५.रेशम
६. पुष्कर
७. राधेश्याम
८. अन्य दर्शक (महिला, पुरुष और वालबालिकाएँ)

दृश्य १

(सहृदयी साहित्य समाज के द्वारा पुरस्कार और सम्मान समारोह का आयोजन किया गया है। एक विशाल हॉल की दीवार में टँगे बैनर से यह स्पष्ट हो रहा है। बैनर के नीचे पंक्तिबद्ध सात कुर्सियों में से एक कुर्सी खाली पड़ी है। अन्य ६ कुर्सियों पर संस्था के अध्यक्ष के अतिरिक्त सम्मानित एवं पुरस्कृत साहित्यकारों की टोली बैठी हुई है। उस कक्ष के उत्तर-पश्चिम की दिशा में एक सजा हुआ ऊँचा टेबुल और उसके ऊपर माइक लगा हुआ है। माइक्रोफोन पर साहित्यकार प्रवीण अपना मंतव्य रख रहे हैं। उनकी छाती से ऊपर का भाग मात्र दिखायी पड़ रही है। मंच के आगे दर्शक दीर्घा में लोगों की उपस्थिति सामान्य ही है। आंशिक कुर्सियाँ खाली पड़ी हैं।)

प्रवीण : (ऊँची आवाज में बोलते हुए) - आदरणीय वरिष्ठ साहित्यकार एवं उपस्थित सज्जनवृंद। सबसे पहले मैं इस साहित्यिक संस्था के पदाधिकारी एवं पुरस्कार तथा सम्मान चयन टोली को इस बात के लिए धन्यवाद देना चाहता हँ कि इन्होंने मेरी साहित्यिक सेवा को मान्यता प्रदान कर मुझे सम्मानित करने का कार्य किया। यथार्थ में मैंने सम्मान पाने की नीयत से कभी लेखन कार्य नहीं की है। मेरे लेखों के कुछ शब्द किसी के लिए शिक्षाप्रद होकर वह यदि उसे अपने जीवन मे. उतार पाता है तो मैं उसे ही अपने लिए सम्मान की बात समझता हूँ। यहाँ मैं किसी का नाम लेना नहीं चाहता पर इतन्री बात रखने की जुर्रत करता हूँ कि पुरस्कार पाने के लिए नगद राशि खर्च करने वाले व्यक्ति को भी मैं इस सभा में देख रहा हूँ। पर मैं उस प्रकार का पाखंडी साहित्यकार नहीं हूँ, जो पुरस्कार और सम्मान पाने के लिए रुपये खर्च करता हो।

(दर्शक दीर्घा से ताली की गड़गड़ाहट सुनाई पड़ती है।)

मुझे हमेशा ही अपनी निर्भर लेखनी के ऊपर विश्वास रहा है। अतः इतना कहते हुए मैं अपनी बातें यहीं समाप्त करता हूँ और साहित्यकार दधीचि को माइक्रोफोन पर आने लिए आमंत्रित करता हूँ जिनका नाम मेरे बाद अपनी राय व्यक्त करने के लिए टंकित है।

(दर्शक दीर्घा में पुनः ताली की गड़गड़ाहट होती है।)

दधीचि : (शांत और शालीन स्वर में) सभाध्यक्ष एवं उपस्थित सज्जनवृंद। मैं आप लोगों के सामने अपने दो शब्द रखने की अनुमति चाहता हूँ। वैसे तो हाथ में माइक आ जाने पर अपना इतिवृतांत बताने में घंटों बिताने वाले साहित्यकारों की यहाँ पर कमी नहीं है। पर मैं न तो उस श्रेणी का साहित्यकार हूँ और न ही पुरस्कार दाताओं की चरणवंदना करने वाला व्यक्ति। यहाँ पर उपस्थित कम से कम पाँच-सात व्यक्तियों को तो यह जानकारी होगी ही कि नेपाली नौलो पुरस्कार पाने के लिए उसके दाता नयनमणि के पैर पड़ने और अनुनय-विनय करने

वाले कौन-कौन थे ?

(इनकी बातों को दर्शकगण एकचित्त होकर सुन रहे हैं । उधर खाली कुर्सियों पर बैठने वाले श्रोताओं की संख्या बढ़ती जा रही है ।)

कुछ देर पहले ही साहित्यकार मित्र प्रवीण ने रुपयों से पुरस्कार खरीदने वालों की बातें कीं । मुझे लगा कि कहीं वे मेरे लिए ही तो यह नहीं कह रहे हैं । यदि आप लोगों में से किसी को भी मेरे द्वारा एक रुपया भी खर्च किये जाने का प्रमाण मिलता हो तो मैं लिखना छोड़ दूँगा । पुरस्कार का महत्त्व तो तब होता है जब पुरस्कार पाने के बाद पाठकों के बीच गर्व से चला जा सके और वे लोग सम्माजनक दृष्टि से देखा करें । उस पुरस्कार का क्या महत्त्व यदि कोई यह कहे कि अमुक साहित्यकार ने पुरस्कार पाने के लिए रुपये खर्च किया है । इतना कहते हुए और मुझे पुरस्कार के योग्य समझने वाले निर्णयकर्ताओं और इस संस्था के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ। अब मैं साहित्यकार मित्र राघव को अपने मंतव्य के लिए आमंत्रित करता हूँ। धन्यवाद ।

(दर्शक दीर्घा से ताली की गड़गड़ाहट सुनाई पड़ती है ।)

राघव : (मध्यम स्वर में बोलते हुए) मैं भी मित्र दधीचि की तरह सभाध्यक्ष एवं उपस्थित सज्जनवृंद को संबोधन करते हुए अपने दो शब्द रखना चाहता हूँ। उन्होंने जाते-जाते यह कह ही डाला कि 'पुरस्कार पाने के लिए प्रदाताओं की चरण वंदना और अनुनय-विनय करने वाले साहित्यकार' । उनकी बातों का सुनकर मुझे लगा कि वह ये बातें मेरे लिए ही तो नहीं कर रहे हैं ? (दर्शक दीर्घा से हँसी की आवाज सुनाई पड़ती है ।) एक बार मैं अपनी चर्चित उपन्यास के लेखन के क्रम में जब उसके मध्य में पहुँचा तब पात्र की अवस्था की चर्चा करते-करते उसके साथ मैं भी काफी देर तक रोता रहा । क्योंकि जब मैं लिखने बैठता हूँ तब मैं अपने पात्रों के साथ इतना करीब हो जाता हूँ कि कभी हँस लेता हूँ तो कभी रो लेता हूँ । उस बात को जानकर या उस स्थिति को देखकर यदि उन्होंने मुझे पुरस्कार के लिए भी रोते-धोते देखा हो तो यह उनका दृष्टिदोष है। वास्तव में मैं पुरस्कार पाने के लिए न तो कहने - सुनने वाला व्यक्ति हूँ न ही नातावाद या चाकरीवाद में विश्वास रखता हूँ। जबकि इस प्रकार के कई साहित्यकार यहाँ विद्यमान हैं । सिर्फ पुरस्कार पाने के लिए ही नहीं, पुरस्कार से संबंधित निर्णायकमण्डली में समावेश होने के लिए भी दौड़धूप करने वालों की भी यहाँ कमी नहीं है। भले ही उन्हें संबंधित विषय का ज्ञान हो या न हो । अब आप पूछेंगे कि इस प्रकार के व्यक्ति, कैसे लोगों को ये पुरस्कार देंगे ? तो जनाब इस श्रेणी में वे लोग आयेंगे जिन्होंने लिखने से अधिक शोर-शराबों के कारण वाहवाही लूटी हो या उस प्रकार के निर्णायक के निकट के व्यक्ति होंगे या अन्य वर्ग के । यहाँ मुझे एक बात रखने का दिल कर रहा है । राष्ट्रीय स्तर का पुरस्कार देने वाली एक संस्था है जो प्रतियोगिता आयोजन करती है । उसमें लगभग दो-ढाई सौ प्रतियोगी ही भाग लेते है. । यदि आप उस संस्था के विगत इतिहास को देखें तो किसी वक्त वहाँ हजारों प्रतियोगी भाग लिया करते थे । पर आजकल प्रतियोगिता में जो कृत्रिमता आई है, उसकी वजह से वह संख्या दो-ढाई सौ मे ही सिमट गयी है । उन दो-ढाई सौ प्रतियोगियों में भी वास्तविक प्रतिस्पर्द्धा दलों के निकटवर्ती साहित्यकारों में से दस लोगों के बीच ही कराई जाती है और आदिवासी, महिला, दलित, पिछड़े क्षेत्र के नाम से पुरस्कारों का वर्गीकरण किया जाता है । अब देखिये, साहित्यकारो.की योग्यता के संदर्भ में भी समानुपातिक व्यवस्था । रांम । राम। राम । प्रतिभा निर्धारण के संबंध में भी क्या कोई समानुपातिक प्रणाली की सोच लेकर प्रतिस्पर्द्धा के लिए उतरेगा ? कितनी लज्जास्पद और हास्यास्पद बात है यह । उस प्रकार की निर्णायक मण्डली में उन्हीं दलों के समर्थक होते हैं जिनके लिए विषय के ज्ञाता होने की आवश्यकता नहीं । एक-दो रचनाओं के प्रकाशन के आधार पर अमुक दल उसे ज्ञाता बना देता है । कितनी विडंबनापूर्ण स्थिति है । अब बताइए उस प्रकार के पुरस्कार का महत्त्व क्या होगा ? (उनके द्वारा इन बातों को नाटकीय शैली में रखे जाने पर दर्शक दीर्घा में हँसी के गुब्बारे फूटने लगते हैं । दर्शकों की संख्या बढ़ने के कारण कुछ लोग दीवार के सहारे खड़े दिखायी पड़ते हैं ।) मुझे पुरस्कार एवं सम्मान के योग्य देखने वाले निर्णायक मण्डल और संस्था के सदस्यों के प्रति धन्यवाद व्यक्त करता हूँ। मुझे दो शब्द रखने का

अवसर दिये जाने के लिए भी धन्यवाद कहते हुए अब मैं माइक मेरे दायें भाग में विराजमान साहित्यकार मोदनाथ जी को यहाँ आने के लिए निमंत्रित करता हूँ।

(दर्शक दीर्घा से ताली की गड़गड़ाहट आती है।)

मोदनाथ : (ऊँची आवाज में) उपस्थित सज्जनवृंद को मेरा हार्दिक अभिवादन। यह भी वतानी है कि चाहना किस बात की ? दर्शक दीर्घा में मुसकुराहट की लहर दिखायी पड़ती है)। हाँ, तो मेरे पूर्व वक्ता मित्र ने पुरस्कार पाने के लिए पैरवी और चाकरी करने की बातें कीं। यह सब उन्होंने कहीं मेरे संबंध में तो नहीं कही ? मै. राजनीति करने वाला व्यक्ति, स्वभाव से ही चिकनी-चुपड़ी बातें करने का आदि हूँ। मुझे यह बात अच्छी तरह मालूम है कि मैं यदि मक्खनवाजी में उतर जाऊँ तो पाठक वर्ग मुझे फिसला देंगे। अभी तो मैं उन पात्रों को धन्यवाद देना चाहता हूँ जिन्होंने मुझे पुरस्कार के योग्य देखा और मैं इसे पा सका। मैं साहित्यकार और नेता दोनों हूँ, अतः माइक के आगे खड़ा हूँ। आप लोग सोच रहे होंगे कि यह व्यक्ति बहुत दर तक बोलेगा। पर नहीं, मैं दो मिनट से अधिक नहीं बोलूँगा। देखिये, पुरस्कार पाने के लिए साहित्यकार लोग क्या क्या नहीं करतें। पैरवी, मक्खनबाजी, खरीद-फरोख्त, रोना-धोना, अनुनय-विनय और अन्य कई सारी बातें। छीः, छीः, छीः। कितनी विकृतियाँ ! मैं इन सारी विकृतियों को निर्मूल कर दूँगा, क्योंकि मैं नेता वर्ग का आदमी हूँ। (दर्शक दीर्घा से हलकी सी हँसी की आवाज आती है।) मुझे एक बात और कहनी है। संयोग से मेरे वाद मेरी दायीं ओर वैठे श्रीमान् रेशम जी के बोलने की वारी है। अतः यह प्रश्न उन्हीं के लिए है। आप सभी को यह जाकारी होगी कि मैने पचासों दशक तक साहित्य की सेवा की है। लेकिन शायद आप और आपकी संस्था की आँखों में मोतियाबिंद पड़ा था। अब जब आपने अपनी संस्था को बचाने हेतु रोना-धोना किया और मैंने रिश्वत विना की अपनी कमाई के दो लाख रुपये आपकी संस्था को दानस्वरूप प्रदान किया तब आपने उस घटना के दो महीने बाद मेरा अभिनंदन किया। क्यों ? क्या आपने वह अभिनंदनपत्र उस पैसे के एवज में दी ? प्रत्येक दिन प्रातः काल जब मेरी दृष्टि उस अभिनंदनपत्र पर पड़ती थी तब मुझे यह सोचकर ग्लानि हुआ करती थी कि यह अभिनंदनपत्र मुझे दो लाख के एवज में दिया गया है। इस प्रबल सोच के कारण मैंने कल ही उस अभिनंदनपत्र को जलाकर राख में बदल डाली। (लंबी साँस खींचते हुए)। इतना घोर अपमान ! दो लाख रुपये न दे पाने तक मैं अभिनंदन के योग्य न था। आइए, अब जवाब दीजिये। आप सभी को धन्यवाद, नमस्ते।

(दर्शक दीर्घा से तालियों की गड़गड़ाहट के साथ सीटी की आवाज सुनाई पड़ती है। कुर्सियों पर बैठे कुछ दर्शक उठकर जाने लगते हैं, तो जो अब तक खड़े थे, वे उन खाली कुर्सियों पर बैठने लगते हैं।)

रेशम : (मलीन स्वरमें) मेरे मुँह की बातें मेरे पूर्व वरिष्ठ साहित्यकारों एवं नेताओं ने छीन ली हैं। फिर भी संबोधन के क्रम में मैं अपनी बातें रख रहा हूँ। साहित्यकार मोदनाथ जी, हम लोगों ने दो वर्ष पूर्व ही आपका अभिनंदन करने का फैसला कर लिया था। (मोदनाथ अपने निकट के साहित्यकार के कानों में फुसफुसाते हुए कह रहे हैं -'तो आज के इस प्रकार के कार्यक्रम पर पाँच वर्ष पहले की तारीख तो डाल ही सकते हैं। फुसफुसाहट सुनने वाले साहित्यकार मुसकुराते हुए शिर हिलाकर अपनी सहमति व्यक्त कर रहे हैं।) पर आपको आमंत्रित कर इसे प्रदान करने का अवसर नहीं मिला था। ... इसके लिए क्षमा चाहता हूँ। देखिये। हम लोगों ने जो कहा था उसे कर दिखाया है। कई लोग एक लाख की राशि का पुरस्कार अपने पास ही रख कर सिर्फ प्रमाणपत्र पुरस्कार विजेता को देते हैं। पर हम लोगों ने नगद राशि तो नहीं न रखी। वैसा करने की आवश्यकता ही नहीं आई। (दर्शक दीर्घा से अट्ठहास सुनायी पड़ती है।) इससे अधिक मुझे कहने की आवश्यकता नहीं लगती। अब अपनी बाते. समाप्त करते हुए मैं पुरस्कृत मित्र पुष्कर जी को माइक पर आने का आग्रह करता हूँ और मै. विश्राम लेता हूँ। धन्यवाद। (दर्शक दीर्घा में तालियों की गड़गड़ाहट होती है।) हाँ, मुझे एक बात याद आ गयी। (माइक छोड़ने से पूर्व पुनः माइक में बोलते हुए देखकर दर्शकों में हँसी फूटने लगती है।) नेता जी ने तो मुझे कई बातें सुना दी। अब आपकी बारी है, सनिए। क्यों आप अपने ही कार्यकर्ताओं को चुनचुन कर पुरस्कृत करते हैं ? क्या देश में एक भी

योग्य साहित्यकार नहीं है ? स्वयं सँयोजक होकर क्यों एक अशक्त कार्यकर्ता को सैकडों संस्थाओं से एक-एक कर सम्मानित कराया ? एक ऐसे व्यक्ति के ऊपर कागजी प्रमाणपत्र और दोसल्ले का भार क्यों थोपा, जो दवाई न खरीद पाने के कारण छटपटा रहा है ? समाज और देश में परिवर्तन की लहर फैलाने की बातें करने वाले के मन में यह बात क्यों नहीं उपजी कि सौ लोगों के प्रमाणपत्र और दोसल्लों के ऊपर खर्च होने वाले एक-दो लाख रुपये की राशि यदि उस अशक्त को प्रदान की जाती तो उस राशि से वह अपना इलाज करा पाता । इसका जवाब है आपके पास ? दूसरों को सलाह देना तो आसान होता है । मुझे पता है कि मेरी बातों का आपके पास जवाब नहीं है । एक शिशु के समान मूत्र की तात्कालिक गरमाहट का सुख भोगने की प्रवृत्ति को त्यागिए और वास्तविकता का सामना कीजिए । आपके माध्यम से बहुतों की भलाई होगी । सुदूर पश्चिम में जन्में होने की हैसियत से पुरस्कार पाते है और शोर मचाते हैं । जय हो ।

(इतना कहने के बाद वे अपनी कुर्सी पर जा बैठते हैं । (दर्शकों की तालियों से सभा कक्ष गूँज उठती है । कई दर्शक नेता जी के चेहरे का रंग बदलते हुए देखकर उन्हें निहारने लगते हैं । उधर पिछले भाग की कुर्सियाँ खाली हो उठंती है ।)

पुष्कर : (शालीन स्वर में) मंच पर आसीन प्रबुद्ध जन एवं दर्शकों को मेरा अभिवादन । जाते-जाते मित्र रेशम ने पुरस्कारदातृ संस्था के द्वारा नगद राशि स्वयं रखे जाने और प्रमाणपत्र मात्र दिए जाने की बातें की । कहीं इस प्रकार की गतिविधि आज के कार्यक्रम के आयोजक संस्था में तो नहीं हुई ? मुझे तो शंका उत्पन्न हो रही है । जो भी हो, मैं सम्मानित हुआ हूँ और इसके लिए नगद राशि की आवश्यकता नहीं थी । मैं धन्य हूँ। मुझे सम्मानयोग्य समझने वाले निर्णायकमण्डल और संस्था के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ ।

(इसी बीच साहित्यकार नेता मोदनाथ देरी होने का संकेत करते हुए सभी लोगों को नमस्कार करते हुए मंच से उतरते हैं । पुष्कर इस बात की परवाह किए बगैर बोलने का क्रम जारी रखते हैं ।)

आज इस प्रकार सम्मानित होने का अवसर पाने पर मुझे अपनी साहित्य सृजना को गति प्रदान करने की उर्जा प्राप्त हुई है । हौसला मिला है । मेरी कामना है कि इस संस्था की इस प्रकार की गतिविधि में वृद्धि होती रहे । स्रष्टा लोग सम्मानित होते रहें और पाठकों को स्तरीय सामग्रियाँ पढ़ने को मिलती रहे ।

यह भी खुशी की बात है कि इस संस्था ने जीवित अवस्था में ही साहित्यकारों को पुरस्कार और सम्मान प्रदान की है । बड़ी-बड़ी संस्थाओं के भेजे मक्खियों के शिर के समान छोटे होते हैं । कथित बड़ी संस्थाएं मरणोपरांत पुरस्कार और सम्मान प्रदान करते हैं। अब बताइए, मृत्यु के २-४ वर्ष उपरांत पुरस्कार प्राप्त करने का क्या महत्त्व होगा पाने वाले को ? पुरस्कार और सम्मान तो खाश बात हुई, पर यदि पुरस्कार के बदले मृत्यु होने वाले स्रष्टा की पत्नी ने किसी बच्चे को जन्म दी होती तो कितनी अममानजनक बात होती ? (इस बात से दर्शक दीर्घा में हँसी के गुब्बारे फूटते हैं) । इतना कहते हुए मैं अपनी बातें यहीं समाप्त करता हँ और अंतिम वक्ता के रूप में मेरी दायीं ओर आसीन संस्था के अध्यक्ष महोदय राधेश्याम जी को माइक पर आने को आग्रह करता हूँ ।

राधेश्याम : (गंभीर स्वर में) इस पुरस्कार और सम्मान वितरण समारोह में उपस्थित सभी पुरस्कृत एवं सम्मानित साहित्यकारों एवं हमारे निमंत्रण को स्वीकार करते हुए उपस्थित होकर कार्यक्रम की शोभा और गरिमा बढ़ाने वाले समस्त महानुभावों को मेरा हार्दिक अभिवादन है । सर्वप्रथम तो मैं उन सभी साहित्यकारों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जो पुरस्कार और सम्मान ग्रहण करने के लिए यहाँ तक पधारे हैं ।

पूर्व वक्ता ने हमारी पुरस्कार पद्धति के ऊपर शंका व्यक्त की है । पर मैं इतना अवश्य कहना चाहूँगा कि हम लोग वास्तव में अन्य के समान नहीं हैं। पारदर्शी तरीके से तीन पुरस्कार विजेताओं को लिफाफे और प्रमाणपत्र और अन्य तीन साहित्यकारों को सिर्फ प्रमाणपत्र प्रदान की है । यह बात आप लोगों के सामने धूप के समान स्पष्ट है ।

(इतना कहते ही दर्शक दीर्घा से एक महिला की आवाज आती है- क्या हमारे देश में महिला साहित्यकार नहीं हैं ? क्यों इन ६ साहित्यकारों में एक भी महिला नहीं हैं ? - इस प्रश्न को सुनकर दर्शकगण एक दूसरे का मुँह ताकने लगते हैं । उधर दर्शक दीर्घा से दर्शकों का निकलना शुरु होता है ।)

(इस प्रश्न को सुनकर राधेश्याम कहने लगते हैं-) वास्तव में इस सोच के साथ काम करते हुए कि कार्यक्रम में कोई त्रुटि न हो, फिर भी कोई न कोई कमी या त्रुटि रह ही जाती है। आपकी बात इसकी साक्षी है। जल्दबाजी के कारण महिलाओं के नाम के ऊपर ध्यान ही नहीं पहुँच सका। अगले वर्ष इस त्रुटि को मिटाने पर ध्यान दिया जायगा।

हाँ, दूसरी बात यह है कि आप लोगों को भी हम आयोजकों के प्रति धन्यवाद व्यक्त करना चाहिये, क्योंकि हम लोगों ने अन्य के समान चर्चित साहित्यकारों को पुरस्कृत कर स्वयं चर्चा में आने की चाह नहीं रखी। न ही हाल के चुनाव में विजयी नेता को सम्मान कर उनकी चापलूसी की। देखिये, यहाँ सभी प्रतिभावान् साहित्यकार हैं। न तो कोई राष्ट्रकवि है, न महाकवि, न आख्यान शिरोमणि और न ही नव निर्वाचित प्रतिनिधि। जो भी हैं, नए युग को एक दिशा प्रदान करने की क्षमता रखने वाले महारथी ही हैं। किताबों की संख्या बढ़ाते हुए लिखते रहने पर गणुात्मकता की चिंता न करने वालों की परवाह नहीं की है। सर्वसाधारण पाठक तो अधिक पुस्तक लिखने वालों को ही मूर्धन्य मानते हैं, पर इस मामले में हम सतर्क रहे हैं। हम लोगों ने इस बात पर ध्यान देने का काम किया है कि यदि किसी ने एक ही पुस्तक निकाली है और वह वजनदार और सारगर्भित है तो वह महान है। आजकल हम देख रहे हैं कि धर्मविरोधी पुस्तकों को भी बड़े-बड़े पुरस्कारों से नवाजा जा रहा है। लेकिन हम लोगों ने उस प्रकार की पुस्तकों के लेखकों को पुरस्कार देने की बात तो छोड़िए, इस सभा की बैठक तक के लिए अयोग्य ठान रखी है।

(दर्शक दीर्घा में तालियों की गड़गड़ाहट सुनाई पड़ती है।)

इसके अतिरिक्त हमने कुत्ते, बिल्ली की तरह लार टपकाने का काम भी नहीं किया। यह बात मैने वो दूर दर्शक दीर्घा में बैठे साहित्यकार महोदय को देखकर कही है। मुझे उनका नाम लेने की आवश्यकता नहीं है। आप लोग स्वयं भी जानते हैं। अपनी संस्था के पुरस्कार से स्वयं पुरस्कृत होने वाले स्रस्टा हैं वे महोदय। पर आज यहाँ सम्मानित और पुरस्कृत होने वाले सभी साहित्यकार इस संस्था से बाहर के हैं। हमें अपने निर्णय पर गर्व है।

(दर्शक दीर्घा में तालियाँ बजती है।)

समय के ऊपर ध्यान देते हुए पुरकृत और सम्मानित होने वाले साहित्यकारों ने अपने-अपने मंतव्य संक्षेप में पेश की। इसके लिए उन्हें पुनः : धन्यवाद। उनका महत्त्व मंच के बदले उनके पुस्तक के पन्नों से आँका जाना चाहिये। उन लोगों की विद्वता और दर्शन उनके लिखे पुस्तकों में पर्याप्त रूप से पाये जाते हैं। अतः घंटों बोलकर कार्यक्रम को लंबे समय तक खींचने का कोई अर्थ नहीं होता। अब आप ही देखिये, आज के इस विशाल कार्यक्रम में संस्था की ओर से मेरी मात्र उपस्थिति है। उद्घोषक के न आने के कारण अतिथि महोदय स्वयं ही अपने बाद के वक्ता साहित्यकार महोदय को माइक पर आने के लिए आमंत्रित करते रहे।

(दर्शक दीर्घा में हँसी की लहर फैलती है। सभा कक्ष आधी खाली हो उठती है।)

सभा का जिस सहजता के साथ संचालन किया गया, उसके लिए भी आभार व्यक्त करता हूँ। सभी उपस्थित महानुभावों के प्रति भी धन्यवाद प्रकट करते हुए अंत में सभी से आग्रह करता हूँ कि इसके बाद चायपान का जो संक्षिप्त कार्यक्रम है, कृपया उसमे. भी शामिल होकर हमें कृतार्थ करें। अब मैं इस कार्यक्रम के समापन की घोषणा करता हूँ।

(ताली बजाते हुए दर्शकगण अपनी-अपनी कुर्सी से उठने लगते हैं। उसी बीच एक युवक दूसरे युवक के कान में फुसफुसाते हुए कहने लगता है-

'वह जो महिला मंच पर किसी महिला को न रखने बात कर रही थी न, वह तो पुरस्कार की भूख मिटाने के लिए अपनी अस्मिता तक को ताक पर रखने से बाज नहीं आती।

दूसरा युवक : तुम्हें यह सब कैसे पता ?

पहला युवक : उस महिला और पुरस्कारदातृ एक अन्य संस्था के प्रधान को मेरे भाई ने एक रिसोर्ट में आपत्तिजनक स्थिति में पाया था। विश्वास न हो ता फोटो दिखाऊँ।

दूसरा युवक : अन्य लोगों की नजर उन दोनों पर पड़ते देखकर)- चुप कर जा। चुप।)

पर्दा गिरता है।

अनुवादक : प्रकाश प्रसाद उपाध्याय

एकाङ्की

आँधी

रामेश्वर राउत मातृदास

नहीं होगा, बिलकुल नहीं होगा, बिलकुल ही नहीं होगा। ऐसे गँवारू तरीके से भी होगा ! हालात तो देखो। एक बार की जिंदगी है, जैसे भी है, चलने दो कहकर मैं तो हाथ पर हाथ धरकर बैठ नहीं सकता । उस टुटपूँजिए को देखो तो, नोटों की गड्डी पर बैठकर मजा लूट रहा है। देश -विदेश की यात्रा उसके लिए पनघट की सैर के समान हो रही है। जानते हो, यह देश मर्दों को मारकर नामर्दों को उठाने की जगह है। यहाँ सज्जन, विद्वान और ईमानदार लोगों को सदैव मुरझाते हुए रहना पड़ता है। घनघोर अन्याय और विडम्बनाओं से भरी हुई ऐसी जगह पर क्या मूल्य और कैसी मान्यता ? जिसकी लाठी में जोर हो भैंस उसी की हो रही है। विधि के हाथों को उलटा बाँधकर मचाई जा रही उदंडता का जो नंगा नाँच हो रहा है उसे देखकर भी ...उफ...

(गहरी साँस खींचते हुए सौरी सीटी बजाती है। सूत्रधार चुप हो जाता है। संस्कार, सभ्यता, सहनशील, सनातन सभी एक दूसरे का मुँह देखने लगते हैं, पर कुछ बोलते नहीं। दर्शकगण सीटी बजाते हुए शोर मचाने लगते हैं।)

संस्कार : देखो सौरी, यह चिल्लाने, चित्कारने या शोर मचाने से इस संसार में कुछ नहीं होने वाला । कुछ पार नहीं लगेगा।

सौरी : (भुँझलाते हुए) यह बात तुम्हें ही नहीं, इस धरा के खर-पतवार तक को भी पता है। अधिक होशियार बनने की कोशिश ना करो तो ही बेहतर हो।

संस्कार : इसके ऊपर भूत सवार हो गया है क्या ?

सौरी : मुझ पर भूत सवार हुआ हो तो हो। भूत चढ़े या प्रेत, तुझे इससे क्या मतलब ?

संस्कार : मुझे सबसे मतलब है और रखता भी हूँ। आज हम और हमारे समाज के साथ-साथ स्वर्ग से सर्वोन्नत हमारा यह महान देश भी यदि देखते-देखते रसातल पर पहुँच रहा है तो इसका कारण यही है।

सौरी : यही है का मतलब ?

संस्कार : जो मुँह बाँ करते ही बातों के तात्पर्य को समझने की क्षमता रखती हो उसके लिए क्या इन सभी वाक्यों के अर्थों को बताने की आवश्यकता होती है ?

सौरी : होती है। इसकी आवश्यकता होती है। तुम्हारे अंदर के भाव, तुम्हारी समझ के अनुसार जानना चाहती हूँ।

संस्कार : मेरे पास कुछ नहीं है ! कुछ नहीं है मेरे पास। यह हवा, पानी, मिट्टी और पानी की तो उपज हूँ मैं भी। लेकिन आज, आज मैं अपने ही राष्ट्र और समाज में दुश्मन की संतान के रूप में जीवन बिता रहा हूँ। सौरी, आज मैं चौतरफा अन्याय और अपमान की बाढ़ में फँस रहा हूँ। जिस पर मुझे हँसी भी आती है।

सौरी : पर यह अन्याय और अपमान तुम्हारी अपनी ही भूल के परिणाम भी तो हो सकते हैं। सोचो और पीछे मुड़कर देखो। अन्याय और अपमान की दबाई यदि अपने बुते के आधार पर मिल जाय तो खुशी की लहर उत्पन्न हो जायगी, समझे संस्कार।

संस्कार : अपने को ज्यादा लालबुझक्कड़ मत समझो सौरी। मैं भी इसी पृथ्वी का आदमी हूँ। तुम जितना जानती हो, उससे कुछ कम या ज्यादा मैं भी जानता हूँ।

सौरी : सही है। सचमुच सही है। यह कलियुग है। कलह युग भी कह सकतें हैं। आजकल किसी की

भलाई के लिए कुछ कहना, 'आ बैल मुझे मार' उक्ति को चरितार्थ करना होता है।

संस्कार : औरों के विषय में बोलने की आवश्यकता ही क्यों आ पड़ी सौरी ? ओ सूत्राधर महोदय, तुम भी तो कुछ बोलो। चुप्पी साधकर क्या तमाशा देख रहे हो ?

सूत्रधार : मुझे कुछ नहीं बोलना है। जो कुछ बोलना है, बोलो ! तुम्हीं लोग दिल खोलकर बोलो ! बोलने का तंत्र तुम्हीं लोग न लाये हो ! खूब बोलो !

सौरी : अरे वाह, कमाल हो गया ! हमारे ऊपर ही इतना बड़ा प्रहार ! क्या बोलने की जिम्मेदारी सिर्फ हम लोगों की है ? यदि ऐसा है तो बाँकी अन्य लोगों के मुँह का क्या काम ?

सूत्रधार : यह बात तो उससे पूछो जिसने इन्हें बनाया है। मुझे तो उस गाँव के रास्ते से कोई वास्ता नहीं होता जहाँ मुझे जाना नहीं हो।

सौरी : आजकल इस बुढ़उ को क्या हो गया है ? क्यों इतनी सनक ? इनके टूटने से बचे दाढ़ आदि को भी तोड़ दिया जाय क्या ? फिर तो बोलने की जरुरत ही नहीं पड़ेगी इस बुड्ढे को। चादर ओढ़कर पड़ा रहेगा एक कोने पर कुँदे की तरह।

सूत्रधार : तीतर की तरह मेरे सामने ज्यादा चीं-चीं मत करो। बोलने वालों को यदि बोलने की आजादी है तो न बोलने वालों को भी न बोलने की आजादी है। हिंग लगे न फिटकरी। जो मुँह में आये बोल दो। इस तरह बकबक करने से क्या होता है यहाँ ? हुई है कुछ उपलब्धि ?

सौरी : हा ऽ हाऽ हाऽ ! उपलब्धि ! सूत्रधार बोले बिना रहे तो लाभ ही लाभ, उपलब्धि ही उपलब्धि होगी ? क्या हमारा जीवन सिर्फ व्यक्तिगत लाभ, हित और उपलब्धि भर के लिए है ? इससे आगे हमारे आगमन का कोई औचित्य है क्या ? हम लोगों के ऊपर कोई सामाजिक दायित्व और जिम्मेवारी नहीं है ? क्या यह अमूल्य जीवन सिर्फ पाने और खाने भर के लिए है ? इस समाज में ऐसें ही नामर्दो और कायरों की अधिकता के कारण हमारा महान देश नेपाल का प्रतिष्ठापूर्ण उच्च शिर आज तक गौरवशाली न हो सका है, समझे सूत्रधार। एक सजग नागरिक की हैसियत से राष्ट्र और समाज के हरेक कदम में जागरुकता और जिम्मेवारी की झलक होनी चाहिये। यह मेरा मत है सूत्रधार।

सूत्रधार : ओहो सौरी, तुम्हारे अंदर तो भयावह झँझावात देख पा रहा हूँ मैं। झँझावात तो क्या ज्वालामुखी का फुटता लावा ही है, ज्वालामुखी का लावा।

सौरी : इस झँझावात और ज्वालामुखी का फुटता लावा सिर्फ मेरे अंदर ही नहीं, वरन् इस समाज के असंख्य लोगों के हृदय में फुट रहा है सूत्रधार।

सूत्रधार : फिर तो यह बात सभी के लिए, समाज के लिए, राष्ट्र के लिए भी सुखद संकेत नहीं है सौरी।

सौरी : नहीं हो सकता है, पर समझकर भी सत्य को छिपाकर बैठने वाले क्या समझें इन बातों को !

सूत्रधार : यहाँ किसी के लिए कोई नहीं है सौरी। कहा जाय तो यह लूटेरों, डाकूओं और बेईमानों का केंद्र है। ये सभी यहाँ सिर्फ लूटने और बटोरने के लिए आये हैं। इसके लिए ही यहाँ अनेक नाटक और नौटंकियाँ हो रही हैं। हम निरीह लोग इन्हीं संगठित और सीमित दुष्टों के द्वारा मंचित नाटकों को देखते हुए अपना बहुमूल्य समय बिताने को वाध्य और विवश हो रहे हैं। हम लोगों को वाध्य और विवश बनाया जा रहा है। विवश ! विवश ! विवश ! ... दाईं, बायीँ, चारों ओर दृष्टि घुमाते हुए धीरे-धीरे सभ्यता का प्रवेश होता है।)

सभ्यता : मैं तो सच में ही निष्काषित की जा चुकी हूँ। इस समाज ने मुझे फूटी हुई कौड़ी के मूल्य के समान तक का नहीं समझा। अकारण अन्याय और अपमान का भार ढोकर इस समाज के साथ चिपककर बैठने की चाह अब नहीं है मुझे। दुर्भाग्य , यह दुर्भाग्य ही तो है। मक्खी के पित्त के समान छोटा चित्त लेकर बैठने और जीने का कोई अर्थ नहीं रहा। यह सोचकर अब मै आ गयी सूत्रधार। मैं आ गयी।

सूत्रधार : तुम्हें आना हो आओ, जाना है जाओ। यहाँ किसी के होने या न होने के साथ किसी को कोई सरोकार नहीं है। किसी के होने या न होने से इस संसार को कुछ फर्क पड़ने वाला भी नहीं है। लेकिन एक बात-एक तत्व अनिवार्य है। यदि वह तत्व नहीं रहा तो यह चराचर जगत-तुम, हम, तू, आप और हुजुर- में से किसी का भी अस्तित्व और महत्त्व एक क्षण के लिए भी विद्यमान न होना निश्चित है, निश्चित। हम लोगों के न रहने पर भी उस तत्व की अनिवार्य उपस्थिति के लिए मैं दिन रात तपस्यारत हूँ, तपस्यारत।

सभ्यता : इसके लिए तो मैं भी अपने को न्यौछावर करने के लिए तत्पर हूँ सूत्रधार । मेरा प्राण तैयार है । सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय के इस तत्व की प्राप्ति के लिए स्वयं को समर्पित करने का मुझे भी अवसर दिया जाय । लेकिन वह अनिवार्य तत्व है क्या ?

सूत्रधार : यह अनिवार्य तत्व जीवन और जगत में किसी के द्वारा अलग किये जाने पर अलग नहीं होता, टूटता नहीं ।

सहनशील : (ऊँची आवाज में झल्लाते हुए) सभ्यता, ओऽ सभ्यता- तुम जिस तत्व के लिए न्यौछावर होने के लिए वचनवद्ध हो रही हो, उसके प्रति मेरा भी हताश समर्थन है । सौ की लाठी, एक का बोझ । सभ्यता, धर्म, न्याय और विवेक के पक्ष में समर्पित हो पाना जीवन के लिए सौभाग्य की बात है । इस चराचर जगत में जीवित और निर्जीव दो तत्व हैं । ये दोनों निरंतर रूप से अपने-अपने धर्म का पूर्ण रूप से पालन कर रहे होते हैं । धर्म को त्यागने पर त्यागने योग्य बातें कुछ नहीं रह जाती । धर्म को छोड़ने वाले का सर्वनाश निश्चित है । ऐसे लोगों के अस्तित्व और महत्त्व का कोई मूल्य नहीं होता । जीवन और जगत के मूल सत्व और तत्व ही धर्म है, धर्म । 'धर्मे हीना पशुभिसमानाः । धर्मो रक्षति रक्षितः ।' शास्त्रों की वाणी कभी भी मिथ्या प्रमाणित नहीं हुई है । अतः हम धर्म को छोड़कर नामर्दों और कायरों की भाँति एक क्षण, एक पल भी नहीं जी नहीं सकते । अतः सूत्रधार, मेरा जीवन धर्म की रक्षा के लिए हाजिर है, हाजिर ।

सूत्रधार : शाबाश सहनशील, शाबास । तुम्हारे जैसे ही जीवंत और साहसिक सुपुत्र और सुपुत्रियों के आगमन और उपस्थिति के कारण हमारे समाज के ऊपर कोई भी अँगुली उठाने की साहस नहीं कर पाया है । यह सच है कि पानी यदि पानी के धर्म का निर्वाह करना छोड़ दे तो वह पानी नहीं रहता । आग यदि अपना धर्म छोड़ दे तो वह आग कहलाने के योग्य नहीं रहता । समान रूप से हवा यदि हवा का धर्म त्याग दे तो हवा का अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है । 'स्वधर्मे निधनम् श्रेय परधर्मो भयावह' ही हमारे अस्तित्व का मूल दर्शन है सहनशील, मूल दर्शन ।

सनातन : जो धुन है तुम्हारी
जो चाह है तुम्हारी
उसे नजर घुमा घुमाकर देख रहे हैं
इस धरा के समस्त प्राणी

अनुवादक : प्रकाश प्रसाद उपाध्याय

एकाङ्की

देश प्रेम

रणुका भट्टराई

पात्र
देशभक्त, जेलर, पागल और नवयुवक
(जेल के भीतर एक छोटा सा बिस्तर, पानी पीने का वरतन और कुछ छोटे मोटे बरतन । एक कोने में वहुत सारे सामान । एक वृद्ध जेल के एक कोने में ठंडी धरती पर बैठा समय काट रहा है ।उस व्यक्ति का नाम देशभक्त रहता है । वो अपने अतीत को सिमेंट की धरती में खोजते हुए अकेले गुनगुना रहा है,बड़बड़ा रहा है ।)

देशभक्त : (अपने नजदीक रखे हुए मिट्टी के घड़े में से पानी निकालकर गिलास में डालते हुए,पानी को वहुत देर तक देखते हुए लम्वी साँस लेते हुए ... ..) उफ कुछ. इसी तरह से बहा मेरे साथियों का खून लेकिन गिलास नहीं भरा । माँ की आँखों में आँसू खत्म नहीं हुए ... । देश के लिए अभी भी खून पूरा नहीं हुआ है । मैं भी अपने साथियों की तरह मरना चाहता था शहीद होकर (लम्बी साँस लेते हुए) पर विडम्बना । आज इस ठंडी धरती पर बैठकर काल की घंटी का इंतजारकर रहा हूँ ।
(सीने पर हाथ रखते हुए) मेरे कुछ मित्र मंत्री बने तो कुछ शहीद हुए । कम से कम मैं भी शहीद ही हो जाता तो आज इस अवस्था में स्वयं को देखकर यूँ ग्लानि से रोना तो नहीं पड़ता । (पानी पीकर ग्लास रखते हुए)
इसी तरह कल मेरे प्यारे देश को पराये लोग निगल जाएँगे । मैं चुपचाप कैसे देख सकता हूँ । हे भगवान ! नेपाल की दुर्दशा हो रही है । १०४ वर्ष की लम्बी अंधेरी राणाकालीन रात को चीरकर सुबह तो आई लेकिन प्रजातंत्र सिर्फ नाम मात्र में सिमटकर रह गया । गरीब जनता को तो धूप भी नहीं लगी और नजदीक के लोगों को दिन में ही जलाकर अंधेरा बनाया गया । हजारों शहीदों का खून मिट्टी में मिला हुआ है । (अचानक उठकर चारों तरफ देखते हुए सूर्य से पूछने पहुँचता है- तुम सबके लिए बराबर हो न ? कहाँ है ? मेरे शरीर में धूप ? युग बीत गया प्रजातंत्र की धूप लगी ही नहीं ।
(मुँह को निराश बनाते हुए) धूप तो लगी नहीं और रात भी होने लगी है । ये कैसे काले बादलों ने घेर रखा है ?
(जेलर का प्रवेश)
(बृद्ध को बड़बड़ाते हुए देखकर जेलर गुस्से के स्वर में)

जेलर : क्या बड़वड़ा रहे हो ? इतने वर्ष हो गए काल नहीं आया क्या तुम्हारा ? करते समय सोचा नहीं तो अब पछताने से क्या काम ?

देशभक्त : (नजदीक के लोहे के डंडे को पकड़ते हुए जेलर की ओर देखते हुए) देखो बेटा ! मैं किसी के प्रति अन्याय करके, व्यक्ति को मारकर या राष्ट्रघातकरके यहाँ नहीं आया हूँ । (आकाश की ओर देखते हुए) मैं देश की सेवा करूँगा जब मैंने ये कहा तो मुझे जेल की सजा मिली ... ॥

जेलर : करने के समय में जो मन में आया वही किया और अब बेकसूर कहलाना चाहते हो । स्वयं को अच्छा दिखाने के लिए । मुझे तुम्हारी कोई बात नहीं सुननी है । चुपचाप बैठो बुड्ढे । हल्ला मत करो । जेलर चला जाता है ।

देशभक्त : (जेलर को जाते हुए देखता है) कैसे लोग हैं ? मानवता ही नहीं रह गई है । केवल आकार ही आदमी का, आखिर मैंने ऐसी कोई गलत बात भी तो नहीं कही है । किसे है देश की चिंता, मातृभूमि के प्रति प्रेम ... ..। सभी स्वार्थ में लिप्त हैं । यही कारण है कि आज भी शहीदों के खून ने शांति नहीं पाई है । नेपाल से शांति गुम हो चुकी है । आपस में बेकार का गृह कलह कर रहा है ।

पागल : (नेप्थ्य से) खूब-खूब शांति लाई। कहता था देश के लिए मरूँगा देश की चीत्कार सुनकर बैठा है ... धिक्कार है तुम पर ...।

देशभक्त : अब मैं क्या करूँ ? शरीर बूढ़ा हो चुका है बाहर निकल ही नहीं सकता। अगर मैं बाहर आ जाता तो अत्याचारियों और भष्ट्राचारियों को समाप्त कर देता।

(एक अपरिचित पागल का प्रवेश)

पागल : हि...हि...हि...हा...हा...देश को प्रेमकरने वाला देशभक्त ! देश की चिंता करके नहीं सोने वाले तुम। देश को प्रेम करके क्या मिलता है ? एक ही जैसी हालत हा...हा...ही...। फिर चिल्लाकर गुहार ! गुहार ! मेरा देश मेरी नेपाल माँ ‼ नेपाल को कोई अपहरणकर रहा है ... देखो न ... ..बचाओ ... .माँ की चीत्कार ... मेरा हृदयटूट गया। छोड़ो ... छोड़ो ... मैं जा रहा हूँ अपनी माँ को बचाने ...। (लोहे के डंडे को जोर से खिंचने का प्रयासकरते है, असफल होकर बैठते हुए जोर जोर से रोने लगता है, हाँ ... हाँ ... माँ ..माँ ...कहते हुए सर को पटकते हुए कुछ होश में आते हुए) देश को प्रेमकरता हूँ। न्याय देकर अन्यायी को सजा दूँगा जनता की भलाई करूँगा कहते देश के लिए लड़ते आज मुझे जेल की सजा हुई। बहुत समय बीता। इसी तरह समय बिताया। यदि औरों की तरह मैं भी गद्दारीकरना जानता तो कम से कम आज मैं भी चमचमाती गाड़ी में चढ़ता। कोई और माँ को ले जाए इसकी परवाह ही नहीं करता। नहीं नहीं मैं माँ को छुड़ाता। शत्रुओं को परास्त करता असल बेटा वनकर देश की रक्षा करता। (आँखों से आँसू निकालते हुए लड़खड़ाती अवस्था में ही देशभक्त की ओर मुड़ता है।)

पागल : ए तुम भी मेरे साथी लेकिन आज सिमेंट के ऊपर। हमारे साथियों ने हमें फँसाया और खुद मौज किया। ऐ बुड्ढे तुम भी अगर निकल पाते तो तुम भी वैसा ही करते। हा ... हा... ऐसा ही करना चाहिए तभी देशप्रेमी कहलाएंगे। (पागल चला जाता है।)

देशभक्त : केवल मैं ही नहीं। सच्चे देशभक्त देश प्रेम के लिए छटपटा रहे हैं। अकांत हो रहे हैं। लेकिन नेताओं को कोई फिक्र नहीं है वो तो राष्ट्रघाती महासंधि कर रहे हैं। माँ के अंगों को बेच रहे हैं। क्या वे लोग नेपाली ही हैं ? प्रजातंत्र आने के पहले राणा को जनता को जितना दुख देना था दिया। आने के लिए तो प्रजातंत्र आया भी और जनता दमन की जंजीर से मुक्त भी हुई लेकिन दुख से मुक्त नहीं हो पाई। तरह तरह का खेल रचाकर जनता को ढाल बनाकर रखा है। पंचायती व्यवस्था ने भी जनता को ही बलि का बकरा बनाया। न्याय नहीं दे सका और न ही शांति सुरक्षा दे सका। फिर आया २०३६-४६ एकबार फिर नेपाली जनता में खून की नदियाँ बहीं मगर खून का अर्थ नहीं रहा। उस समय के खून के छींटे आज भी सड़कों और गलियों में मिलते हैं। आज की अवस्था को देख रही है। जहाँ वो खून आज भी अपमान का घूँट पी रहा है।(अचानक से कान में प्रतिध्वनि आती है नेपथ्य से आवाज़ आती है।)

आवाज : गोली मारो ! गुहार ! गुहार ! मेरा नेपाल !

देशभक्त : ओहो मेरे सभी मित्र शहीद हो गए। (श्रद्धा से शीश झुकाते हुए मौन हो जाता है।) आज फिर बहुदलीय प्रजातंत्र आए हुए दस वर्ष हो गये मगर शहीदों के सपने साकार होने की तो बात ही छोड़ दी जाए शहीद के खून का मूल्य तक नहीं समझ पाए हैं। शहीदों के खून से सिंची मिट्टी में जो अन्न उगता है वही खाते हैं। शहीदों की मुस्कान में आज हँस रहे हैं नाच रहे हैं। कैसे भूल गए होंगे ? कैसा हृदय होगा ? कहीं पैसे ही का तो हृदय नहीं बना है ? पैसे के गुलाम हैं। जिसके लिए अपनी नेपाल माँ तक को बेचना चाहते हैं। कैसे कुपुत्र ... .? हे माँ तुम्हारे सच्चे सपूत तो कुछ मरे कुछ बाँकी जेल में आएं और कुछ कुपुत्रों के हाथ में देश आया जिन्होंने देश को छिन्न-भिन्नकर दिया। पता भी नहीं चलेगा किस समय राष्ट्र को टुकड़े-टुकड़े करके बेच देगें। (इतने में ही नवयुवक का प्रवेश होता है)

नवयुवक : देशभक्त के चिल्लाने की आवाज को वो कुछ देर बैठा सुन रहा था। देशभक्त के नजदीक जाता है। बाबा ! आपकी अन्तर आत्मा चिल्ला रही है। और भी कहिये मैं सुनूँगा। (नजदीक बैठता है।)

देशभक्त : (खाँसते हुए नवयुवक की ओर प्यार से देखते हुए) और सुनोगे बेटा ! तुम्हारा हृदय सुनने लायक है ? कहीं नेताओं की तरह नकली हृदय तो नहीं है ? अगर है तो मत बैठो जाओ यहाँ से। (हाथ से उसको हटाते हुए।)

नवयुवक : मेरा हृदय पहाड़ जैसा है । मैं सुन सकता हूँ बोलो बाबा ! (देशभक्त की ओर देखते हुए आग्रह करता है) मैं अतीत को जानना चाहता हूँ । आपके द्वारा दिखाये गए रास्ते पर चलना चाहता हूँ, औरों को भी चलना सिखाऊँगा । हाँ बाबा मैं भी देशप्रेम की आग में जल रहा हूँ ।

देशभक्त : मैं भी आज की इस अवस्था को देखकर छटपटा रहा हूँ । तुम यदि नेपाल माँ के बेटे हो तो माता के प्रति कर्त्तव्य को पूरा करो । समय बहुत कम है । अत्याचार ने सीमा लांघ लिया है । देश के कुछ अंग बिक गए हैं । नदी, नाले तालाब बिक चुके, नेताओं ने गद्दारी की, राष्ट्रघात किया । शहीदों के सपने को लात मारी । निर्दोष और निरपराध स्वर्ग जैसी माँ के साथ बलात्कार किया । अब सभी मिलकर उठो ! भाई-भाई मिलो । नहीं तो ये देश भी नहीं रहेगा । शेष भी नहीं रहेगा । नेपाली भी नहीं कहला सकोगे ... । घर, बस्ती, चारों दिशाओं से एक ही आवाज और उद्देश्य लेकर उठो ... । उठो ... देर हो चुकी ।

नवयुवक : कल को भूलकर आज मस्ती कर रहा है । भोग विलास में सब कुछ भूल गया है । राष्ट्रीयता की बात को पचा भी नहीं सकते । अपने कर्त्तव्य से युवा भटक रहे हैं । बहुत कम हैं जिन्हें देश की चिंता है या देश के प्रति प्रेम है । अब हम सभी मिलकर उठेंगे । अब अन्याय नहीं सहेंगे । एक चुटकी मिट्टी भी नहीं छूने देंगे । (युवक जोश से उठता है)

देशभक्त : (युवक को बैठने का आग्रह करते हुए) तुम्हें और बहुत कुछ सुनना है । पता है तुम्हें ? माता के कुपुत्र हमारे स्वाभीमान पर आँच उठाने का काम कर रहे हैं । नेपाल के इतिहास में वीर गोर्खाली की अपनी इज़्ज़त है लेकिन उन्हें बेइज़्ज़ती की थप्पड मार रहे हैं । हरेक राष्ट्र के समक्ष अपनी कमजोरी का प्रदर्शन करते हैं और झोली फैलाकर राष्ट्र का अपमानकर रहे हैं ये सभी । प्रत्येक नेपाली के सर को ऋण के बोझ से दबा दिया है । इतना ही नहीं बेटा ... । ... फूटफूटकर रोने लगा ।

नवयुवक : (उत्सुकता दिखाते हुए) अच्छा और क्या क्या किया है ? कहिये न बाबा ।..अपने हृदयको कठोर बनाइये ... दूसरे देश हमें नीचा दिखाते हैं कैसे बर्दाशत कर सकता हूँ । मैं सोच भी नहीं सकता ।

देशभक्त : और सुनो बेटा । (खाँसते हुए) इतना ही नहीं, हमारे सर्वोच्च शिखर सगरमाथा को उत्तर के लोगों ने अतिक्रमणकर लिया है और अब कहते हैं कि यह हमारा है । दूसरी ओर दक्षिणवाले शांति का दूत गौतम बुद्ध का जन्म हमारे देश में हुआ, ये कह रहा है । गौतम बुद्ध को विश्व भर में हमारे हैं कहकर दावा कर रहा है । हम हर क्षेत्र से दबते जा रहे हैं । धीरे-धीरे अर्थतंत्र की सुरंग खोदकर सूई बनकर भीतर प्रवेश कर रहे हैं और पूरे नेपाल को निगलने के लिए हाथी बनने के ताक में बैठे हैं । यहाँ नेता अपने अपने ताल पर नाच रहे हैं । बेसुरा राष्ट्रप्रेम ... पैसे में डूबा हुआ राष्ट्रप्रेम ।

नवयुवक : (आश्चर्यचकित) इतना सबकुछ देखकर कैसे कोई बैठ सकता है ? ऐसे नेपाली पर तो धिक्कार है । अन्याय करने से ज्यादा अन्याय सहना बहुत बड़ा अपराध है । वो तो एक नम्बर का पापी हुआ । लीजिये हम तो पापी हो गए । अब नहीं सहेंगे ।

देशभक्त : (नवयुवक की पीठ थपथपाते हुए) हम भी इस उम्र में ऐसे ही जोशीले थे । जोश में थे लेकिन आज ये गति है । अन्याय सहकर जीना पड़ा है । (आँसू पोंछते हुए)

नवयुवक : मत रोओ बाबा । मैं आपके सपने पूरे करूँगा ।

देशभक्त : (बीच में) छोड़ो बेटा । उन सपनों को सपनों में ही रहने दो । क्योंकि हकीकत में देखो तो अवस्था ये हैं अकाल में बेवजह हज़ारों निर्दोष जनता मरी । यहाँ ऐसे ही होता है । सत्य मरता है और असत्य राज करता है ।

नवयुवक : बाबा आप ये क्या बोल रहे हैं । मेरा मार्गदर्शन भी कर रहे हैं, फिर निराश क्यों कर रहे हैं ।

देशभक्त : हाँ बेटा ...शहीद के खून का उपहास करने के कारण मेरी आत्मा रो रही है ... हाँ बेटा तुम्हें करना पड़ेगा । गृह कलह करके नहीं, भाई भाई को मारके नहीं । देश को बचाना पड़ेगा । बम,गोली और पिस्तौल से अपने भाइयों का घर ध्वस्त नहीं करना है माँ को दुख देने वाले शत्रु को ध्वस्त करना पड़ेगा । माँ को बचाना होगा । यदि देश को ही नहीं बचा सके तो हमरा संघर्ष खाली जाएगा । बेटा ये संदेश जिसने देश की सत्ता परिवर्त्तन के लिए खून की होली खेली और जिसने बम बारूद में अपनी जान दे दी, उन सभी से कहो -पहले अपना घर बचाओ फिर अपने तरीके से राज करो ।

नवयुवक : जी बाबा । यही संदेश लेकर जाता हूँ । घर

अवश्य बचाऊँगा। अपनेपन और इज़्ज़त से बचाऊँगा और दूसरों को सिखाऊँगा। माँ को दुख, कष्ट से आजाद कर अत्याचारियों को नष्ट करूँगा। मैं देश के लिए संघर्ष करूँगा। मैंने आपसे जो कहा वैसा ही करूँगा।

देशभक्त : (युवक की आवाज के साथ देशभक्त आनंद की साँस लेता है ।)मेरा देश ... मेरी माँ ... .

नवयुवक : (चिंतित स्वर) बाबा। क्या हुआ ...। क्या हुआ ... (बेचैन होते हुए लेकिन देशभक्त ने प्राण त्याग दिए)।

नवयुवक : (रोते हुए) मैं आपके सपनों को पूराकरँगा बाबा। मैं अपनी माँ को बचाऊँगा। मेरा देश नेपाल ...। प्राणों से भी प्यारा नेपाल ...। मेरा देश ॥ (भाव विह्वल होते हुए)

और पर्दा गिर जाता है।

अनुवादक : कंचना झा

प्रेम

ललिता 'दोषी'

पात्र-पात्राएँ :

पल्लवी - २४ वर्ष
चन्दन - ३० वर्ष
मेनका - ४९ वर्ष
प्रश्ना - ५१ वर्ष
लक्ष्मण - ५६ वर्ष
बच्चा - ८ महीना

स्थान : रसोई घर
समय : ७ बजे प्रातः
महीना : माघ

(विशाल खुला रसोई कक्ष, कक्ष के अंदर गोलाकार डाईनंग टेबल, चारों ओर ६ कुर्सियाँ, डाईनंग टेबल के ही समीप फ्रिज, दीवार पर लटकते रैक पर थाली, प्लेट, गैस के चूल्हे से कुछ दूर दाल-मसाले आदि रखने की आलमारी, उसके ऊपर ओभन, एक सुव्यवस्थित दिखता रसोई कक्ष, गैस के ऊपर चाय की केटली रखते हुए मेनका अपनी ही धुन में गाती है ... ...)

मेनका : डाली के फूल की तरह टूटकर
भू-तल पर लोटने वाली है
जिन्दगी एक दिन तो
चिता में लेट जाने वाली है जिन्दगी
छोटी सी इस जिन्दगी को
सन्माँर्ग में हम लगाएँ
महिमा शिव की गाते-गाते
सारा जीवन हम बिताएँ ...
डाली के फूल ... ...

पल्लवी : (रसोई घर में घुसते ही झल्लाते हुए कहने लगती है) वाह, क्या प्रभु शिव-शिव का उच्चारण कर रही हो । 'मुँह में राम और बगल में छुरी' ! शिव के नाम का उच्चारण करने के साथ हृदय में भी उनका वास हो, तब न ... .

मेनका : (पल्लवी को देखकर खुशी व्यक्त करते हुए) अरे, आज तो उल्का दिखाई पड़ गई । अब तो मैं स्पेशल चाय बनाऊँगी अपनी बिटिया रानी के लिए ।

पल्लवी : (गुस्से के साथ) रहने दीजिए यह चिकनी-चुपड़ी बातें । मैं चाय-वाय कुछ नहीं पिऊँगी । तीन रात हो गई बिना सोये हुए । खुद तो कुम्भकर्ण की तरह खर्राटे लेकर सो जाती हैं, दूसरों से क्या मतलब ?

मेनका : (पल्लवी की ओर देखकर मधुर स्वर में) बिजली की कड़क के समान गरजती हो तो क्या कहूँ ? दो कदम की दूरी पर घर है, कभी आना-जाना नहीं । आज शायद इस बच्चे की रुलाई से खिंची चली आई ।

पल्लवी : मैं तो आदि हो रही हूँ अब इन हालातों की । कल कृष्णा देवी आंटी भी कह रही थीं- बेटा तुम्हारी आंटी को हमेशा पैसे की कमी रहती है । पता नहीं, किस सड़क छाप बच्चे को उठाकर ले आई है घर में, रात भर रोता रहता है । उसके रोने की आवाज से रात भर ठीक से सो नहीं पाती हूँ । ऐसा ही रहा तो पता नहीं, मैं कब बीमार पड़ जाऊँ ?

मेनका : कहने दो । तुम बैठो और आराम से चाय पियो । देखो, कहने वालों का मुँह तो बंद नहीं न कर सकते । स्थिति ऐसी ही हो गई है । सागर की आदतों से तो तुम वाकिफ ही हो । उसकी जिद के सामने ...

पल्लवी : (कुर्सी पर बैठकर चाय का कप अपनी ओर खींचते हुए) आप बात को इधर-उधर घुमाओ नहीं । सीधे कहिये न । भैया के वे बधिर दम्पति ... .

मेनका : बेटी, तुम दिल छोटा मत करना । रोने वाला वही गेहुँअन साँप का बच्चा है ।

पल्लवी : (चाय का कप टेबल पर रख आँसू पोंछते

हुए) मुझे अब से बेटी कहकर संबोधन करने की ज़रूरत नहीं है। मुझसे नजदीक अब वह गेहुँअन साँप हो गया आप लोगों के लिए ?

मेनका : बेटी, तुम बात समझे बिना उबल पड़ी। मैंने उस उस गेहुँअन से एक शब्द तक बात नहीं की है। सागर का पैर पड़कर वह 'कुछ दिन तक तो रहने दो' कहकर गिड़गिड़ाने लगा। उसकी बातों में सागर आ गया। क्या करता ? तुम्हीं बताओ ?

पल्लवी : (कुर्सी पर बैठकर गंभीर मुद्रा में) आप पगला तो नहीं गई हो ? उसके समान रईस आदमी को हमारे घर के नजदीक ? क्या अनर्गल बातें कर रहीं हैं आप ?

मेनका : अब दिवाला निकल गया है उसका। तुम्हारे आँसूओं का परिणाम होगा- ठेके के कारोबार में वह मार खा गया। सुंदर पत्नी के बहकावे में आकर उसने ठेके का पता नहीं क्या-क्या कारोबार किया, हर जगह उसे नुकसान ही होता रहा। इन हालात में पत्नी भी आठ महीने के बच्चे को छोड़ और सारे जेवरात उठाकर उड़नछू हो गई। चूहे के बच्चे के समान वह बालक भी पता नहीं कितने दिनों का मेहमान हो।

(चाची की बातों से पल्लवी एकटक देखती रही। इतने में ही पल्लवी की माँ प्रश्ना प्रवेश करती है।)

प्रश्ना : (हाथ की कटोरी टेबल पर रखते हुए) क्या खुसुरफुसुर हो रही है चाची और भतिजी के बीच ? जरा हम भी तो सुनें ? कहीं लड़ तो नहीं रही हो आंटी से ? हाँ बहन, मैं तो थोड़ी सी खटाई लेने आई थी।

मेनका : किस मुँह से कहूँ उस साँप के बारे में ? सागर का दिल कोमल है। उसके बहते हुए आँसूओं को देखकर उसका दिल पिघल गया। मैं तो कुछ सोच भी नहीं पाई। आप लोगों से सलाह-मशवरा करने के लिए आने की सोच ही रही थी, आप ही आ गईं। वैसे तो वह पापी, अब मणिहीन साँप के समान दिखता है।

प्रश्ना : उस साँप के दुर्दिन के संबंध में वीणा ने विस्तार से कहा था। मैने ही पल्लवी को सारी बातें नहीं वताई थी। कल ही की घटना के समान लगती है। सिर्फ पल्लवी मात्र का नहीं, हमारे भी दिल टुकड़े-टुकड़े हो गए।

मेनका : (छलछलाती आँखों से) वह गेहुँअन पल्लवी के दिल में जिस तरह घुसा था उसे देखकर चन्दन और पल्लवी का प्यार पहाड़ के समान मजबूत लगता था। पल्लवी ने भी जिन्दगी के इस लंबे डगर पर उसके साथ चलने की ठान रखी थी। पर ... ..

प्रश्ना : (लंबी साँस भरते हुए) पर उस गेहुँअन ने पल्लवी के अटूट विश्वास को भ्रम की संज्ञा दी। प्रेम के चरम विंदु पर पहुँचने पर पल्लवी को अग्निकुंड में धकेलते हुए उसने जो राह पकड़ी उसी का फल अब भोग रहा है वह पापी। लेकिन ऊपरवाला जो करता है, अच्छे के लिए ही करता है। पल्लवी को उसे बेहतर इंजीनियर लड़का मिल गया। अब तो अगले हफ्ते 'ठहरौनी की रस्म' भी पूरी हो जाएगी।

मेनका : क्या सोच रही हो बेटी ? कहीं उस गेहुँअन के संबंध में तो सोचने नहीं लगी ? तुम्हें सड़क समझकर रौंदता रहा, अब दो-तीन वर्ष के अंदर खुद सड़कछाप बन गया। उस नराधम को दरवाजे के अंदर घुसने नहीं देती। क्या करें, उस बच्चे पर तरस आ गई।

पल्लवी : (नरमी के साथ) आंटी, वह मेरे प्रेमी से अधिक भैया का जिगरी दोस्त है। भैया के कारण ही उससे मेरी पहचान हुई। मैं ही उस कॉलेज में गई जहाँ उसने पढ़ाई की थी। इतनी चोट मिलने पर भी मैंने उसके अहित नहीं चाही। हमेशा उसकी प्रगति की कामना करती रही। वह यहाँ आया है तो किसी साधारण चोट के कारण नहीं आया होगा। भैया भी विवश हो गए होंगे उसे यहाँ लाने के लिये। मुझे पता है कि भैया मेरे घाव में नमक छिड़कने का काम नहीं कर सकते हैं। यह मैं अच्छी तरह जानती हूँ। जब उसने मुझसे दूरी बनाई तब भैया ने भी उससे बातें करनी बंद कर दी थी। और मुझे समझाते हुए कहा भी था -' बहिन, मुझे पूरा यकीन था कि तुम दोनों फिर मिल पाओगे। लेकिन वह पाजी तुम्हारे दिल को समझ नहीं पाया। रूप का शिकार हो उठा पाजी। मुझे तो अब उसके सूरत से भी नफरत हो उठती है। मैं अब उससे कभी बातें नहीं करुँगा बहिन।' लेकिन एक बात सच है आंटी कि उसने अपने मुँह से मुझे कभी 'आइ लभ यू' नहीं कहा था।

मेनका : तुम्हारी बातों को सुनकर मुझे तो हैरानी होती है बेटा। ईद वह तुम्हें प्यार नहीं करता तो यहाँ बिल्ली की तरह दबे पैरों हमेशा क्यों आता रहता और उसकी नजर इधर-उधर तुम्हें क्यों तलाशती रहती ? उसके दिल की बातों को समझकर ही हम तुम्हें यहाँ

बुलाते । तुम्हें देखकर उसका खिलता चेहरा देखते ही बनता था । लेकिन जब उसकी मुलाकात उस चुड़ैल से हुई तब उसने इधर आना-जाना ही बंद कर दिया । और यहाँ तक कह डाला कि मैने प्यार किया ही नहीं था । मानवीय मूल्यों को कुचलने वाले उस पाजी को सबक सिखाना चाहिए था । पर क्या किया जाय ? पकड़कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये जाने पर भी गुस्सा शांत नहीं हो पाएगा ।

प्रश्ना : (मलीन आवाज में) अच्छा बहिन, थोड़ी सी खटाई दो तो मैं चलूँ । पता नहीं ऊपरवाले ने इन दोनों को इतना कोमल दिल क्यों दिया ? मुझे तो उसकी शक्ल याद आते ही लगता है पहाड़ टूटकर गिर पड़ा मेरे ऊपर । (दरवाजे से निकलते हुए) अच्छा तो मैं चली । हाँ बेटा, तुम भी जल्दी आ जाना, वरना कॉलेज जाने में देर हो जाएगी, कल नींद बिगड़ने के कारण पढ़ा नहीं पाई कह रही थी । आज फिर वैसा न हो ।

मेनका : अच्छा तो दीदी, आते रहना । उस पापी को आज ही निकाल बाहर कर दूँगी । बेटा चाहे कुछ भी कहता रहे । मैं अब अपनी प्यारी सी बीटिया की नींद खराब होने नहीं दूँगी ।

मेनका : ठीक है बहन ।

पल्लवी : अब मैं भी चलूँ आंटी । पर उसे घर से न निकालिएगा । मैं ही अपने सोने की जगह बदल लूँगी । रसोईघर में बच्चे के रोने की आवाज नहीं आती है ।

मेनका : ठीक है बेटा । पर दिल छोटा मत करना ।

पल्लवी : (दरवाजे से ऊँची आवाज में) थैंक यू आंटी ।

चन्दन : (बच्चे को गोद में लेकर बराण्डे में घुमाते हुए चन्दन की पल्लवी से मुलाकात होती है । अवरुद्ध स्वर में चन्दन कहता है) तुम्हें बुलाने को अधिकार तो नहीं है पल्लवी । फिर भी थोड़ी देर के लिए कमरे में चलो न प्लीज ।

(पल्लवी कुछ बोले बिना चन्दन के पीछे चल पड़ती है । कमरे की हालत देखकर पल्लवी का दिल पसीज उठता है । पेशाब के दुर्गंध से भरा कमरा, इधर-उधर बिखरे कपड़े, जूठे बरतनों के ढेर और पेशाब से गीले बिस्तर को देखकर पल्लवी उस पर बैठने में असहज महसूस होने पर भी बैठ जाती है ।)

पल्लवी : (लंबी साँस खींचते हुए) उफ ।

चन्दन : (संकोचशील होकर पल्लवी के पास पलंग पर बैठते हुए) पल्लवी ! वैसे तो मैं माफी माँगने योग्य नहीं हूँ, फिर भी क्षमायाचना करता हूँ- मुझे माफ कर देना । लोगबाग कहा करते हैं- नदी के तट पर बैठकर नदी की गहराई को मापा नहीं जा सकता है । अब यह बात सही लग रही है । दीये की रोशनी को देखकर उस पर फिदा होने वाली तितली बन बैठा मैं । तुमने मेरी इतनी बातें सुन ली, मैं धन्य हो उठा । (गोद के बच्चे को पल्लवी की ओर बढ़ाते हुए) थोड़ी देर के लिए सँभालो तो इसे, जरा मैं दूध बना डालूँ ।

(पल्लवी बच्चे को सँभालती है । चूहे के बच्चे के समान बालक को देखकर उसका शरीर सिहर उठता है । पल्लवी की आँखें चन्दन की आँखों से टकराती है । उसकी स्फटिक के समान चमकदार आँखें आँसूओं से भरी हुई थी ।)

पल्लवी : (बच्चे के माथे को स्पर्श करते हुए) अरे, इस बालक को तो तेज बुखार सा लगता है ।

चन्दन : पता नहीं क्या हो गया ? कल से दूध भी झटक रहा है । डॉक्टर के पास ले जाने के लिए पैसे भी तो नहीं है ।

मेनका : (बाहर से ही चिल्लाते हुए कर्कश स्वर में) पल्लवी , बाहर निकलो, जल्दी । इस सागर ने भी पापी इस गेहुँअन को घर में लाकर ... .

चन्दन : (बनते हुए दूध के ग्लास को डरते हुए छोड़कर बच्चे को सँभालता है) हाँ, मैं पापी गेहुँअन साँप ही हूँ पल्लवी । जाओ पल्लवी, जल्दी जाओ, नहीं तो आंटी मार डालेंगी । एक तो मुझे देखते ही आँखें लाल-पीली कर लेती हैं । पर सागर तो दिल का सागर ही निकला । किराया न दे पाने पर जब घरमालिक ने मुझे निकाल बाहर किया तो मैने कोई सहारा न देखकर सागर को बिलखते हुए फोन किया । वह तुरत ही मेरे पास आ पहुँचा । मैंने उसके पैर पड़ते हुए माफी माँगी । वह भी मुझे यहाँ, इस घर में लेकर आना नहीं चाहता था, पर कोई उपाय न देखकर ले ही आया । इस तरह हमारे प्राण तो बच गए, पर... ।

मेनका : (दरवाजे को जोर से धकियाते हुए) दरवाजा खोल उल्लू के पट्ठे ।

पल्लवी : (बच्चे की ओर देखकर) हमारी आंटी हैं ही इस स्वभाव की । चलो पहले बच्चे को हॉस्पिटल ले चलें ।

मेनका : (पल्लवी के हाथ को खींचते हुए) कह रही हूँ,

जल्दी निकल। ऐसे मक्कार के ऊपर दया दिखाना धिक्कार है। 'पल्लवी मेरे रूप और धन से प्यार करती है' कहने वाला यही दुष्ट है। अब जाना न प्रेम का मूल्य ! चलो, कहा मानो ! साँप को दूध पिलाने पर वह पलटकर डस ही लेता है।

पल्लवी : जरा देखो तो इस बच्चे की हालत आंटी। मैं इस मरने नहीं दूँगी। पहले इसे हॉस्पिटल ले चलें ... फिर।

चन्दन : (आँसूओं से भरी आँखों से)तुम जाओ पल्लवी। मुझे अपने पापों की सजा भोगने दो। सच में आंटी मैं मतलवी हूँ। मेरी हालत उस कौओ की तरह हो गई है जो घने कुहरे के बीच और अधिक काली दिखाई पड़ती है। मरें तो कैसे ? जिये तो कैसे ? यह गोद में न होता तो कब का न मर गया होता !

पल्लवी : (आँसू भरी आँखों से) मैं इस बच्चे को मरता हुआ नहीं देख सकती।

मेनका : (क्रुद्ध स्वर में) इस धरती से तुम्हारे जैसे अधम का बोझ कम होने से किसी को कुछ फर्क पड़ने वाला नहीं है। मोबाइल पर नंबर दबाते हुए) दीदी, जिजु को लेकर जल्दी आ जाओ। पल्लवी पगला गई, कह रही है- मैं चन्दन के बच्चे को मरने नहीं दूँगी। हॉस्पिटल ले जा रही है। आगे पता नहीं क्या-क्या करेगी ?

(लक्ष्मण और प्रश्ना दौड़ते हुए प्रवेश करते हैं। कमरे के अंदर आने पर पल्लवी की ओर लपकते हुए लक्ष्मण कहता है-)

लक्ष्मण : (क्रोधित होकर) जल्दी निकलो पल्लवी। यह आदमी दया के योग्य नहीं है। तुम्हारा इसके कमरे के अंदर होने की बात को भी पड़ोसी तुल दे सकते हैं। चलो, जल्दी चलो बेटा।

प्रश्ना : (रोते हुए) तुम्हारे जैसे आदर्श व्ईक्त ही घुटघुटकर मरते हैं। बच्चे को हम देख लेंगे। तुम चलो यहाँ से। इस पापी को अपने पाप का फल भोगने दो।

पल्लवी : पापा, चन्दन को अपने भूल का एहसास हो गया है। वह प्राईश्चत भी कर चुका है। फिर आप ही तो कहा करते हैं- प्राण लेने वाले से लाखों गुणा महान प्राण वचाने वाला होता है। मैं बहुतों को तो बचा नहीं पाई, पर इस बच्चे को ... ..

मेनका : (झल्लाते हुए) तुम क्या कह रही हो पल्लवी ? होश में तो हो ? इस गेहुँअन के चक्कर में कल कहीं वह इंजीनियर भी हाथ से निकल न जाय। तुम चुपचाप निकलो यहाँ से। जल्दी चलो।

चन्दन : पल्लवी मैं तुमसे माफी माँग रहा था, साथ नहीं। बच्चे को दे दो और जाओ तुम। मेरे लिए परेशान मत होओ। मैं तुम्हारे लायक नहीं।

पल्लवी : पापा, यह जान लीजिये, मैं धन-दौलत की ढेर पर भले ही क्यों न रहूँ, चन्दन मेरे दिल के कोने पर हमेशा बसा रहेगा। उसके प्रेम में भले ही स्वार्थ हो, पर मेरे प्रेम में स्वार्थ नहीं था। आज भी उसके लिए मेरे मन में प्रेम भाव है। (माँ की ओर देखते हुए) मम्मी ! मेरे कारण आपका शर झुक नहीं पायेगा। वरन् लोग कहेंगे कि प्रेम हो तो पल्लवी के जैसा। इस बच्चे को अगर कुछ हो गया तो मैं जिंदगी भर अपने को माफ नहीं कर पाऊँगी।

लक्ष्मण : (पल्लवी के पीठ को थपथपाते हुए) शाबास बेटी, शाबास। देखा न चन्दन पल्लवी का प्रेम। हम लोग भी इस अबोध बालक को मरते हुए देख नहीं सकते। आशा करता हूँ तुम इस पर भविष्य में डंक नहीं मारोगे।

चन्दन : (पल्लवी के पैरों को छूते हुए) आंटी, आपने ठीक ही कहा मैं गेहूँअन हूँ। साँप हूँ। पल्लवी साक्षात देवी निकली। मुझे माफ कर दो पल्लवी ... ... माफ कर दो।

पल्लवी : (पैरों को खींचते हुए) भूल सभी से होती है चन्दन। तुमने इसे स्वीकार कर ली। तुम धन्य हो। महान हो।

लक्ष्मण : (प्रश्ना की ओर मुड़ते हुए) मत रोओ प्रश्ना, तुम्हारी बेटी एक बालक को मौत के मुँह से निकाल रही है। इससे बड़ा धर्म और क्या हो सकता है ?

प्रश्ना : वह तो है। पर ... ..

पल्लवी : माँ की आँखों से आँसूओं को पोंछते हुए) मत रोओ मम्मी। पापा ठीक ही तो कह रहे हैं। धर्म ईश्वर की पूजा करके मात्र नहीं कमाई जाती है। उससे बड़ा धर्म तो औरों की आँखों की आँसूओं को पोंछने में है। भगवान भी तो ऐसे कामों से खुश होते हैं।

मेनका : धन्य हो बेटी तुम। (आँसू पोंछते हुए) प्रेम ऐसा होता है। अब जान पाई मैं।

चन्दन : (आँखों से आँसू टपकने लगता है) ईश्वर का दूसरा रूप ही है पल्लवी।

लक्ष्मण : हाँ, मेरी बेटी महान है।

प्रश्ना : अब चलो भी डॉक्टर के पास। देर हो रही है।

पल्लवी : हाँ मम्मी। चलो चलते हैं। तो चन्दन चलो।

अनुवादक : प्रकाश प्रसाद उपाध्याय

आँखें

शार्दूल भट्टराई

(मधुवनी गाँव का एक छोटा-सा घर। घर के सामने एक छोटा-सा असोरा और ओसारे के सामने थोड़ी-सी खुली जगह। ओसारे में बायीं तरफ एक छोटी-सी चौकी रखी हुई है और दायीं तरफ चटाई बिछाई गई है। सामान्य पहिरन में एक युवती दरवाजा खोलकर बाहर निकलती है। वह बहुत सुंदर है। उसके हाथ में झाडू है। वह ओसारा बहारने लगती है। उस घर से थोड़ी दूर सामने एक पगडंडी है। उस पगडंडी पर लोगों का आना-जाना लगा हुआ है। उसी पगडंडी पर चल रहा है एक पुरुष। वह चलते-चलते रुक जाता है। इधर-उधर देखने के क्रम में उसकी आँखें युवती की तरफ केंद्रीत हो जाती हैं। युवती ओसारा बहारने के बाद सामने की खुली जगह बहारने लगती है। पुरुष मदहोश होकर उस युवती की तरफ देखता रहता है। वह युवती की तरफ बढ़ता है। उसकी आँखें जमीन की तरफ नहीं बल्कि उस युवती की तरफ टिकी हुई हैं। आगे बढ़ने के क्रम में एक जगह ठेस लगने से वह गिरते-गिरते बचता है, फिर भी कुछ परवाह किए बिना आगे बढ़ता ही जाता है। वह युवती के सामने पहुंचता है। युवती अपने सामने एक अजनबी पुरुष को देखकर आश्चर्यचकित हो उठती है।)

पुरुष : (युवती से) हे युवती ! आंगन बहार रही हो ?

युवती : (बहारना छोड़कर एवं पुरुष की ओर देखते हुए) जी।

पुरुष : (युवती का चेहरा देखते हुए) बहुत अच्छा।

युवती : (पुरुष के चेहरे की ओर देखते हुए) माफ कीजिएगा, मैं आपको पहचान न सकी।

पुरुष : जी, मैं तो अजनबी हूँ।

(युवती दुविधाग्रस्त नजर आती है। पुरुष युवती को एक टक देखता रहता है।)

युवती : क्या आप कोई साधु संत हैं ?

पुरुष : नहीं।

युवती : फिर क्या हैं ?

पुरुष : मैं यायावर हूँ।

युवती : यहाँ किस काम से आये हुए हैं ?

पुरुष : घूमने के लिए मधुवनी आया था। मैं उस सामने वाले रास्ते पर चला जा रहा था, आराम करने की इच्छा हुई और इसिलिए रास्ते के करीब ही कोई शांत और एकांत जगह खोज रहा था। यह जगह मुझे मेरी इच्छा के मुताविक लगी। इसिलिए इधर ही चला आया।

युवती : अगर थोड़ा आगे और चले जाते तो आराम करने के लिए अच्छी जगह मिल जाती।

पुरुष : कैसी अच्छी जगह ?

युवती : वहाँ पीपल के पेड़ के नीचे एक बड़ा-सा चबूतरा है। इस गाँव के रास्ते गुजरने वाले प्रत्येक यात्री वहीं पर आराम करते हैं। वह जगह थोड़ी शीतल भी है।

पुरुष : जाने दो। इधर ही आने को मन किया, चला आया। तुम्हें आंगन बहारते देखकर तो और कहीं जाने का ही मन नहीं किया।

युवती : ओ ! तो आप मुझे देखकर ही इधर आ गये ?

पुरुष : ऐसा तो नहीं है। मैं तो आराम करने के ख्याल से इधर चला आया हूँ।

युवती : पक्का न ! आपका उद्देश्य तो केवल आराम करना ही है न ?

पुरुष : बिल्कुल !

युवती : ठीक है। आराम कीजिये।

(कुछ देर तक चुप्पी छाई रही।)

पुरुष : (युवती की आँखों में आँखें मिलाकर) कितनी सुंदर, बिल्कुल पुष्पा जैसी।

युवती : क्या कहा आपने ? मैं समझ न सकी।

पुरुष : मैंने बस यही कहा कि तुम पुष्पा जैसी हो।

युवती : कौन पुष्पा ?

पुरुष : मेरी बचपन की सहेली पुष्पा। वैसे उसका नाम तो पुष्पवती है। लेकिन मैं उसे पुष्पा ही बुलाता था, कभी कभी पुष्पी भी कहता था। लोग उसे प्रेम से पुष्पी ही बुलाते थे। इन दिनों वह काशी में है। लेकिन बहुत दिन हुआ, उससे भेंट नहीं हो पाई है। जाने कैसी है वो, क्या कर रही है ? तुम्हें देखकर उसकी याद आ गई। (पुरष थोड़ा भावुक हो उठता है पसीना पोंछता है।)

युवती : लगता है आपको गर्मी लगी है। शीतल छांह की ओर चले आइये।

पुरुष : नहीं, नहीं ठीक है। चलने से गर्मी लग गई है। लेकिन यहाँ आने पर ठंड का अहसास हो रहा है।

युवती : ऐसे कैसे ?

पुरुष : पता नहीं !

(पुरुष युवती को गहरी नजर से देखने लगता है।)

युवती : खड़े क्यों हैं, बैठ जाइए न !

पुरुष : नहीं, अभी के लिए ठीक है, बाद में बैठ जाऊंगा।

युवती : वो तो ठीक है, मगर आप तो थककर आराम करने ही आए हैं न, तो बैठ जाना ही उचित होगा।

पुरुष : मुझे तो ऐसे खड़े रहने में ही आराम मिल रहा है, युवती।

(पुरुष युवती के सामने खड़े होकर उसे निहारने लगता है। युवती सकपका जाती है।)

युवती : आप मुझें क्यों देख रहे हैं ?

पुरुष : क्या तुम्हें देखा भी नहीं जा सकता ?

युवती : देखने का तरीका भी होता है।

पुरुष : कैसा तरीका ?

युवती : ऐसी बातें भी क्या कहने की आवश्यकता है ?

पुरुष : कह देने से अच्छा ही होगा।

युवती : इसका अच्छा अर्थ नहीं है।

पुरुष : क्यों ?

युवती : आप तो ऐसे जता रहे हैं कि आपको किसी बात की खबर ही नहीं है। ऐसी बातें तो खुद को ही मालूम होनी चाहिए। नहीं ?

पुरुष : क्यों ? तुम्हें जो अच्छा लगता है, उसे नहीं देखती हो ? क्या तुम्हें अपने मनसपंद चीजों को देखना अच्छा नहीं लगता ?

(युवती कुछ नहीं बोलती है। वह द्वार बुहारने लगती है। पुरुष युवती को देखता रहता है। युवती बुहारने के बाद झाडू एक कोने में रख देती है। पुरुष युवती के बहुत करीब जाकर उसे देखने लगता है।)

युवती : (पुरुष के चेहरे की ओर देखते हुए) बैठिए न !

पुरुष : बैठूंगा। वैसे भी मैं बैठने के लिए ही तो आया हूँ।

युवती : (दिखाते हुए) यदि चौकी पर बैठना हो तो, इधर बैठिएगा, चटाई पर बैठना हो तो उधर बैठिएगा।

पुरुष : ठीक है, मैं बैठ जाऊंगा। वैसे तुम्हारा नाम क्या है ?

युवती : कलावती।

पुरुष : कितना अच्छा नाम है। पुष्पवती-कलावती, दोनों अच्छे नाम।

(कुछ देर की चुप्पी)

कलावती : यहाँ आने का कहीं कोई दूसरा काम तो नहीं ?

पुरुष : नहीं, कोई काम नहीं।

कलावती : तो क्या केवल आराम करने के लिए ही आये हैं ?

पुरुष : आराम करने भी और तुमसे मिलने भी। जब तुम्हें देखा, तुम पुष्पी जैसी लगी। तभी से मिलने की इच्छा हो उठी। इसीलिए आया हूँ।

कलावती : इसके अलावा भी कोई उद्देश्य तो नहीं, आपके यहाँ आने का ?

पुरुष : तुम तो मेरे पीछे ही पड़ गई। इतनी भी जांच पड़ताल मत करो। समझ लो, मैं एक प्यासा राही पानी की तलाश में यहाँ तक आ गया हूँ। चलो मुझे पानी पिला दो। मेरी प्यास बुझा दो।

कलावती : आप मेरे क्या लगते हैं कि मैं आपको पानी पिलाऊं। आपको मैं क्या समझकर पानी पिलाऊं ?

पुरुष : समझ लो, मैं एक मेहमान हूँ।

कलावती : ठीक है। मगर मेहमानों का भी तो कोई परिचय वगैरह होता है न ? नाम, पता कुछ तो होगा ?

पुरुष : मैं कालीदास। उज्जैन से आया हूँ। मैं अभी भ्रमण के सिलसिला में यहाँ आ पहुंचा हूँ।

कलावती : अच्छा ... ... !

कालीदास : मैं ज्ञान की खोज में निकला हूँ।

कलावती : ज्ञान की खोज में निकले हुए आप यहाँ क्यों चले आये हैं ? ज्ञान के लिए तो गुरुकुल, महाविद्यालय और बड़े-बड़े ऋषि मुनियों के पास जाना चाहिये न ?

कालीदास : सही कहा तुमने। वैसी जगहों पर भी जाऊंगा। लेकिन अभी मैं विभिन्न जगहों की यात्रा से ज्ञान प्राप्त करने के सिलसिला में हूँ। मैं यही सोचकर यहाँ आया हूँ कि मुझे यहाँ से भी कुछ न कुछ ज्ञान प्राप्त होगा। मुझे पूरा विश्वास है कि तुम्हारे घर से भी मुझे कुछ न कुछ अवश्य प्राप्त होगा।

(कलावती आश्चर्यचकित हो उठती है। कालीदास कलावती को निरंतर देखता रहता है।)

कलावती : आप यहाँ बैठिए, मैं पानी लेकर आती हूँ।

(कलावती पानी लेने अंदर चली जाती है। कालीदास वहीं पर खड़ा हो जाता है और इधर-उधर देखने लगता है। कलावती करुवा में पानी लेकर आती है। कालीदास एक टक कलावती के शरीर की ओर नजरें टिकाए हुए है।

कलावती : लीजिए, पानी पीजिए। (कालीदास कुछ नहीं वोलता। वह एक टक कलावती को देख रहा होता है।) लीजिए न पानी!

कालीदास : ठहरो, कुछ देर ठहरो।

(कलावती हाथ में पानी लिए कुछ देर खड़ी रहती है। कालीदास की नजरें कलावती की ओर ही केंद्रीत हैं। वह कभी कलावती के चेहरे की ओर तो कभी उसके शरीर की ओर देखता है तो कभी पैरों की ओर देखता है।)

कलावती : चौकी पर भी बैठने से होता तो?

कालीदास : नहीं, मुझे बैंठने की जरूरत नहीं है।

कलावती : हुजूर आप अपने को मेहमान कह रहे हैं। फिर तो मेहमान को कुछ खाने पीने की चीज भी देनी होगी न?

कालीदास : मुझे कुछ खाने की इच्छा नहीं है। मैं कुछ नहीं खाऊंगा।

कलावती : पानी भी नहीं पी रहे, कुछ खाने की इच्छा भी नहीं जता रहे। किस तरह के मेहमान हैं आप?

कालीदास : मैं खाने पीने का भूखा नहीं हूँ।

कलावती : मगर मेहमान को कुछ न कुछ तो खिलाना ही पड़ता है न?

(कालीदास की नजरें कलावती की ओर ही टिकी हुई हैं। कलावती पानी का करुवा चौकी पर, एक तरफ रख देती है और चटाई पर बैठ जाती है।)

कालीदास : क्या मैं भी चटाई पर बैठ सकता हूँ?

कलावती : नहीं, नहीं। मेहमान को कहाँ चटाई पर बैठाना, चौकी पर ही बैठिए।

कालीदास : ऐसी बात नहीं है, नीचे चटाई पर बैठने की इच्छा हुई, इसलिए कहा।

कलावती : (हंसते हुए) पानी पीने आए हुए मेहमान को घर में रखना क्या अच्छा है?

कालीदास : अलग रहूँगा न!

कलावती : (हंसते हुए) अपरिचित महिला और पुरुष एक चटाई पर कैसे? कोई देखेगा तो क्या सोचेगा? क्या कहेगा?

(कुछ देर के लिए चुप्पी)

कालीदास : (कलावती के करीब जाकर) इस गाँव में तुम्हारी तरह युवती भी है।

कलावती : क्यों? कैसी हूँ मैं?

कालीदास : सुंदरी, अपार सुंदरी! अद्‌भुत सुंदरी! तुम्हारी तरह सुंदरी मैंने आज तक नहीं देखी है। तुम्हारी सुंदरता की क्या तारीफ करूं, जितनी भी करूंगा, कम होगी। फिर किस किस की तारीफ करूं? आँखें, नाक, चेहरा, दांत, कान, बाल, हाथ, पांव, हंसना, बोलना, चलना ...! सभी में सुंदरता भरी हुई है। अनुपम सुंदरता! (कालीदास धीरे-से मुस्कुरा देती है। कालीदास उसकी मुस्कुराहट पर मदहोश हो जाता है।)

कलावती : आप भी तो सुंदर है! इतने सुकुमार नजर आ रहे हैं। किसी दरवार के राजकुमार की तरह।

कालीदास : सच?

कलावती : जी, हाँ।

कालीदास : तुम्हारी बातें सुनकर प्रसन्नता हुई।

(कुछ देर की चुप्पी)

कलावती : आप खुद को मेहमान कह रहे हैं। फिर न तो यहाँ बैठ रहे हैं, और न फिर कुछ खा-पी रहे हैं। आप कैसे मेहमान हैं?

कालीदास : तुम जैसे मानो, वैसा ही मेहमान हूँ मैं।

कलावती : मेहमान तो धन और यौवन की तरह होते हैं, जो आते हैं, और चले जाते हैं।

कालीदास : समझ लो, मैं भी वैसा ही हूँ।

कलावती : अच्छा, तो आप भी वैसे ही हैं?

कालीदास : मेरे कहने का मतलब यह है कि तुम जैसे समझो, मैं वैसा हूँ।

कलावती : मैं आपको नहीं पहचानती। लेकिन आप मेरे साथ इस तरह व्यवहार करने की कोशिश कर रहे हैं, जैसे आप मुझे बहुत करीब से जानते-पहचानते

हैं। मैं यह समझ नहीं पा रही हूँ।

कालीदास : पहली बात तो यह है कि तुम मेरी संगिनी पुष्पी की तरह लगी। दूसरी बात, भले लोगों को अपने मन के करीब रखा करो, खुद-ब-खुद समझ जाओगी। मैं तुम्हें अपने दिल में रख चुका। तुम भी मुझे अपने दिल में रखो। खुद जान जाओगी ... दूरियां और नजदिकियां।

कलावती : जिसे मैं पहचानती तक नहीं, उसे कैसे दिल में रख लूं ?

कालीदास : जैसे मैंने तुम्हें अपने दिल में रखा, वैसे ही तुम भी मुझे अपने दिल में रख लो।

कलावती : मुझे नहीं मेरे रूप को रखा होगा ?

कालीदास : बात तो एक ही हुई न !

कलावती : जी नहीं, यह एक बात नहीं है। आप भ्रम में हैं।

कालीदास : मैं भ्रम में हूं ? मैं कालीदास ! मेरे जैसे आदमी को तुम भ्रमित समझ रही हो ?

कलावती : मुझे तो वैसा ही लग रहा है। दिल और आँखें दोनों अलग-अलग चीज हैं। दिल की समझदारी और आँखों के देखने को आप एक समझ रहे हैं। आँखों से देखी गई चीजों पर भ्रम हो सकता है जिसकी सच्चाई को पता लगाकर उसे सत्य दिखाना दिल का काम होना चाहिए। लेकिन यहाँ तो आप खुद दिल और आँखों के भ्रम में पड़े हुए हैं।

कालीदास : मुझे तो लगता है कि तुम ही भ्रम में पड़ी हुई हो।

कलावती : मैं आँखों से देखी हुई की बात नहीं करती, दिल का कहा हुआ मानती हूँ।

कालीदास : तो बताओ, मेरे बारे में तुम्हारा दिल का क्या कहना है ?

कलावती : मेरा दिल कहता है कि आपकी आँखें भ्रमित हैं। यदि प्रभाव में पड़ना ही है तो मन के प्रभाव में पड़िए, आँखों के प्रभाव में नहीं। यदि आपमें अच्छी भावना है तो आँखों से आकर्षित मत होइए, मन से होइए। मगर यदि भावना ही खराब है, तब तो जो जी में आए, कीजिए।

कालीदास : तुम इतनी अच्छी हो। मगर तुम्हारी बातें क्यों इनती बुरी है ?

कलावती : अब आप जो समझें। लेकिन मैं अपने आप को अच्छी नहीं मानती। यह भी नहीं चाहती कि कोई मुझे अच्छा कह दे। मुझे स्वांग करना भी नहीं आता। मैं जैसी हूँ, वैसी ही हूँ। फिर भी, यह समाज है। समाज के पास देखने का नजरिया भी बहुत है।

(कलावती उठ जाती है और कहीं दूर देखने लगती है। वह खुश नजर आती है। कालीदास भी जिधर कलावती देख रही होती है, उधर ही देखने लगता है। एक सैनिक आता हुआ दिखाई देता है।)

कालीदास : (आते हुए सैनिक की ओर देखते हुए) वह सैनिक इधर क्यों आ रहा है ?

कलावती : डरने की कोई बात नहीं है। शायद वे मुझसे मिलने आ रहे होंगे ?

(कालीदास घबड़ा जाता है। छटपटाने लगता है। सैनिक करीब पहुंच जाता है। उसने अपने हाथ में एक बड़ा थैला ले रखा है। सैनिक कालीदास को कलावती के साथ देखकर आश्चर्यचकित हो उठता है। कालीदास भी अहसज महसूस करता है। दोंनो एक दूसरे को अजनबी की तरह देखते हैं।)

सैनिक : (कालीदास की ओर देखते हुए) आप कौन ? लगता है, आपको कहीं देखा है।

कालीदास : आप कौन ? मुझे भी लग रहा है कि मैंने भी आपको कहीं देखा है।

(दोनों सोचने लगते हैं। कलावती अवाक् होकर दोनों के चेहरे देखने लगती है।)

सैनिक : आपका नाम ?

कालीदास : मैं ... कालीदास।

सैनिक : नाम भी सुना-सुना-सा लगता है। (सोचते हुए) मगर एक ही नाम और लगभग एक चेहरे वाले कई लोग लोग भी तो होते हैं। छोड़िए इन बातों को। ज्यादा माथापची करने की क्या जरूरत !

कालीदास : जी हाँ, बिल्कुल सही है। अब इतनी छोटी-सी बात में क्या माथापची करना।

सैनिक : (कालीदास से) यहाँ आप किस काम से आये हैं ?

कालीदास : मैं तो मेहमान हूँ।

सैनिक : (शंका के भाव में) क्या आप मेहमान ही हैं ?

कालीदास : जी।

सैनिक : (कालीदास के शरीर देखते हुए) पता नहीं, क्या हैं आप ?

कालीदास : मैं मेहमान ही हूँ।

(सैनिक कलावती की ओर देखकर नजरें मटकाता है। कलावती हंस देती है। सैनिक अपने लाये हुए थैले

की ओर इशारा करता है। कलावती थैले की ओर देखकर प्रसन्न हो जाती है। कालीदास सैनिक और कलावती हाव-भाव देखकर अवाक् रह जाता है।)

कलावती : (सैनिक से) इस बार तो थैला भी बहुत बड़ा ही है ?

सैनिक : हाँ तो ! तुम्हें सजाना-संवारना तो पड़ा न ? तुम तो ऐसे भी खूबसूरत हो, और मेरे लाये हुये श्रृंगार- सामग्रियों और नये कपड़ों से सजकर जाने कितनी खूबसूरत लगोगी ? मैं समझ नहीं पा रहा कि उस मेरी क्या स्थिति होगी ? कल्पना मात्र करने से रोमाँचित हो उठता हूँ।

(सैनिक कलावती को अंकमाल करता है। वह धीरे-से कालीदास के बारे में कलावती को कुछ बताता है। कलावती कालीदास की ओर देखती है। सैनिक और जोर से कलावती को अपनी बांहों में कस लेता है।)

कालीदास : (गुस्से से सैनिक को देखते हुए) एक सैनिक को गाँव की युवती के साथ इतना श्रृंगारिक होना अच्छा नहीं।

(सैनिक कलावती को अपनी बांहों में ही दबोचे रहना चाहता है, लेकिन कलावती अपने को उसकी बांहों की पकड़ से अलग करती है।)

सैनिक : (कालीदास से) हे कालीदास ! इस तरह की बातें मत कीजिए। इस दुनिया में जब तक नारी और पुरुष रहेंगे, इस तरह की बातें होती रहेंगी। ऐसी छोटी-छोटी-सी बातों पर ध्यान नहीं देना चाहिए। लेकिन एक बात जरा सच-सच कहिए।

कालीदास : क्या ?

सैनिक : आप यहाँ क्यों आये हैं ?

कालीदास : मैं पहले ही कह चुका हूँ कि मैं एक मेहमान हूँ।

सैनिक : मैं भी शुरू-शरू में यहाँ का मेहमान ही था। वही सामने वाली पगडंडी पर चलते-चलते एक दिन इस घर का मेहमान बनने पहुंच गया था। अब तो क्या मेहमान कहा जाय ! कलावती के पास आना-जाना लगा हुआ है।

(कालीदास आश्चर्यचकित हो जाता है।)

कलावती : (सैनिक की ओर इशारा करते हुए कालीदास से) वे तो बड़े आदमी हैं, क्या आप नहीं जानते ? राजा विक्रमादित्य के दरवार के सैनिक हैं वे।

कालीदास : (आश्चर्यचकित होते हुए) अच्छा, राजा विक्रमादित्य के दरवार का सैनिक ! वड़ा आदमी होता है।

(कलावती चौकी पर बैठ जाती है। सैनिक भी कलावती से सटकर उसी चौकी पर बैठ जाता है। कालीदास छटपटाकर इधर-उधर देखने लगता है।)

सैनिक : (चौकी के बगल में रखे हुए करुवा के पानी की ओर देखते हुए) यह करुवा का पानी किसके लिए है, कलावती ?

कलावती : कालीदास ने यह कहकर पानी मंगाया था कि उन्हें प्यास लगी है। मैंने पानी लाकर दिया, लेकिन उन्होंने नहीं पिया।

सैनिक : उन्हें पानी की प्यास नहीं लगी है, कलावती। उनकी प्यास किसी और चीज की है।

कलावती : किस चीज की ?

सैनिक : 'किसी भी चीज की' कहा जा सकता है।

कलावती : फिर कहिए न, किस चीज की ?

सैनिक : कह दूं ?

कलावती : जी हाँ, कह दीजिए।

सैनिक : वे तो तुम्हारे रूप और यौवन को देखकर यहाँ आये हुए हैं। देख नहीं रही, उनकी आँखों में कितनी मादकता है।

कलावती : (कालीदास की आँखों में झांकते हुए) अरे ! हाँ !

सैनिक : चलो जाने दो, यह पानी मैं ही पी लेता हूँ।

(सैनिक पानी पीता है। कालीदास सैनिक से नाराज होकर जाने या न जाने की स्थिति में हो दिखता है। सैनिक पानी पीने के बाद फिर कलावती को अंकमाल भरता है। लेकिन कलावती कालीदास के चेहरे की ओर देखकर आँखें घुमाती है। कालीदास अवाक् होकर कलावती को देखने लगता है। वह कलावती की आँखों का इशारा समझ नहीं पाता।)

कालीदास : तुम्हारी आँखें क्या कह रही हैं, कलावती ?

कलावती : क्या आप आँखों के इशारे भी नहीं समझते, कालीदास ?

कालीदास : मैं सबकुछ समझता हूँ। ऐसी कोई बात नहीं, जो मैं नहीं जानता। लेकिन मुझे यह समझने में काफी दिक्कत हो रही है कि तुम्हारी आँखें क्या कह रही हैं ?

कलावती : कहते हैं, राजा और दरवार के पंडितों के पास बुद्धि नहीं होती। आप भी वैसा ही हैं क्या ?

कालीदास : यह तुम किस तरह की बात कर रही हो

कलावती ?

कलावती : क्या आप मेरी बात नहीं समझ पा रहे ?

कालीदास : नहीं। नहीं समझ पा रहा हूँ।

सैनिक : (कालीदास से) और आप समझेंगे भी नहीं कालीदास। क्योंकि आप में बातें समझने की क्षमता ही नहीं है। आप केवल आँखों से ताड़ना जानते हैं, लेकिन मन की बात समझ नहीं सकते। केवल आपकी आँखें नशीली हैं।

कालीदास : (गुस्साकर) मेरी आँखें नशीली नहीं हैं, सैनिक। क्या आपने अपनी आँखों को नहीं देखा है ? कितनी कामुक हैं, आपकी आँखें ?

सैनिक : आप भी तो वैसे ही हैं !

कालीदास : मैं वैसा नहीं हूँ।

सैनिक : लेकिन मुझे तो आप वैसे ही नजर आ रहे हैं।

कालीदास : आपके देखने से क्या होता है ? आप तो जो कुछ भी देख लेते हैं।

कलावती : कालीदास ! आप अपने को अलग महसूस न करें। आखिर आप भी तो उसी जगह पर आये हुए है जहाँ और लोग आते हैं।

कालीदास : (आश्चर्यचकित होते हुए) आंय ! क्या कह रही हो तुम ? यहाँ और कौन-कौन आता है ?

कलावती : बड़े बड़े लोग ही तो आते हैं। (सैनिक को दिखाते हुए) जैसे, अभी ये आये हुए हैं, राजा विक्रमादित्य के दरवार के सैनिक अधिकारी। कालीदास, आप भी तो काशी नरेश के रिश्तेदार ही हैं न। हैं न ?

(कालीदास आश्चर्यचकित हो जाते हैं। कलावती और सैनिक मुस्कुराते हुए कालीदास की ओर देखते हैं।)

कालीदास : कलावती ! मैं वैसा व्यक्ति नहीं हूँ जैसा तुम लोगों ने समझा है। मैं ज्ञान की खोज में निकला हुआ व्यक्ति हूँ।

कलावती : ज्ञान के बहुत से क्षेत्र होते हैं। यह भी तो एक ज्ञान का ही क्षेत्र है। क्या नहीं है ?

कालीदास : नहीं। यह ज्ञान का क्षेत्र नहीं है। यह तो मनुष्य को मतिभ्रष्ट बनाने वाली जगह है। मैं नहीं रहूँगा यहाँ।

सैनिक : ठीक है। चले जाइये। चलो कलावती, हम भी अंदर चलते हैं।

(सैनिक और कलावती दोनों चौकी पर से उठ खड़े होते हैं। सैनिक एक हाथ में झोला पकड़ता है और दूसरे हाथ से कलावती की बांह पकड़कर अंदर ले जाने लगता है। कलावती कालीदास की ओर देखर आँखें मटकाती हैं। कालीदास अवाक् हो उठता है।)

कलावती : बात समझ में नहीं आई , कालीदास ? (कलावती फिर अपनी आँखें मटकाती हुई कालीदास को कहती है।)

कालीदास : हे कलावती ! तुम मुझे देखकर इस तरह क्यों आँखें मटका रही हो, मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।

कलावती : कोई खास बात नहीं । मैं तो बस यही कह रही हूँ कि आप थोड़ी देर बाहर ही इन्तजार करें।

कालीदास : मैं अब नहीं ठहर सकता। मैंने तुमको उस रूप में नहीं देखा था, कलावती। मुझे तो लगा था कि तुम मेरी पुष्पी की तरह हो, लेकिन नहीं, तुम पुष्पी की तरह नहीं हो।

कलावती : ऐसा मत कहिए कालीदास। मैं तो ऐसी ही हूँ। मुझे ही देखकर तो आप यहाँ आये। अब जव आ ही गये हैं, तो थोड़ी देर इन्तजार करने में क्या हर्ज है ?

कालीदास : नहीं। अब मैं नहीं ठहर सकता।

कलावती : ऐसा मत कहिए। मेहमान को ऐसे भेज देना भी तो ठीक नहीं। फिर ऐसी अश्लील नजरें लेकर कहाँ जायेंगे आप ? कहीं किसी ने देख लिया तो ?

कालीदास : (आश्चर्य भाव के साथ) क्या ? मेरी आँखें अश्लील हैं ?

कलावती : हाँ तो। अगर विश्वास न हो, एक बार खुद देख लीजिये।

कालीदास : खुद की आँखें खुद ही कैसे देखी जा सकती है ?

कलावतीः इतना भी ज्ञान नहीं है आपको ? (हंसकर) मूर्ख कालीदास !

(सैनिक कलावती को घींचकर अंदर ले जाता है। कालीदास अवाक् देखता रह जाता है। अंदर से दरवाजा बंद हो जाता है। कालीदास निराश हो उठता है। वह हठात उठता है और अपनी राह चल देता है। धीरे-धीरे अंधेरा हो जाता है।)

अनुवाद : गोपाल अश्क

समालोचना

भवभूति विरचित मालती-माधव नाटक का सामान्य दिग्दर्शन

डा. माधव प्रसाद लामिछाने

१. विषय प्रवेश

नाटककार भवभूति संस्कृत साहित्य के महान नाटककार हैं। उनके तीन नाट्य कृति उपलब्ध हैं। वे हैं -महावीर चरित, उत्तर राम चरित और मालती-माधव। संस्कृत वांगमय में काव्य को दृश्य काव्य और श्रव्य काव्य दो वर्गों में विभाजित किया गया है। अभिनययुक्त काव्य को दृश्यकाव्य कहा जाता है और श्रवणयुक्त काव्य को श्रव्यकाव्य। अभिज्ञान शाकुन्तल, उत्तर राम चरित , मृच्छकटिक आदि दृश्यकाव्य के अंतर्गत आते हैं और मेघदूत, रघुवंश, किरातार्जुनीय आदि श्रव्यकाव्य के अंतर्गत। पुन: दृश्यकाव्य रुपक और उपरुपक दो वर्ग में विभाजित हैं। रुपक दस प्रकार के माने जाते है - नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, इहामृग, अंक, वीथी और प्रहसन। इसीप्रकार उपरुपक नाटिका, त्रोतक, गोष्टि, नाट्यरासक आदि अठारह प्रकार के होते हैं। काव्य संबंधी इस प्रकार के विभाजन के आधार पर देखा जाए तो प्रस्तुत मालती-माधव रुपक अंतर्गत प्रकरण नामक भेद में आता है क्योंकि प्रकरण में लौकिक तथा कवि कल्पित चरित्रों का वर्णन होता है जिसमें दस अंक अपेक्षित होते हैं। मालती माधव कृति में भी दस अंक ही हैं और इसमें वर्णित चरित्र ऐतिहासिक अथवा पौराणिक न होकर कवि कल्पित हैं। काव्य संबंधी पूर्वीय लक्षण शास्त्रों में काव्य के उपर्युक्त सूक्ष्म भेद होते हुए भी पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव के कारण समीक्षक सभी प्रकार के रुपक को नाटक ही मानकर समीक्षा करते हैं। अत: इस लेख के पंक्तिकार भी इसी दृष्टिकोण से विमुख हो नहीं सके। इसीलिए मालती- माधव को नाटक और भवभूति को नाटककार से अभिहित किया गया है। इस नाटक का सामान्य दिग्दर्शन करने का प्रयास किया गया है।

२. नाटककार भवभूति

नाटककार भवभूति का जन्म विक्रम की आठवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में वर्तमान महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश की सीमा में स्थित गोन्डिया जिले के पद्मपुर नामक स्थान में हुआ था। यह बात कह्लण की राजतरंगिणी से विदित होती है। कश्मीर नरेश मुक्तापीड ललितादित्य के उत्कर्ष वर्णन के क्रम में राजतरंगिणी में ललितादित्य द्वारा विजित काव्यकुंज नरेश यशो वर्मा की राज सभा में भवभूति उज्ज्वल रत्न के रूप में अलंकृत थे। ललितादित्य ने यशो वर्मा को विक्रम संवत् ७९३ में पराजित किया था। अत: भवभूति का समय विक्रम की आठवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध मानना उपयुक्त होगा। इनके पिता का नाम नीलकंठ और माता का नाम जातुकर्णी था। ये कश्यप गोत्र में उन्पन्न कृष्णयजुर्वेदीय तैत्तिरीय शाखाध्यायी थे। इनका वास्तविक नाम श्रीकंठ था पर इनकी 'साऽम्बा पुनातु भवभूतिपवित्रमूतिः' इस रचना से प्रभावित होकर काव्यकुंज नरेश यशो वर्मा ने इन्हें भवभूति पद से अलंकृत किया और इनके नाम के बारे में दूसरा मत यह भी है कि 'तपस्वी कां गतोऽवस्थामिति स्मेराननावि। गिरिजायाः स्तानौ वन्दे भवभूतिसिताऽऽनौ ' उनकी इस रचना से प्रभावित होकर उन्हें भवभूति पदवी से अलंकृत किया गया। ये उम्बेक नाम से भी परिचित थे। मालती-माधव की एक प्राचीन हस्तलिखित पुस्तक में 'प्रकरणमिदं कुमारिलशिष्यस्योम्बेकाचार्य' लिखा गया है। इससे पता चलता है कि ये एक प्रसिद्ध मीमांसक कुमारिल भट्ट के शिष्य थे। इन्होंने सुप्रसिद्ध मीमांसक प्रभाकर भट्ट के श्लोकवार्तिक ऊपर टीका भी लिखी थी। उसीतरह मंडन मिश्र के भावनाविवेक ऊपर भी टीका की थी। इसप्रकार भवभूति के वीर चरित, उत्तर राम चरित और मालती- माधव तीन नाटक तथा श्लोकवार्तिक और भावनाविवेक की टीका करके कुल पाँच कृति उपलब्ध

हैं। महावीर चरित में भगवान राम के वनवास पूर्व के चरित्र के वारे में वर्णन है और उत्तर राम चरित में राम का सीता के साथ वियोग का वर्णन है।

३. मालती - माधव की संक्षिप्त कथावस्तु

मातली-माधव दश अंक में विभक्त है। प्रस्तुत नाटक की कथावस्तु इतिहास और पुराण से न लेकर वृहत कथा से ली गई है। अब यहाँ प्रत्येक अंक की संक्षिप्त कथावस्तु प्रस्तुत है।

३.१ प्रथम अंक

किसी समय में भूरिवसु और देवरात नामक दो ब्राह्मण कुमारों का विद्यार्थी जीवन में घनिष्ठ मित्रता थी। उन दोनों की मित्रता इतनी घनिष्ट थी कि विवाह पश्चात अगर एक का पुत्र और दूसरे की पुत्री हुई तो विवाह बंधन में बाँध देने तक कि प्रतिज्ञा हुई। कालान्तर में भूरिवसु पद्मावती नामक राज्य के मंत्री बने। विवाह के पश्चात भूरिवसु के घर में पुत्री का आगमन हुआ और उधर देवरात के घर में पुत्र का। देवरात के पुत्र माधव अत्यंत सुंदर और सच्चरित्र से विकसित होते गए। उन्होंने अत्यंत कम समय में विविध विद्याओं में कुशलता हासिल की। उधर भूरिवसु की पुत्री मालती भी अत्यंत सुंदर, मितभाषिणी, बडों की आज्ञाकारिणी तथा विद्या विनय संपन्न थी। पद्मावती राज्य के राजा के एक नर्म सचिव थे जिनका नाम नंदन था, वो मालती से विवाह करना चाहते थे। उन्होंने राजा को अपने अनुकूल वनाकर मातली के साथ विवाह करने के लिए राजा के माध्यम से भूरिवसु से याचना की। भूरिवसु के लिए विवशता थी कि उन्होंने पहले ही अपने मित्र को वचन दिया था। अपनी सुकोमल, अंत्यत सुंदर पुत्री मालती का विवाह कूरुप, कर्कश और प्रौढ़ नंदन के साथ करने के लिए स्वीकृति देने में भूरिवसु को अत्यंत दुख का सामना करना पडा। उन्होंने राजा के सामने विवश होकर राजा के प्रस्ताव को स्वीकृति दी। यह बात बौद्ध संन्यासिनी कामन्दकी को पता चली। वह भूरिवसु और देवरात की प्रतिज्ञा को पूर्ण कराने में गुप्त ढंग से मालती और माधव का विवाह करानेका प्रबंध मिलाने में अपनी शिष्या अवलोकिता से सलाह मसौदा करने लगी। कुछ वर्षो के बाद देवरात ने अपने पुत्र माधव को न्याय शास्त्र पढ़ने के लिए भूरिवसु के यहाँ भेज दिया। उनका मनसाय यह था कि भूरिवसु को पहले की गई प्रतिज्ञा का स्मरण हो जाए। बौद्ध संन्यासिनी कामन्दकी के आज्ञानुसार अवलोकिता ने मालती और माधव के बीच में परस्पर अनुराग उत्पन्न कराने के लिए विभिन्न उपाय करने लगी। वह अपने लक्ष्य में कामयाब हुई, फलस्वरुप दोनों के बीच में परस्पर प्रेम का संचार होने लगा।

३.२ द्वितीय अंक

इस प्रकार कामन्दकी, मालती और माधव में परस्पर प्रेम अंकुरित कराने में सफल हुई। उनके सामने दूसरी बड़ी समस्या यह थी कि यद्यपि भूरिवसु अपनी पुत्री का विवाह नंदन के साथ कराना नहीं चाहते थे परन्तु सेवा धर्म की कठोरता के कारण वे प्रत्यक्ष रूप से माधव के साथ अपनी पुत्री का विवाह संस्कार संपन्न करने में असमर्थ थे। उधर मातली का प्रेम माधव के साथ पराकष्ठा में पहुँच चुका था पर अपनी निष्ठा और शालीनता के कारण वह अपने पिता की आज्ञा का उल्लंघन करने में असमर्थ थी। इसीलिए कामन्दकी इस चिन्ता में रहती थी कि कैसे मालती को अपने पिता के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न कराया जा सके और वह अपने पिता की आज्ञा का साहसपूर्वक उल्लंघन करे? कामन्दकी चाहती थी कि मालती स्वेच्छा से माधव के साथ विवाह करने की बात अपने पिता से हिम्मत से करे। अपनी अभिलाषा तथा योजना को पूरा करने के उद्देश्य से वह मातली के यहाँ पहुँचती है और बातचीत करने लगती है। प्रसंगवश राजा की इच्छा के अुनसार पिता भूरिवसु ने नंदन के साथ मालती का विवाह के लिए स्वीकृति दी जाने की बात भी कह देती है। यह बात सुनकर मालती बेचैन हो गई। वह अपने पिता की आज्ञा का उल्लंघन करने में असमर्थ थी। कामन्दकी ने मातली में अपने पिता के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न कराने के लिए शकुन्तला, उर्वशी, वासवदत्ता आदि कुलीन स्त्रियों के प्रसंग उठाए और यह भी कहा कि इन कुलीन स्त्रियों ने भी अपने पिता की आज्ञा की उपेक्षा करते हुए अपने प्रेम का महत्त्व दिया था। ऐसे ही उपायों का अवलंबन करते हुए कामन्दकी ने मातली के मन में पिता की आज्ञा का उल्लंघन करने तथा माधव के साथ स्वेच्छा से विवाह करने के लिए हौसला बढ़ाई।

३.३ तृतीय अंक

कामन्दकी नंदन की बहन मदयन्तिका का विवाह माधव के साथी मकरन्द मे साथ कराना चाहती

थी। इसलिए उन्होंने मकरन्द के प्रति मदयन्तिका के हृदय में प्रेम उत्पन्न करने के लिए अपनी मित्र बुद्धरक्षिता को मदयन्तिका के साथ मित्र के रूप में रखा गया । अपने योजना के अनुसार कामन्दकी ने कृष्णपक्ष के चतुर्दशी के दिन में शिव मंदिर के समीप स्थित बगीचा में पहुँचने के लिए माधव के पास संदेश भेजा। मालती ने उन्हें कहा " आज कृष्णपक्ष की चतुर्दशी है, इसलिए अपने ही हाथ से फूल चुनकर शिवजी को अर्पण करने पर तुम्हारी इच्छा सिद्ध होगी । " उसी वक्त मदयन्तिका को लेकर बुद्धरक्षिता भी उसी बगीचे में पहुँची । बगीचे में लालिमायुक्त अशोक वृक्ष के नीचे माधव और मालती फूल चुनने लगे। तब वहाँ मंद वायु बहने लगती है, भ्रमर फूल मे बैठने लगते हैं, फूल से सुगंध बिखरने लगती है और दोनों प्रेमी- युगल के मन में कामवासना जागृत होती है। कुछ समय के बाद कामन्दकी मालती को बुलाती है और मातली के वियोग में माधव के मन में उत्पन्न कारुणिक भाव को बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन करती है। इतने में अचानक पिंजड़ा तोड़कर एक सिंह बगीचे में प्रवेश करता है और देखते ही देखते वहाँ के लोगों और जानवरों पर आक्रमण करने लगता है। चारों ओर हाहाकार मच गया। संयोगवश मदयन्तिका भी वहीं थी। सिंह उनकी ओर लपका। वहाँ उपस्थित सारे लोग इधर-उधर चीखते-चिल्लाते भागने लगे, उसे बचाने कोई नहीं गया। सौभाग्यवश मकरन्द हाथ में तलवार लेकर सिंह से लड़ने पहुँचे। बड़े साहसपूर्वक मकरन्द ने सिंह को मार गिराया और मदयन्तिका को बचाया। परन्तु सिंह के भयानक आक्रमण के कारण उसका शरीर लहुलुहान हो गया था और वह मूर्च्छित हो गया। बगीचे की कोलाहल को सुनकर माधव भी उस ओर चला जाता है। अपना मित्र मकरन्द सिंह से लड़ने के लिए तैयार देखकर वह उसके सहयोग के लिए दौड़कर वहाँ पहुंच जाते हैं लेकिन पहले ही मकरन्द ने सिंह का काम तमाम कर दिया था। सिंह के आक्रमण के कारण मकरन्द बेहोश पड़े थे और उन्हें देखकर वे भी बेहोश हो गए।

३.४ चतुर्थ अंक

कामन्दकी, मदयन्तिका और मातली के संयुक्त उपचार के पश्चात मकरंद और माधव भी स्वस्थ हो गए। इसी वक्त मदयन्तिका और मकरन्द की आँखे चार हो गईं और उन दोनों के मन में प्रेम का संचार हुआ। इधर मालती और माधव के मन में भी प्रेम भाव और अधिक प्रगाढ़ होता गया। इसी वक्त एक व्यक्ति वहाँ पहुँच जाता है और कहने लगता है- "राजा की आज्ञा से नंदन के साथ मालती का विवाह तय हो गया है इसीलिए विवाह कार्य संपादन के लिए नन्दन ने अपनी बहन को तुरुन्त बुलाया है।" इस खबर से माधव और मालती दोनों अत्यंत दुखी होते हैं और सोचते हैं कि शायद अपनी आशा पूर्ण नहीं होगी। जब वैवाहिक वेश-भूषा में सुसज्जित होने के लिए मालती को बुलाया जाने लगा तब दोनों अत्यंत निराश हो जाते हैं। माधव ने कामन्दकी के आश्वासन को निसार समझा और श्मशान में पिशाचों को महामांस बिक्री करने पर अपनी आशा पूरा होने की संभावना को देखकर वे अपने मित्र मकरन्द के साथ शहर की ओर चल पड़े।

३.५ पंचम अंक

डरावने वेशभूषा पहनी हुई कपालकुण्डला नामक एक कापालिक अपने गुरु अघोरघण्ट का पुरश्चरण सफल बनाने के लिए एक सुंदर स्त्री की तलाश में आकाश मार्ग में इधर-उधर घूम रही थी। इतने वे वह एक हाथ में तलवार और दूसरे हाथ में नरमांस लेकर मांस बिक्री के लिए करालादेवी मंदिर के पार्श्व में स्थित श्मशान में बैठे माधव को देखती है। इस समय माधव बैचैन हृदय से मालती के प्रेम का स्मरण कर रहे थे। उन्हें अपनी अभीष्ट सिद्धि के लिए किसी प्रकार का उपाय सूझ नहीं रहा था तब वे एक स्त्री की करुण ध्वनि सुनते हैं। उक्त ध्वनि मंदिर के बगल से आ रही थी। माधव ने देखा कि वह स्त्री और कोई न होकर मातली ही थी। वास्तव में कपालकुण्डला ने अपने गुरु अघोरघंट के पुरश्चरण सफल बनाने के लिए कराला देवी को बलि देने के लिए मालती का अपहरण किया था। पूजा समाप्त करके स्तुति पाठ के पश्चात बलि देने के लिए जब अघोर घण्ट मालती के ऊपर खड्ग प्रहार करने ही वाला था तब उक्त कार्य रोकने के लिए माधव अचानक उसके सामने प्रस्तुत हो जाते हैं। अपने कार्य में बाधा-अड़चन को देखकर अघोरघण्ट रुष्ट हो जाता है और फिर उन दोनों के बीच में युद्ध हो जाता है। माधव की वीरता के सामने उसका कुछ न चला और अंत में वह माधव के तलवार का शिकार बन जाता है।

३.६ षष्ठ अंक

कपालकुण्डला ने माधव से अपने गुरु की हत्या का बदला लेने के लिए प्रतिज्ञा की। उधर मातली की तलाश होने लगी। कामन्दकी के परामर्श अनुसार भूरिवसु की आज्ञा से करालादेवी मंदिर को राजा के सिपाहियों ने घेर लिया। आखिर मातली वहीं मिली। मालती का विवाह के लिए तैयारी होने लगी। विवाह के लिए आवश्यक सामग्रियाँ संग्रह किया जाने लगा। इधर मालती और माधव अत्यंत बेचैन थे। अपनी इच्छा सिद्ध होने की संभावना दोनों नहीं देख रहे थे। कामन्दकी ने उन दोनों की इच्छा सिद्धि के लिए एक उपाय सोचा। उन्होंने माधव और मकरन्द को देवी-मंदिर में कहीं छुपाकर रखा और दुल्हन के वेश में सुसज्जित मालती को अपनी माँ की आज्ञा लेकर अपने सौभाग्य वृद्धि के लिए देवी मंदिर में जाने के लिए कहा। उसी वक्त राजा द्वारा दुल्हन मालती के लिए सुन्दर वस्त्र और आभूषण भेजे गए। कामन्दकी ने मालती को मंदिर के अंदर वस्त्र पहना देने के लिए लवंगिका को कहा। जब लवंगिका मालती को वस्त्र पहचाने लगी तब मालती ने उस वस्त्र को पहनने से अस्वीकार कर दिया। उन्होंने हाथ जोड़ते हुए लवंगिका से कहा-" एक बार मुझे माधव से मिला दीजिए उसके वाद मैं उनका स्मरण करते हुए अपने प्राण त्याग दूँगी।" ठीक इसी समय में कामन्दकी ने माधव को वहाँ जाने का संकेत दिया। माधव का वहाँ पहुँचते ही लवंगिका वहाँ से उठकर अन्यत्र चली जाती है। मालती को इन सव घटनाओं के वारे में पता नहीं था। वो व्याकुल मुद्रा में खड़ी हो जाती है और माधव को लवंगिका सोचकर आलिंगन करने लगती है। वह नेत्रनिमिलित अवस्था में अपनी गर्दन की माला को माधव के गले में डाल देती है। जब मालती आँख खोलती है तब वह आश्चर्य एवं लज्जा भाव से माधव को देखती है और तनिक पीछे हट जाती है। इसप्रकार कामन्दकी उन दोनों का गान्धर्व विवाह करा देती है।

३.७ सप्तम अंक

कामन्दकी मालती और माधव को बगीचे में बैठने के लिए कहती है और मकरन्द को मालती के वेश में सुसज्जित करके भेज देती है। इसप्रकार मालती के वेश में सुसज्जित मकरंद और नन्दन मकरन्द के बीच में विवाह हुआ। सुहागरात के समय में नववधू समझकर नंद मकरंद के समीप होना चाहता था पर नन्दन उसे अपने करीब आने नहीं देते थे। अब तक भी नंदन ने मकरन्द को पहचाना नहीं था परन्तु जब वह थोड़ी कठोरता से मालती वेशधारी मकरन्द के करीब पहुँचा तब मकरन्द ने उसे जोर से धकेल दिया। अपमान बोध करते हुए मालती को चरित्रहीन आदि कहते हुए नन्दन बाहर चला जाता है। मालती को समझाने के उद्देश्य से बुद्धरक्षिता को लेकर मदयन्तिका वहाँ पहुँच जाती है। मकरन्द ओढ़नी ओढ़कर सोने का अभिनय कर रहे थे। बातचीत के प्रसंग में लवंगिका ने मकरन्द की वीरता की चर्चा की। मकरन्द ने मदयन्तिका को सिंह के आक्रमण से बचाया था जिससे उसके हृदय में मकरन्द के प्रति असीम प्रेम और श्रद्धा उत्पन्न हुआ था। अब की इस बातचीत से लवंगिका को इस बात का पता चलता है कि मदयन्तिका मकरन्द के प्रति समर्पित होने में लालायित हैं। इधर मालती वेशधारी मकरन्द भी यह सब सुन रहे थे। मौका देखकर मकरन्द बिस्तर से उठ जाते हैं और मदयन्तिका का हाथ पकड़र प्रेमालाप करने लगते हैं। तत्पश्चात वहाँ से सभी लोग मालती और माधव जिस बगीचे में बैठे थे, चले जाते हैं।

३.८ अष्टम अंक

आधी रात को बगीचे की ओर प्रस्थान करते मदयन्तिका, मकरन्द आदि को देखकर पहरेदार सिपाही उन्हें रोक लेते हैं। मकरन्द सिपाही से लड़ ही रहे थे कि तभी वहाँ कलहंस पहुँच जाते हैं और मदयन्तिका आदि स्त्रियों को उनके साथ बगीचे की ओर भेज देते हैं और सिपाहियों से युद्ध जारी रखते हैं। इधर मालती और माधव मदयन्ति और मकरन्द की प्रतीक्षा कर रहे थे। जब कलहंस मदयन्तिका आदि स्त्रियों को लेकर बगीचे में पहुँच जाते हैं तब माधव अपने मित्र की सहायता के लिए अस्त्र शस्त्र लेकर कलहंस के साथ उस ओर चले जाते हैं। कुछ समय के बाद मालती अधीर होने लगती हैं और वो अवलोककिता और बुद्धरक्षिता को कामन्दकी के यहाँ भेज देती है तथा लवंगिका को माधव की खबर लेने भेज देती हैं। अब इस समय बगीचे में मदयन्तिका और मालती केवल दो ही थीं। मालती अत्यंत अधीर होते हुए माधव और मकरन्द की प्रतीक्षा करने लगती हैं। इसी समय मौका का फायदा उठाते हुए कापालिकी कपालकुण्डला मालती को अपहरण करके श्रीपर्वत में ले जाती है। उधर जब राजा मदयन्तिका और मालती का राजभवन से वाहर निकलने की खबर सुनते हैं। तब

माधव और मकरन्द को पकड़ने के लिए और सैनिकों को भेज देते हैं। राजा स्वयं राजभवन की छत में बैठकर माधव, मकरन्द और कलहंस तथा अपने सैकड़ों सिपाहियों का युद्ध देखते हैं। वे अपने युद्ध कौशल से अपने सैकड़ों सिपाहियों को क्षणभर में क्षतविक्षत बनाने देखते हैं। तव उनकी वीरता से प्रभावित होकर उन्होंने उन वीरों को अपने पास बुलाया। राजा ने उनके अपराध की क्षमा दे दी। राजा की सदाशयता की प्रशंसा करते हुए जव वे बगीचे की ओर गए तब तक देर हो चुकी थी, मालती का अपहरण हो चुका था। माधव को कपाल कुण्डला की भीषण प्रतिज्ञा का स्मरण हो आया और वे मालती के जीवन प्रति अन्यंत उदासीन हो जाते हैं।

३.९ नवम अंक

मालती को न पाकर माधव अत्यंत चिन्तित हुए। वे विन्ध्य पर्वत में मालती को खोजने निकले। माधव के मित्र मकरन्द भी साथ में थे। माधव पागल की तरह वृक्ष, पत्थर, नदी नाले आदि को मालती के बारे में पूछताछ करने लगे। कभी मूर्च्छित होते, कभी पागल की तरह बातें करते, ऐसी अवस्था देखकर मकरन्द भी अत्यंत विह्वल हो गए। माधव के पागलपन को दूर करने का वह प्रयास करने लगे पर वे असफल रहे। माधव की ऐसी अवस्था को देखकर मकरन्द का भी धैर्य का बाँध फूट गया। आखिर मित्र के जीवन की आशा न देखकर वे भी आत्महत्या करने के उद्देश्य से पाटलावती नदी के शिखर में चढ़ गए और शिव जी का स्मरण करते हुए कहने लगे कि हे प्रभु ! मुझे जन्मजन्मान्तर तक भी माधव जैसे भित्र का साहचर्य प्राप्त रहे। इतना कहकर वो नदी में कूदने ही वाले थे इतने में एक योगिनी उनका हाथ पकड़ती है और कहती है कि मालती जिन्दा है। वह माधव द्वारा मालती को पहना दी गइ फूल की माला प्रमाण स्वरुप दिखाती है। ये योगिनी कामन्दकी की शिष्या सौदामिनी थी जो मन्त्र सिद्धि के लिए श्रीपर्वत में गई हुई थी। जब कपालकुण्डला ने माधव से गुरुवध की वदला लेने के लिए मालती को श्रीपर्वत ले गई थी तब सौदामिनी ने कपालकुण्डला से मालती को बचाकर अपनी कुटी में छुपाकर रखी थी। मालती के वियोग में माधव के ऊपर किसी प्रकार के अनिष्ट होने की आशंका से अभिज्ञान रुप माला लेकर वह माधव को ढूँढ़ते हुए वहाँ पहुँची थी। हवा के शीतल स्पर्श से माधव होश में आ गए , उसी वक्त सौदामिनी ने मातली की माला माधव को दे दी। माला को देखकर माधव आश्चर्यचकित हो गए। सौदामिनी ने मालती की खबर माधव को दे दी और अपनी योग शक्ति से उन्हें उड़ाकर श्रीपर्वत में ले गई। मकरन्द भी उसी वन में रह रही कामन्दकी को यह खबर सुनाने वहाँ चले।

३.१० दशम अंक

कामन्दकी, लवंगिका, मदयन्तिका आदि भी मालती को खोज में शोकाकुल उसी वन में इधर-उधर भटक रही थीं। पर मालती का अता पता नहीं था। इसीलिए उन सभी ने मालती के अभाव में अपना जीवन व्यर्थ मानने हुए आत्महत्या करने के उद्देश्य से मधुमती नदी में कूदने का मनसाय बना लिए। इसी वक्त सौदामिनी की प्रशंसा करते हुए हर्ष विभोर मकरन्द उनके सामने में जा पहुँचते हैं। माधव भी इसी समय मालती को लेकर वहाँ पहुँच गए। उधर भूरिवसु भी अपनी पुत्री मालती का वृत्तान्त सुनकर अपने सारे कार्य छोड़कर राजा के अनुरोध का भी बेवास्ता कर देहत्याग के लिए अग्नि में प्रवेश करने ही वाले थे कि इतने में सौदामिनी वहाँ पुहँच जाती है और उन्हें अग्नि प्रवेश से रोक लेती है। रास्ते में मालती जब अपने पिता की अवस्था से विदित हो जाती है तब वह बेहोश हो जाती है। मालती का बेहोश होता देखकर उनके अन्य साथी भी बेहोश हो जाते हैं। कुछ पल के बाद सब होश में आ जाते हैं और सबकी उदासीनता खुशी में परिवर्तित हो जाती है। उधर मकरन्द का विवाह मदयन्तिका के साथ कराने के लिए राजा सहमत हो जाते हैं और माधव को संबोधन करते हुए लिखा गया पत्र सौदामिनी माधव को देती है। इस प्रकार मालती और माधव तथा मकरन्द और मदयन्ति का मिलन हो जाता है और सबकी अभिलाषा पूरी हो जाती है।

४. मालतीमाधव नाटक का वैशिष्ट्य

संस्कृत नाट्य शास्त्र में भवभूति का स्थान अत्यंत उच्च रहा है। समीक्षक उन्हें कालीदास की ही श्रेणी में रखते हैं। कालीदास कमनीय कला कौशल और अनुपम उपमा विधान के माध्यम से सत्य, शिव और सुंदर वस्तु का चित्रण करने में सफल हैं तो भवभूति अपने प्रौढ़ और मनोहर प्रतिभा के माध्यम से अलौकिक, अदभुत और भयानक वस्तु को भी सहजता के साथ चित्रण करते हुए पाठकों का ध्यान आकृष्ट करने में

सफल हुए हैं । प्रस्तुत मालती-माधव नाटक में प्रकृति के सुंदर चित्रण में भी भवभूति को अनुपम सफलता मिली है । इस नाटक के सप्तम अंक में अर्धरात्रि का जो सुंदर वर्णन नाटककार ने किया है वह किस पाठक के हृदय को आकृष्ट नहीं करता होगा ?

रस विधान की दृष्टि से मालती माधव नाटक को देखें तो इस नाटक में विभिन्न रसों का समुचित प्रयोग हुआ है । नाटक का प्रथम और द्वितीय अंक में माधव के प्रेम प्रसंग में श्रृंगार रस की विशष्टता देखी जाती है। नाटक के तृतीय अंक में वीर और रौद्र रस का सुंदर संयोजन मिलता है । सप्तम अंक मे वीर रस का समुचित प्रयोग मिलता है तो नवम् अंक में करुण और अदभूत रस का सुन्दर प्रयोग देखने को मिलता है । इस अंक में अपनी प्रेमिका मालती की खोज जंगल-जंगल फिरते माधव की कारुणिक अवस्था के चित्रण से सहृदयी पाठकों का हृदय करुण रस में आप्लावित हो जाता है । मालती को संदेश पहुँचाने के लिए माधव ने मेघ के साथ जो प्रार्थना की है, इससे पाठक को कालीदास के मेघदूत का स्मरण हो आता है । दशम अंक में अद्भुत रस का प्रयोग देखने को मिलता है । इसप्रकार मालती माधव नाटक में नाटककार भवभूति ने विभिन्न रसों का बड़े कुशलतापूर्वक प्रयोग किया है ।

५. निष्कर्ष

संस्कृत के महान नाटककार भवभूति का मालती माधव नाटक संस्कृत नाट्य साहित्य की अनुपम कृति है । महाकवि कालीदास की ही श्रेणी के नाटककार भवभूति ने इस नाटक में वृहद कथा की कथावस्तु को लेकर अपने प्रौढ़ और मनोहर प्रतिभा के माध्यम से अलौकिक, अद्भुत और भयानक विषय को भी बड़े सहज एवं हृदयस्पर्शी ढंग से इस नाटक में प्रस्तुत किया है । उनका रचना कौशल अनुपम है । एक ही नाटक में भी अनेक रसों का समुचित प्रयोग होना इस नाटक की दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता है । इन्हीं विशेषताओं के कारण यह नाटक संस्कृत नाट्य साहित्य का कालजयी नाटक बन पाया है । शिवमस्तु ।

अनुवादकः डिल्लीराम शर्मा संग्रौला

भोजपुरी नाटक

तलाक के बाद

गोपाल अश्क

(पर्दा उठता है)

दृश्य : १

स्थान : किसी शहर के किसी घर का एक कमरा

समय : सुबह का समय ।

(सूरज की किरणें फूट रही हैं । धरती पर उजाला फैल रहा है । चिड़ियों के चहचहाने की आवाज सुनाई दे रही है । मुक्ता अपने पलंग पर सोई हुई है । आज उसके बगल में उसका पति नहीं है । उसके बगल में उसकी लड़की सोई है । बाहर दरवाजे पर दूधवाला चिल्ला रहा है :)

दूधवाला : मालिक ! दूध ले लीजिए । मुझे बहुत जगह जाना है । (घर के अंदर से कोई नहीं निकलता । थोड़ी देर चुप रहने के बाद दूधवाला फिर से चिल्लाने लगता है) मालिक ! ओ मालिक ! दूध ले लीजिए न ! मुझे देर हो जाएगी, बहुत जगह जाना है ।

(थोड़ी देर बाद मुक्ता अपनी आँखे मिचते हुई आती है और पतीला दूधवाले के आगे रख देती है । दूधवाला दूध उढ़ेलते हुए कहता है) : क्या बात है मालकिन ! आज तो आप आई हैं ! साहब नहीं हैं क्या ?

मुक्ता : नहीं ।

दूधवाला : अच्छा ... अच्छा । बिटिया को स्कूल छोड़ने गए होंगे ।

(इतना सुनते ही मुक्ता घबरा सी जाती है । जल्दी-जल्दी दूध का पतीला उठाकर अंदर चली जाती है । वह सरासर अपने कमरे में जाती है और अपनी बेटी को उठाते हुए कहती है)

मुक्ता : नेहा उठो, जल्दी फ्रेस हो जाओ । मैं तो भूल ही गई थी, आज से तो मुझे तुम्हें स्कूल पहुंचाना और लाना होगा ।

नेहा : (आँख मिचते हुए) क्यों माँ ? पापा ?

मुक्ता : बेटा, आज से माँ भी मैं ही हूँ, पापा भी मैं भी हूँ । तुम्हें अब जो चाहिए, मुझसे कहना । ठीक है न !

नेहा : हाँ माँ । (इतना कहकर नेहा मुंह हाथ धोने लगती है ।)

(मुक्ता कीचन में जाकर नेहा के लिए टिफीन तैयार करने लगती है । मुक्ता की आवाज गूंज जाती है ।)

मुक्ता : सुनते हो ! जरा नेहा का स्कूल बैग तैयार कर दो । ... अरे चिल्लाओ मत..चाय मिल जाएगी... ला रही हूँ । (मुक्ता अचानक झेप जाती है । क्योंकि उसे पता चलता है कि आज उसका पति कुछ नहीं सुनने वाला । क्योंकि वह यह घर छोड़कर जा चुका है । फिर चिल्लाते हुए कहती है) नेहा ! तुम अभी तक तैयार नहीं हुई ? चलो बेटा,जल्दी करो वरना देर हो जाएगी । (उधर नेहा मुंह हाथ धोकर अपना स्कूल बैग उठाती है, इधर मुक्ता अपने बेटी को कुछ खिलाने लगती है । जल्दी जल्दी खिलाकर उसका टिफीन बॉक्स बैग में रख देती है । स्कूल बैग लेकर बाहर निकलती है, नेहा भी पीछे-पीछे बाहर निकलती है । मुक्ता अपनी स्कूटी स्टार्ट करती है और नेहा को पीछे बिठाकर स्कूल के लिए रवाना हो जाती है)

दृश्य : दो

(मुक्ता अपनी बेटी नेहा को उसके स्कूल छोड़कर आ रही होती है । तभी अचानक उसका मोबाइल बज उठता है । वह स्कूटी साइड करके मोबाइल पर बात करने लगती है)

मुक्ता : हाँ, बोलिए प्रकाशजी ।

...

मुक्ता : क्या ? दस बजे ही मीटींग है ! अच्छा कोई बात नहीं ... मैं साढ़े नौ बजे तक ऑफिस पहुंच जाऊंगी । ... चलिए फोन रखती हूँ ।

(मुक्ता फिर स्कूटी आगे बढ़ाती है। अभी कुछ ही दूर गई होती है कि फिर उसका मोबाइल बज उठता है। वह फिर अपनी स्कूटी को सड़क के किनारे करती है और:)

मुक्ता : अब क्या है ? अब किस लिए फोन किए हो ?

...

नहीं, आज मैं नहीं आ सकती।

...

क्यों नहीं आ सकती का क्या मतलब ? और सुनो ... यह पूछने का अधिकार गंवा चुके हो तुम... आज से तुम्हारी और मेरी दुनिया अलग है ... रास्ते भी अलग हैं।

...

तुम को जो करना हो, करो। मैं अपने घर से कहीं नहीं जाने वाली। तुमने खुद घर को छोड़ा है, मैंने तुम्हें निकाला नहीं है।

...

अब तुम इस घर में रहो या न रहो, आई डॉन्ट केयर। मैं इतना जानती हूँ कि यह घर मेरा है और तुमने मुझे तलाक दे दिया है। मैं अपनी मर्जी का मालिक हूँ।

... धमकी मत दो। वरना थाने के चक्कर काटने पड़ेगे। अदालत में भी दौड़ लगानी पड़ेगी।

(अचानक मोबाइल की आवाज बंद हो जाती है। मुक्ता अपनी स्कूटी फिर से आगे बढ़ाती है। कुछ दूर जाने के बाद उसका मोबाइल फिर से बज उठता है। वह फिर र अपनी स्कूटी साइड करती है और बतियाने लगती है।)

मुक्ता : हाँ, बोलो माँ।

...

नेहा को स्कूल पहुंचाकर घर जा रही हूँ।

...

आज नौ बजे ही ऑफिस जाना है। तीन बजे नेहा के स्कूल जाना होगा। उसकी तीन बजे छुट्टी हो जाती है। शाम को एक और मिटिंग है। घर आते-आते रात हो जाएगी।

...

हां माँ, तुम ठीक कह रही हो। नेहा को तुम्हारे पास छोड़ जाऊंगी। परेशान हो गई हूँ माँ।

...

क्या कह रही हो तुम ? मैंने तलाक लिया ? माँ मैंने तलाक लिया था उसने मुझे तलाक लेने मजबूर कर दिया ? मेरी यह परेशानी उसके साथ रहने से बिल्कुल कम है। उसने मेरे जीवन कोनरक बना दिया था।

...

खुली हवा में सांस ले पा रही हूँ, क्या यह कम है ? मुझे रोकने-टोकने वाला नहीं है, यह क्या कम अच्छी बात है ?

...

अच्छा, अब फोन रखो माँ। तुम्हें मेरी बात समझ में नहीं आएगी। मैं आकर बात करती हूँ। अभी देर हो रही है। घर जाकर खाना भी बनाना है।

(मोबाइल का सम्पर्क खत्म हो जाता है। मुक्ता अपनी स्कूटी तीव्रता के साथ कुदा देती है।)

दृश्य ३

स्थान : घर का एक कमरा

समय : रात का समय

(अविनाश अपने पलंग पर यूं ही लेटा हुआ है। सामने टेबुल पर मुक्ता की तस्वीर रखी हुई है। मुक्ता मुस्कुरा रही है। सामने दीवाल पर घड़ी टंगी हुई है। घड़ी की सुई ठीक १२ पर जाकर अटकी हुई है, चल नहीं रही। अविनाश काफी दु:खी और व्यथित है। वह मुक्ता की मुस्कुराती हुई तस्वीर को देखते हुए पागल-बड़बड़ाता है।)

अविनाश : मुस्कुराओ ! खूब मुस्कुराओ ! आज तेरे पास मुस्कुराने की वजह भी है। आखिर तुम मुझसे आजाद जो हो गई है। अपने मर्जी की मालिक जो हो गई हो।

(अविनाश को लगता है कि मुक्ता की तस्वीर उससे जवाब तलब कर रही है।)

नेपथ्य से : सारा आरोप मुझ पर ही मत लगाओ। केवल मैं ही तुमसे आजाद होना नहीं चाहती थी, तुम भी मुझसे आजाद होना चाहते थे। ...क्यों ... आज मेरी बहुत याद आ रही है क्या ? ... बना लो जाम ... और लगा लो अपने होठों से ... ... जब तक चाहो ... जितना चाहो ... ...पीते रहो शराब ... आज तुम्हें रोकने-टोकने वाली 'मैं' तो हूँ नहीं।

अविनाश : क्या मैं शराबी हूँ ? मैं शराब पीकर तुम्हें

मारता-पिटता हूँ ? ... तुम्हें तंग करता हूँ ?

नेपथ्य से : तो क्या तुम शराबी नहीं हो ? तुम शराब पीकर मुझे तंग नहीं करते थे...मारते-पीटते नहीं थे ?

अविनाश : आ जाओ मुक्ता ... आ जाओ ... .मैं तुम्हारे बिना नहीं जी सकता ... ...शायद मर भी नहीं सकता.. और शायद तुम भी ... ...

नेपथ्य से : इस गलतफहमी में मत रहना । तुम मेरे विना रह पाओ या नहीं, मगर मैं तुम्हारे बिना मजे से रह पाऊंगी । आखिर मेरे पास नेहा जो है ।

अविनाश : क्या संतान पति की जगह ले सकती है ? क्या संतान से पति से पूरी होने वाली जरूरतें पूरी की जा सकती हैं ?

नेपथ्य से : यह तलाक लेने से पहले सोचनी चाहिए थी ... ... मुझे भरी अदालत में नंगा करने से पहले सोचनी चाहिए थी । अब तो कुछ नहीं हो सकता ।

(अविनाश उदास आँखों से मुक्ता की तस्वीर निहारने लगता है । पॉकेट से सिगरेट निकालकर जलाता है और पीने लगता है । तभी उसका मोबाइल बज उठता है । वह मोवाइल उठाता है और बातें करने लगता है । उधर से मुक्ता बात कर रही होती है)

अविनाश : अभी मैं तुमसे ही बातें कर रहा था ।

उधर से : वातें कर रहा था ! क्या मतलब है तुम्हारा ?

अविनाश : मतलब यह है कि मैं तुम्हारी तस्वीर से बातें कर रहा था । डार्लिग ... .

उधर से : ओ...ए ... डार्लिंग ... वार्लिंग नहीं ... मैं तुम्हारी कोई डार्लिंग वार्लिंग नहीं हूँ । मैंने सिर्फ एक बात कहने के लिए फोन किया है ।

अविनाश : कहो ।

उधर से : अपनी बेटी से बात करो । यह तुम्हारे लिए रो रही है । स्कूल में कोई प्रोग्राम है । वहाँ माता पिता दोनों को जाना अनिवार्य है । जब से स्कूल से आई है, एक ही रट लगा रखी है... पापा को बुलाओ, कल पापा को स्कूल लेकर चलो ।

अविनाश : कहाँ है नेहा । मोवाइल दो उसको ।

(उधर से नेहा की आवाज सुनाई देती है)

नेहा : पापा... पापा ... तुम घर क्यों नहीं आए ? कल मेरे स्कूल में एक प्रोग्राम है, जिसमें आपको और माँ दोनों को एक साथ आना है ।

अविनाश : बेटा, ऐसा है कि मैं कल ऑफिस के काम से वाहर जा रहा हूँ । कल मैं नहीं आ सकता । अपनी माँ को ले जाना ।

(नेहा के रोने की आवाज सुनाई देती है । फिर अचानक मुक्ता की आवाज सुनाई देने लगती है)

मुक्ता : रुला दिया न बच्ची को ! मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि तुम कल कहीं नहीं जा रहे हो । तुम केवल हम माँ बेटी को तकलीफ देना चाह रहे हो । अगर तुमने हमें समय दिया होता,तो यह नौबत ही नहीं आती ।

अविनाश : देवी जी ! देवी जी ! सुनिए ! इल्जाम मैं भी लगा सकता हूँ । जब हम अलग हो गए, तो फिर यह साथ-साथ होने का दिखावा क्यों ?

मुक्ता : मैं तुम्हें मेरे साथ घूमने, सिनेमा देखने या मौज मस्ती करने के लिए नहीं कह रही हूं । नेहा, केवल मेरी ही बेटी नहीं है, तुम्हारी भी है । और अभी वह इतनी बड़ी नहीं हुई है, जो तलाक का अर्थ समझ सके । कल अगर तुम नहीं आये ... ... तो देख लेना ... ... ।

अविनाब : क्या करोगी मुक्ता रानी ? जो करना है,अभी ही आकर कर जाओ न । मैं तुम्हारी राह देख रहा हूँ ।

मुक्ता : मैं... और तुम्हारे पास ... ... कभी नहीं ... मैं नहीं आ सकती ।

अविनाश : जब तुम मेरे पास नहीं आ सकती, तो तुमने यह कैसे समझ लिया कि मैं तुम्हारे पास आ जाऊंगा ... फिर चाहे वो नेहा के लिए ही क्यों न हो ।

मुक्ता : तो तुम सौदा कर रहे हो ?

अविनाश : जीवन ही एक सौदा है । इसे समझौता भी कहा जा सकता है । काश तुम समझ पाती !

(अचानक उधर से आवाज आनी बंद हो जाती है । अविनाश की नजरों के सामने उसकी बेटी नेहा का मासूम चेहरा झिलमिलाने लगता है ।)

दृश्य ४

स्थान : मुक्ता का कमरा

समय : रात का समय

(मुक्ता अपने पलंग पर लेटी हुई है । बगल में नेहा भी लेटी हुई है । कमरे में मद्धिम रोशनी है । मुक्ता अपने आप से बातें कर रही होती है ।)

मुक्ता : यह कैसा जीवन है । यह कैसी आजादी है ? पति

पत्नी का रिश्ता कैसा रिश्ता है ? भी चैन नहीं । भूलने की जितनी कोशिश करती हूँ, वह उतना ही याद आता है । पहले उसके साथ रहने से तकलीफ होती थी, अब उसके साथ नहीं रहने तकलीफ हो रही है । लाख कोशिश करती हूँ, कि लोग मुझे उसके नाम से नहीं जानें । मगर लोग आज भी मुझे अविनाश का एक्स वाइफ ही कहते हैं । और यह बगल में सो रही उसकी निशानी नेहा ... इसका मैं क्या करूं ? इसने तो और मुझे बेहाल करके रखा है । हर वक्त अपने पापा को खोजती रहती है । आज स्कूल के प्रोग्राम में भी अपने पापा के लिए कितना बेचैन हो गई थी । वो तो गनिमत है कि प्रोग्राम शुरू होने से पहले अविनाश आ गया और शांत हो गई । ... कहीं ऐसा तो नहीं कि हमारे तलाक का फैसला गलत है ? कहीं ऐसा तो नहीं कि हम अलग होकर भी अलग नहीं रह सकते ? कहीं ऐसा तो नहीं कि हमें अलग रहने की टीस ता उम्र रहेगी ?

(इतने में मोबाइल बज उठता है । उधर से अविनाश होता है ।)

मुक्ता : जी कौन ?

अविनाश : मैं ... मैं तुम्हारा एक्स हसबैंड ।

मुक्ता : क्या मजाक कर रहे हो ? सीधे सीधे कहो, तुमने किस लिए फोन किया है ।

अविनाश : आज सीधे-सीधे कह रहा हूँ ... मैंने अपनी पत्नी मुक्ता के लिए फोन किया है ।

मुक्ता : क्या बक रहे हो तुम ? अब मैं तुम्हारी पत्नी नहीं हूँ ।

अविनाश : माफ करना मुक्ता डार्लिंग । यह अविनाश का पतिवाला टैग तो तुम्हारे साथ जीवन भर रहेगा... भले ही वह एक्स हसबैंड के रूप में ही क्यों न रहे ।

(मुक्ता के जोर-जोर से बोलने के कारण नेहा जग जाती है । और अपनी माँ से पूछती है ।)

नेहा : क्यों चिल्ला रही हो माँ ? और किस पर चिल्ला रही हो ? पापा ने फोन किया है क्या ?

मुक्ता : तुम सो जाओ नेहा । पापा ने फोन नहीं किया है, रॉन्ग नंबर है ।

नेहा : नहीं ... मुझे लगता है कि पापा हैं । तभी तुम इतना गुस्सा कर रही हो । दो... दो मुझे... मैं भी पापा से बात करूंगी । उन्हें थैंक्यू कहूँगी ।

मुक्ता : थैंक्यू ? किस लिए ?

नेहा : वो आज मेरे स्कूल में आए थे न, इसलिए । मेरी टीचर ने कहा था कि चाहे जो हो जाए, लेकिन तुम्हारे पापा नहीं आएंगे ।

मुक्ता : क्यों ? ऐसा क्यों कहा था उन्होंने ?

नेहा : मुझे नहीं मालूम माँ ।

मुक्ता : यह दुनिया भी न !

अविनाश : (उधर से) क्या हुआ डार्लिंग ! क्या हो गया दुनिया को ?

मुक्ता : कुछ नहीं । लो, अपनी लाड़ली से बात करो । यह तुम्हें थैंक्यू कहना चाहती है ।

(मुक्ता नेहा को मोबाइल थमा देती है । नेहा बोलने लगती है ।)

नेहा : थैंक्यू पापा ।

अविनाश : थैंक्यू किसलिए बेटा ?

नेहा : आज आप स्कूल में आए न, इसलिए ।

अविनाश : यह क्या बात हुई ? बेटा बुलाए और बाप न आए ! ऐसा कभी हो सकता है ?

नेहा : तो पापा, आ जाओ न घर ।

अविनाश : अभी !

नेहा : हाँ, अभी ।

अविनाश : नहीं बेटा, अभी नहीं ... अभी बहुत रात हो चुकी है । तुम सो जाओ ... मैं फिर कभी आता हूँ ।

नेहा : फिर कभी नहीं... कल सुबह होते आना पापा । मैं आपके साथ स्कूल जाऊंगी ।

(नेहा अपनी माँ को मोबाइल थमा देती है और सोने का उपक्रम करने लगती है । मुक्ता कभी मोबाइल, जिससे अभी भी आवाज आ रही है, 'मुक्ता ! बेटी मुझे बुला रही है । कभी तुम भी बुलाकर देखो न !' को देखती है तो कभी नेहा के मासूम चेहरे को, जिसपर इस विश्वास का रंग चढ़ा है कि कल उसके पापा आएंगे ।)

(पर्दा गिर जाता है ।)

अनु : नाटककार स्वयं

नेपाल भाषा नाटक

रोती जिंदगी

पद्मरत्न तुलाधर

पर्दा उठता है

स्थान : किसी सड़क का फूटपाथ

(फूटपाथ पर तीन-चार लोहे की कुर्सियां रखी हुई हैं। एक कुर्सी पर एक सुंदर लड़की बैठी और जोर-जोर से रोती हुई दिखाई देती है। यह किसी को नहीं मालूम है कि वह लड़की उस तरह जोर-जोर से क्यों रो रही है ?। राहगीर उस लड़की को रोते हुए देखते हैं और आश्चर्यचकित होते हुए आगे बढ़ जाते हैं। राहगीरों में कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें उस लड़की का रोना अच्छा नहीं लगता। उन्हें वहाँ उस लड़की को रोते हुए छोड़कर जाना अच्छा नहीं लगता। धीरे-धीरे चार पांच राहगीर एकत्रित हो जाते हैं। वह लड़की कभी जोर-जोर से तो कभी धीरे-धीरे रो रही हैं। एक अधेड़ औरत उसके करीब जाती है और पूछती है।)

औरत : क्या हुआ बेटी ? क्यों रो रही हो ? (लड़की चुप होने का नाम ही नही लेती, रोती ही रहती है)
बोलो, कुछ तो बोलो। आखिर क्या हुआ है जो रोए जा रही हो ?
(वह लड़की अभी भी चुप नही होती, रोना बंद नहीं करती। इतने में वहाँ एकत्रित लोगों में से एक लड़का सामने जाकर खड़ा हो जाता है और)

लड़का : दीदी ! क्या हुआ ? क्यों रो रही हो ? मुझे बताओ। मैं तुम्हारी मदद करने को तैयार हूँ। बोलो न दीदी !
(वह लड़की उस लड़के की बात की अनसुनी करती दिखाई देती है। वह चुप नहीं होती, बल्कि और जोर-जोर से रोने लगती है। वहाँ पर इकट्ठे हुए लोगों में से कोई भी उस लड़की को मना नहीं सका। इतने में एक बुजुर्ग आदमी वहाँ पहुंचता है और से पूछता है:)

बुजुर्ग आदमी : (लोगों से) क्या हुआ ? यह लड़की क्यों रो रही है ? कौन है यह ? किसी ने कुछ किया क्या ?
इसके घर में किसी की मौत हुई है क्या ? कहीं इसका कुछ खो तो नहीं गया है ? लगता है, इसके जीवन में जरूर कोई घटना या दुर्घटना घटी है। तभी तो इस तरह रो रही है बेचारी !

लड़का : मैंने भी इसके रोने की वजह जानने की काफी कोशिश की है चाचा ! मगर यह लड़की कुछ बोलती ही नहीं। रोए जा रही है, बस रोए जा रही है ! मैंने यहाँ तक कहा कि हम तुम्हारी सहायता करने को तैयार हैं, बताओं, क्यों रो रही हो ? मगर यह लड़की चुप होने का नाम ही नहीं ले रही है।

औरत : मैं भी तभी से देख रही हूँ, यह लड़की रोए ही जा रही है, चुप होने का नाम ही नहीं ले रही। हाय ! विपतियों का पहाड़ टूट गया है शायद। जरूर कोई दर्दभरी घटना घटी होगी ? हाय ! कितनी रो रही है बेचारी ! इसे यूं रोते देख मुझे भी रोना आ रहा है। (औरत सिसकियां लेने्लगती है।)

लड़का : (औरत को राते हुए देखकर) अरे चाची ! आप भी रोने लगीं ? अब क्या होगा ? अब दीदी को कौन चुप कराएगा ? कौन मनाएगा ? देखिये चाची, आप चुप हो जाइए। आखिर हमें ही तो मनाना है।

बुजुर्ग आदमी : (लड़के को देखते हुए) लगता है, मैंने तुमको कहीं देखा है। शायद मैं तुम्हें पहचानता हूँ ! क्या तुम्हें कुछ याद है क़ि हम कहाँ मिले थे ? मुझे तो कुछ याद नहीं आ रहा !

लड़का : (याद करने की कोशश करते हुए) अरे हाँ, हाँ, याद आ गया। मैं बैंक में काम करता हूँ न, आप तो वहाँ आते-जाते रहते हैं। शायद वहीं देखा होगा !

बुजुर्ग आदमी : हाँ, हाँ ! मुझे भी याद आ गया। माफ

करना बेटा, बुढ़ापे में स्मरण शक्ति कमजोर हो जाती है।

(कुछ याद करने की कोशिश करते हुए) बेटा, तुम्हारा ... नाम ... अमर है न ?

अमर : हाँ, चाचाजी ! मैं अमर ही हूँ। मुझे अब आपका नाम भी याद आ रहा है, आप चंद्रज्योति सेठ हैं न ?

चंद्रज्योति : आखिर हम जाने-पहचाने निकल गये।

अमर : जी !

चंद्रज्योति : हमें सबसे पहले उस लड़की को चुप कराना चाहिए।

अमर : सही कह रहे हैं आप ! हमें उसे चुप कराना ही होगा। वरना वह हम सब को रूला देगी। देख रहे हैं न, कितनी रो रही है। ऐसा लगता है कि उसकी आँखों गंगा-जमुना बह रही है।

(इतने में निमा वहाँ आ जाती है। वह सफेद साड़ी पहनी हुई है।)

निमा : (उस लड़की के पास जाकर) सुधा ! तुम अभी तक रो रही हो ? बस ! अब रोना-धोना बंद करो और घर चलो। (वह लड़की यानि कि सुधा अब भी रोए जा रही है।)

औरत : (निमा से) क्या आप इसको जानती हैं ? यह लड़की बहुत देर से रो रही है, चुप होने का नाम ही नहीं ले रही। खुद रो रही है, और हम सभी को भी रुला रही है।

निमा : (औरत से) चाची ! आप क्यों रो रही हैं ? चलिए, आप चुप हो जाइए। देखिए, यह मेरी सहेली है और मैं इसे मनाने के लिए ही यहाँ आई हूँ। मेरा तो इसे चुप कराना और मनाकर घर ले जाना, रोज का काम हो गया है। (खुद रोती हुई) प्लीज सुधा ! चुप भी हो जा। चल अब घर चलते हैं। देखो तो ये लोग भी रोने लगे हैं ।

चंद्रज्योति : (निमा से) देवी जी ! अगर आप जानती हैं तो हमें बताइए कि लड़की इस तरह फूट-फूटकर क्यों रो रही है ? आखिर क्या हुआ है इसके जीवन में ? इसे यूं रोते देख हमें भी रोना आ रहा है। मैं आज इधर सुबह की सैर करने आया, तो देखा कि यह लड़की यहाँ रो रही है। आप तो इसकी सहेली हैं न ! तो आपको जरूर पता होगा कि यह क्यों रो रही है ?

अमर : हाँ, दीदी ! आप हमें बताइए न, यह दीदी क्यों रो रही है ? क्या तकलीफ है इनको ? अगर हमारी सहायता की जरूरत हो, तो हम सहायता करने के लिए तैयार हैं।

निमा : (रोते हुए) ठीक है। मैं बताऊंगी, इसके रोने के कारण। मगर जरा ठहरिए। मैं भी खुद को संभाल नहीं पा रही। (सुधा को गले लगाते हुए) देखो सुधा ! अब बस करो ! बहुत हो गया। यह रोना-धोना बंद करो। चलो, मैं तुम्हें तुम्हारे घर छोड़ देती हूँ। मैं तुमसे विनती करती हूँ, सुधा। हाथ जोड़ती हूँ, तुम्हारे आगे। (इतना कहकर सुधा भी जोर-जोर से रोने लगती है।)

औरत : (सुधा और निमा की कुसी के बगल में रखी हुई कुर्सी पर बैठते हुए) बेटी ! आखिर तुम इस तरह क्यों रो रही हो ? अब चुप हो जाओ। देखो, तुम्हें रोते हुए देख हमें भी रोना आ रहा है। सच कहो, तुमने हम सबको रुला दिया है। बेटा, अब चुप हो जाओ !

चंद्रज्योति : (निमा से) देवी जी ! आप भी रोने लगीं ? प्लीज आप रोना छोड़कर हमें यह बताएं कि यह लड़की इस तरह क्यों रो रही है ? दुःख तकलीफों को याद करके आखिर कब तक रोया जा सकता है। देखिए, किसके जीवन में दुःख नहीं होता। कुछ दिन पहले हुए प्लेन एक्सिडेंट में मेरे जवान बेटे की मौत हो गई। हाय ! कितनी दर्दनाक मौत थी उसकी ! कितना छटपटाकर मरा होगा मेरा बेटा ! उसकी लाश लाश न थी, माँस का लोथड़ा थी। मैं अपने बेटे सगुन को भुला न पाया। याद करते आँखें बरसने लगती हैं। कलेजा मुंह को आ जाता है। (चंद्रज्योति फूट-फूटकर रोने लगता है।)

औरत : (रोते हुए) ऐसा लगता है, हम सभी के नसीब में रोना ही लिखा है। मैं आपको क्या बताऊं, कैसे बताऊं। एक साल पहले की बात है, मेरे बेटे और बहू को अमेरिका में आतंककारियों ने मार डाला। मेरे बेटे और बहू अमेरिका में एक बड़े दफ्तर में नौकरी कर रहे थे। आतंककारियों ने उसी दप्तर में बम विष्फोट किया था, जिससे सौ से भी ज्यादा लोगों की जाने गई थीं। मेरी इकलौती संतान, अब दुनिया में नहीं है। मेरी प्यारी बहू भी नहीं है। उनकी याद आते ही कलेजा मुंह को आता है। (फफक कर रोते हुए) वह म्हपूजा के लिए घर आया था। वापस जाने के बाद यह घटना घट गई। (जोर-जोर चिल्लाते हुए) मेरे बेटे ! मेरे सबीन ! मुझे छोड़कर क्यों चले गये ? मुझे भी अपने पास बुला लो।

अमर : (औरत के पास जाकर) चाचीजी ! अब आप भी चुप हो जाइए । देखिए, आपको रोते देखकर मुझे भी रोना आ रहा है ।

चंद्रज्योति : (अमर से) बेटा, देखो ! हमारे जैसी अगर तुम्हारी भी कोई दु:ख भरी कहानी है, तो कह डालो । तुम भी जी भरकर रो लो, ताकि जी हलका हो जाय ।

अमर : सेठजी ! मैं क्या बताऊं ? मैंने भी बहुत रोया है । छह महीने पहले की बात है, मेरी यूरी, मेरी प्यारी पत्नी को एक माइक्रोबस ने कुचल कर मार डाला । कॉलेज से पढ़ाकर बाहर सड़क पर निकली थी । इतने में माइक्रोबस ने कुचल कर मार डाला । चार महीने की गर्भवती थी वो । (रोते हुए) अस्पताल में जाकर देखा था मैं । उस वक्त तक वह जिंदा थी, सांसे चल रही थीं । मगर कुछ देर के बाद डॉक्टर ने उसे मृत घोषित कर दिया । उसके सर, हाथ और पैर चारों तरफ घाव थे । मुझे अब भी याद है, उसने मुझसे कहा था,-'मुझे बचा लो अमर ! मैं मरना नहीं चाहती ।' लेकिन मैं चाहकर भी उसे बचा नहीं सका । मैं निरीह था, मजबूर था । यह दर्द नासूर बन गया है, चाचा ! सहा नहीं जाता । (अमर रोने लगता है)

निमा : आप तीनों के जीवन में अपनी-अपनी ट्रेजडी रही है । लगता है, आप लोग भी जीवन भर रोते ही रहे हो । मैं भी इससे बची कहाँ हूँ ? मेरे जीवन में भी ट्रेजडी हुई है । और ऐसी हुई है, क्या कहूँ ?

भगवान करे, उस तरह की ट्रेजडी किसी के साथ न हो । मेरे पति, मैं और मेरे बेटे और बेटी घूमने के लिए पोखरा गए थे । वहाँ के फेवाताल में मेरी आँखों के सामने मेरे पति, मेरे बेटे और मेरी बेटी डूब गए । हमने बहुत देर तक तलाश की, मगर नहीं मिले । और जब मिले तो उनकी जानें जा चुकी थीं । पल भर में मेरा जीवन उजड़ गया था । मेरी जान मुझसे दूर चली गई थी । मैं निष्प्राण बनकर रह गई । मैं किसी को भी बचा नहीं सकी । जिंदगी लेकर गई थी, लाश लेकर लौटी । (रोते हुए) उफ ! यह दर्द ! यह पीड़ा ! जीवन भर सालते रहे । मैं कैसे सह पाई, समझ में नहीं आता । हाय ! कैसे कहूँ आगे की बात ? नियति का खेल देखिए ! उनकी चिता को अग्नि मुझे ही देनी पड़ी । (फफक कर रोते हुए) जाने कितनी बार बेहोश हुई थी मैं ! हे ईश्वर ! यह क्या हो गया मेरे साथ ?

म्हपूजा : नेवार समुदाय का सबसे बड़ा त्योहार, जिसमें अपने ही शरीर की पूजा की जाती है ।

अमर : (सुधा को उठते हुए देखकर) लगता है, दीदी कुछ कहना चाह रही है । हमें इसकी बातें सुननी चाहिए ।

निमा : सच सुधा ? (सुधा को सहारा देकर उठाकर फिर से बिठाते हुए) बोलो सुधा । अपने मन की बात कह डालो ।

(सुधा पहले की तरह ही कभी जोर से कभी धीरे से रो रही है ।) मुझे लगता है कि सुधा अपनी बात नहीं कह पाएगी । मैं ही कह देती हूँ, इसकी ट्रेजडी । (सिसकती हुई) मुझे लगता है कि आप लोग मेरी सहेली सुधा की बात सुन नहीं पाएंगे । मैं भी कह पाऊंगी या नहीं, कह नहीं सकती । सुधा की माँ, बाप, सास और ससूर सभी भूकंप में अपने घर में ही दबकर मर गए । उस दिन यानि कि शनिवार के दिन, सुधा अपने पति के साथ घूमने के लिए दामन गई थी । उसने वापस आने पर देखा कि उनका घर ढहकर गिरा पड़ा हुआ था और उनके माँ बाप, सास और ससूर का कोई अता-पता नहीं था । कई दिनों के बाद सेना ने उसके घर के मलवे हटाया, तो उनकी लाशें मिलीं । (सुधा रोने लगती है । अमर कभी इधर तो कभी उधर टहल रहा है । चंद्रज्योति विचलित हो उठता है ।

चंद्रज्योति : बस करो बेटा, कुछ मत कहो । मैं नहीं सुन पाऊंगा । हाय ! कितने छटपटाए होंगे वे । कैसी भयानक मौत मिली उन्हें !

निमा : (रोती हुई) आज भी सुधा के कानों में भूकंप आने की आवाज गूंजती है । आज भी उसकी आँखों में उसके माँ, बाप, सास और ससूर के दबकर मरने का मंजर दिखाई देता है ।

औरत : सचमुच यह असहनीय पीड़ा है । लेकिन जीना तो पड़ता ही है न बेटा । अब चुप हो जाओ । मत रोओ ।

निमा : चाची ! सुधा की तकलीफे यहीं खत्म नहीं हुई ।

चंद्रज्योति : क्या कोई इससे भी बड़ी तकलीफ हो सकती है भला ?

निमा : हाँ चाचाजी । मैं बताती हूँ । सुधा के पति एक बहुत ही इमानदार और सीधा सरल आदमी थे । एक दिन इसी जगह पर बैठा था । चार आदमियों ने उसे गोली मार दी और उसे मरा हुआ छोड़कर भाग

गए। बाद में पता चला कि सुधा के पति को बदमाश ठीकेदारों ने हत्या की थी। सुधा के पति ने जोर से चिल्लाते हुए इसका हाथ पकड़कर कहा था, 'मार डाला ! मुझे बचा लो।' यही बात सुधा को खाती है और उसे चैन से रहने नहीं देती। सुधा उस घटना की याद आते ही रोने लगती है।

औरत : हाय अम्मा ! (मुंह में साड़ी का पल्लू ठूसते हुए) मेरी बेटी ... (रोते हुए) उन हत्यारों को फांसी पर चढ़ा देना चाहिए।

अमर : बहुत बड़ा हादसा है यह। बहुत वड़ी ट्रेजडी है। जव सुनकर ही रोने का मन करने लगता है,तो बेचारी दीदी तो ... इसकी तो आँखों के सामने ... ... (उधर सुधा के रोने की आवाज तेज होती जाती है।)

निमा : एक बात और है। सुधा की एक प्यारी सी बेटी थी। बिल्कुल गुड़िया-सी। अपने कक्षा में हमेशा फर्स्ट आती थी। पंद्रह साल की थी, और दसवीं में पढ़ रही थी। (सभी ध्यान देकर सुन रहे हैं। लेकिन सुधा फिर से रोने लगती है।) एक दिन स्कूल के ही तीन राक्षस शिक्षकों ने उसका बलात्कार किया और मारकर उधर ... (हाथ से इशारा करके बताते हुए) तुकुचा नदी में फेंक दिया। (सभी स्तब्ध हो जाते हैं। सभी का समवेत स्वर सुनाई देता है,-'जिंदा दफना देना चाहिए राक्षसों को)

अमर : मैं मारूंगा उन राक्षस मास्टरों को।

औरत : हाय ! कैसे बर्दाश्त की होगी वह दरिंदगी। रोओ बेटा, जी भर के रो लो। (खुद रोने लगती है।)

चंद्रज्योति : बहुत बुरा हुआ है इस लड़की के साथ। ऐसी वात से कोई भी विचलित हो उठेगा। इस लड़की की बेटी के साट ... राक्षसों ने क्या ... अरे देखो ... देखो ... क्या कर रहा है ? मुझसे तो सुना भी नहीं जा रहा। (रोने लगता है।)

निमा : इसीलिए मेरी सहेली सुधा यहाँ सप्ताह में एकबार आती है और इसी जगह पर बैठ कर नदी की ओर देखते हुए रोने लगती है। वह याद कर-कर के रोने लगती है। (सुधा रोने लगती है।) मैं भी अकेली हूँ। लेकिन क्या करूं मेरा मन नहीं मानता। आखिर यह मेरी सहेली है। इसलिए मैं यहाँ आती हूँ और इसको समझा-बुझाकर घर छोड़ जाती हूं। हम दोनों की किस्मत में रोना ही लिखा है। (रोती हुई) सुधा, मेरी बात मानो। रोना बंद करो और घर चलो। (निमा सुधा को उठाकर गले लगाती है, और हाथ पकड़ कर आगे बढ़ने लगती है।)

चंद्रज्योति : हम सभी को रोना आ रहा है। (रोते हुए) अच्छा तो मैं चलता हूँ। (चंद्रज्योति अपने घर की ओर जाने लगता है।)

अमर : (रोनी सूरत बनाकर) मैं भी जा रहा हूँ ... (अमर आगे बढ़ जाता है।)

औरत : चलिए चलते हैं। मैं क्या कहूँ। मेरे लिए तो रोना ही एक कार्य बन गया है। (वह रोते हुए आगे

निमा : मैं तो कभी चुप ही नहीं रह सकती। रोना ही जीवन बन गया है। मेरे कलेजे में जलन है। (रोने लगती है। सुधा भी यहीं आकर जीवन भर रोती रहेगी। (सुधा रोने लगती है। निमा उसके हाथ पकड़कर घर की ओर चल देती है। सुधा भी धीरे-धीरे कदम बढ़ाते हुए तथा रोते हुए अपने घर की ओर चल देती है।)

(पर्दा गिर जाता है)

अनुवाद : रमेशकाजी स्थापित

थारू नाटक

अग्नि परीक्षा

सुशील चौधरी

पात्र परिचय

हर्कमान : सुन्तली के दादा, ६५ वर्ष
वीरमान : सुन्तली के पिता, ४५ वर्ष
तीला : सुन्तली की माँ, ४० वर्ष
सुन्तली : हर्कमान की पोती, १० वर्ष
मनकली : सुन्तली की सखी, ९ वर्ष
दिलमाया : सुन्तली की सखी, १० वर्ष
चौकीदार : ४५ वर्ष
कोतवाल : ४५ वर्ष
सेविका १
सेविका २
सेविका ३
धोबी : ४० वर्ष
धोबिनः ३५ वर्ष
श्रीरामचन्द्र : ३५ वर्ष
सीता : ३० वर्ष
सेनापति १
सेनापति २
राजगुरु : ६५ वर्ष
राथा : ग्रामीण महिला
उत्तरा : शिक्षिका
मनसरी : ग्रामीण महिला

दृश्य : एक

(स्थान विद्यालय का खेल का मैदान, जहाँ छोटे-छोटे बच्चे खेल रहे हैं ।)

सुन्तली : मनकली ! अरे मनकली ! आओ न, मैदान में खेलने के लिए चलते हैं ।

मनकली : दिलमाया ! चलो चलते हैं खेलने । सुन्तली हमें स्कूल के मैदान में खेलने के लिए बुला रही है ।

दिलमाया : कुछ देर रुको तो सही । मेरा होमवर्क खत्म होने ही वाला है । फिर एक साथ चलेंगे । (घर के फर्श पर बिछे पुआल से बने आसन' गुन्द्री' पर बैठकर दिलमाया जल्दी-जल्दी अपना गृहकार्य करने लगती है । मनकली उसे ध्यानपूर्वक देखती है ।)

मनकली : (मुँह फुलाकर, कुछ नाराज मुद्रा में) तुमने तो अपना सारा होमवर्क कर लिया । मैं कब करूँगी ? इस सुन्तली के कारण मैं कुछ नहीं कर पाई । नहीं तो मैं भी अपना काम खत्म कर लेती ।

सुन्तली : अरे ! थोड़ा-सा होमवर्क ही तो है । शाम का खाना खाने के बाद लिख लेना । कुछ ही पलों में खत्म हो जाएगा ।

दिलमाया : (बोल-बोल कर लिखने लगती है) नेपाल का राष्ट्रीय जानवर गाई (गाय) है ।

सुन्तली : दिलमाया ! ये 'गाई' लिखते समय 'ई' में सींग क्यों लगाया जाता है ?

दिलमाया : मुझे क्या पता ? किताबों में इसी तरह लिखा होता है, इसलिए मैं भी इसी तरह लिख लेती हूँ ।

सुन्तली : नेपाली पढ़ाने वाले शिक्षक से मैंने जब पूछा था तो उन्होंने कहा था कि गाय के सींग होते हैं, इसलिए 'गाई' में सींग लगाया जाता है । एक दिन हमें 'राई' सर पढ़ाने आए । 'राई' के 'ई' में भी सींग तो देखा मैंने । लेकिन 'राई' सर के तो सींग नहीं थे । (हँसती है---हा...हा...हा ...)

मनकली : कितना हँसाती हो तुम भी । बड़ी होकर तुम धुर्मुस की सुन्तली बनोगी शायद । हँसते-हँसते पेट दर्द होने लगा है मेरा तो ... (हा...हा हा हा हा हा हा हा)

सुन्तली : किसीका मज़ाक उड़ाना तो कोई तुमसे सीखे । छोड़ो ये सब बातें । चलो अब ! सब मिलकर खेलने चलते हैं । (खेलने के लिए मैदान की ओर निकल पड़ते हैं ।)

दिलमाया : लेकिन हम खेलेंगे क्या ?

सुन्तली : तारा बाजी लै लै । (सभी बच्चे गोलाकार घेरा बनाते हैं और गीत गाते हैं) गोल-गोल घेरा बनाएँ आओ सब मिलकर, आओ सब मिलकर । (फिर क्रमशः ... सभी मिलकर गीत गाना शुरू करते हैं ... तारा बाजी लै लै..)

तारा बाजी लै लै
मामा आए घोड़ा
माइजु आइन सोली
काफल गेड़ी कुटुक्क
निदाइ जाउ सुटुक्क । (सभी बच्चे सोने का नाटक करते हैं ।)

(सुन्तली के दादा जी खाँसते हुए वहाँ आ पहुँचते हैं ।)

हर्कमान : (खाँसते हुए) अरे ! इतनी शाम तक ये बच्चे यहाँ क्यों खेल रहे हैं ? सुन्तली ! चलो घर चलते हैं, बेटा । और सुनो बच्चो ! तुम सब भी अपने-अपने घर जाओ । होमवर्क भी तो नहीं किया होगा तुम सबने ?

सभी बच्चे : (एक साथ) ठीक है दादा जी । (सभी बच्चे अपने-अपने घरों की ओर चल पड़ते हैं ।)

सुन्तली : दादा जी ! आज आप कौन-सी कहानी सुनाएँगे ?

हर्कमान : तुझे तो कहानी सुनने की ही पड़ी है । अँधेरा होने चला है । जल्दी चल, तेरी माँ तुझे ढूँढ़ते हुए आ पहुँचेगी अभी ।

सुन्तली : (दादा जी का हाथ पकड़ कर झिंझोड़ते हुए) दादा जी ! आप भी । बताइए न, कौन-सी कहानी सुनाएँगे ? मैं अपने दोस्तों को भी बुलाऊँ कहानी सुनने ?

हर्कमान : अच्छा, ठीक है । कल गाँव में 'सीता दहन' नाटक दिखाने आ रहे हैं हसनापुर से । सुना है, रामायण की कहानी पर आधारित है नाटक । उसके वाद मैं कोई नई कहानी सुनाऊँगा , बेटा । (अपने घर के आँगन में उपस्थित होते हैं । कुत्तों के भौंकने की आवाज़ आती है ।)

तीला : अरे ! इतनी देर तक तुम कहाँ खो गए थे ? तुम्हें ढूँढ़ते हुए कबसे निकले हुए हैं । कहाँ थे तुम ?

हर्कमान : मैं पीपल चौक से घर की ओर आ रहा था । सुन्तली और उसके दोस्त स्कूल के मैदान में खेल रहे थे । मैं लेकर आया इसे । (सुन्तली डर जाती है । कुत्ते भौंकने लगते हैं । सुन्तली के पिता जी भी आ पहुँचते हैं ।)

वीरमान : कब आ पहुँचे ये दोनों?

तीला : अभी-अभी आ पहुँचे हैं ।

वीरमान : आजकल रेडियो से बहुत बुरी-बुरी घटनाएँ और खबरें सुनी जा रही हैं । चलते-फिरते भी बहुत ध्यान रखना पड़ता है । शाम के वक्त ज्यादा देर तक मत खेलना, बेटा ।

सुन्तली : (सिर हिलाते हुए) ठीक है पापा । नहीं खेलूँगी ।

तीला : अरे ! बात ही करते रहोगे? खाना तैयार हो चुका है । खाने के लिए आ जाओ जल्दी । (सभी रसोईघर की ओर चल पड़ते हैं ।)

चौकीदार : (ऐलान करते हुए) सुनो ! सुनो ! ! सुनो ! ! ! गाँव के सभी भैया- भाभी, दीदी-बहन, चाचा-चाची, मामा-मामी, दादा-दादी, नाना-नानी, मुन्ना-मुन्नी और सभी बच्चो, सुनो ! सभी गाँव वालो, सुनो !! कल शनिवार छुट्टी के दिन, दोपहर ठीक ग्यारह बजे, स्कूल के मैदान में, हसनापुर वाले' सीता-दहन' नाटक दिखाने आ रहे हैं । इसी सूचना के माध्यम से आप सभी को नाटक देखने का हार्दिक आमंत्रण दिया जा रहा है । नाटक देखने के लिए सपरिवार अवश्य आइए ...अवश्य आइए ...अवश्य आइए ...

(पर्दा गिरता है ।)

दृश्य : दो

(गाँव के विद्यालय का खेल का मैदान । नाटक का मंच । नाटक का मंचन प्रारंभ होता है ।)

कोतवालः (नगाड़ा बजाते हुए) डम... डम... डम... डम...डम । अयोध्यावासी सभी नागरिको ! मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्र चौदह वर्ष के कठोर वनवास से लौटकर आ चुके हैं । उनके लिए शुभ राज्याभिषेक सभा होने जा रही है । उनके स्वागत और सत्कार के लिए पुष्पगुच्छा सहित सभी को तैयार रहने के लिए आग्रह किया जाता है । (भव्यता के साथ शुभ राज्याभिषेक समारोह का आयोजन होता है । राम, लक्ष्मण और सीता विशेष पोशाकों में सुसज्जित हैं। राजगुरु, राजा दशरथ के परिवार के सभी सदस्य, अन्य अगणित गणमान्य व्यक्तियों की भव्य उपस्थिति देखी जाती है । गीत-नृत्यों के साथ उत्सव का वातावरण प्रदर्शित किया जाता है ।)

सेविका १ : हमारे राजा राम और रानी सीता चौदह वर्ष का कठोर वनवास काटकर लौटे हैं, लेकिन उनके चेहरों की सुंदरता तिल मात्र भी कम नहीं हुई है । उनके चेहरों पर वही कांति है जो चौदह वर्ष पहले थी ।

सेविका २ : (मसखरी करते हुए) अरे ! भाई लक्ष्मण को तो देखो । भैया राम के साथ वनवास के लिए निकलते समय छोटा बच्चा जान पड़ता था । और अब देखो, कैसा मुछैल जवान बनकर लौटा है । हि...हि...हि...(दोनों हँस पड़ती हैं ।)

सेविका १ : अब तो राम का राज्य होगा । सुख के दिन आएँगे । अब दुख के दिन गए सभी के ।

सेविका ३ : तब तो...(सेविका २ की ओर दिखाते हुए) इस पिंगला की शादी भी जल्दी-से-जल्दी हो जाएगी और इसके सुख के दिन भी जल्दी आ जाएँगे ... (हि...हि...हि...करते हुए दोनों हँसने लगती हैं ।)

सेविका २ : और तेरी कौन कहे ! दूसरों का मज़ाक उड़ाना तो कोई तुमसे सीखे ...तेरी तो मैं ...(मारने दौड़ती है । सेविका १ और ३ मंच का चक्कर लगाते हुए मंच से बाहर निकलती हैं ।)

(पर्दा गिरता है ।)

दृश्य : तीन

(धोबी की झोपड़ी । धोए हुए कपड़ों की बड़ी-सी गठरी ढोते हुए धोबी घर लौटता है । घर में पहुँच कर पत्नी को ऊँची आवाज़ देकर बुलाता है, परंतु कोई आवाज़ नहीं आती ।)

धोबी : ये आज भी घर में नहीं है । कहाँ जाती है आज कल ये !? अरे कालु की माँ ! पानी तो ले आओ । प्यास लगी है । जल्दी करो । ये कपड़े भी सुखाने हैं । अरे ! सुनती क्यों नहीं हो? (गुस्सा करते हुए ...) कहाँ मर गई कालु की माँ ! भूख भी लगी है जोरों की । कहाँ मरती है दिन भर ये ! आज मैंने इसकी टाँगें न तोड़ी तो मेरा नाम नहीं ...(मंच के चारों ओर अंटशंट बकते हुए घूमता है और बाहर निकलता है ।)

लाडली : (चुलबुले ढंग से गुनगुनाते हुए मंच में प्रवेश) राम गए चौदह वर्ष के लिए वन में, स्वर्णमृग पकड़ने गए पंचवटी वन में ...कहकर गाने के दिन भी चले गए अब । राम के वनवास से लौटने और राजा बनने के बाद तो राज्य में चमत्कार ही हुआ है । हर कहीं सब कुछ अच्छा ही अच्छा होता जा रहा है । लेकिन मेरे घर में भी कुछ अच्छा होगा या नहीं ।आज भी मेरे घर आने में देरी हो गई । पता नहीं, मेरा पति आज मेरा क्या हाल करेगा ? डर ही लग रहा है । - ऐसे में बहुत ही क्रोधित मुद्रा में धोबी का प्रवेश ।)

धोबी : अच्छा ! महारानी का शुभागमन अब और इधर से हो रहा है !? औरत होकर इतनी रात को तू अपने घर आ रही है ? आज तू घर में घुसकर तो देख । तेरी तो आज मैं हड्डी-पसली तोड़ कर रख दूँगा । मैं सुबह से शाम तक मर-मर कर काम करता हूँ, कपड़े धोता हूँ, थकान से चूर होकर घर लौटता हूँ ।और तू...तू दिनभर परपुरुषों के संग रंगरेलियाँ मनाती है और मेरी जगहँसाई करती फिरती है ?

लाडली : मैं मेरी बड़ी दीदी के यहाँ गई थी । मेरे आने में कुछ ही तो देरी हुई !

धोबी : कल छोटी दीदी के यहाँ, आज बड़ी दीदी के घर, कल छोटे भैया के यहाँ, परसों बड़े भैया से मिलने । तेरे सारे बहाने मैं समझता हूँ । -लाडली धोबी की लाई हुई कपड़ों की गठरी खोलने के लिए पहुँचती है और गठरी खोलने लगती है ।) छुओ मत मेरी गठरी को ! जरूरत नहीं है तुझे कपड़े सुखाने की । मैं खुद सुखाऊँगा मेरे धोए हुए कपड़े । निकल जा तू मेरे घर से, कलमुँही, अभी ! इसी वक्त !! -लाडली के बाल खींच कर उसे जमीन पर घसीटता है । लाडली जोर-जोर से रोने लगती है ।)

लाडली : (रोते हुए) हे राम ! मुझे बचाओ, प्रभु ! मुझे बचाओ !!

धोबी : अच्छा ! राम-राम !! आठों पहर कुछ करती तो नहीं और राम का नाम लेती हो ! काम की न काज की, दुश्मन अनाज की । निर्लज्ज ! (लाडली को बेरहमी से पीटने लगता है ।)

लाडली : राम की कसम ! भगवान की कसम !! बहुत दिन हो गए थे, इसलिए मैं बड़ी दीदी के यहाँ गई थी । विश्वास कीजिए, स्वामी ! राम की कसम ।

धोबी : राम का तो नाम भी मत लो मेरे सामने, समझी ? रावण से अपहृत पत्नी को स्वीकार करने वाले निर्लज्ज राम जैसा नहीं हूँ मैं । दूर हो जा मेरे सामने से । निकल जा घर से, इसी वक्त ! तेरा चेहरा भी नहीं देखना है मुझे । (मंच से बाहर

निकलता है । लाडली रोते हुए विलाप करती है । करुण स्वर में गीत बजता है । राम भी उसी रास्ते से निकल रहे होते हैं और धोबी-धोबिन का सारा प्रसंग देख-सुनकर हतप्रभ रह जाते हैं ।)

दृश्य : चार

(दरबार का बैठक कक्ष । सेनापति, राजगुरु, राजकर्मचारियों के बीच गंभीर बैठक । राम का अस्थिर मुद्रा में बैठक कक्ष में चलना- फिरना ।)

नेपथ्य से : रावण अपहृत पत्नी को स्वीकार करने वाले राम की तरह निर्लज्ज नहीं हूँ मैं, समझी? - आवाज़ प्रतिध्वनित होती है ।)

सेनापति : कुछ क्रोधित स्वर में) महाराज ! आदेश हो तो शिरोच्छेदन कर दूँ इस धोबी का ?

राजगुरु : राजन ! नादान धोबी की सामान्य- सी बात पर इतने चिंतित न हों । राज्य भर लोक कल्याणकारी कार्यों को पहले की ही तरह निरंतरता दें ।

रामचंद्र : गुरुदेव ! भले ही एक धोबी द्वारा कही गई हो, परंतु यह कोई सामान्य बात नहीं है । उसको मात्र नहीं, अन्य अनेक प्रजाओं को भी यही भ्रम है कि अकारण मैं सीता को साथ लेकर आया ।

राजगुरु : राजन ! सभी प्रजाओं का और प्रजाओं की सभी बातों का समाधान नहीं हुआ करता । आप स्वयं को संभालिए ।

रामचंद्र : नहीं गुरुदेव ! मेरे लिए तो मेरी सभी प्रजाएँ एक समान हैं । उनके एक-एक प्रश्न का उत्तर देना, उनकी एक-एक समस्या का समाधान करना मेरा दायित्व और कर्तव्य है । उस पर भी यह तो मेरी सत्ता और मेरे ही व्यवहार पर आया हुआ गंभीर प्रश्न है ।

राजगुरु : इस प्रश्न और समस्या का भी समाधान तो है, राजन ! परंतु अति कठिन है ।

रामचंद्र : कितना भी कठिन क्यों न हो, परंतु इस समस्या को संबोधित करना ही होगा । इसका समाधान निकालना ही होगा । परामर्श करें, गुरुदेव !

राजगुरु : (गंभीर स्वर में) इसका एकमात्र, विकल्पहीन एवं पूर्ण समाधान है-- अग्नि- परीक्षा ...- उपस्थित सभी आश्चर्य की दृष्टि से एक आपस को देखते हैं ।)

सभी : (एक साथ) अग्नि परीक्षा !? ... अर्थात सीता-दहन??

राजगुरु : (दृढ़ आवाज़ के साथ) हाँ । सीता को अग्नि परीक्षा से गुजरना होगा, वह भी सार्वजनिक रूप में । सीता में सतता होगी तो अग्नि देवता उनकी कुछ भी हानि नहीं पहुँचा सकेंगे । सभी प्रजाओं को भी यह विश्वास करना ही होगा कि सीता पतिव्रता नारी है । उन्हें यह सीख और प्रेरणा मिलेगी कि उन्हें भी सीता का सा खरा चरित्र अपनाना होगा ।

रामचंद्र : (मंच के चारों ओर फेरा लगाते हैं और हिम्मत बटोरते हुए कहते हैं) सेनापति !

सेनापति : आज्ञा हो, महाराज !

रामचंद्र : गुरुदेव के परामर्श का पालन किया जाए । दरबार के आँगन में सीता की अग्नि परीक्षा के लिए मंडप की व्यवस्था की जाए ।

सेनापति : जो आज्ञा, महाराज !

(राजसभा में उपस्थित सभी एक दूसरे की ओर अचंभित और आतंकित दृष्टि से देखते हैं । दृढ़ पदचाप के साथ राम का मंच से प्रस्थान । धीरे-धीरे मंच से सभी का प्रस्थान ।)

दृश्य : पाँच

(अग्नि परीक्षा के लिए मंडप तैयार किया जाता है । कहारों के द्वारा सीता को डोली में मंडप तक लाया जाता है । मंडप में अग्नि प्रज्वलन किया जाता है । अग्नि के प्रकाश में सभी प्रजाओं को भयभीत मुद्रा में देखा जाता है । लोगों के रोने की आवाज भी सुनाई देती है । गंभीर मुद्रा में सीता का अग्नि प्रवेश । कुछ ही क्षणों में आग बुझ जाती है । अग्नि परीक्षा में सीता उत्तीर्ण होती है । उपस्थित सभी प्रजाओं में आनंद की लहर दौड़ जाती है और खुशी के निकल आते हैं । सीता और राम की जयजयकार होती है । श्री रामचन्द्र जी की जय ! सीता माता की जय ! सीता माता की जय !! सीता माता की जय !!! ...)

दृश्य : छह

(गाँव की महिलाएँ पानी भरने के लिए गगरी, मटकी या अन्य बर्तन लेकर एक पहाड़ी झरने के नीचे पहुँचती हैं । सभी के बीच धीरे-धीरे 'सीता दहन' नाटक के बारे में चर्चा होने लगती है ।)

मनसरी : अरे ! आज तो कमाल हो गया । हम सभी एक ही समय में पानी भरने आ पहुँचे, जैसे हमने पहले ही तय कर लिया हो । यह झरना भी हर साल सूखता जा रहा है । पता नहीं इसकी कम होती धारा कब तक हमारी प्यास बुझाएगी ।

तीला : सही कहा, मनसरी ।और सुनो न ! इस पानी की चिंता भी सिर्फ़ हम औरतों को ही है । सवेरे उठो, हाथ- मुँह धोओ, घर-आँगन झाड़ू लगाओ और निकलो बर्तनें लेकर पानी भरने । और यहाँ आकर करते रहो इंतज़ार अपनी बारी का । पानी लेकर घर लौट भी नहीं पाए होंगे, डाँट- फटकार शुरू हो चुकी होती है सबकी कि चाय-नाश्ता बनाने में देर हो गई । घर के मर्दों को तो देखो, कितना आराम है इनको । देर रात को गाँव घूम कर लौटते हैं । खाया- पिया, शोर मचाया । सुबह भी देर तक सोते हैं । और घर में राज भी उन्हीं का चलता है । - राधा भी पानी भरने कई बर्तनों सहित पहुँचती है ।) अरे वाह ! आज तो राधा भी सुबह-सुबह ही पानी भरने ...

राधा : हाँ, तीला ! आज कुछ जल्दी है । और सुनाओ, क्या गप्पें हाँक रही थी ?

तीला : गप्पें नहीं हाँक रही थी, राधा । घर- घर की कहानी बता रही थी । इन मर्दों को तो देखो ! सुबह जगने से लेकर रात सोने के वक्त तक काम करती हैं घर की औरतें , और घर में हुकूमत चलती है मर्दों की ।

राधा : तुमने सोलह आने सही कहा, तीला । सोचकर भी हैरानी होती है । दिन-रात मर-मर कर काम करती हैं घर की बहुएँ-औरतें । फिर सास-ससुर से लेकर अपने ही शौहर तक की खरी-खोटी भी उन्हींको सुननी पड़ती है । - बर्तनों में पानी भरने लगती है ।) क्या कहती हो, उत्तरा बहन ? तुम तो स्कूल पढ़ाती हो और नारी अधिकारों के बारे में ज्यादा जानती भी हो ।

उत्तरा : बात पढ़ाने और ज्यादा जानने की नहीं है, राधा दीदी । यह तो सबकी भोगी हुई बात है । आप लोग तो भुक्तभोगी हैं । आप लोगों से ज्यादा इन दुख-कष्टों के बारे में कौन जानता है ? उस दिन स्कूल में 'सीता दहन' नाटक नहीं देखा आपने ? धोबी धोबिन की कैसी धुलाई करता है ! सही क्या है, गलत क्या है जाने बिना, घर में न होने की छोटी-सी बात पर बुरी तरह से मार-पीट कर अपनी ही पत्नी को घर से बाहर निकाल देता है । बेचारी धोबिन ! कभी धोबी देर से घर लौटे तो क्या उसे भी घर में घुसने से रोका जाना चाहिए ? किसीने सोचा है इस पर ? क्या औरतें ढोल हैं कि जितना चाहो, पीटा जाए ? गँवार, बेशरम कहीं के !

मनसरी : बिलकुल सही कहा । मुझे भी बहुत बुरा लगा । खुद को संभाल नहीं पाई मैं तब । -आँखों से निकलते आँसू छिपाने का असफल प्रयास करती है ।)

तीला : मेरी हालत भी तुम्हारी ही तरह थी । सीता पर विधि का अन्याय भी तो हद से जूयादा ही हुआ था । पति के साथ वनवास पर उसने कितने कष्ट सहे होंगे । रावण द्वारा अपहृत हुई । अपने पति से बिछड़ कर महीनों पीड़ा में गुजारे । रावण से युद्ध लड़कर राम ने सीता का उद्धार तो किया, लेकिन अयोध्या लौटने के बाद भी उसके कष्ट कम नहीं हुए । अपनी पवित्रता और पतिव्रता की अग्नि परीक्षा देनी पड़ी । इतनी शंका थी तो राम ने रावण के साथ युद्ध क्यों लड़ा ? सीता का उद्धार क्यों किया? अपने साथ अयोध्या लाए ही क्यों ?

राधा : और हमारे समाज का विधान तो देखो । हमेशा सीताओं को ही अग्नि परीक्षा देनी पड़ती है, चाहे वह कितनी ही चरित्रवान क्यों न हो । पुरुष कितने दुश्चरित्र होते हैं, क्या हमें पता नहीं ? सच कहूँ तो हम महिलाओं पर उंगली उठाने और सवाल करने का उन्हें कोई हक नहीं है ।

उत्तरा : राधा दीदी ने बिलकुल सही कहा । हर युग में सिर्फ महिलाओं पर ही अत्याचार हुआ है । कभी सुना है, पुरुषों की भी अग्नि परीक्षा हुई हो ? पुरुष कितना भी दोषी हो, समाज की दृष्टि में वह हमेशा दूध का धुला है । द्रौपदी को जुए में दाँव पर रखने का अधिकार युधिष्ठिर को किसने दिया ? कौरव की राजसभा में जब द्रौपदी का चीरहरण हो रहा था, तब उस सभा के महाविद्वान मंत्रीगण, बड़े-बुजुर्ग इस दृश्य को कैसे चुपचाप देख सके होंगे ? धिक्कार है उनकी वीरता, शास्त्रज्ञान और विद्वत्ता पर ! द्रौपदी को वस्त्र दान कर उसकी इज्जत बचाने वाले कृष्ण को तो देखो, सोलह सौ गोपियों के पति के रूप में, उनके साथ रास रचाने वाले के रूप में वह खुद ही बदनाम है ।

तीला : 'मर्दों की दस-दस पत्नियाँ' जैसी तो हमारे समाज में कहावत ही है । ये लोकोक्तियाँ, ये कुसंस्कार ऐसे ही नहीं बने हैं । पौराणिक शास्त्र और ऐतिहासिक कथानकों के ऐसे निंदनीय और बेमेल प्रसंगों के कारण ही समाज में नारी-पुरुषों के बीच विभेदकारी संस्कारों का चलन हुआ है । हम औरतें युग-युगांतर से इन्हींका शिकार बनती आ रही हैं ।

मनसरी : 'सीता दहन' नाटक ने भी हर देखने वाले के मन में तहलका ही मचाया न ?

उत्तरा : सच कहा, मनसरी ! इस नाटक ने तो हमारे मन-मन को आंदोलित कर दिया । हम सबको भी अब न्याय और समानता के लिए आवाज़ उठानी ही पड़ेगी । महिलाओं द्वारा हर पल, हर क्षण अग्नि परीक्षा मात्र देते रहने की परंपराओं का, विभेदकारी सामाजिक चिंतन और संस्कारों का हमें अंत्य करना होगा । सारा यश पुरुषों को और सारा अपयश सिर्फ महिलाओं पर ? ऐसे कुचिंतनों के खिलाफ़ हमें जिहाद छेड़ना चाहिए । क्यों साथियो ?

राधा : लेकिन कैसे, दीदी ?

उत्तरा : पीड़ितों की आवाज में आवाज मिलाकर । उनकी आवाज को और भी जोरदार बनाकर । मानव सभ्यता का इतिहास मानव संघर्ष का भी इतिहास है । उसने हमेशा गलत चिंतन और संस्कारों के खिलाफ़ बगावत की है । समाज और प्रकृति के प्रकोपों के विरुद्ध एक होकर लड़ाई लड़ी है ।

सभी : (एक साथ) हाँ, हम सबको एक होकर लड़ना ही होगा । हाँ, लड़ना ही पड़ेगा । -एकता दर्शाने के लिए सभी की बंद मुट्ठियाँ हवा में लहराती हैं । संदेशमूलक गीत गूँजता है । जोशीला नृत्य प्रदर्शित होता है । नृत्य में और भी महिलाएँ आकर साथ देती हैं ।)

(पर्दा गिरता है ।)

अनुवादक : पुरुषोत्तम पोखेल

एकाङ्की

दहेज

शिवशरण प्रसाद कुर्मी

स्थान : धर्मनगर गाँव

परिवार एक के पात्रों का परिचय

राम विलाश चौधरी : घर का मालिक
मनमाया चौधरी : राम विलाश की पत्नी
महेश चौधरी : राम विलाश और मनमाया का पुत्र, पेशे से यंत्री

स्थान : हरिहरपुर

परिवार दूसरे के पात्रों का परिचय

राम गोपाल चौधरी : धनाढ्य, घर का मालिक
धनेश्वरी चौधरी : राम गोपाल की पत्नी
फूलमती चौधरी : राम गोपाल चौधरी और धनेश्वरी चौधरी की पुत्री, अशिक्षित
पंडित : रामराज तिवारी बाबा

दृश्य : एक

(राम गोपाल बाहर बरांदा में बैठा हुआ है । अचानक उसे कुछ यादी है और वह अपनी पत्नी धनेश्वरी को आवाज देता है)

राम गोपाल : (बुलाते हुए) अरे,ओ फूलमती की माँ ! क्या कर रही हो ? जरा बाहर आओ तो !

नेपथ्य से : खाना पकाने के लिए तैयारी कर रही हूँ। बहुत देर हो गई है । खाना तो पड़ेगा न !

राम गोपाल : अरे कोई बात नहीं । पहले यहाँ आ जाओ, थोड़ी बात हो जाय । खाना तो बनता रहेगा । (मंच पर चढ़ती हुई धनेश्वरी अपनी साड़ी का पल्लू ठीक करती है, फिर कहती है ।)

धनेश्वरी : क्या बात है ? क्यों चिल्ला रहे हैं ?

राम गोपाल : अरे बात क्या होनी है ? तुम्हें तो किसी बात की चिंता होती ही नहीं है । बिटिया विवाह करने योग्य हो चली है । इसीलिए मैं तुमसे कुछ बातचीत करना चाहता हूँ ।

धनेश्वरी : इसी को कहते हैं कि विना लगन की शहनाई बजाना । यहाँ खाना पकाने में देरी हो रही है, और आप हैं कि बेटी की शादी की बात ले बैठे हैं । खाने-पीने के बाद भी तो यह बात हो सकती थी न ? अच्छा, चलिए । कहिए, क्या बात है ? कहीं लड़का-वड़का देख रखे हैं क्या ?

राम गोपाल : (सोचते हुए) पता चला है, धर्मनगर में एक लड़का है । वो जो, राम विलाश बाबू हैं, उन्हीं का बेटा है । बड़ा पढ़ा-लिखा है, घर-परिवार भी अच्छा है ।

धनेश्वरी : (कुछ देर की चुप्पी के बाद) लेकिन हमारी बिटिया तो अनपढ़ है न । क्या वे शादी के लिए राजी हो जाएंगे ?

राम गोपाल : तुम भी अजीब बात करती हो ? अरे आज का जमाना लेन-देन का जमाना है । जब रुपयों की गड्डी सामने नजर आएगी, तो वे खुद-व-खुद मान जाएंगे । भा.रू दस लाख नगद और चार पहिए वाली गाड़ी दूंगा । चार-छह भर के गहने दूंगा । फिर देखूंगा, कैसे नहीं मानते हैं ?

धनेश्वरी : अगर ऐसी बात है, तो फिर देर मत कीजिए । जाइए, जल्दी से पंडित काका को बुलाकर ले आइए । मैं खाना पकाने जा रही हूँ । ***(इतना कहकर धनेश्वरी मंच से नीचे उतर जाती है और राम गोपाल चौधरी पंडित रामराज तिवारी के घर की ओर चल देता है ।)***

दृश्य : दो

(राम गोपाल पंडित रामराज तिवारी के दरवाजे पर खड़ा होकर पुकारने लगता है ।)

राम गोपाल : (पुकारते हुए) काका ! पंडित काका ! अंदर हैं क्या ? बाहर तो आइए !

पंडित : (घर के अंदर से बाहर निकलते हुए) अरे कौन है भाई ? ...अरे... चौधरी बाबू आप हैं ! आप अचानक मेरे घर ! क्या बात है ? किधर से चले आ रहे हैं ?

राम गोपाल : कहीं से नहीं...अपने घर से आ रहा हूँ। और आपसे कुछ जरूरी सलाह करनी है, इसीलिए आया हूँ।

पंडित : (सर हिलाते हुए) हाँ...हां.. कोई बात नहीं ...क्या बात है ? किस चीज की सलाह करनी है ? अच्छा पहले बैठ जाइए। ***(राम गोपाल वहीं बगल में बैठ जाता है, और कहना शुरू कर देता है।)*** बात यह है पंडित काका, ..कि बिटिया शादी योग्य हो गई है। उसकी शादी करने को सोच रहा हूँ।

पंडित : (हंसते हुए) तो इसमें कौन बड़ी बात है। ठान दीजिए यग। और आपके पास भगवान का दिया हुआ सब कुछ है। न धन की कमी है, न मन की कमी है। फिर किस बात की चिंता है ?

राम गोपाल : (सांस लेते हुए) सो तो ठीक है, काका। मैं क्या कह रहा था, वो धर्मनगरवाले राम विलाश बाबू हैं न, उनका एक लड़का है। क्यों न उसी से अपनी बिटिया की शादी करवा दी जाय।

पंडित : (हा...हा..हा...हा हंसते हुए) अरे मान ! आपने मेरे मुंह की बात छीन ली। मैं कई दिनों से यही सोच रहा था। शुभ कार्य में देरी नहीं करनी चाहिए। चलिए, अभी चलते हैं।

राम गोपाल : (हंसते हुए) ठीक है।

(उसके बाद राम गोपाल चौधरी और पंडित धर्मनगर की ओर चल देते हैं।)

दृश्य – तीन

(राम गोपाल और पंडित धर्मनगर के राम विलास के घर के सामने पहुंच जाते हैं। और)

पंडित : अरे ! राम विलास बाबू हैं क्या घर में ?

राम विलास : (घर से बाहर निकलते हुए) अरे..प्रणाम् पंडीजी ! आइए..आइए कहाँ से आ रहे हैं ? और मेरे यहाँ ?

पंडित : कहीं जाने की तैयारी है क्या ?

राम विलास : हाँ, सोच रहा हूँ, थोड़ा झंडेनगर से हो आऊं। आप बताइए, कैसे आना हुआ ?

पंडित : (परिचय कराते हुए) इनसे मिलिए। आप हैं राम गोपाल बाबू...यह हमारे गाँव के हैं। गाँव में इनकी बड़ी इज्जत है। धन संपत्ति की कमी नहीं है।

राम विलास : सो तो ठीक है, मगर ... .

पंडित : यह आपके पास एक खास मकसद से आए हैं।

राम विलास : कहिए, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ ?

पंडित : (हंसते हुए) अरे राम विलास बाबू ! सेवा की बात नहीं है। बात यह है कि ये अपनी बेटी की शादी आपके बेटे से करना चाहते हैं ? अब आप कहिए, आपका क्या विचार है ?

राम विलास : (सोचते हुए) शादी तो करनी ही है। मगर कैसे ...यह समझ में नहीं आ रहा

पंडित : इसमें ज्यादा समझने की क्या बात है ? आप घर परिवार में सलाह कर लीजिए और ... (राम गोपाल की ओर देखते हुए) अरे चुप क्यों हैं बाबू, आप भी तो कुछ कहिए। पहले तो बहुत बेसब्र हो रहे थे...अब क्या हुआ ?

राम गोपाल : कुछ नहीं पंडितजी ! आप बोल ही रहें हैं..तो मैं क्या ... । आप लोग जो तय करें, हमें मंजूर है। बस मेरी यही इच्छा है कि मेरी बेटी की शादी इस घर में हो जाय।

पंडित : राम विलास बाबू ! अब आप खुलके कहिए...अपने बेटे की शादी कैसे करेंगे ? दान दहेज की चिंता विल्कुल मत कीजिए। आप जो कहेंगे, राम गोपाल बाबू पूरा करेंगे। एक ही तो बेटी है।

राम विलास : अब मैं क्या कहूँ ? बेटे की पढ़ाई-लिखाई में खर्च तो काफी हुआ है...दहेज तो...

पंडित : अरे ...अरे इसकी चिंता मत कीजिए। खुलकर कहिए..क्या कितना चाहिए ? आप कुछ बोलें, इससे पहले मैं एक वात कहना चाहता हूँ। राम गोपाल बाबू अपनी बेटी की शादी में दस लाख भा.रू नगद के साथ-साथ एक चार पहिए वाली गाड़ी और चार-छह भर का जेवर देना चाहते हैं। और जब माड़ो हिलाने की विधि की जाएगी, तो एक तोले की अंगूठी अलग से ... अब कहिए... क्या विचार है ?

राम विलास : मुझे जरा अपनी पत्नी से सलाह करनी होगी। आखिर माँ है ?

राम गोपाल : क्यों नहीं हुजूर... बिल्कुल कीजिए। हम लोग यहीं इंतजार करेंगे।

(राम विलास अपने घर के अंदर चला जाता है। राम गोपाल और पंडित वहीं बैठे रह जाते हैं।)

दृश्य : चार

(राम विलास की पत्नी अपने पलंग पर बैठी हुई है। स्वेटर बीन रही है। राम विलास उसके बगल में बैठ जाता है और ...)

राम विलास : सुन रही हो ... लड़की वाले आए हैं। राम गोपाल चौधरी नाम है...बड़े धनी मनी आदमी हैं। हमारे बेटे से अपनी बेटी की शादी करना चाहते हैं।

मनमाया : कहाँ के हैं ? मतलब उनका घर कहाँ है ?

राम विलास : अरे, हरिहरपुर के हैं। दहेज काफी मिलेगा।

मनमाया : बात तो ठीक है। हमें अपने बेटे की शादी भी करनी है। लेकिन यह क्या... आप सीधे दहेज की क्या बात करने लग गए ? लड़की कैसी है ? सुंदर है कि नहीं...पढ़ी-लिखी है कि नहीं ? देखिए जी, मैं कह देती हूँ...मुझे नगद दहेज की लालच नहीं है। मुझे नहीं चाहिए दहेज वगैरह। मुझे तो ...

राम विलास : मतलब ! तुम कहना क्या चाहती हो ?

मनमाया : मैं यही कहना चाह रही हूँ कि मुझे लड़की सुंदर और पढ़ी-लिखी चाहिए। संस्कारी चाहिए। समय के अनुसार चलने वाली चाहिए।

राम विलास : अरे ! यह तुम क्या कह रही हो ?

मनमाया : मैं बिल्कुल सही कह रही हूँ। मुझे दहेज नहीं चाहिए। मैंने अपने छप्पन वर्ष की आयु में समझ लिया है कि दहेज का कोई मतलब नहीं होता। जीवनसाथी से मतलब होता है। पैसा का क्या ? आज है, कल नहीं रहेगा। लेकिन शिक्षा तो जीवन भर रहेगी। और शिक्षित लड़की ही घर को स्वर्ग बनाती है।

राम विलास : तब क्या जवाब दूं, उन्हें ?

मनमाया : पहले आप यह बताइए कि लड़की पढ़ी-लिखी है कि नहीं ?

राम विलास : (सोचते हुए) शायद नहीं।

मनमाया : शायद का क्या मतलब ?

राम विलास : तो क्या... उन्हें मना कर दूं ?

मनमाया : एकबारगी ऐसा कुछ मत कहिए... धीरे से उन्हें समझाइए कि जमाना बदल रहा है ... आज के जमाने में दहेज की उतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी शिक्षा दीक्षा की है। आप यही कह दीजिए कि हमें पढ़ी-लिखी और सुंदर लड़की चाहिए, दहेज नहीं ... वे खुद-व-खुद चले जाएंगे। वैसे आप क्या चाहते हैं ?

राम विलास : मैं..?

मनमाया : हाँ, आप !

राम विलास : मैं तो अपने घर परिवार और बेटे की रजामंदी चाहता हूँ। खुशियाँ चाहता हूँ मैं थोड़ा बहक गया था...अच्छा किया... तुमने मेरी आँखें खोल दीं। सचमुच जमाना बदल रहा है। (इतना कहकर राम विलास बाहर निकलता है। लेकिन वहाँ राम गोपाल और पंडित नहीं होते हैं... शायद उन लोगों ने इनकी बातें सुन ली थी... वहाँ से जा चुके होते हैं।

अनुवाद : गोपाल अश्क

एकाङ्की/अमेरिका (America)

चौध

एलिस गेर्स्टेनबर्ग ('Fourteen' by Alice Gertensberg)

पात्रहरू
श्रीमती होरेस प्रिङ्गल : फेसनमा सोख भएकी महिला
इलेन : फेसन दुनियाँमा पहिलो पाइला राख्न खोजिरहेकी होरेसकी जवान छोरी
डनम : घरेलु सहयोगी

(दृश्य: न्युयोर्कको घरको भान्साकोठा। एउटा लामो टेबुल जसको दुई छेउमा एक-एकओटा कुर्ची छन् र टेबलको दुई किनारमा छ-छओटा कुर्ची गरी जम्मा चौधओटा कुर्ची सजिएका छन्। श्रीमती प्रिङ्गल आइपुग्दा घरेलु सहयोगी डुनम टेबलमाथि साजसज्जाको अन्तिम तयारी गरिररहेकी हुन्छे। प्रिङ्गल फेसनमा चाख भएकी र सुन्दर महिला हुन् जो आकर्षक सायङ्कालीन गाउन लगाउने गर्छिन्। उनी उत्तेजित हुने स्वभावकी छन् तर सगँसगै योग्य र कर्मशील अनि जीवन्त र हँसिली पनि। उनी फूलको बुके र त्यसलाई प्याक गर्न प्रयोग गरिएको कागजको खाली डब्बा लिएर हतारमा भित्र पस्छिन्।)

श्रीमती प्रिङ्गल : डनम, मैले भर्खर हार्परबाट सुनें कि उनलाई बिरामी परेर ओछ्यान परेको साथीले बोलाएको छ। उसैले मलाई यी फूलहरू पठायो– योसम्म त ठिक छ। तर अन्तिम अवस्थामा आएर भोजनको निम्तो अस्वीकार गर्ने जवान मानिसहरूलाई म समर्थन गर्न सक्तिनँ।

डनम : *(श्रीमती प्रिङ्गललाई सान्त्वना दिँदै)* म्याडम, मलाई यो डब्बा र कागजहरू दिनुहोस्।

श्रीमती प्रिङ्गल : *(पहिले टेबल अनि आफ्नो घडीमा अधीरतापूर्वक हेर्दै)* तिमीले यति राम्ररी सजावट गरिसकेपछि त यो एकदम नकाम भयो र अहिले अबेर पनि हुँदै छ। कुनै पनि क्षण यहाँ कोही आइपुग्न सक्छ। भान्से तयार त छ ?

डनम : भान्से त सधैंझैं खुब रिसाएकी छ, हजुर।

श्रीमती प्रिङ्गल : यो सुनेर मलाई खुसी लाग्यो। ऊ एउटा कलाकार जस्तै छे। आवेग जति शान्त, काम त्यति राम्रो। उसले हामीले राम्रो खाना खुवाउन्जे म उसले केके कुराको कसम खान्छे भन्ने त्यति वास्ता गर्दिनँ। बाँकी तिमीहरू उसलाई दखल नदिनु। अनि गुस्तावचाहिँ कहाँ छ नि ?

डनम : मलाई भन्न खुब अप्ठ्यारो लागिरहेको छ हजुर। तर बाहिर त डरलाग्दो हिउँको आँधी आइरहेको छ। ऊ हिँड्ने पेटी सफा गर्दैछ।

श्रीमती प्रिङ्गल : हत्तेरिका। साँच्ची, मैले त पाल मगाउनुपर्थ्यो। तर यसरी आँधी आउला भन्ने कसले सोच्यो र !

(उनले झ्याल बाहिर हेरिन्। सायङ्कालीन गाउन लगाएकी उनकी छोरी इलेन हातमा नेमप्लेटको बन्डल लिएर दौडिँदै आइन्।)

इलेन : मुमा, नेमप्लेट र नक्साहरू यहाँ छन्। यिनीहरूलाई टेबलमा वरिपरि मिलाएर राखिदिऊँ ?

श्रीमती प्रिङ्गल : हुन्छ, छोरी। म तिम्रो बुबाहजुरलाई खोज्न माथि जान्छु। उहाँ टाई लगाउन पटक्कै जानिसिन्न। *(उनी भान्साबाट बाहिर निस्कन लाग्छिन्।)* डनम, एउटा प्लेट हटाऊ।

डनम : हजुर। एउटा प्लेट हटाऊँ ? होइन हजुर, त्यो पक्का हो कि तपाईं तेह्र जनासँग बस्नुहुने छैन।

श्रीमती प्रिङ्गल : *(पछाडि फर्किंदै)* तेह्र ? किन ? हो त, तिमी ठिक भनिरहेकी छयौ– तेह्र। हामी तेह्र जना त बस्न सम्भवै छैन। यो सब हार्परको लापरवाहीले गर्दा भएको हो। बिरामी साथी, त्यो त केही पनि होइन। ऊ त्यस्तो लापरवाह मानिस हो जो आफ्ना साथीहरूको निम्तोलाई समयमा जवाफ दिँदैन। उसले पठाएको फूल उसलाई क्षमा दिनका लागि हो। तर उसले मलाई नराम्ररी फसायो–यो तेह्रमा। अब यो अन्तिम समयमा मैले कसलाई बोलाउने होला, भगवान्।

छिटो–इलेन–मलाई कुनै उपाय निकाल्न मदत गर। *(उनी हतारिएर टेलिफोन भएको नजिक जान्छिन् र अत्तालिँदै परिचित मानिसहरूको सूची हेर्न थाल्छिन्।)*

इलेन : जर्ज काका त उपलब्ध होइसिन्छ होला नि।

श्रीमती प्रिङ्गल : उनी कहिले खुला दिमागका छैनन्।

डनम : मोर्गानजीलाई बोलाउन सकिन्छ कि, हजुर। उहाँ सधैं कुनै न कुनै ठट्यौली सुनाउनुहुन्छ।

श्रीमती प्रिङ्गल : किन ? हो त, डनम। तिमी चलाख छ्यौ। हेलो सेन्ट्रल–लेक-भ्यु ५९७१–कृपया, अलि छिटो–छोरी इलेन, तिम्रो कपालको गाँठो अलि खुकुलो बनाऊ–त्यसलाई तान त–यता आऊ। *(टेलिफोनमा)* मोर्गन सन्चै हुनुहुन्छ। म श्रीमती प्रिङ्गल बोल्दै छु–बाटोपारिबाट। हो। मोर्गन आउनासाथ मलाई फोन गर्न भन्दिनुहोला। म उहाँ हामीसँगै खाना खानुहोस् भन्ने चाहन्छु। के दश मिनेटजति पछि उहाँ आउने आशा गर्न सकिन्छ ? *(उनले इलेनको कपाल फुकालेर भुवादार देखिने बनाइदिइन्। इलेनले मन नपरेको जस्तो गरेर अनुहार बिगारिन्। तर उनकी आमाले त्यसमा ध्यान दिइनन्।)* उहाँ आउनासाथ मलाई तुरुन्त फोन गर्न लगाउनुहोला है। *(उनले रिसिभर राखिदिन्छिन्।)* अब उनले यो सूचना पाएनन् भने के पो गर्ने होला।

इलेन : ठिकै छ नि, मुमा। मलाई टेबलमा बसिरहनुपर्छ भन्ने के छ र ? यो आखिर हजुरको पार्टी हो। सबै जना मभन्दा बढी उमेरका र विवाहितहरू नै आउने हुन्।

श्रीमती प्रिङ्गल : *(इलेनको हातमा रहेको नक्सातर्फ सङ्केत गर्दै)* मैले तिमिलाई ओलिभर फर्नवर्थको नजिक राखेको देखिनौ र ? करोडौं। उसको महत्त्व करोडौंको छ।

इलेन : खैर, उसले मलाई केही दिने होइन क्यारे।

श्रीमती प्रिङ्गल : उसले तिमिलाई बिहे गर्न सक्तैन र ? तिमीले आफ्ना लागि राम्रो जोडी बनाउने प्रयास गर्दिनौ ? उपयुक्त लागेको सबै मान्छेलाई म तिम्रो नजिक पुऱ्याइदिने छु। बाँकी काम तिमी सम्पन्न गर्न सक्तिनौ ?

इलेन : ऊ जस्तो महत्त्वपूर्ण मानिससँग मेरो विवाह गराउन खोज्नु, त्यसको कुनै अर्थ छैन, मुमा। उसले मलाई नराम्ररी डराउन दिन्छ। मेरो त जिब्रो नै लरबरिन्छ। म ऊसँग त्यत्तिकै डराउँछु जति म वेल्सका राजकुमारसँग डराउँथें होला।

श्रीमती प्रिङ्गल : वेल्सका राजकुमार ? हेर, वेल्सका राजकुमारलाई मेरो घरमा निम्त्याउन मैले के पो गर्थिनँ होला। न्युयोर्कले उनका लागि आफ्नो मुटु नै बिर्सेको छ। मैले फर्नवर्थलाई हिजै मात्र भनेकी थिएँ कि राजकुमारलाई यहाँ ल्याउन म जेसुकै पनि गर्न तयार छु। म जीवनभरका लागि आफ्नो सामाजिक स्तरलाई कायम गर्ने छु। पाहुनालाई सत्कार गर्नका लागि मेरो ख्याती उच्च छ। *(टेलिफोनको घण्टी बज्छ।)* हजुर बोल्दै छु–त्यो फोन–हेलो–श्रीमती सेजविक–हो–म श्रीमती प्रिङ्गल बोल्दै छु–के भन्नुभो ? यो त हुनै सक्तैन–लौ, हिउँमा रोकिनुभो रे–अर्को कार लान सकिन्न र ? *(उनले रिसिभरलाई एउटा हातले छोपेर प्रसन्नताका साथ इलेनसँग कुरा गर्छिन्।)* राम्रो। त्यो विधवी आउन नसक्ने भई–हामी बाह्र जना मात्र हुने भइयो–डनम, अब दुईओटा प्लेट हटाऊ। *(डनमले दुईओटा प्लेट हटाई र इलेनले नेमप्लेट बदली। श्रीमती प्रिङ्गल अझै फोनमा कुरा गरिरहेकी छिन्।)* हो र। त्यो त लाजमर्दो भयो। मलाई सारै नरमाइलो लाग्यो। हरे। हामी तपाईंसँग कसरी सहभागी हुन सकिएला। तर तपाईंले वास्तवमा प्रयास त गर्नुभयो ? हेर्नुस्, म त आँसुमै डुब्न लागें। अहिलेलाई गुडबाई। *(उसले रिसिभर राखेर फेरि डायल गर्छे।)* म खुसी छु किनभने ऊ नआउने भई– सेन्ट्रल– मलाई लेक-भ्यु ५९७१मा जोडिदिनुस् त– डनम, अब दुई जना कम हुने भएपछि दुईओटा ककटेल र कम्तीमा चार ग्लास स्याम्पेन बच्ने भयो। *(टेलिफोनमा)* मोर्गन आइपुग्नुभयो त ? मैले बाटो काट्ने बेलामा फोन गरेर रात्रिभोजका लागि दिएको सन्देश उहाँलाई नभन्नुहोला। अब त निकै अबेर भइसक्यो–बुझ्नुभो नि ? *(उनले रिसिभर राख्छिन्।)* जेसुकै होस्, मैले क्लेमलाई चाहिँ बोलाएकी छु। उसको ऋण पनि तिरियो र स्याम्पेनको पनि बचत भयो।

डनम : पेय पदार्थ त एकदम थोरै छ, म्याडम ! धेरै मनोरञ्जन र पिउनमा रोक लगाउने हो कि !

इलेन : *(दुखी हुँदै)* तर मुमा, यदि बाह्र जना मात्र हुने हो भने त बुबाहजुरलाई टेबलको सिरानपट्टि बस्न मिल्ने छैन।

श्रीमती प्रिङ्गल : तर उहाँ त सिरानपट्टि नै बस्नुपर्छ। घरमूलीलाई छेउतिर धकेल्नु त अशोभनिय कुरा हो !

इलेन : अब अर्को कुनै उपाय नै छैन। अब दुबै छेउमा महिलाहरू हुने छन्।

श्रीमती प्रिङ्गल : *(एकदमै चिन्तित हुँदै)* कस्तो दिक्कलाग्दो ! म त सधैं विर्सन्छु । यो बाह्रको सङ्ख्या त असम्भव नै छ । *(उनी टेबलको चारैतिर जान्छिन् र नेमप्लेट हेर्छिन् ।)* म यीमध्ये कुनै पनि महिलालाई टेबलको सिरानपट्टि राख्न चाहन्नँ । त्यो श्रीमती डार्बी, बिराली जस्ती ! म उसलाई त्यो सम्मान दिन सक्तिनँ अनि श्रीमती... *(टेलिफोनको घन्टी बज्छ ।)* डनम, टेलिफोन उठाऊ ।

डनम : हेलो ! यो श्रीमती प्रिङ्गलको आवास हो, कुनै सन्देश छ कि ? हुन्छ, सर ! के भन्नुभो, सर ? डार्बी ! डाक्टरले तपाईंको छोरालाई ठेउला भयो भन्यो !

श्रीमती प्रिङ्गल : ठेउला ! इलेन !

इलेन : हजुर मुमा !

डनम : हजुर, सर । *(उसले रिसिभरलाई होल्डमा राख्छे ।)* डार्बीले क्षमायाचना गर्नुभएको छ । सरुवा रोग भएको कारणले श्रीमान् र श्रीमती डार्बीले उहाँहरूको घरमा पाहुना रहनुभएका श्रीमान् र श्रीमती फ्लेटवुडका तर्फबाट पनि क्षमा माग्नुभएको छ ।

श्रीमती प्रिङ्गल : थप चार जना घट्यो ।

इलेन : त्यसो भए त अब आठ जना मात्र बाँकी भयो ! डनम, छिटो प्लेटहरू हटाऊ ।

(ऊ कुर्सी हटाउँछे र हत्तारिँदै चाँदीका थालीहरू बटुल्न थाल्छे । श्रीमती प्रिङ्गल झन् बढी दुखी हुँदै सहायता गर्छिन् । त्यस्तो अस्वाभाविक सहयोग देखेर डनम अन्योलमा पर्छे र अनावश्यक रूपमा यताउता गर्न थाल्छे । प्लेटहरू हटाउँछे, केही फुटाउँछे, चाँदीका थाली भुइँमा खसाल्छे, उद्देश्यविहीन हतारो गर्छे र बुढी औँलाले बाँकी औँलालाई चलाउँछे ।)

श्रीमती प्रिङ्गल : यस्तो अवस्थामा बोलाउन सकिने कोही छन् त ?

इलेन : ह्याटवुड दम्पती !

श्रीमती प्रिङ्गल : उनीहरूले निम्तो गर्दा पेय पदार्थ खुवाउने गरेका छैनन् । अब म उनीहरूलाई मेरोमा पेयका लागि निम्ता गर्न सक्तिनँ ।

इलेन : ग्रीन दम्पती !

श्रीमती प्रिङ्गल : उनी मलाई मन पर्दैनन् ।

इलेन : श्रीमान् कोन्ले !

श्रीमती प्रिङ्गल : मैले कति पटक निम्ता गरेपछि पनि उसले त कहिल्यै पनि रात्रिभोजका लागि बोलाएको छैन ।

इलेन : हेस्टर लोड्ले !

श्रीमती प्रिङ्गल : तिमी र ओलिभर फर्नवर्थ भएको एउटै टेबलमा उसलाई बोलाउन चाहन्नँ । ऊ असाध्यै सुन्दर र चलाख पनि छे ।

इलेन : हाम्रो टेलिफोन डायरी कता छ ? *(उनले डायरीतिर आफ्नो औँला बढाउँछिन् ।)* टुपर दम्पती कसो हुन्छ ?

श्रीमती प्रिङ्गल : ती टुपर ! भगवान् रक्षे गर । इलेन, उनीहरूको परिवारमा छ जना छन् ।

इलेन : त्यसो हो भने त हाम्रो सङ्ख्या फेरि चौध नै हुने छ । त्यसपछि बुबाहजुर टेबलको सिरानपट्टि बस्न सकिसिन्छ ।

श्रीमती प्रिङ्गल : लौ, एक पटक कोसिस गरिहेर । म दौडेर जान्छु र तिम्रा बुबाहजुरलाई बैठक कोठा नचलाउन भन्छु । *(उनी बाहिर जान्छिन् ।)*

इलेन : *(टेलिफोनमा)* रिजवे ९३२५—इलेन प्रिङ्गल बोल्दै छु—के म टुपरसँग बोलिरहेकी छु ? ए, एला, हेलो ! तिमीहरूले रातिको खाना त खाएका छैन होला- हामीले घरमा एउटा भोजको आयोजना गरेका थियौं तर अन्तिम समयमा सबैले आउन नसक्ने भएका छन्, आँधीले गर्दा, तिम्रो परिवार यसो छेउबाट आएर हामीसँगै रात्रिको खाना खान मिल्छ होला ? मुमा र मैले सोच्यौं कि तिमीहरूलाई हामी राम्ररी चिन्दछौं । त्यसैले यस्तो अन्तिम समयमा बोलाउँदा पनि अप्ठेरो नपर्ला । के तिमीहरू आउन सक्छौ ? ए, हस् । *(डनमालाई)* डनम, अरू छओटा प्लेट थप । *(टेलिफोनमा)* के भन्यौ ? ए हो र ! तर *(उनी अनकनाउँछिन्, लरबराउँछिन् र तनावमा देखिन्छिन् र रिसिभरलाई हातले छोप्छिन् ।)* डनम, छिटो गएर मुमालाई बोलाऊ । *(डनम गएपछि फेरि टेलिफोनमा कुरा गर्दै)* हुन्छ, हुन्छ, पक्का *(उत्साहहीन आवाजमा)* मलाई मन पर्छ; पक्कै हो, हो नि त । ठिकै छ । *(रिसिभर राखेर टाउकोमाथि हात राख्दै खुइय गर्छिन् ।)* महान् सिजर, अहिले मैले के पो गरें ?

श्रीमती प्रिङ्गल : *(डनमको अघि अघि हतारिँदै पस्छिन् ।)* कुरा के हो ? इलेन ! कुरा !

इलेन : अब मैले बोलिसकें ! मैले गरिसकें, म त्यसबाट निस्किनै सकिनँ, कसै गरी सकिनँ । हजुर यहाँ होइसिन्थेन । मैले जहिले पनि विवेक गुमाउँछु र काम बिगार्छु ।

श्रीमती प्रिङ्गल : तर के ? हामीलाई यसरी तमासे नबनाऊ । त्यस्तो के भयो ?

इलेन : मैले एला र उनको परिवारलाई निम्ता गरेको

छु। उनले निम्ता स्वीकार गरिन् र उनीहरूका दुई जना पाहुना भएको पनि बताइन्। उनीहरूलाई पनि ल्याउँदा हुन्छ भनेर सोधिन् र मैले हुन्छ भनिदिएँ र अब हामी सोह्र जना हुने भयौं !

डनम : *(चिन्तित हुँदै)* सोह्र ! तर म्याडम, त्यति जना त टेबलमा अट्दैनन् नि !

श्रीमती प्रिङ्गल : इलेन ! तिम्रो पारा यस्तै हो; कुनै चलाखी छैन, दुनियाँदारीको ज्ञान छैन, म फोनमा भएको भए विनम्र भएर भन्ने थिएँ कि मेरो टेबल।

इलेन : तर हजुर त फोनमा होइसिन्थ्येन। यस्तो निम्तो त हजुर आफैंले दिनुपर्थ्यो, हजुरलाई थाहै छ कि म सधैं भावुक भइहाल्छु।

डनम : म्याडम, अनि प्लेटहरू ? अनि हामीसँग त कुसन पनि चौधओटा मात्र छन्।

इलेन : म केही खान्नँ।

श्रीमती प्रिङ्गल : तर मलाई लज्जित हुनु छैन, जे छ त्यसैलाई उत्तम किसिमले चलाउनुपर्छ र टेबलमा अर्को बोर्ड फिट गर्नुपर्छ। *(डनम बाहिर जान्छे। श्रीमती प्रिङ्गल र इलेन हतारहतार टेबलपोसको एउटा भाग हटाउँछन्।)*

इलेन : तर मुमाहजुर, म टेबलमै बस्नुपर्छ भन्ने के छ र ?

श्रीमती प्रिङ्गल : *(निश्चितताका साथ कुर्चीतिर देखाउँदै)* तिमी ओलिभर फर्नवर्थको ठिक बगलमा बस्ने छौ ! अब मलाई यो विषयमा फेरि अर्को कुरा सुन्नु छैन।

इलेन : तर हामी अर्को बोर्ड राख्नुको सट्टा उनीहरूलाई यही टेबलमै अटाउन सक्तैनौं र ? मैले प्लेट र कुर्चीहरू नजिकनजिक सारिदिएँ भने !

श्रीमती प्रिङ्गल : के तिमीले यो बिर्सियौ कि टुपरको ज्यान दुई सय पचास पाउन्डभन्दा भारी छ ? र श्रीमती कोन्लेको त कम्मरको घेरो नै देखिन्न। त्यस्तो गर्न सम्भव नै छैन !

डनम : *(बोर्ड लिएर प्रवेश गर्छे।)* म्याडम, भान्से नजिकै छे, उसले त चौध जनाको लागि मात्र खाना बनाएकी छ रे।

श्रीमती प्रिङ्गल : अब म केही गर्न सक्तिनँ। उसले सोह्र जनाको लागि नै तयार गर्नुपर्छ। उसलाई सुपको डब्बा खोल्न भन र तरकारी अनि...।

डनम : तर आइसक्रिम र सर्भ गर्ने कुप !

इलेन : मलाई त्यो मन पर्दैन भनेर बहाना गरिदिउँला नि।

श्रीमती प्रिङ्गल : र म डाइटमा छु भनेर भनिदिन्छु।

इलेन : तर म टेबलमा हुनैपर्छ भन्ने त केही छैन नि।

श्रीमती प्रिङ्गल : चुप लाग ! *(टेलिफोन बज्नासाथ त्यता जान्छिन्।)* टेलिफोन ! *(रिसिभर भएको आफ्नो हात टाउकोतिर पुऱ्याउँदै)* अब के भो ? यसको जवाफ नदिनू ! यसले मलाई पागल बनाउँदै छ। *(उनी आफैं जान्छिन् तर इलेन र डनम त्यही बस्छन्।)* हेलो ! हजुर, श्रीमती प्रिङ्गल बोल्दै छु। ए, हो ! के भन्नुभो ? आँधी ! चिसोले समात्यो ! एकदम खतरनाक छ ! *(उनले डनमलाई टेबलमा बोर्ड नजोड्नलाई इसारा गर्छिन्। डनम, इलेन र श्रीमती प्रिङ्गल राहत महसुस गर्छन् तर श्रीमती प्रिङ्गल टेलिफोनमा अरू नै भाव देखाउँछिन्।)* प्यारी जेसिका, कस्तो दुःखको कुरा ! हो, तिम्रो श्रीमान्‌को कुरा सही हो। यो त मूर्खता नै हुने छ। तोरीको लेप लगाउनू, मह मिसाएको ह्विस्की खानु र आराम गर्नू, कस्तो दुःखद ! *(उनले रिसिभर राखिदिन्छिन्।)* त्यो, गज्जब भयो। अब हामी जम्माजम्मी चौध जना हुने भयौं।

इलेन : तर नेमप्लेट त अब सबै गडबड भयो नि। खास बोलाएका मध्ये जम्मा छ जना मात्र आउँदै छन्। अब हजुरले अर्को नक्सा बनाउनुपर्ने भयो। उनीहरू कता-कता बसुन् भन्ने चाहिसिन्छ ?

श्रीमती प्रिङ्गल : त्यो मलाई देऊ। *(उनी टेलिफोन टेबलमा बस्छिन् जहाँ लेख्ने प्याड र पेन्सिल पनि छ र नयाँ नक्सा बनाउँछिन्।)*

इलेन : यहाँ केही खाली कार्डहरू छन्। *(उनले पुराना कार्डहरू च्यातिदिन्छिन् र डनमलाई सहयोग गर्न जान्छिन् जो टेबलमा बोर्ड थप्ने कामले हायलकायल भएकी छ।)*

श्रीमती प्रिङ्गल : कस्तो लथालिङ्ग हो ! मैले त्यो नक्सा बनाउन घण्टौं समय लगाएँ। पाहुनाहरू सहज रूपले मिलेर बस्न सकुन् भन्ने त्यसैमा निर्भर हुन्छ। डनम, त्यहाँ मुख्य ढोकाको घण्टी छ- मैले अन्नालाई तिम्रो तर्फबाट ढोका खोल्न भनेकी थिएँ तर जाऊ र बैठक कोठाबाट चियाऊ त्यो को रहेछ- *(जसै डनम बाहिर जान्छे, टेलिफोनको घण्टी बज्छ। श्रीमती प्रिङ्गलले त्यसलाई संशयका साथ हेर्छिन्।)* यो मोबाइलको डाम्नो ! अब के भन्नु छ ? फेरि के भो ? हेलो ! को ? फर्नवर्थ ! श्रीमान् ओलिभर फर्नवर्थ ? होइन, तपाईं उहाँको निजी सचिव ? उहाँलाई के भो ? तिमीलाई क्षमा माग्न अराउनुभएको छ ! उहाँलाई विशेष कामले बोस्टन

जानुपर्ने भयो, हे ! *(कुराकानी पुरा हुन नपाउँदै उनले रिसिभर राखिदिन्छिन् र आवेशमा फोनको सेटलाई हिर्काउँछिन् । त्यसपछि उठेर रिसको झोँकमा यता र उता गर्छिन् ।)* उसलाई यो आँट कसरी आयो ? कसरी आँट आयो ? अन्तिम समयमा आएर यस्तो ! सत्कार दिने व्यक्तिको भावनाको कुनै कदर नै छैन ! साँझको मनोरञ्जन दिनका लागि गरिएको उसको प्रयत्नको कुनै सम्मान छैन ! यस्तो सभ्य रात्रिभोजको योजना जो मैले गरें र उसले आउँछु भनेर प्रतिज्ञा गरेको थियो, व्यापार ! म त्यो कुरा पत्याउन सक्तिनँ ! उसले आफूलाई दुःख दिन चाहेन । हिउँ आँधीको चिसोदेखि डरायो । मानौं उसलाई ढोकासम्म पुऱ्याउने आधा दर्जन सुविधासम्पन्न कारहरू थिएनन् । स्वार्थ ! तल्लो स्तरको असभ्यता ! करोडौं बराबरको मूल्यवान् ! इलेन, तिम्रा लागि सुहाउँदो जोडा र मैले प्रतिज्ञा गरेकी थिएँ कि तिमी टेबलमा उसको बगलमा बस्ने छौ *(उनले फर्नवर्थको नामको कार्ड च्यातिदिइन् ।)* र अब भन्न सक्तिनँ । म तिमीलाई त्यस्तो अवसर फेरि कहिले दिन सक्छु होला ! मलाई असाध्यै रिस उठेको छ । म ऊसँग फेरि कहिल्यै कुरा गर्ने छैन । उसले मलाई यस्तो व्यवहार गर्न सक्ने छैन ।

इलेन : *(डराउँदै)* सायद उसको कुनै महत्त्वपूर्ण काम थियो होला र त उसलाई बोलाइयो होला ।

श्रीमती प्रिङ्गल : *(छोरीको कुरा नसुनीकनै)* र म यो सहरकै एक महत्त्वपूर्ण सत्कारक हुँ । मानिसहरू मेरो निम्तो पाउन लालायित हुन्छन् र मेरा सबै सम्बन्धहरू सफल हुन्छन् । म चाहन्छु तिनीहरू सफल हुनैपर्छ । म असफलता सहन गर्न सक्तिनँ । म असफल हुने छैन । ऊ मेरो महत्त्वपूर्ण पाहुना थियो । ऊ साधारण मान्छेहरूभन्दा उच्च कोटीको थियो, आर्थिक रूपमा अति महत्त्वपूर्ण, हरेक मानिस उसलाई भेट्नु सौभाग्यको कुरा मान्छ र ऊ आज आइरहेको छैन ! म क्रुद्ध छु ! क्रुद्ध ! यो सबै त्यो पापी आँधीले गर्दा भएको हो !

इलेन : अब म टेबलबाट परै बस्नुपर्छ । ऊ नआउने भएपछि बाँकी सङ्ख्या फेरि तेह्र हुने भयो ।

श्रीमती प्रिङ्गल : *(आवेशमा)* सुत्न जाऊ, शिशु गृहमा जाऊ ! तिमीलाई दुध र बिस्कुट त्यहीं पठाइदिउँला ।

इलेन : तर मुमाहजुर, उसको सहरबाहिर काम पर्नुमा त मेरो कुनै दोष छैन नि ।

श्रीमती प्रिङ्गल : छ, तिम्रै दोष छ ! तिमी अलि उत्साही भएको भए, यति काँतर नभएको भए र आफूलाई केही बनाउने प्रयत्न गरेको भए, उसले अरू मानिसहरूबाट तिम्रो आकर्षणका बारेमा सुन्ने थियो र तिमीलाई भेट्न ऊ आफैं नै उत्सुक हुने थियो । हरे ! कस्तो परिवार पाएँ मैले ! मेरो लक्ष्यमा सघाउने कोही पनि छैन । सुत्न जाऊ ! म तेह्र जना भएर त पक्कै बस्दिनँ । तिमी सुत्न जाऊ । मैले देख्ने ठाउँबाट पर जाऊ । *(डनम बायाँपट्टिबाट प्रवेश गर्छ ।)*

डनम : त्यो श्रीमान् मोर्गन हुनुहुँदो रहेछ, म्याडम !

श्रीमती प्रिङ्गल : मोर्गन ? तर मैले उनको कामदारलाई फोन गरेर नआउनू भन्न लगाएको थिएँ त !

डनम : उहाँले दोस्रो सन्देश पाउनुभएन कि त, म्याडम ! किनकि उहाँले प्रिङ्गल सरसँग रात्रिभोजको निम्ता पाएकोमा अति खुसी भएको कुरा गर्दै हुनुहुन्थ्यो ।

इलेन : त्यसो भए त सङ्ख्या फेरि तेह्र हुने भयो । हजुरले मलाई सुत्न नपठाएको खण्डमा बाहेक ।

श्रीमती प्रिङ्गल : हो, अब म तिमी सुत्न जाऊ भन्ने चाहन्नँ । डनम, अब हामी त्यही बिन्दुमा छौं जहाँबाट हामीले सुरु गरेका थियौं अर्थात् चौध ।

डनम : म्याडम, म अब ककटेलहरू तयार गर्छु । अन्नाले भनेकी थिई थुप्रै मोटरहरू हिउँ छिचोल्दै आइरहेका छन् । अब ढिला भइसक्यो र भान्सेले खाना चिसिन लाग्यो भनेर कराउँदै छे । *(टेलिफोनको घण्टी बज्छ । इलेन उफ्रिन्छे ।)*

इलेन : म टेलिफोन उठाउन्नँ ।

श्रीमती प्रिङ्गल : मलाई केही भन्नु छैन । हेलो, यो के हो ? *(च्याँठिँदै)* हो, हजुर ? श्रीमती टुपर ! हजुर ! श्रीमती टुपर, तर अब तपाईं त आउनैपर्छ, हामी तयार भएर पर्खिरहेछौं । हो, तपाईंहरू आठ जनाको लागि । तपाईंकी छोरीले मेरी छोरीलाई तपाईंहरूको पाहुनाको बारेमा पनि बताएकी थिइन् र हामी उहाँहरूलाई पनि स्वागत गर्न उत्साहित छौं । अब हामी तपाईंहरूको प्रतीक्षामा छौं । प्लेटहरू पनि तयार गरिसकिएको छ, तर तपाईंकी छोरीको कुरा त ठिकै थियो नि । त्यो कुनै दबाब थिएन । तपाईंहरू त जसरी भए पनि आउनैपर्छ । मेरी छोरीसँग तपाईंहरूको पाहुनालाई पनि निम्ता दिने अधिकार थियो । हरे, आठ जना कुनै ठुलो सङ्ख्या नै होइन । प्रशस्त ठाउँ छ । टेबल पनि तयार नै छ । म तपाईंलाई बिन्ती गर्छु । त्यसो नभन्नुस् न, त्यो तपाईंहरूको दबाब नै होइन । हरे ! यस्तो अड्डी कस्नु त तपाईंको मूर्खता हो !

त्यस्तो किन गर्नुहुन्छ तपाईं ? *(उनले रिसभिर राखिदिन्छिन् ।)* अब, तिमीलाई के लाग्छ ? पाहुनाका बारेमा एलाले तिमीसँग भनेको कुराले श्रीमती टुपर खुब रिसाएकी छिन् । भन्छिन्, उसको कुनै ढङ्ग नै छैन । अब छ जनाको निम्तो भएको ठाउँमा आठ जना आउन कुनै तरिकाले पनि उनलाई उचित लागेन रे । त्यसैले उनी एला र हेनरीलाई घरमा छाडेर छ जना मात्र आउँदै छन् । डनम, दुईवटा प्लेट हटाऊ । आखिरमा हामी बाह्र मात्र भयौं ।

इलेन : तर बाह्र जना मात्र हुने हो भने त बुवाहजुरलाई सिरानपट्टि बस्न मिल्दैन ।

श्रीमती प्रिङ्गल : *(थकित, दुखित, क्रुद्ध र तनावग्रस्त)* अब म बहुलाउने भएँ । अब म कसैलाई फेरि आमन्त्रण गर्ने छैन, कहिल्यै गर्ने छैन । मानिसहरूलाई आफू आउन सक्छु कि सक्तिनँ भन्ने ज्ञान त हुनुपर्छ नि । तर उनीहरू पहिला स्वीकार गर्छन् र पछि पछुताउँछन्, पछुताउँछन् र फेरि स्विकार गर्छन् । उनीहरूले मलाई क्रुद्ध पारिसके । *(डनम बाहिर जान्छे ।)* यो अब मेरो तर्फबाट अन्तिम रात्रिभोज हुने छ; एकदम अन्तिम, एउटा असफलता, भयङ्कर असफलता ! एउटा सोचविचार नगरिएको भिड, सँगै हतारिएर हिँड्छ, जब म यति सुन्दर तरिकाले योजना गरिरहेकी थिएँ । अब म उनीहरूलाई कसरी बसाउन सक्छु, कसरी ? यदि मैले श्रीमान् टुपरलाई यहाँ राखेँ र श्रीमती कोन्लेलाई त्यहाँ राखेँ भने श्रीमती टुपर त आफ्ना लोग्नेको बगलमै बस्नुपर्ने छ र यदि मैले त्यहाँ मोर्गनलाई राख्न चाहें भने, हरे ! यो त असम्भव छ । एउटा ह्याटमा तिनीहरूको नामको चिट राखेर चिट्ठा गर्नुपर्ने भो । अब कहिले यो हुने छैन ! अब पुग्यो मलाई ! यो समाजसँग पनि वाक्क भएँ । भोज पनि पुग्यो । साथीहरू पनि पुग्यो । अब म स्लेटलाई पुछेर सफा गर्ने छु । उनीहरूले मनोरञ्जनको मेरो निम्तोलाई सम्झेर पछुताउने छन्, अनि आफू अलि लचिलो हुनुपर्थ्यो भन्ने ठान्ने छन् । यसपछि म केवल आफ्नै लागि बाँच्ने छु । अब म स्वार्थी र जिद्दीवाल हुने छु र असामाजिक, अनि आफ्नो पेय सारा सहरलाई निःशुल्क खुवाउनुको सट्टा आफैं पिउने छु । मलाई पुग्यो । ओलिभर फर्नवर्थ जस्ता मान्छेहरूबाट पनि आजित भएँ ! मलाई तिनीहरू कति धनी छन् भन्ने कुराले केही फरक पर्दैन ! उनीहरू कति प्रभावशाली छन्, उनीहरू कति महत्त्वपूर्ण छन् ! सामान्य सदाचार र समझविना उनीहरू केही पनि होइनन्; व्यापार, रेल यात्रा, सब बकवास । आउन मन लागेन । प्यारी, सुन्दर युवतीलाई भेट्न मन भएन । ऊसँग बिहे गर्न मन भएन । ठिकै छ, ऊ तिम्रा लागि सुहाउँदो पनि छैन ! के तिमी उसलाई बिहे गर्न चाहन्छ्यौ र ! के तिमी ऊसँग बिहे गर्ने हिम्मत गर्न सक्तिनौ र ! अब म तिमीलाई ऊसँग बिहे गर्न पनि दिने छैन । मेरो कुरा सुन्यौ ? यदि तिमी ऊसँग भाग्न वा अरू केही गर्न खोज्यौ भने म त्यसलाई सफल हुन दिने छैन; हो, दिने छैन । ओलिभर फर्नवर्थले मबाट फेरि यो सम्मान पाउने छैन ! ऊ मेरो नजरबाट हराइसक्यो ! म ओलिभर फर्नवर्थलाई घृणा गर्छु !

(डनम चाँदीको थालीमा एउटा चिठी लिएर आउँछे ।)

डनम : श्रीमान् फर्नवर्थको चिठी आएको छ, म्याडम !

श्रीमती प्रिङ्गल : फर्नवर्थको चिठी ? *(उनले त्यो चिठी लिन्छिन् र त्यसलाई खोल्छिन् ।)*

डनम : हजुर म्याडम । तल्लो हलमा दुई जना अपरिचित मानिसहरू पनि आएका छन् । उनीहरूले नै यो चिठी दिएका हुन् । एक जनाले भनेको थियो कि ऊ निजी सचिव हो । बाँकी पाहुनाहरू माथि बैठक कोठामा बसिरहनुभएको छ । म्याडम; मैले गन्दा तपाईं, इलेन र प्रिङ्गल सरसमेत गरेर जम्मा बाह्र जना भए । तर तलका दुई अपरिचित मानिसहरू तपाईंको जबाफ पर्खिरहेका छन् । एउटा मानिसको अनुहार त परिचित अनुहार जस्तो लाग्छ तर मैले ठम्याउन सकिनँ तर मैले उसलाई कतै देखेको छु जस्तो लाग्छ ।

श्रीमती प्रिङ्गल : *(उनी चिठी पढिरहेकी छिन् र यो अनौठो खुसीले बेहोस होलिन् जस्तो भइरहेछ ।)* अनुहार देखेको– कतै– हे भगवान ! इलेन, उहाँ वेल्सको राजकुमार हो !

डनम : ती निजी सचिवले भने, तपाईंले टेलिफोन काटिदिनुभो वा सेन्ट्रलबाट नै काटियो । श्रीमान् फर्नवर्थलाई महामहिमको सहभागी हुने सहरको कार्यक्रमलाई हिउँले अवरोध गरिरहेको छ भन्ने थाहा थियो भन्ने उनले बताउन चाहेका थिए रे ।

श्रीमती प्रिङ्गल : वेल्सका राजकुमार हाम्रो तल्लो हलमा कुरिरहेको ! रात्रिभोजका लागि मेरो आमन्त्रण कुरिरहेको !

इलेन : त्यस भए हामी फेरि तेह्र हुने भयौं ।

डनम : उनीसँग निजी सचिव पनि छन्, इलेन । ऊ अङ्गरक्षक हो ।

श्रीमती प्रिङ्गल : *(आफ्नो ठाउँबाट उठेर)* इलेन, ती निजी सचिव पनि पक्कै आउने छन् । हामी रात्रिभोजमा चौध जना हुने छौं । डनम, अब ककटेलहरू राख्न सुरु गर । पाहुनाहरू जहाँ चाहन्छन् त्यही बस्न सक्ने छन् । म आफैं गएर राजकुमारलाई लिएर आउने छु !

इलेन : *(पछ्याउँदै)* तर मुमा, आफ्नो ठाउँमा राजकुमारलाई पठाउनु ओलिभर फर्नवर्थको महानता होइन त ?

श्रीमती प्रिङ्गल : ओलिभर फर्नवर्थ सबैभन्दा समझदार मानिस हो भनेर मैले सधैं भनेको होइन त ?

इलेन : म त फर्नवर्थलाई मन पराउँछु कि जस्तो लागिरहेछ ।

श्रीमती प्रिङ्गल : अबुझ केटी ! फर्नवर्थलाई मन पराउन अब धेरै ढिला भइसक्यो । अब त राजकुमारलाई मन पराउने समय हो । *(बाहिर निस्किँदै)* कुनै न कुनै तरिकाले म सबैभन्दा सफल सत्कारक हुन समर्थ भएकी छु ! हे भगवान्, यो हिउँआँधीका लागि धन्यवाद !

(पर्दा)

अनुवाद : केशव सिग्देल

एकाङ्की/अमेरिका (America)

तेल

युजिन ओ' निल ("Ile" by Eugene O'Niel)

(क्याप्टेन किल्नीको कोठा, बाफबाट चल्ने बडेमानको जहाज अट्लान्टिक क्विनभित्र। कोठा सानो, चार पाटा मिलेको छ। भित्ता करिब आठ फुट अग्ला छन् र बिचमा जहाजको अग्रभाग देखिने गरी भुन्डयाइएको बत्ती छ। जहाजको बायाँपट्टि सामान्य कुसन राखिएको एउटा फलैंचा बनाइएको छ, भित्तोमा अडयाएको छ। फलैंचाको अगाडिपट्टि एउटा टेबल छ। फलैंचामाथिपट्टि पर्दा लगाएका केही झ्यालहरू छन्।)

(पछाडिपट्टि, बायाँतिर एउटा ढोका छ, जसबाट क्याप्टेनको शयन-कक्षमा प्रवेश गर्न सकिन्छ। ढोकाको दायाँतिर एउटा नयाँ जस्तो देखिने सनई जस्तो बाजा छ, भित्तोमा ढल्काएर राखिएको।)

(दायाँपट्टि, पछाडितिर, एउटा मार्बलको सतहको भएको बोर्ड छ। यसमाथि, कुनै महिलाको बुनाईका सामान एउटा पेचमा राखिएको छ। अझ अगाडि, ढोका हुँदै अर्को सानो बाटोतिर जाने बाटो छ र अधिकृतहरूको आवास हुँदै जहाजको मुख्य भागतिर जान्छ।)

(कक्षको मध्य भागमा एउटा स्टोभ छ। सिलिङको विचबाट एउटा बत्ती झुन्डिएको देखिन्छ। क्याबिनमा सबै भित्तामा सेतो रङ लगाइएको छ।)

(जहाज चलिरहेको छैन। आकाशबत्तीबाट आएको उज्यालो निकै मधुरो छ, जसले समुद्र र आकाश दुवै मृतप्राय रहने ती उदास निष्क्रिय दिनहरूको मौसमको सङ्केत गरेको छ। यो सन्नाटा केहीले चिर्दैन, सिवाय केही पाइलाहरू जो माथितल गरिरहेका छन् जहाजको अग्रभागमा।)

(जब पर्दा खुल्छ, मञ्चमा मुर्दा शान्ति छ। सेवक प्रवेश गर्न र क्याप्टेनको टेबलमा साँझको खानापश्चात् छोडिएका जुठा थालबटुका टिप्छ। ऊ बूढो छ, सेतै कपाल फुलेको। उसले डाङ्ग्रे प्यान्ट, स्विटर र कान भएको ऊनीको टोपी लगाएको छ। उसको आचरण सन्काहा र रिसाहा जस्तो लाग्छ। ऊ थालबटुका खप्टन छोडेर एकचोटि माथि आकाशबत्ती भएतिर हेर्छ। त्यसपछि ऊ सुटुक्क पछाडिपटि बन्द रहेको ढोकासामु जान्छ र भित्ताको प्वामा कान राखेर सुटक्क कुरा सुन्न थाल्छ। उसले जे सुन्छ, त्यसले उसको अनुहार अँध्यारो हुन्छ, र उसले मुरमुरिंदै केही अपशब्द बोल्छ। दायाँपट्टि, दैलोछेउको गलीबाट केही आवाज आइरहेको सुनिन्छ। त्यो सुन्नासाथ ऊ टेबल भएतिर दगुर्छ।)

(बेनको प्रवेश। ऊ हलक्कै बढेको, कुरूप केटो हो, जसको अनुहार लामो र उत्साहविहीन देखिन्छ। ऊ स्वेटर र पूरा छोप्ने लुगामा छ। उसका दाँत चिसोले किटकिटिइरहेका छन् र ऊ हतारहतार स्टोभ भएतिर जान्छ, जहाँ ऊ केहीबेर काँप्दै उभिन्छ, हातमा सासले फुक्छ र आफ्नै गाला सेक्छ। ऊ रोला जस्तो देखिन्छ।)

सेवक : (को हो देखेपछि ढुक्क हुँदै) ए, तिमी पो ? किन यसरी काँपेको ? तिम्रो थान्को त्यही स्टोभ हो। त्यहीँ बस। अनि काँप्नै पर्दैन।

बेन : आच्छु, कति जाडो। (किटकिटिएका दाँत दबाउन खोज्दै) को आएजस्तो लाग्याथ्यो तिमीलाई, बुढो ?

सेवक : (जाइ लागौंला जस्तो गर्दै, बेन पछि हट्छ) चुप। नत्र किचिपिची पारिदिन्छु। (अलि दयाभावसहित) यस बेलासम्म कहाँ मुन्टेको थिइस्, माथि डेकमा ?

बेन : म्म...!

सेवक : बुढाले देखोस् मात्रै न बाँदर जस्तो माथि चढेको। यस्तो गाली गर्छ नि, तैंले कुनै हतारोमा पनि बिर्सदैनस्।

बेन : उसले देखे पो। (उसको आवाजमा त्रासको केही मात्रा छ। ऊ माथितिर हेर्छ। ऊ केही नदेखेजसो गरेर माथि र तल हिंडिरहन्छ। बरु बाहिर परेको बरफ हेरिबस्छ।)

सेवक : (उसको आवाजमा उस्तै त्रासको भाव। ऊ सधैं उत्तरतिर फर्केर बरफ नै हेरिरहेको हुन्छ। एक्कासि,

रिसको आवेगमा आकाशतिर मुठी उचाल्दै) बरफ, बरफ, बरफ । त्यसको र त्यस बरफको सत्यानाश होस् । एक वर्ष भइसक्यो हामीलाई यहाँ थुनेर राखेको । तर बरफबाहेक केही देख्ने होइन त्यसले । बरफमै अल्झेको छ, खुदोमा झिँगा अल्झेजस्तो ।

बेन : (शङ्कालु भावमा) चुप । सुन्ला ।

सेवक : (रिसाएर) मार् गोली । यो अर्काटिक सागर र यसको यस गन्धे जहाजलाई पनि मार् गोली । म यस्तो जहाजमा हिँड्ने म जस्तो मूर्खलाई पनि गोली मार् । (आफ्नो आवेगको व्यर्थता थाहा पाएजस्तो गरी थामिन्छ, टाउको हल्लाउँछ र बिस्तारै, गहिरो विश्वासका साथ भन्छ) ऊ कठोर मान्छे हो, आजसम्म जहाज हाँक्नेमध्ये सबैभन्दा कठोर मान्छे ।

बेन : (गम्भीर भावमा) हो ।

सेवक : हामीले सम्झौता गरेको दुई वर्षको समय आज पूरा हुँदै छ । धन्य, भगवान् । यो दुई वर्षको कुकुरको जस्तो समय, र माछा मार्ने काममा शून्य सफलता । खाद्यान्न सकिएर आधा भोकै बसेको अवस्था । ऊ, घिनलाग्दो । ऊ भने घर फर्कने कुरै गर्दैन बा । (दुख मानेर) घर । मलाई त फेरि जमिनमा फर्कने हो होइन भन्नेमा पनि शङ्कै लाग्न थाल्यो । (उत्साहित हुँदै) के गर्छु भनेर सोचिरहको होला? हाम्रो सम्झौताको अवधि सकिएपछि पनि थुनेर यहीं राख्ने र हामी सबै भोकमरीले मरेको हेर्ने ? तँ माथि कौसीमा जाँदा केही कुरा गरेको सुनिनस् ?

बेन : (उसको छेउ गएर साउती गर्दै) विद्रोह ? हो, हामीले गर्न सक्ने त्यो एक मात्र उपाय हो । उसले हामीलाई गरेको व्यवहारको बदला लिने एक मात्र उपाय । हामीलाई त कुकुरभन्दा भिन्न नभएजस्तो व्यवहार पो गऱ्यो त, है ?

सेवक : उता दक्षिणतिर बरफ हटिसकेको छ । परपरसम्म पानी सफा छ, हेर् त । तर सबै भन्छन्, ऊ अनेक बहाना गरेर घर नफर्कन मात्रै खोज्छ ।

सेवक : (आक्रोशसहित) ऊ उत्तरतिरबाहेक कतै हेर्दैन । त्यता त बरफबाहेक केही पनि देखिँदैन । ऊ सफा पान हेर्ने चाहँदैन । ऊ केवल तेलकै खोजीमा छ र ह्वेल भेटेन भने हाम्रो दुर्भाग्यले नभेटेको भन्ठान्छ । (टाउको हल्लाउँदै) मलाई त लाग्छ, यो बुढाको दिमाग खुस्कियो ।

बेन : (अचम्भित हुँदै) ऊ साँच्चै पागल भयो जस्तो लाग्छ तिमीलाई ?

सेवक : अँ भन्या । भगवान्ले उसालई दण्ड दिएका हुन् । सद्दे मान्छेले उसले गर्ने गरेका जस्ता क्रियाकलाप गरेको तिमीले कहिल्यै देखेका थियौ ? (पछाडिको ढोकातिर देखाउँदै) ऊ जस्तो पागलले बाहेक सबैले एउटा गन्धे जहाजमा हाम्री सुन्दर श्रीमतीलाई राखेर अर्काटिक सागरतिर हिँड्छ र कुहिएको बरफको थुप्रोमा एक वर्षजति फसाउँछ ? उसले पनि सदाका लागि सायद दिमागको सन्तुलन गुमाउँछे, किन्लीक ऊ पहिलाकी जस्तै हुन नसक्नेचाहिँ निश्चित छ ।

बेन : (दुखी हुँदै) ऊ मलाई निकै निको मान्थी पहिले पहिले । (उसका आँखा खुला र भयभीत देखिन्छन्) ऊ आफूजस्ती थिई, त्यस्तै व्यवहार गर्थी ।

सेवक : हो । ऊ हामी सबैलाई राम्रो गर्थी । ऊ जहाजमा नभएकी भए बोर हुन्थ्यो । ऊ भने कस्तो कठोर मान्छे छ, नाविकहरूमध्ये सबैभन्दा कठोर भने पनि हुने । (विषाद हाँसोका साथ) मलाई लाग्छ, ऊ अहिले सन्तुष्ट छ– उसलाई मगज बिग्रँदासम्म जहाजमै राखेर हिँडाउन पाउँदा । बुढीको त के दोष ? भगवान्को लीला नै भनौं–हाम्रो जहाज हामी जस्ता पागलहरूले भरिएको छ र सधैं हासी बरफले नै घेरिएका हुन्छौं । यहाँको सन्नाटा पनि यति बाक्लो छ कि आफ्नै आवाज सुन्दा पनि डर लागेर आउँछ ।

बेन : (भयभीत आँखाले दायाँतिरको ढोकातिर हेर्दै) अचेल ऊ पनि मसँगै बोल्दिनँ । मलाई नचिनेजस्तो गरेर हेर्छे मात्रै, बस ।

सेवक : ऊ आफ्नो लोग्नेबाहेक अरू कसैलाई पनि चिन्दिनँ । बोलिहाली भने उसैसँग बोल्छे, ठिक्क मात्रै ।

बेन : दिन भनेर ऊ अरु केही गर्दिन, बस्नु र बुन्नु बाहेक र आफैँसँग आवाज ननिकाली रुन्छे । मैले यसो गरेको देखेको छु ।

सेवक : हो । केही समयअगाडि ढोकाको पछाडिबाट मैले पनि सुनेको ।

बेन : (ढोकासम्म पुगेर सुनेको अभिनय गर्दै) अहिले पनि रुँदै छे ।

सेवक : (रिसमा, मुठी उजाउँदै) भगवान्, उसको पापी स्वभावका लागि उसलाई नर्कमा फालिदेऊ ।

(जोडिएको भऱ्याङ ओर्लंदै कोही तल झर्दै गरेको आवाज सुनिन्छ । सेवक हतारहतार आफूले खप्टेको थालबटुका भएको ठाउँमा पुग्छ । ऊ डरले यति आत्तिएको छ कि ऊ हडबडमा सबैभन्दा माथि राखिएको थालमा ठोकिन पुग्छ, जुन भुइँमा खसेर फुट्छ । ऊ आत्तिएर भयभीत

मुद्रामा उभिन्छ । बेन भने आफूले खल्तीबाट निकालेको एउटा टालोले हतारहतार अर्गन बाजा पुछ्छ । उता दायाँपट्टि सँघारमा क्याप्टेन किन्ली देखा पर्छ । ऊ करिब चालिस वर्षको मानिस हो, पाँच फुट दस इन्चजतिको उचाइ भएको र उसका विशाल पाखुरा र छातीको अनुपातमा ऊ अलि होचो देखिन्छ । उसको अनुहार चौडा छ र आँखा गहिरा र कठोर देखिन्छन् । उसको मुख पातला ओठ भएको, अलि सानो छ । उसको बाक्लो कपाल लामो र कैलो छ । उसले बाक्लो, नीलो जिन्सको ज्याकेट र प्यान्ट लगाएको छ, जसको बाउला उसको खुट्टामा रहेका सामुद्रिक बुटभित्र घुसारिएका छन् ।

ऊ क्याबिनमा पस्दा उसको पछिपछि दोस्रो सहयोगी पनि प्रवेश गर्छ । ऊ अग्लो, छ फुटको मान्छे हो र उसको अनुहार मौसमको कहरले खाएको, उत्साहविहीन देखिन्छ । उसले पनि क्याप्टेनकै जस्ता पोसाक लगाएको छ । ऊ तिसको हाराहारीको मान्छे हुँदो हो ।)

किन्ली : (अगाडि, सेवक भएतिर आउँछ, अनुहारमा कठोर दृष्टिसहित । सेवक निकै गराएको प्रस्टै देखिन्छ र उसको हातको स्पर्शले उसले खाप लगाइरहेको भाँडाबर्तन ठोक्किइरहेका छन् । किन्ली आफ्नो मुठी पछाडि हटाउँछ । सेवक डरले झन् खुम्चिन्छ । मुठी तर झारेर किन्ली बोल्न थाल्छ) यो त किरालाई हिर्काएजस्तो मात्रै हुन्छ । एक बज्न लाग्यो । अहिलेसम्म यो ट्रक सफा गरिएको रहेनछ त ।

सेवक : (भकभकाउँदै) हो, सर ।

किन्ली : आफ्नो काम गर्न छोडेर तिमी आइमाईले जस्तो खुसुखुसु त्यस केटोसँग कुरा काट्न यहाँ ओर्लियो होइन त ? (बेनतिर फर्केर, रिसाउँदै) यहाँबाट भाग् मूला । चार्टरुम सफा गर् । (दोस्रो सहयोगीको छेउबाट बेन बाहिरिन्छ ।) सेवक, त्यो थाल टिप ।

सेवक : (गाह्रोसँग उक्त काम गर्दै) हजुर, सर ।

किन्ली : अर्कोपल्ट फेरि थाल फुटायौ भने, तिमीले बियरिङ सागरमा, रस्सीको एक टुप्पोमा बाँधिएर डुब्नुपर्ने छ, बुझ्यौ ?

सेवक : बुझेँ, सर ।

(ऊ हतारोसँग बाहिरिन्छ । दोस्रो सहयोगी बिस्तारै क्यापेनको छेउ पुग्छ ।)

सहयोगी : मैले हजुरलाई भनेको कुरा उता चक्कातिर उभिएको मान्छेले नसुनोस् भन्नेमा म चिन्तित थिएँ, सर । त्यसैले मैले हजुरलाई तल बोलाएको हुँ ।

किन्ली : (अधीर बन्दै) भन, स्लोकम ।

सहयोगी : (अनायासै आवाज धिमा गर्दै) सबै कुरा विचार गर्दा मलाई ती हातबाट केही विघ्न हुन सक्ने लाग्छ । केही गरिएन भने त यी सबैले समस्या सिर्जना गर्न सक्छन् सर । आखिर, उनीहरूलाई अनुबन्धित गरिएको दुई वर्षको समय त आजै पूरा भएको छ ।

किन्ली : र तिमी मलाई नयाँ कुरा सुनाइरहेका छौ जस्तो लाग्छ, सोल्कम ? यो कुराको सङ्केत मैले धेरै अघि पाएको हुँ । उनीहरूको भद्दा स्वरूप र गुनासोयुक्त तरिका मैले नदेखेको हुँ र ?

(पछाडितिरको ढोका खुल्छ । श्रीमती किन्ली सँघारमा देखा पर्छिन् । उनी पातली, सुन्दर मुखमण्डल भएकी, सानो कदकी महिला हुन् । उनको पहिरन कालो छ । रोएकोले उनका आँखा राता देखिन्छन् र अनुहार थकित र मलिन । उनले भयभीत आँखाले कोठालाई हेर्छिन् र कुनै अज्ञात त्रासले जस्तो जहाँको त्यहीं मूर्तिवत् उभिइरहन्छिन्, विक्षिप्त तरिकाले आफ्ना हात बाँध्दै र खोल्दै । दुई पुरुष फर्केर उनलाई हेर्छन् ।)

किन्ली : (खस्रो संवेदनाका साथ) के छ, एनी ?

श्रीमती किन्ली : (सपनाबाट ब्युँझेजसरी) डेभिड, मलाई...(शान्त हुन्छिन् । सहयोगी ढोकातर्फ जान्छ ।)

किन्ली : (ऊतिर हेर्दै चर्को स्वरमा) पर्ख ।

सहयोगी : हजुर, सर ।

किन्ली : तिमीलाई केही चाहिएको छ, एनी ?

श्रीमती किन्ली : (लामो विश्रामपछि, आफ्ना हराएको विचार पुनः सङ्कलन गरेजस्तो भावमा) म माथि डेकमा शुद्ध हावा खान जाऊँ कि जस्तो लाग्यो, डेभिड ।

(उनी अनुमतिको प्रतीक्षामा विनीत भावमा उभिन्छिन् । किन्ली र उनका सहयोगी एकअर्कालाई अर्थपूर्ण तरिकाले हेर्छन् ।)

किन्ली : माथि ज्यादै चिसो छ । आज बरु तलै बस । माथिबाट हेर्न मिल्ने खासै केही छैन, बरफबाहेक ।

श्रीमती किन्ली : (आलस्यपूर्ण पाराले) थाह छ : बरफ, बरफ, बरफ र यहाँ तल पनि यी भित्तावाहेक के छ र हेर्ने ? (उनी घृणायुक्त दृष्टि फ्याँक्छिन् ।)

किन्ली : तिमी अर्गन बजाउन सक्छौ, एनी ।

श्रीमती किन्ली : (आलस्यपूर्ण तरिकाले) मलाई अर्गन मनै पर्दैन । यसले मलाई घरको सम्झना दिलाउँछ ।

किन्ली : (आवाजमा असहमतिको भावसहित) मैले बुझेँ ।

तिमीलाई मन पर्दैन ।

श्रीमती किन्ली : (उत्साहविहीन तरिकाले) मलाई थाहा छ । (उनीहरूबाट टाढा फलैंचातिर जान्छिन् । एउटा पर्दा उठाएर झ्यालबाट बाहिरतिर हेर्छिन् र विष्मयका साथ खुसीले बोल्छिन् ।) आहा, पानी ! कति सफा पानी । आँखाले भ्याउन्जेल पानी । यत्तिका महिना बरफै बरफ देखेपछिको पानी क्या सुन्दर देखिएको । (उनी ती दुई पुरुषतिर फर्किन्छिन्, उल्लासपूर्ण अनुहार लिएर) डेभिड, अब त मैले माथि डेकमा गएर हेर्नैपर्छ ।

किन्ली : (आवेशका साथ) आज नजानु बेस, एनी । घाम लागून् । एक दिन अझ पर्ख ।

श्रीमती किन्ली : (अधैर्यका साथ) तर यस्तो भयानक ठाउँमा कहिल्यै घाम लाग्दैन ।

किन्ली : (आवाजमा आदेशको भावसहित) आज होइन, एनी ।

श्रीमती किन्ली : (उसको आदेशका अगाडि झुक्दै) ठिक छ, डेभिड ।

(उनी आफू भएकै ठाउँमा उभिएर अगाडि हेर्छिन्, अचम्भित भएको शैलीमा । दुई पुरुष उनलाई अस्वाभाविक तरिकाले हेर्छन् ।)

किन्ली : (चर्को स्वरमा) एनी !

श्रीमती किन्ली : (अनिच्छित तरिकाले) हजुर, डेभिड ।

किन्ली : म र सोल्कमलाई केही कुरा गर्नु छ । यही जहाजका बारेमा ।

श्रीमती किन्ली : ठिक छ, डेभिड ।

(उनी बिस्तारै बाहिर निस्किन्छिन् र पछिल्तिर जान्छिन् । आफैं निस्केपछि दैलोलाई तीन चौथाइ बन्द छोड्छिन् ।)

किन्ली : कुनै समस्या हुने भए उनलाई कौसीमा जान नदिनु बेस ।

सहयोगी : हो नि, सर ।

किन्ली : समस्या त हुनेवाला देखिन्छ । मलाई यसको पूर्वाभास भइरहेको छ । (आफ्नो कोटको पकेटबाट रिभोल्भर निकालेर नियाल्छ ।) कुरा बुझ्यौ ?

सहयोगी : बुझें सर ।

किन्ली : यो उनीहरूमाथि प्रयोग गर्न झिकेको होइन । ती कुकरहरूलाई म चिन्दिनँ र ? तिनलाई धम्क्याउन मात्रै निकालेको । (विषादपूर्ण) म यसलाई प्रयोग गर्न कहिल्यै बाध्य हुन्नँ । मलाई समस्या त जलमा होस् वा थलमा, सधैं नै भएकै छ । मलाई राम्रै सम्झना छ र लाग्छ, म मर्ने दिनसम्म पनि यस्ता समस्या रहिरहने छन् ।

सहयोगी : (अलि अनिच्छुक हुँदै) त्यसो भए तपाईं नफर्कने ?

किन्ली : फर्कने कुरा ? सोल्कन, जाबो चार सय ब्यारल तेल लिएर घर जान भन्दै दक्षिण हान्निएको तिमीले कहिल्यै देख्यौ मलाई ?

सहयोगी : (हतारमा) छैनँ, सर । तर जहाजमा खाद्यान्न सकिन लाग्यो ।

किन्ली : अझै निकै समय पुग्ने गरी बाँकी छ, उनीहरूले सजगताका साथ प्रयोग गरे भने र पानी पनि पर्याप्त छ ।

सहयोगी : उनीहरू भन्छन् जो बचेको छ, त्यो खानका लागि योग्य छैन र उनीहरूले सम्झौता गरेको दुई वर्ष पनि आज पूरा भएको छ । हामी घर फर्केपछि उनीहरूले अदालतमा तपाईंका लागि समस्या जन्माउन सक्छन् ।

किन्ली : तिनको सत्यानाश होस् । जस्तो कानुनी समस्या ल्याउन चाहन्छन्, ल्याउन् । मलाई पैसाको कुनै पर्वाह छैन । जसरी पनि मलाई तेल भेट्नु छ (सहयोगीलाई तिखा आँखाले हेर्दै) र तिमी आफू समुद्री वकिल बन्ने तरखरमा त छैनौ नि, स्लोकम ?

सहयोगी : (कुरा बटार्दै) कुनै पनि हालतमा छैनँ, सर ।

किन्ली : यी मूर्खहरू घरचाहिँ किन जान चाहन्छन् कुन्नि ? चार सय ब्यारलमा उनीहरूको भागमा पर्न आउने तेलले उनीहरूलाई सुर्ती खान पनि पुग्दैन ।

सहयोगी : (बिस्तारै) मलाई लाग्छ उनीहरू आफ्नो परिवार र घरेलु काममा फर्कन चाहन्छन् ।

किन्ली : (उनलाई प्रश्नसूचक दृष्टिले हेर्दै) र तिमी पनि फर्कन चाहन्छौ । (उसको तीक्ष्ण हेराइका सामु सहयोगी हतप्रभ भएर भुइँतिर हेर्छ ।) नढाँट, स्लोकम । तिम्रो आँखामा त्यो भाव स्पष्टै देखिन्छ । (तिखो व्यङ्ग्यचेतसहित) स्लोकम, तिमी मेरा विरुद्ध उनीहरूसँग उभिने छैनौ भन्ने मेरो पूर्ण विश्वास छ ।

सहयोगी : (अलि झर्केर) सर, हजुरले त्यस्तो कुरा भन्नु अलि उचित होइन ।

किन्ली : (सन्तोषका साथ) मलाई त्यस्तै डर थियो र भनेको । तिमी करिब दश वर्षदेखि मसँग छौ र मैले तिमीलाई ह्वेलको सिकार गर्न सिकाएँ । म खराब शिक्षक हुँ भन्ने कसैले पनि भन्न सक्तैन । म खराबै भएको भए न भन्थे होला नि ।

सहयोगी : म घर फर्कनेबारे केही पनि सोचिराको छैनँ, सर । (व्यग्रताका साथ) तर श्रीमती किन्लीलाई हेर्दा

उहाँ त्यस ठाउँमा त्यति सन्तुष्ट भएजस्तो मलाई लाग्दैन । यहाँको चिसोपन, खराब भाग्य र बरफका कारण अलि बिरामी जस्तो देखिनुहुन्छ ।

किन्ली : (उसको अनुहार मलिन । ऊ गाली गर्ने मुडमा छ तर बिस्तारै) त्यो मेरो मामला हो, स्लोकम । तिमीले यो कुरा प्रस्ट बुझ्रे म धन्यवाद भन्ने थिएँ । (रोकिएर) छिटै उत्तरतिरको बरफ पनि सफा हुने छ । आजै त्यो सुरु भएको मैले देखें । अझ पग्लेपछि घाम पनि लग्छ र एनी ठिक हुने छिन् । (अर्को विश्राम र आक्रामक हुँदै) मलाई उत्तरी सागरमा अल्झाइरहेको पैसाले होइन । तर म जाबो चार सय ब्यारल तेल लिएर गृहबन्दरगाह फर्कन सक्तिनँ । बरु मर्छु । जहाज पूरा नभरिए त म कुनै पनि हालतमा घर फर्किन्नँ । यो सत्य होइन र ?

सहयोगी : हो सर । तर यस यात्रामा हजर बरफकै कारण अड्किरहनुपर्‍यो र...।

किन्ली : (रिसाएर) र तिमी ठान्छौ, ती मेरो साथीहरूले यो कुरा विश्वास गर्ने छन् । ती नाविक, जसलाई मैले सबै यात्रामा जितेको छु । म त्यसै फर्किएँ भने तिनले मेरो उपहास गर्ने छन् भन्ने कुरा तिमी बुझ्दैनौ ? ती टिब्बोटहरू, ह्यारिस र सिमहरू र अरू पनि, जो हाम्रो होमपोर्टमा मेरो हाँसो उडाउन पर्खि बसेका छन् ? डेव किन्लीसँग हाम्रो होमपोर्टमा भएका ह्वेलर जहाजमध्ये सबैभन्दा अब्बल जहाज जो छ र त्यो जहाज जाबो चार सय ब्यारल तेल लिएर फर्कंदा के हुन्छ, भन त ? (यस कुराले ऊ उत्तेजित हुन्छ र आफ्नो मुड्कीले मार्बलको साइडबोर्डमा हिर्काउँछ ।) मरोस् ! बुझिराख, मैले जसरी पनि जहाज तेलले भर्नु छ । यो जाबो बरफका अगाडि म कसरी झुक्न सक्छु ? म विगत तीस वर्षदेखि यहाँ आइरहेको छु, तर यस्तो कहिल्यै भएको थिएन र अहिले आएको क्रमभङ्ग भएको छ । तर अबको एकदुई दिनभित्र यो हट्ने छ र यहाँ ठुलो मात्रामा ह्वेल भेटिने छन् । मलाई थाहा छ यहाँ ह्वेल छन् र मेरो विश्वास गलत हुन सक्तैन । मैले जसरी पनि तेल भर्नु छ । जति सुकै कष्ट होस् अथवा भगवान् नै लागुन् । तर म तेल नभरी त घर फर्कने छैनँ ।

(पछाडिको ढोकाबाट दबिएको रोदन सुनिन्छ । ती दुई पुरुष केही क्षणका लागि शान्त उभिन्छन् र सुन्छन् । अनि किन्ली ढोकासम्म पुग्छन् र हेर्छन् । आफू ढोकाबाट भित्र छिर्न खोजेको हो कि जस्तो गरी केहीबेर अलमलिन्छन् र बन्द गर्छन् । भाला हान्ने मान्छे जो, छ फुटको अग्लो मान्छे र विक्षत अनुहार भएको, दायाँतिरबाट पस्छ र क्याप्टेनले आफूलाई नदेख्दासम्म उभिइरहन्छ ।)

किन्ली : (फर्केर उसलाई हेर्दै) लाटो जस्तो त्यहाँ नउभिऊ जो । केही बोल ।

जो : (अलमल्लिएर) हामी तपाईंसँग कुरा गर्न एउटा प्रतिनिधिमण्डल पठाउनु चाहन्छौं, सर ।

किन्ली : (रिसाएर) उनीहरूलाई आजै भन । (आफैँलाई नियाल्छ र क्रुद्ध पाराले फेरि बोल्छ ।) यानि कि, आओ भन । म भेट्छु ।

जो : हस, सर ।

(बाहिरिन्छ ।)

किन्ली : (कुटिल मुस्कानका साथ) हेर, अघि तिमीले भनेको समस्या आयो यहाँनिर, स्लोकम र हामीले यसलाई दबाउने छौं । यस्ता कुरालाई अगाडि बढ्न नपाउँदै सुरुमै दबायो भने बेस ।

सहयोगी : (चिन्तित भएर) म पहिलो र चौथोलाई पनि उठाइदिऔं, सर ? उनीहरूको सहयोग पनि चाहिएला ।

किन्ली : पर्दैन । सुत्न देऊ । म एक्लै काफी छु यिनीहरूका लागि, स्लोकम ।

(बाहिर कोही हिंडेको अवाज सुनिन्छ । एकैछिनमा जोको नेतृत्वमा पाँच जना जहाज कर्मचारी प्रवेश गर्छन् । सबैको पहिरन उस्तै – स्विटर, समुद्री वुट आदि । उनीहरू असहज पाराले क्याप्टेनतिर हेर्छन्, आआफ्ना टोपी आफ्ना हातमा घुमाउँदै ।)

किन्ली : (रोकिएर) अँ, तिमीहरूका तर्फबाट को बोल्ने ?

जो : (साहसका साथ अगाडि सर्दै) म ।

किन्ली : (माथिदेखि तलसम्म शङ्कास्पद पाराले हेर्दै) ए, तिमी । त्यसो भए बोल । छिटो भन ।

जो : (क्याप्टेनको अगि नझुक्न उसका आँखाको सामु नपर्ने कोसिस गर्दै) हामीले सम्झौता गरेको हदम्याद आज पूरा हुँदै छ ।

किन्ली : (रिसाएर) त्यो मैले नजानेको कुरा हो र ?

जो : हामीले बुझेसम्म तपाई हामीलाई घर पठाउने तयारीमा हुनुहुन्न ।

किन्ली : पठाउँदिनँ । यो जहाजमा तेल नभरिउन्जेल पठाउँदिनँ ।

जो : जतातत्तै बरफ रहँदासम्म तपाई अगाडि बढ्नै सक्नुहुन्न ।

किन्ली : बरफ पग्लँदै छ ।

जो : (रोकिएर, जुन दौरानमा अरू रिसले मुरमुरिएको आवाज सुनिन्छ।) हामीले पाइरहेको खाद्यान्न कुहिएको छ।

जो : (साथीहरूको साथले हौसिएर) हामीलाई घर पठाउनुस्। अब हामी काम गर्दैनौं।

किन्ली : (कडा स्वरमा) काम नगर्ने रे ?

जो : न्यायिक अदालत पनि भन्छ हामी सही छौं।

किन्ली : अदालतलाई मार गोली। हामी यस बेला समुद्रमा छौं र यहाँको कानुन म नै हुँ। (हार्पुनरतिर फर्कंदै) र मेरो आदेश नमान्ने सबैले भाला खाने छ। (जहाज कर्मचारीबाट रिसका थप आवाजहरू निस्कन्छन्। उता पछाडिपट्टिको ढोकाको सँघारमा श्रीमती किन्लीको आगमन। उनी आश्चर्यमिश्रित आँखाले सबैलाई हेर्छिन्। ती पुरुषहरूमध्ये कसैले पनि उनलाई देख्दैन।)

जो : (साहसका साथ) त्यसो भए हामी विद्रोह गर्छौं र बुढो जहाजलाई पनि हामीसँगै घर लान्छौं। कि होइन, केटाहो ?

(उसले साथीहरूलाई हेर्न पछाडि फर्कंदा किन्लीको मुठी उसको मुखैमा पर्छ। ऊ रन्थनिएर भैंमा लड्छ। श्रीमती किन्ली "आ !" गरेर ढोकाको पछाडि लुक्न पुग्छिन्। पुरुषहरू दापबाट तरबार निकालेर लड्न तयार हुन्छन्। तर किन्ली र उसको सहयोगीले रिभोल्भर ताकेपछि रोकिन्छन्।)

किन्ली : (टुटेका आँखा र बोलीमा) त्यहीं उभिइरहू। (पुरुषहरू चुपचाप उभिइरहन्छन्।)

(उपहासको स्वरमा) यस जहाजमा विद्रोह गर्नु सुरक्षित हुन्न भन्ने बुझ्यौ, हैन त ? अब आआफ्नो थान्कोमा जाओ र (जोलाई जिउमै पर्ने गरी एउटा बलियो लात्ती हान्छ।) र उसलाई पनि घिसारेर आफूसँगै लैजाओ र याद राख, तिमीहरूमध्ये कसैले होहल्ला गऱ्यो भने त्यहीं गोली हानेर मारिदिन्छु। अरूलाई पनि यही कुरा सुनाइदेऊ। भाग, छिटो। (पुरुषहरू जोलाई आफूसँगै लिएर भाग्छन्। किन्ली फिस्स हाँस्दै सहयोगीतिर हेर्छ र आफ्नो रिभोल्भर खल्तीमा हाल्छ।) स्लोकम, बरु तिमी माथि डेकमा जाऊ र तिनले थप बदमासी गर्छन् कि, हेर। अबदेखि हामीले चनाखो भएर निगरानी राख्नुपर्छ। मैले यिनलाई चिनेको छु।

सहयोगी : हस सर।

(ऊ दायाँतिरबाट बाहिरिन्छ। किन्ली भने आफ्नी श्रीमतीको अविश्रान्त रोदन सुनेर झक्कै पर्दै यताउति हेर्छ र बिस्तारै उनकै समीपमा जान्छ।)

किन्ली : (प्रेमपूर्ण पाराले आफ्नो हात उनको कुममा राख्दै) हेर त, एनी। यसरी नडराऊ। अब सबै बित्यो, सकियो।

श्रीमती किन्ली : (उनीबाट भाग्दै) भो, यो म सहन सक्तिनँ। अब थप म सहन सक्तिनँ।

किन्ली : (नम्र स्वरमा) के सहन सक्तिनौ, एनी ?

श्रीमती किन्ली : (आत्तिँदै) यो डरलाग्दो पाशविकता र यी पशुतुल्य पुरुष, यो भयानक जहाज र यो कारागारको कोठरी जस्तो कोठो र चारैतिर देखिने बरफ र यो सन्नाटा।

(यस आवेगपछि उनी शान्त हुन्छिन् र रुमालले आँखा पुछ्छिन्।)

किन्ली : (केही रोकिएर, केही अलमलिएको आक्रोशसहित उनलाई हेर्दै) याद राख एनी, मैले तिमीलाई यस यात्रामा आउन कर गरेको थिइनँ।

श्रीमती किन्ली : म तिमीसँग हुन चाहन्थें, डेभिड। यति बुझ्दैनौ ? म एक्लै घरमा पर्खिबस्न चाहँदिनथें – हामीले बिहे गरेपछिका छ वर्षमा जस्तो, केवल पर्खंदै, पर्खंदै र डराउँदै – मन थाम्ने केही पनि नभएरै पनि। डेव किन्लीकी श्रीमती भएर पनि स्कुलमा पढाउन जानु – त्यो पनि उचित नलागेरै हो हुन त। म त्यसताका, ठुलो, फराक र विशाल समुद्रमा सयर गर्ने सपना देख्थें। यसको जोखिपूर्ण र जोसपूर्ण जीवनमा म तिमीसँगै हुन चाहन्थें। तिमी होमपोर्ट फर्कंदा कसरी तिमीलाई अरूले नायक ठान्ने छन्, त्यसको साक्षी हुन चाहन्थें। तर त्यसको विपरीत (आवाजमा कम्पनसहित) यहाँ केवल बरफ र बर्बता पाएँ।

(गला अवरुद्ध हुन्छ।)

किन्ली : मैले यहाँ कस्तो हुन्छ भनेर तिमीलाई भनेकै थिएँ। ह्वेल मार्न हिँड्ने भनेको महिलाको चिया पर्टी जस्तो हुँदैन भनेर भनेकै थिएँ। एउटा महिलाले पाउने सबै सुविधा भएको घरैमा बसिरहू भनेको थिएँ। (टाउको हल्लाउँदै) तर तिमीले जिद्दी गऱ्यौ।

श्रीमती किन्ली : (थकित भावमा) हो डेभिड, यसमा तिम्रो गल्ती छैन। तर हेर न, मैले तिम्रो विश्वास गरिनँ। मैले पुराना पुस्तकमा पढेको भाइकिङको कल्पना गरेँ र तिमी उनीहरूध्येका एक हौ भन्ठानेँ।

किन्ली : (खण्डन गर्दै) मैले त यहाँ आफूलाई सकेजति न्यानो र आराम बनाउने कोसिस गरेकै हुँ। (उनी

क्रोधपूर्ण दृष्टिले उताउति हेर्छिन् ।) मैले तिम्रै लागि सरहबाट त्यो अर्गन बाजा पनि मगाएँ, यो ठानेर कि शान्ति भएको बेला वा अल्छी लागेको बेला बजाउँदा त्यसले तिमीलाई मनोरञ्जन दिने छ ।

श्रीमती किन्ली : (थकित स्वरमा) हो, तिमी ज्यादै दयालु भएका हौ, डेभिड । मलाई त्यो थाह छ । (उनी बायाँतिर जान्छिन्, झ्यालको पर्दा उचाल्छिन् र एक्कासि कराउँछिन् ।) तर अब म यो सहन्नँ । सहन सक्तिनँ । यी भित्ताभित्र कैदी जस्तो बस्दाबस्दा म अघाएँ । (उनी दौडेर उनको सामु जान्छिन् र रुँदै छाँद हाल्छिन् । उसले पनि बचाउ गरेजस्तो गरेर उसको हात उनको कुममा राख्छ ।) मलाई यहाँबाट निकाल, डेभिड । तिमीले मलाई यस भयानक जहाजबाट निकालेनौ भने म पागल हुने छु । मलाई घर लैजाऊ, डेभिड । म यसबाहेक केही पनि सोच्न सक्तिनँ । मलाई लाग्छ यहाँको चिसो र सन्नाटाले मेरो दिमाग फुटाइरहेका छन् । मलाई डर लागिरहेको छ । मलाई घर लैजाऊ ।

किन्ली : (उनलाई एक हातको दूरीमै स्पर्श गर्दै उनको अनुहारमा तनावपूर्ण दृष्टि दिएर) बरु तिमी सुन, एनी । तिमीलाई सन्चो छैन जस्तो छ । ज्वरो पनि आएजस्तो छ । हेर, तिम्रा आँखा कति अनौठा देखिएका ! यसअघि मैले तिमीलाई यस्ती त कहिल्यै देखेको थिइनँ ।

श्रीमती किनली : (अनियन्त्रित हाँसो हाँस्दै) यो बरफ, चिसो र सन्नाटाले हो । यिनले कसैलाई पनि अनौठो बनाइदिन सक्छन् ।

किन्ली : (फकाउँदै) एकदुई, वा हदै भए तीन महिनामा हाम्रो भाग्य फर्कने छ । अनि मैले जहाज पूरै तेलले भर्न सक्ने छु । त्यसपछि उसमा अटेजति सबै सामग्री हालेर हामी घरतिर लाग्ने छौँ ।

श्रीमती किन्ली : त्यति लामो त कहाँ पर्खन सकिन्छ र ? भो, म त सक्तिनँ । मलाई घर जान मन छ । यी कर्मचारी पनि पर्खनेवाला छैनन् । उनीहरूलाई यहाँ रोकेर राख्नु तिम्रो क्रूरता हो, पाशविकता हो । तिमीले अब घरतिर लाग्नैपर्छ । कुनै बहानावाजी चल्दैन । उता दक्षिणतिर पानी सफा छ । तिमीसँग कुनै मुटु छ भने अब घर हिँड्नुपर्छ ।

किन्ली : (कडा स्वरमा) म सक्तिनँ, एनी ।

श्रीमती एनी : किन सक्तैनौ ?

किन्ली : एक महिला मेरो मनस्थिति बुझ्न सक्तिनँ ।

श्रीमती किन्ली : (आक्रोशका साथ) किन्लीक त्यो तिम्रो मनस्थिति मूर्खतापूर्ण छ, हठी छ । तिमीले आफ्नो दोस्रो सहयोगीसँग कुरा गरेको पनि मैले सुनेँ । जहाज भनरी फर्कियो भने अरू क्याप्टेनहरूले उपहास गर्छन् भन्ने डर छ तिमीलाई, होइन ? आफ्ना कर्मचारीलाई पिटेर वा मलाई बहुलाहीतुल्य बनाएर पनि तिमीलाई आफ्नो उही तुच्छ प्रतिष्ठा बचाउनु छ, होइन त ?

किन्ली : (हठी अनुहारमा) त्यसो होइन, एनी । ती नाविकहरूले मलाई पटक्कै उपहास गर्न सक्दैनन् । अरूले के भन्छ भन्ने पनि होइन । तर (आफ्नो कुरा भन्न अकमकिन्छ) हेर न, म पहिलो यात्रामा निस्केदेखि नै जहाज भर्दै आएको छु । म सधैँ पूरा जहार भरेर मात्रै फर्केको छु र नभरी फर्कनु पनि त उचित होइन र म होमपोर्टमा सधैँ पहिलो ह्वेलर जहाज हुँदै आएको छु । कुरा अझै बुझिनौ, एनी ? (उनलाई हेर्छ । उनी भने उसलाई हेर्नुको साटो अगाडितिर हेरिरहन्छिन्, उसले भनेको केही नसुनी) एनी ! (झट्काका साथ होसमा आउँदै) बरु भित्र जाऊ, एनी । तिमी त ज्ञानी महिला पो हौ त । तिमीलाई सन्चो पनि छैन ।

श्रीमती किन्ली : (पछाडिको ढोकातिर डोऱ्याउने उसको प्रयासको प्रतिकार गर्दै) डेभिड ! तिमी घर फर्कन्नौ त ?

किन्ली : (प्रेमपूर्ण) म फर्कन सक्तिनँ, एनी । केही समय म फर्कन्नँ । तिमीले मेरो कुरै बुझिनौ । मैले जसरी पनि तेल त भर्नु नै छ ।

श्रीमती किन्ली : पैसै चाहिएको हो भने त कुरा बेग्लै हो । तर तिमीलाई पैसा चाहिएको पनि होइन । तिमीसँग आवश्यकताभन्दा बढी पैसा छ ।

किन्ली : (अधीर भएर) मैले खोजेको पैसा हुँदै होइन । म त्यति तुच्छ छु जस्तो लाग्छ तिमीलाई ?

श्रीमती किन्ली : (आलस्यपूर्ण तरिकाले) मलाई थाहा छैन । म बुझ्दिनँ पनि । (आवेगका साथ) म आफ्नै पुरानो घर फर्कन चाहन्छु, र आफ्नै भान्सा हेर्न चाहन्छु । म पुनः कुनै महिलाले मसँग कुरा गरेको सुन्न चाहन्छु र उनीसँग कुरा गर्न चाहन्छु । दुई वर्ष भयो – तर लाग्छ, वर्षौं भइसक्यो । लाग्छ, अब म मरिसकेँ र कहिल्यै घर फर्कन सक्ने छैनँ ।

किन्ली : (उनको अनौठो लवजबाट चिन्तित र सुदूरमा गरेको उनको दृष्टिबाट भयभीत) बरु तिमी सुत्न जाऊ, एनी । तिमीलाई सन्चो छैन ।

श्रीमती किन्ली : (उसलाई नसुनेझैँ गर्दै) तिमी टाढा

जाँदा म निकै न्यास्रिन्थें । म सोच्थें, होम्पोर्ट एउटा निकै खराब र दिक्कलाग्दो ठाउँ हो । अनि म समुद्र किनारमा जान्थें, विशेष गरी हुरी चलेको बेला र जहाजहरू गुडेको बेला म सोच्थें, समुद्रमा तिम्रो समय कति सुखद होला ! (आधा सुस्केराकै बिच हाँस्छिन् ।) त्यस बेला मलाई समुद्र खूब मन पर्थ्यो । (रोकिन्छिन्, र बिस्तारै पुनः बोल्छिन्) तर अहिले, मलाई समुद्र हेर्न पनि मन छैन ।

किन्ली : (उनलाई हँसाउने उद्देश्यले) यो महिलाका लागि उपयुक्त ठाउँ नै होइन । तिमीलाई लिएर आउने म नै मूर्ख हुँ ।

श्रीमती किन्ली : (रोकिएर, हात आँखामाथि लगेर, थकित र द्रवित भएको भावमा) हामीले अहिले नै सुर गऱ्यौं भने घर पुग्न कति समय लाग्छ होला ?

किन्ली : (फन्किंदै) दुई महिनाजति लाग्ला, मेरो विचारमा, भाग्य राम्रो भयो भने ।

श्रीमती किन्ली : (औंला भाँचेर, भुतभुताउँदै र केही हाँसेजस्तो गर्दै) अगस्त हुन्छ होला, भनौं, अगस्तको अन्त्यतिर । हैन ? हामीले बिहे गरेको पनि अगस्तको २५ तारिख हो । हो कि होइन, डेभिड ?

किन्ली : (उनको सम्झनाले उसलाई भावुक बनाएको कुरा लुकाउने खोज्दै, अलि खस्रो आवाजमा) तिमीलाई सम्झना छैन र ?

श्रीमती किन्ली : (पुनः हातले आँखा स्पर्श गर्दै, अनायासै) मेरो सम्झनाले मलाई नै छोड्न थालिसक्यो । हिउँ परेको बेला थियो है– धेरै समय अगाडि । (रोकिन्छिन् र पुनः सोचमग्न भएर मुस्काउँछिन् ।) अब त घरमा –आँगनतिर–लिलेक फुल्छन् र छेउछेउतिर गुलाफ फुल्छन् । किपोला लाग्न थालिसक्यो होला ।

(हातले अनुहार छोप्छिन् र सुँकसुँकाउन थाल्छिन् ।)

किन्ली : (विचलित हुँदै) भित्र गएर आराम गर, एनी । यो भन्नै नहुने कुरामाथि बेकारमा रोएर तिमी कति थाकिसक्यौ ।

श्रीमती किन्ली : (उसको गलामा छाँद हालेर टाँसिंदै) तिमीलाई मलाई माया गर्छौ, गर्दैनौ ?

किन्ली : (आफ्नो आवेगमा आश्यर्चमिश्रित पछुतो मान्दै) माया ? यस्तो प्रश्न किन सोधेकी मलाई, एनी ?

श्रीमति किन्ली : (उसलाई बलात् हल्लाउँदै) माया गर्छौ नि, गर्दैनौ र डेभिड ? भन न ?

किन्ली : म तिम्रो श्रीमान् हुँ, एनी र तिमी मेरी श्रीमती । उत्तिका वर्ष हामीबीच प्रेम नभएर के हुन्छ त ?

श्रीमती किन्ली : (उसलाई पुनः हल्लाउँदै र थप तीव्रताका साथ) त्यसो भए तिमी मलाई माया गर्छौ । भन न त ।

किन्ली : (सहजताका साथ) गर्छु, एनी ।

श्रीमती किन्ली : (राहतको सास फेर्छिन् । हात छेउतिर झर्छन् । किन्ली चिन्तित मुद्रामा हेर्छन् । उनी हातले पुनः आँखालाई स्पर्श गर्दै आफैंसँग मुरमुराउँछिन्) मलाई कहिलेकाहीं लाग्छ – हाम्रो बच्चा भइदिएको भए राम्रो हुन्थ्यो कि ! (किन्ली उनीबाट अलि पर हट्छ, निकै भावुक हुँदै । उनी पाखुरामा समातेर तीव्रताका साथ उसलाई आफूतिर फर्काउँछिन् ।) र मैले, एक श्रीमतीका रूपमा तिमीलाई सधैं राम्रो गरें, गरिनँ डेभिड ?

किन्ली : (आजावले उसको भावुकता लुक्दैन) हो । यस्ती श्रीमती अरूले पाउँदैनन् ।

श्रीमती किन्ली : र मैले तिमीसँग केही पनि मागिनँ, मागें त डेभिड ?

किन्ली : तिमीले मागेकी भए मसँग भएको सबै चीज पाउन सक्थ्यौ, एनी ।

श्रीमती किन्ली : (आवेगका साथ) त्यसो भए, अहिले मैले मागेको चीज पूरा गर– मेरा लागि वा भगवान्का लागि– मलाई घर लैजाऊ । यहाँ म मर्न लागें, यस्तो जीवन बाँच्दा । यहाँको क्रूरता, चिसोपन र त्रास । म पागल हुन लागें । यो हावामा पनि म यो त्रास अनुभव गर्न थालें । दिन-प्रतिदिन यो सन्नाटाले मलाई भयभीत पारेको सुनिरहेकी छु र सधैं यस्तै छ । म अब सहन सक्तिनँ । (सुँकसुँकाउँछिन् ।) म पागल हुन्छु । थाह छ, म पागल हुन्छु । तिमीले भनेजस्तो मलाई माया गर्छौ भने मलाई घर लैजाऊ डेभिड । मलाई यहाँ ज्यादै डर लागिरहेको छ । भगवान्कै लागि भए पनि मलाई घर लैजाऊ ।

(उसको गलामा हात बेर्छिन्, उसको काँधको आड लागेर रुन्छिन् । किन्लीभित्र चलिरहेको भावनात्मक आवेग उसको अनुहारमा छताछुल्ल पोखिन्छ । उनलाई एक हातको दूरीमा राख्छ र दृष्टिलाई अलि प्रेममय बनाउँछ । केही बेरका लागि उसका पाखुरा झर्छन् र ऊ बूढो देखिन्छ । उसको फलामे अडानका शिथिलता आउँछ, जब ऊ श्रमतीको अश्रुयुक्त अनुहार हेर्छ ।)

किन्ली : (बलजफ्ती केही शब्द निकाल्दै) एनी, तिमीलाई आश्वयक छ भने म तिम्रा लागि त्यति गर्छु ।

श्रीमती किन्ली : (उल्लासका साथ, उपसलाई चुम्दै)

डेभिड, त्यसका लागि भगवान्ले तिम्रो कल्याण गरुन् । (किन्ली उनीबाट अलि टाढिन्छ र छेउको गलीतिर लाग्छ । त्यसै बेला भऱ्याङमा कसैका गोडाको आवाज सुनिन्छ । दोस्रो सहयोगीको क्याबिनमा प्रवेश ।)

सहयोगी : (खुसी हुँदै) उत्तरतिर पनि बरफ हटिसक्यो, सर । हेर्दा पानी पूरै सफा देखिन्छ र बाटोमा कुनै पनि अवरोध छैन ।

(किन्ली आफूलाई कुनै सुरुङबाट निस्किएको मानिसले जस्तो सोझो पार्छ । श्रीमती किन्ली भने भयभीत आँखाले सहयोगीलाई हेर्छिन् ।)

किन्ली : (केही सम्झेजस्तो गर्दै आश्चर्यका साथ) बाटो सफा छ ? उत्तरतिर ?

सहयोगी : हो, सर ।

किन्ली : (आवाजमा दृढताको झलकसहित) त्यसो भए तयारी गर । हामी उतैतिर जान्छौं ।

सहयोगी : हस, सर ।

श्रीमती किन्ली : (चकित मुद्रामा) डेभिड !

किन्ली : (नसुनेजस्तो गरेर) यी कर्मचारीहरू जान तयार हुन्छन् त ? कि तान्नुपर्ने हो ?

सहयोगी : मान्छन् । उनीहरूलाई भगावन्को डर देखाउनुपर्छ । उनीहरू भेडाजत्तिकै निरीह छन् ।

किन्ली : त्यसो भए, हिँड । (दृढताका साथ) यस बरफको ढिस्कोपारि धेरै नै ह्वेल छन् र हामीले तिनलाई मार्नैपर्छ ।

सहयोगी : हुन्छ, सर ।

(ऊ हतारोसँग बाहिरिन्छ । केही छिनपछि बाहिर डेकतिरबाट मानिस हिँडेको आवाज आउँछ – गुडुडु । सहयोगीले चर्को स्वरमा आदेश दिएको सुनिन्छ ।)

किन्ली : (आफैँसँग, अलि रिसाएजसरी) धन्न । नत्र त म एउटा भुक्ने कुकुर जस्तै घर फर्कन लागेको ।

श्रीमती किन्ली : (आग्रहपूर्ण) डेभिड ।

किन्ली : (कडाइका साथ) एउटी महिला भएर पुरुषहरूको मामलामा हस्तक्षेप गरेर तिमी ठीक गरिरहेकी छैनौ । तिमी मेरो भावना बुझ्दिनौ । मैले आफूलाई एक सफल पुरुष बनाउनैपर्छ– तिमीले श्रीमान्भन्दा पनि योग्य हुनका लागि । मैले जसरी पनि तेल भर्नैपर्छ । यति कुरा स्पष्ट बुझ ।

श्रीमती किन्ली : (आग्रहपूर्वक) डेभिड, तिमी घर नफर्कने ?

किन्ली : (प्रश्नलाई बेवास्ता गर्दै, आदेशको स्वरमा) तिमीलाई सन्चो छैन । भित्र गएर एकैछिन सुत । (ऊ ढोकातिर जान्छ ।) मलाई माथि कौसीमा जानु छ ।

(ऊ बाहिरिन्छ । उनी उसको पछाडि असन्तुष्टिका साथ कराउँछिन्, "डेभिड" । सन्नाटा । हातले आँखा छाम्छिन् र अनियन्त्रित रूपले हाँस्न थाल्छिन् र अर्गन बाजा भएतिर जान्छिन् । बस्छिन् र एकसुरमा कुनै पुरानो भजन बजाउन थाल्छिन् । डेकतिर जाने ढोकाबाट किन्ली पुनः प्रवेश गर्छ र आक्रोशपूर्ण आँखाले उनलाई हेर्न थल्छ । ऊ अगाडि आउँछ र उनलाई पाखुरामा समाउँछ ।)

किन्ली : यो केके प्रहसन हो, हैं ? (उनी बेफ्वाँक हाँस्छिन् र झस्किन्छिन् ।) एनी, यो के हो ? (उत्तर दिन्नन् । किन्लीको आवाज काँप्छ) मलाई चिन्दिनौ, एनी ? (दुवै हात उनको कुममा राख्छ र उनलाई घुमाउँछ, ता कि उनको आँखामा हेर्न सकोस् । उसलाई मूर्खतापूर्ण दृष्टिले हेर्छिन् । उनका ओठमा एउटा फिका हाँसो देखिन्छ । ऊ भने उनीबाट अलि पर हट्छ र उनी पुनः बिस्तारै अर्गन बजाउन थाल्छिन् ।)

किन्ली : (कर्कश साउतीमा, बोल्नै गाह्रो भएजस्तो) भन्न त भन्थेऊ, तिमी पागल हुन लाग्यौ । हे भगवान् । (माथि डेकबाट लामो रोदन – ऐया! ऐया! एकैछिनमा आकाशबत्ती सामु सहयोगीको अनुहार देखिन्छ । उसले श्रीमती किन्लीलाई भने देख्दैन ।)

सहयोगी : (उत्साहका साथ) ह्वेल, सर । एक हूलै देखिन्छ, पाँच माइलजति पर । कति ठुलठुला !

किन्ली : (क्रियाशील हुँदै) डुङ्गा खोल्दै छौ, होइन ?

सहयोगी : हो, सर ।

किन्ली : (निर्णायक शैलीमा) म पनि आउँदै छु ।

सहयोगी : हुन्छ, सर । (खुसी हुँदै) अब चाहिएजति तेल पाउनुहुनेछ ।

(उसको टाउको केही हट्छ । उसले आदेश दिएको सुनिन्छ ।)

किन्ली : (श्रीमतितिर फर्कंदै) एनी, तिमीले सुन्यौ ? तेल भेटिने भयो । (उनले उत्तर दिन्नन् । ऊ त्यहाँ भएको थाहा पाएजस्तो पनि गर्दिनन् । ऊ उँचो हाँसो हाँस्छ, जुन हाँसोभन्दा पनि कुनै क्रन्दन जस्तो सुनिन्छ ।) मलाई थाहा छ, तिमी मलाई मूर्ख झुक्याउन खोज्दै छ्यौ, एनी । तिमी पागल भएकी होइनौ (चिन्तित भावमा) अब केही छिनमै मैले चाहिएजति तेल भरिसक्ने छु । अनि हामी घर फर्कने छौं । अहिले नै त म फर्कन सक्तिनँ । यो त तिमीले बुझ्यौ, हैन त ? मैले जसरी पनि तेल भर्नु छ । (आक्रोशको आवेगमा) भन । तिमी पागल भएकी छैनौ, छौ त ?

(उनी अर्गन बजाइरहन्छिन्, तर उत्तर दिन्नन्। आकाशबत्तीमा पुनः सहयोगीको अनुहार देखिन्छ ।)

सहयोगी : सबै तयारी सकियो, सर ।

(किन्ली आफ्नी श्रीमतीलाई पिठिउँ फर्काउँदै ढोकातिर जान्छ । केहीबेर त्यहीं उभिन्छ, पछि फर्केर उनलाई आक्रोशपूर्ण हेर्छ , आफ्नो आवेगलाई समाल्न खोज्दै ।)

किन्ली : सर आउँदै हो ?

किन्ली : (उनको अनुहार दृढताले कठोर बनाउँदै) अँ ।

(ऊ एक्कासि पछि फर्कन्छ र बाहिरिन्छ । श्रीमती किन्लीले उनको प्रस्थान थाह पाउँदिनन् । उनको सम्पूर्ण ध्यान अर्गनतिरै छ । आँखा आधा बन्द गरेर बस्छिन् । अर्गनमा बजिरहेको भगनको धुनसँगै उनको जिउ उताउता हल्लिन्छ । उनका औंला छिटोछिटो चल्छन् र उनी आवेगका साथ तर बेसुर तरिकाले बजाइरहन्छिन् । पर्दा ।)

अनुवादः महेश पौड्याल

नाट्यांश/बेलायत (England)

अन्त्य-खेल

स्यामुयल बेकेट (Extract form "End Game" by Samuel Beckett)

पात्र : क्लोभ/ह्याम्म

(नाङ्गा भित्ताहरू। मधुरो प्रकाश। पछाडिको भित्तामा दायाँबायाँ, अलि अग्लाइमा दुई सानासाना झ्यालहरू, पर्दाले ढाकिएका। अगाडि दायाँतिर एक ढोका। ढोकानिर भित्तामा टाँसिएको एक फोटो। माझमा एक पुरानो पाङ्ग्रायुक्त आरामी मेच, जसमा ह्याम्म बसिरहेको छ एक पुरानो ओढ्ने ओढेर। ढोकानिर अचल भएर उभिएको क्लोभ, जसको दृष्टि हेम्ममाथि स्थिर भएको छ। क्लोभको मुहार एकदमै रातो देखिन्छ। सङ्क्षिप्तमा भव्य दृश्य।

क्लोभ हिँड्दै बायाँतिरको झ्यालनिर उभिन पुग्छ। उसको गति झिँजोवत् चासोहीन जस्तो देखिन्छ। देब्रे झ्यालतिर आँखा उठाएर हेर्छ। फेरि फर्केर दाहिनेतिर हेर्छ। हिँडेर दाहिने झ्यालका मुनि उभिन पुग्छ। दाहिने झ्यालतिर आँखा उठाएर हेर्दछ, फेरि देब्रेतिर। केही छिनका लागि कोठाबाट बाहिर जान्छ। एक सानो भरेङ उठाएर ल्याउँछ। त्यसलाई लिएर देब्रे झ्यालको मुनि राखिदिन्छ। अनि त्यसमाथि चढेर पर्दा हटाउँछ। तल ओर्लेर लगभग छ पाइला नापेर दाहिने झ्यालतिर जान्छ, फेरि भरेङका लागि फर्कन्छ, त्यसलाई उठाएर दाहिने झ्यालका मुनि राख्तछ। माथि चढेर पर्दा हटाउँछ। तल ओर्लन्छ, तीन पाइला देब्रे झ्यालतिर नाप्तछ, भरेङका लागि फर्कन्छ, त्यसलाई लिएर देब्रे झ्यालमुनि टाँसिदिन्छ, त्यसमाथि चढेर झ्यालबाहिर चियाउँछ। सङ्क्षिप्त हाँसो। तल ओर्लन्छ। दाहिने झ्यालतिर एक पाइला सार्छ, भरेङका लागि फर्कन्छ, त्यसलाई उठाएर दाहिने झ्यालमुनि टाँसिदिन्छ। माथि चढेर झ्यालबाट बाहिर चियाउँछ। सङ्क्षिप्त हाँसो। तल ओर्लन्छ। भरेङ उठाएर फोहरमैला राख्ने ड्रमहरू भएको ठाउँतिर लैजान्छ, रोकिन्छ, फर्कन्छ, फेरि भरेङ उठाएर दाहिने झ्यालका मुनि राखिदिन्छ। ड्रमहरू भएको ठाउँतिर जान्छ। तिनीहरूलाई छोपेको कपडा हटाएर पट्ट्याउँदै काखीमा राख्छ। एक ड्रमको बिर्को उठाउँछ, झुकेर ड्रमभित्र चियाउँछ। सङ्क्षिप्त हाँसो। बिर्को फेरि राखिदिन्छ। अर्को ड्रमनिर पुगेर यही चर्तिकला दोहोऱ्याउँछ। ह्याम्मनिर पुग्दछ र उसमाथि रहेको ओढ्ने हटाएर त्यसलाई पट्ट्याएर आफ्नो काखीमा च्याप्तछ। हेम्मले ड्रेसिङ गाउन लगाएको छ। टाउकोमा एक बाउँठो टोपी, मुहारमा रगतका छिटा भएको ठुलो रुमाल, गर्दनमा झुन्डिएको एक सिटी, घुँडामा कम्बल, खुट्टामा मोटो मोजा। ह्याम्म सम्भवतः सुतिरहेको छ। क्लोभ उसमाथि दृष्टि दौडाउँछ। सङ्क्षिप्त हाँसो। ढोकातिर जान्छ, रोकिन्छ, फेरि हलतिर बढ्दछ।)

क्लोभ : (एकटकले हेरेर सुक्खा स्वरमा) खतम। सबै खतम। लगभग। हो, लगभग।

(रोकिएर)

एक दानामाथि अर्को, एकएक गरेर, अनि एक दिन, अकस्मात्, एकै रास, सानोझैँ, असम्भव रास।

(रोकिएर)

मलाई अब अरू सजाय दिन सकिन्न।

(रोकिएर)

अब म आफ्नो भान्सामा जाँदै छु। दस फुट लम्बाइ, दस फुट चौडाइ, दस फुट अग्लो भान्सा, जहाँ उभिएर म यसको सिटीको प्रतीक्षा गर्ने छु।

(रोकिएर)

राम्रो लम्बाइ-चौडाइ। मेचको सहारा लिएर उभिँदै भित्तालाई नियाल्ने छु। अनि यसको सिटीको प्रतीक्षा गर्ने छु।

(एकछिनका लागि अचल रहन्छ, फेरि बाहिर जान्छ। तुरुन्तै फर्कन्छ, भरेङ उठाएर लिएर जान्छ। रोकिएर। ह्याम्म बिउँझन्छ। रुमालमुनि हाई काढ्दछ। फेरि रुमाल हटाउँछ। रोकिएर। ह्याम्मको मुहार एकदम रातो र चस्मा कालो।)

ह्याम्म : मेरो...(हाई)...चाल !

(रुमाललाई आफ्नो अगाडि फैलाउँछ।)

पुरानो रक्तपिपासु
(चस्मा फुकाल्छ, आँखा पुछ्छ, मुहार पुछ्छ, चस्मा फेरि लगाउँछ, रुमाललाई पट्टयाएर ड्रेसिङ गाउनको अगाडिको खल्तीमा सजाउँछ। घाँटी सफा गर्दछ। औँलाका टुप्पाहरूलाई मिलाउँछ।)

ह्याम्म : मेरो दुःखबाट पनि...!
(हाई गर्दछ।)
त्यसै कोही दुखी होला ? अवश्य भएको होला। कहिले। पूर्वजन्ममा। तर अचेल ?
(रोकिएर)
मेरो बाउ !
(रोकिएर)
मेरी आमा ?
(रोकिएर)
मेरो...कुकुर ?
(रोकिएर)
म के मान्दछु भने ती सबैले पनि दुःख सहिरहेका छन्, आफ्नोआफ्नो स्तरअनुसार। तर के उनीहरूको दुःख मेरो दुःखसँग बराबरी गर्न सक्तछ ? कदापि सक्तैन।
(रोकिएर)
सक्तैन, साँ...(हाई) साँच्चो कुरा हो। (गर्वले) जति ठुलो मान्छे, त्यति ने धेरै भरिपूर्ण।
(रोकिएर। मधुरो स्वरमा)
अनि त्यति नै खाली पनि।
(सुँघ्दै गरेर)
क्लोभ !
(रोकिएर)
होइन। अर्थात् म एक्लो।
(रोकिएर)
अनौठाको सपना थियो। अनौठाको जङ्गल !
(रोकिएर)
बस, अब अरू होइन। अब खतम हुनुपर्ने समय आयो। यहाँ यस आश्रयमा पनि।
(रोकिएर)
तर फेरि पनि भिजो मान्दछु। खतम हुनलाई भिजो मान्दछु। बस, सीधा कुरा। मलाई अब खतम हुनुपर्दछ। अनि म खतम...(हाई) हुनलाई भिजो मानिरहेको छु।
(हाई)
हे भगवान् ! म अब धेरै थाकेको छु। ओछयानमा गएर बसूँ भने सम्भवतः...।
(सिटी बजाउँछ। क्लोभ द्रुत गतिमा आउँछ। मेचनिर आएर रोकिन्छ।)
दुर्गन्धित हावा छोडिरहेछौ।
(रोकिएर)
हुन्छ, मलाई तयार गर, म सुत्न चाहन्छु।

क्लोभ : भर्खरै त सुतेर उठेको होइन ?
ह्याम : सुतेँ त के भयो ?
क्लोभ : प्रत्येक पाँच मिनेटपछि म तिमीलाई उठाएर सुताऊँ ? मेरा लागि अरू काम पनि त छ नि।
(रोकिएर)
ह्याम्म : कहिल्यै पनि इच्छा भएन त मलाई सुतेको देखेर मेरो चस्मा फुकालिदिऊँ ?
क्लोभ : लुछेर ?
(रोकिएर)
भएन।
ह्याम्म : कुनै दिन तिमीलाई देखाउने छु।
(रोकिएर)
लाग्दछ, एकदमै सेतो भएका छौ।
(रोकिएर)
समय के भयो ?
क्लोभ : त्यही जुन प्रत्येक दिन हुने गर्दछ।
ह्याम्म : (दाहिने भ्यालतिर सङ्केत गर्दै) त्यता हेरिसक्यौ ?
क्लोभ : हो।
ह्याम्म : त ?
क्लोभ : शून्य !
ह्याम्म : पानी पर्ने त हो।
क्लोभ : पानी पर्दैन।
(रोकिएर)
ह्याम्म : त्यसो त तिम्रो स्वास्थ्य कस्तो छ ?
क्लोभ : कुनै गुनासो छैन।
ह्याम्म : अर्थात् ठिक छौ ?
क्लोभ : (भिजो मान्दै) भनें नि, कुनै गुनासो छैन।
ह्याम्म : मेरो भने केही अनौठो छ।
(रोकिएर)
क्लोभ !
क्लोभ : किन ?
ह्याम्म : तिमीलाई अवश्य पनि भिजा लागिसक्यो ?
क्लोभ : हो। (मौन) कुन कुराले ?
ह्याम्म : यी...यी सबैबाट।
क्लोभ : त्यो त म उहिल्यैदेखि छु ! (मौन) के तिमी छैनौ ?
ह्याम्म : (मधुरो स्वरमा) त उसो भए ठिक छ। चल्न देऊ, जबसम्म चलिरहन्छ।

क्लोभ : सम्भवतः अब यो सबै खतम हुने छ ।
(रोकिएर) जीवनभरि त्यही प्रश्न ! त्यही उत्तर !
ह्याम्म : मलाई तयार गरिदिन्छौ ?
(क्लोभ त्यसरी नै उभिरहन्छ ।)
ओढ्ने लिएर आऊ ।
(क्लोभ उभि नै रहन्छ ।)
क्लोभ !
क्लोभ : किन ?
ह्याम्म : यो बुझ, खानका लागि केही दिन्नँ ।
क्लोभ : उसो भए मरिने छ । ज्यान छुटिने छ ।
ह्याम्म : बस, कति गरिदिने छु भने मर्ने पनि छैनौ र भोक पनि मेटिने छैन ।
क्लोभ : उसो भए मरिन्न । त्यो पनि ठिकै छ ।
(रोकिएर)
ओढ्ने लिन जाँदै छु ।
(ढोकातिर बढ्दछ ।)
ह्याम्म : पर्ख !
(क्लोभ रोकिन्छ ।)
दिनभिरमा एक बिस्कुट पाउने छौ ।
(रोकिएर) होइन, एउटा र आधा ।
(रोकिएर) तिमी किन भागेर जाँदैनौ कतै ?
क्लोभ : तिमी मलाई किन निकालिदिँदैनौ ?
ह्याम्म : तिमीलाई निकालेर कसलाई राखूँ ?
क्लोभ : भागेर जाऊँ कता ?
(रोकिएर)
ह्याम्म : सदैव भाग्ने चेष्टामा रहने गर्दछौ ।
क्लोभ : रहने त गर्दछु ।
ह्याम्म : अर्थात् तिमी मलाई प्रेम गर्दैनौ ?
क्लोभ : अहँ ।
ह्याम्म : पहिला त गर्ने गर्थ्यौ ।
क्लोभ : हो, धेरै पहिला ।
ह्याम्म : मैले तिमीलाई धेरै दुःख दिएको छु ।
(रोकिएर) दिएको छु नि ?
क्लोभ : दुःखको कुरा होइन ।
ह्याम्म : (अचम्म पर्दै) अर्थात् मैले तिमीलाई दुःख दिएको छैन ?
क्लोभ : अवश्य पनि दिएका छौ ।
ह्याम्म : (आश्वस्त भएर) तिमीले त मलाई तर्साइ नै दिएका थियौ ।
(रोकिएर । ठुलो स्वरमा)
म भन्छु, मलाई क्षमा गरिदेऊ ।
क्लोभ : सुनें ।
(रोकिएर)
आज अरू रगत बगेको छ कि छैन ?
ह्याम्म : हिजोभन्दा कम ।
(रोकिएर)
पीडाको औषधीको समय भयो ?
क्लोभ : अहिले होइन ।
(रोकिएर)
ह्याम्म : तिम्रा आँखाको स्थिति ?
क्लोभ : नराम्रो ।
ह्याम्म : तिघ्राको ?
क्लोभ : नराम्रो ।
ह्याम्म : तर हिँड्न त सक्छौ नि ?
क्लोभ : हो ।
ह्याम्म : (कड्केर) उसो भए किन उभिएका छौ ?
(क्लोभ पछाडिको भित्तामा निधार र हात अडाएर उभिन्छ ।) कता जान लागेको ?
क्लोभ : यता ।
ह्याम्म : यहाँ फर्किऊ !
(क्लोभ आएर मेचको अगाडि उभिन्छ ।)
कहाँ छौ ?
क्लोभ : यहाँ ।
ह्याम्म : तिमी मलाई किन मार्दैनौ ?
क्लोभ : दराजको ताल्चा खोल्न सक्तिनँ ।
(रोकिएर)
ह्याम्म : जाऊ, गएर साइकलको दुई पाङ्ग्रा लिएर आऊ ।
क्लोभ : पाङ्ग्रा सबै खतम ।
ह्याम्म : तिम्रो साइकल के भयो ?
क्लोभ : थियो नै कहाँ ?
ह्याम्म : यो कसरी हुन सक्छ ?
क्लोभ : जब साइकल राम्रो पाइन्थ्यो त म तिमीलाई प्रार्थना गरिरहें, तिम्रो पाउमा परिरहें, एउटा लिएर देऊ । तिमीले सदैव यही भन्यौ, भाग् जा । अनि अब साइकल पनि खतम ।
ह्याम्म : अनि तिम्रो त्यो यात्रा ? जब तिमी मेरा कङ्गालहरूको हेरचाहका लागि जाने गर्दथ्यौ । के सधैं हिँडेरै जान्थ्यौ त ?
क्लोभ : कहिलेकाहीं घोडा चढेर ।

अनु. रोशन थापा 'नीरव'

सबैभन्दा सस्तो चोक्टा

असगर वजाहत ("Sabse Sasta Gosht" by Asgar Wajahat)

(मञ्चस्थलमा गायक आउँछ र गीत गाउन आरम्भ गर्दछ ।)

गायक : हिन्दु मुस्लिम सिख इसाई
होइनन् कोही दाइ-भाइ
गर्दछन् सबै मिलेर लडाइँ
मारपिट गरी लगाउँछन् आगो
जति बेला पनि विपत् ल्यायो
सधैं लडाइँ, सधैं झगडा
(स्वर बदलेर)
धर्मको नाममा बच्चाहरूको टाँग च्यात्छन्
धर्मको नाममा नारीहरूको वक्ष काट्छन्
धर्मको नाममा जिउँदो जलाउँछन् यिनीहरू सर्वसाधारणलाई
धर्मको नाममा शवको पसल सजाउँछन् ।

(गायक फर्कन्छ र मञ्चस्थलमा एक हिन्दु नेता तथा एक मुसलमान नेता आउँछन् । दुवै हात समाएर नाच्तै गाउँछन् ।)

दुवै : नेता हौं हामी जातका
हिन्दु हौं न मुस्लिम
अरे काम हो हाम्रो लुटेर खाने
हिन्दु हौं न मुस्लिम
(नाच्तै-नाच्तै रोकिन्छन् ।)

हिन्दु नेता : चुनाव नजिकै आइसक्यो । काम केही भएन । भोट फेरि लिनुपर्नेछ...त्यसो त मेरो चुनाव क्षेत्रमा हिन्दुहरूको वहुमत छ...तर सबै जनाले मलाई घृणा गर्दछन् ।

मुस्लिम : मेरो चुनाव क्षेत्रमा मुसलमानहरूको सङ्ख्या धेरै छ तर तिनीहरू सबै जना मेरो अनुहारलाई घृणा गर्दछन् ।

दुवै मिलेर : तर हामी नेता हौं, हामी घृणालाई प्रेममा वदल्न जान्दछौं...हामी उनीहरूसँग भन्नेछौं...।

मुस्मिल नेता : वंशज इस्लाम ! हिन्दुहरूले तिमीहरूलाई बरबाद गरिदिए । तिमीहरूको घर ध्वस्त गरिदिए । तिमीहरूलाई जिउँदै जलाइदिए...तर डराउनुपर्ने केही कुरा छैन, म तिमीहरूको साथ छु...म...।

हिन्दु नेता : आर्यावर्तका सपुत्रहरू ! यी म्लेच्छ मुसलमानहरूले भारत मातालाई टुक्रा-टुक्रा पारिदिए । यिनीहरूको के अधिकार छ यहाँ रहनलाई ! यिनीहरू तिमीहरूका नारीहरूको अस्मिता लुटेका छन् । बच्चाहरूको गर्दन काटेका छन्–आऊ, हामी मिलीजुलीकन अगाडि बढौं...म तिमीहरूका साथ छु, तिमीहरूको सेवक...(हात जोड्दछ ।)।

मुस्लिम नेता : म मान्छेहरूको हृदय जित्नेछु । जब उनीहरूलाई करूलाई कर्फ्यु-पास प्राप्त गराउनेछु...।

हिन्दु नेता : राहत सामग्री बाँड्नेछु ।

मुस्लिम नेता : जमानत गराउनेछु ।

हिन्दु नेता : मन्दिर बनाउनका लागि चन्दा जम्मा गर्नेछु ।

मुस्लिम नेता : मस्जिदको मर्मत गराउनेछु ।

हिन्दु नेता : हरहर महादेव ।

मुस्लिम नेता : अल्लाहो अकवर ।

(एक मुल्ला र एक पण्डित दौडँदै मञ्चस्थलमा आउँछन् र हिन्दु नेताको चरणमा पण्डित र मुसलमान नेताको चरणमा मुल्ला बस्दछन् ।)

मुस्लिम नेता : (मुल्लाजीलाई) मुल्लाजी, किन उदास हुनुहुन्छ ?

मुल्ला : मस्जिद वनाउनका लागि चन्दा थोरै जम्मा भएको छ...मेरो प्रतिष्ठा नै खस्किरहेछ ।

हिन्दु नेता : (पण्डितसँग) के कष्ट छ पण्डितजी ?

पण्डित : दान-दक्षिणा, पूजापाठ, हवन आदि कोही पनि गराउँदैनन्, धेरै नै विधर्मी भए मान्छेहरू ।

हिन्दु–मुस्लिम नेता : (एकसाथ) दुवै उभिऊ । जस्तो भनियो, त्यस्तै गर...पाँचै औंला घिउमा हुनेछन्, टाउको कराहीमा हुनेछ, टाँग चुलामा हुनेछ ।

(मुल्ला-पण्डित उभिएर ताली बजाउँछन् र चारैतिर नाच्न लाग्दछन् ।) (मञ्चमा दुई बदमास आउँछन् र आउनासाथ अट्टहास गर्दछन् ।)

बदमास : चिल्लो बोलेर केही काम लाग्दैन नेताहो...देशका

रक्षकहो...आगो त हामी नै लगाउने छौं...गोली त हामी नै चलाउने छौं...बच्चाहरूको गर्दन त हामी नै काट्ने छौं...नारीहरूको अस्मिता त हामी नै लुट्ने छौं...उनीहरूका वक्ष त हामी नै काट्ने छौं...कहिले बर्दी लगाएर त कहिले बर्दी उतारेर हामी नै आउनेछौं...।

हिन्दु नेता : आऊ बहादुरहो, तिमीहरू मेरा दाहिने हात हौ ।

मुस्लिम नेता : आऊ बहादुरहो, तिमी त मेरा आँखा हौ । (हात समाएर गोलो बनाउँछन् र गीत गाउँदै सबै जना नाच्छन् ।)

समूह गान : सबैभन्दा राम्रो
हिन्दुस्तान हाम्रो
यो बगैंचा हाम्रो
राष्ट्रियताले सिकाउँदैन
आपसमा शत्रुता राख्न
हिन्दी हौं हामी राष्ट्र हो
हिन्दुस्तान हाम्रो ।

(गीत खतम गरेर बदमास मञ्चस्थलको कुनामा राखिएको एउटा पोको उठाएर क्रमशः हिन्दु र मुसलमान नेताहरूलाई दिन्छ ।)

मुस्लिम नेता : (मुल्लाजीसँग) मुल्लाजी, यसलाई लिएर मस्जिदमा राखिदेऊ ।

मुल्ला : के छ यसमा...?

मुस्लिम नेता : के हुनु नि ! केटाकेटी जस्तो कुरा गर्छौ, यसमा सुँगुरको चोक्टा छ ।

(मुल्ला पोको छोडिदिन्छ ।)

हिन्दु नेता : (पण्डितसँग) यो पोको उठाऊ...यसमा छ गाईको चोक्टा ।

(पण्डित पोको छोडिदिन्छ ।)

हिन्दु तथा मुस्लिम नेता : आफ्नों-आफ्नो पोको उठाऊ...हिम्मतले काम देखाऊ...जाओ, मन्दिरमा गाई र मस्जिदमा सुँगुर पुऱ्याऊ ।

(मञ्चस्थलबाट सबै जना निस्कन्छन् ।)

(मञ्चस्थलमा दुई पोका आएर खस्तछन् र एकातिरबाट हिन्दु र अर्कोतिरबाट मुसलमान आउँदछन् ।)

हिन्दु : हरहर महादेव ।

मुसलमानः अल्लाहो अकबर ।

हिन्दु : हामी तिमीहरूको रगत पिउने छौं ।

मुसलमानः हामी तिमीहरूलाई नर्क पुऱ्याउने छौं ।

(दुवै गुट झन् नजिक आउँछन्, नारा अझ जोरमा लगाउँदछन् र आफ्नो-आफ्नो हतियार सीधा गर्दछन् । हल्ला बढ्दछ । एक्कासि एक मान्छे दुवै गुटका बीचमा आउँछ–कराएर बोल्दछ ।)

मान्छे : रोक, पख...कुरा सुन...म जान्दछु, तिमीहरू न हिन्दु हौ न मुसलमान... तिमीहरू झगडा गर्ने निर्णय लिएरै घरबाट निस्केका हौ...तर बताऊ त आखिरमा कुरा के हो ?

हिन्दु : मुसलमानहरूले मन्दिरमा गाईको चोक्टा फालेका छन्, इः हेर ।

मुसलमानः हिन्दुहरूले मस्जिदमा सुँगुरको चोक्टा फालेका छन्, इः हेर ।

(मान्छे निहुरेर दुवै पोकामा हेर्दछ, फेरि उभिएर)

मान्छे : भाइहो, यो सुँगुर र गाईको चोक्टा नै होइन ।

भीड : हँ-हँ...किन होइन...?

मान्छे : होइन, होइन साथीहो, मैले दुनियाँ देखेको छु । के तिमी ठान्छौं, म गाई र सुँगुरको चोक्टालाई चिन्दिनँ...हेर, यदि यो सुँगुरको चोक्टा भएको भए यसमा बाथ हुन्थ्यो...हेर बाथ कहाँ छ...यदि यो गाईको चोक्टा भएको भए रातो हुन्थ्यो, नसा हुन्थ्यो...यसमा नसा कहाँ छ...होइन-होइन...यो गाई र सुँगुरको चोक्टा त हुनै सक्तैन...धोका भएको छ तिमीहरूका लागि ।

भीड : उसो भए यो कसको चोक्टा हो ?

मान्छे : सुन...यो मान्छेको चोक्टा हो ।

भीड : मान्छेको चोक्टा हो ?

मान्छे : (विश्वासका साथ) हो, मान्छेको चोक्टा...यो रङ...यो नसा...यो त मान्छेको चोक्टा हो मेरा भाइहो, मान्छेको...।

हिन्दु-मुस्लिम नेता : होइन-होइन...तिमी झुट बोलिरहेका छौ ।

मान्छे : रङ र रङभाव हेर...नसा हेर–यो त मान्छेको चोक्टाबाहेक अरू केही हुनै सक्तैन ।

केही आवाज : (चिसो स्वरमा) हो र, मान्छेको चोक्टा हो ।

एक आवाज : तब केही छैन ।

दोस्रो आवाज : मन्दिर अपवित्र भएन ।

तेस्रो आवाज : मस्जिद बिटुलो भएन ।

चौथो आवाज : ठिक छ, राम्रै भयो ।

पाँचौं आवाज : धर्म बच्यो ।

हिन्दु नेता : हिँड हिन्दुत्वका रक्षकहरू, यो गाईको होइन, मान्छेको चोक्टा रहेछ ।

मुसलमान नेता : हिँड इस्लामका सिपाहीहरू, यो सुँगुरको होइन, मान्छेको चोक्टा रहेछ ।

बदमास : च्व...च्व...च्व...मान्छेको चोक्टा !

(सबै जना जान्छन् ।)

अनुवादः रोशन थापा 'नीरव'

जनता र मुसा

कँवल नयन कपूर ("Janata aur M use" by Kanwal Nayan Kapoor)

पात्र : पात्रहरूको सङ्ख्या सुविधाअनुसार/साधक/व्यक्ति (विभिन्न भेषभूषा)

(अपार जनसमूह कोरस गाउँदै मञ्चमा आउँछ ।)

जय जय जनता,
जय जय जनता,
जय जय जय जय, जय जय जनता
जय जय जय जय, जय जय जनता
जय जय जनता,
जय जय जनता ।
जनता ब्रह्म,
जनता विष्णु,
जनता महेश्वरी,
जनता शक्ति
जनता भक्ति
जनता विश्वेश्वरी,
अभय जनता
अनादि जनता
जय जय जनता ।
जय जय जनता ॥

(कोरसको समाप्त हुनासाथ भिडका विचमा उभिएको साधक आफ्नो काँधमा रहेको सेतो कपडालाई पङ्खाको सरह फैलाउँदछ । अपरा जनसमूह उसको पछाडि अन्तर्धान हुन पुग्दछ, जस्तो त्यसैमा समाहित भएको होस् । बिस्तारै-बिस्तारै अँध्यारो बढ्दै जान्छ । पुनः प्रकाश आएपछि साधक नृत्य गर्दै मञ्चका बिच एक टाँगमा उभिएर साधना गर्ने मुद्रामा देखिन्छ । धेरै नै दीनहीन अवस्थामा उक व्यक्ति उपस्थित भएर साधकको दयापात्र हुने याचना गर्दछ । साधक बिस्तारै-बिस्तारै आँखा खोलेर त्यसतिर हेर्दछ । व्यक्तिको करुणाजनक स्थितिप्रति द्रवित भएर :)

साधक : भन वत्स !
के कामना लिएर आएका छौ ?

(व्यक्ति 'लाटोका सरह' जिब्रो नभएको कुरा सङ्केतबाट बुझाउँछ ।)

(उसको विवशतालाई बुझेर दया भावले)

ओह !
लेऊ वत्स !
आफ्नो साधना र भक्तिको बलबाट
म तिमीलाई जिब्रो दिन्छु ।
जिब्रो अर्थात् वाणी
वाणी अर्थात् सरस्वती
सरस्वती अर्थात् शब्द र अर्थ ।
तर नबिर्सिऊ
शब्द 'ब्रह्म' हुन्छ
शब्दको दुरुपयोग–
'ब्रह्म'को अपमान हो,
जाऊ ।
साधनारत भएर
शब्दको अर्थ खोज्ने प्रयास गर
आफ्नो शेष जीवन
शब्ददेखि अर्थसम्मको यात्रामा लगाऊ ।

व्यक्ति : (वाणी पाएर प्रसन्न हुन पुग्छ । हर्षमा नाच्तै गाउँछ ।)

जय हो जिब्रो–
जय वाणी–
जय सरस्वती !
शब्द पूज्य हो
शब्द परमात्मा,
शब्द जीव हो
शब्द आत्मा ।
(आफैं आफैंमा)
गुरुजीले भनेका छन्
शब्द पूज्य हो ।
गर्नु छ शब्दको साधना

शब्ददेखि अर्थसम्म
वा
अर्थदेखि शब्दसम्म–
को यात्राको आदेश त प्राप्त भएको छ
तर
यो शब्द साधना
कसरी ?
कता र कहाँबाट
आरम्भ गर्ने हो ?
(साधक व्यक्तिलाई नाच्तै-गाउँदै गरेको देखेर पुनः साधनारत हुन पुग्दछ ।)

व्यक्ति : (हडबडाउँदै पुनः प्रवेश गरेर नमस्कार गर्दै)
गुरुदेव !
यो यत्रो ठुलो दुनियाँमा
मेरो स्थिति
अत्यन्त दयनीय छ,
कोही पनि हेर्दैनन् मतिर
कोही मेरो कुरा सुन्दैनन्
मप्रति कसैको विश्वास छैन
भिखारीका सरह
सँघार-सँघार भौंतारिरहेको छु ।

साधक : (आँखा खोल्दै व्यक्तिको स्थितिप्रति द्रवित भएर)
लेऊ वत्स !
लेऊ यो धन हो ।
सद्-उपयोग गर यसको
किनकि
धन, केवल साधन हो,
धन, केवल माध्यम हो,
धन, उपकरण मात्र हो ।

व्यक्ति : (नाच्तै-गाउँदै फर्केर जान्छ :)
धन साधन हो–
साधन धन हो,
धन माध्यम हो–
माध्यम धन हो,
धन पूज्य हो–
धन परमात्मा हो,
धन जीवन हो–
धन आत्मा हो ।
(व्यक्तिको प्रस्थान । साधक व्यक्तिलाई नाच्तै-गाउँदै गरेको देखेर प्रसन्न हुन्छ । धेरै पछिसम्म हावामा यही शब्द गुन्जिरहन्छ । साधक त्यसलाई आश्चर्यले सुन्दछ । वातावरणमा परिवर्तन भएकाले आश्चर्यचकित हुन पुग्दछ र बिस्तारै-बिस्तारै आशीर्वादको मुद्रामा साधनारत हुन पुग्दछ ।)

व्यक्ति : (राजसी भेषभूषामा पुनः प्रवेश गरेर नमस्कार गर्दै :)
पाएर–
वाणी र साधनाको वरदान पनि
मेरो स्थितिमा–
कुनै परिवर्तन भएन गुरुदेव !
म हताश जस्तो
त्यहींको त्यहीं नै छु ।
कसैले मेरो सुन्दैनन्
कसैले मलाई मान्दैनन् ।

साधक : (आँखा खोल्दै)
लाग्दछ तिमीले
साधनालाई सही
उपयोग गरेनौ
शब्द र साधनाको
सही उपयोग गर्नेहरू
कहिल्यै पनि त्यहींको त्यहीं रहँदैन
उसको विकास
आवश्यक छ ।

व्यक्ति : म यसै प्रयत्नमा छु गुरुदेव ।
तर अधिकारको विना
शब्द र साधन अपूर्ण छन्
म असहाय जस्तो–
बिचरा जस्तो–
सँघार-सँघार रुमल्लिन्छु ।

साधक : सन्देह हुन्छ
फेरि पनि मान्दछु
किनकि
विश्वास गर्नु मेरो धर्म हो
आशा मेरो वृत्ति हो
किनकि
म साधक हुँ, जनता हुँ, समूह हुँ,
साधना र आशा नै
जनताका चरित्र हुन्–
नियति हुन् ।

व्यक्ति : (धेरै नै केही पाउने आशामा छ ।)
तपाईंको यसै उदारताको
म प्रशंसक हुँ ।

तपाईंको असीम कृपाको
मलाई धेरै आवश्यक छ
गुरुदेव ! जनता ! जनता !
गुरुदेव !
मलाई शक्ति दिनुहोस्
शक्ति ! अपार शक्ति दिनुहोस् ।

साधक : अनन्त विश्वास
अनि केवल दिँदै जानु नै
मेरो एक मात्र नियति हो ।
विश्वास मेरो शक्ति हो
लेऊ ।
यसैको बलमा
तिमीलाई असीम शक्ति दिन्छु
लेऊ । लेऊ ।
(व्यक्ति प्रसन्न भएर सबै कुरा दिन्छ ।)

साधक : शक्ति, अपार शक्ति
तर सम्झना राख
अधिकार ! कर्म हो ।
अनुशासन ! धर्म हो ।
शक्ति ! विनम्रता हो ।
शासन ! सेवा हो ।
अधिकार ! पूज्य हो ।
सेवा ! परमात्मा हो
नबिर्सिऊ नि
सबैमा समान आत्मा छ ।

मुस्लिम नेता : अल्लाहो अकवर ।
(सबै कुरा पाउँदाको हर्षमा गाउँदै-नाच्तै गरेर जान्छ । साधक जीवनको महत्त्वपूर्ण काम पार भएको हर्षमा निश्चिन्त जस्तो भएर साधनामा लीन हुन पुग्दछ । भयङ्कर आँधी र हुरी चल्न लाग्दछ । यस भयङ्कर आँधीमा आकाश-पाताल छेड्दो एक हाँसो गुन्जिन्छ । यसका साथसाथै एक भयङ्कर स्वर उम्रिन्छ :)
म–म !
म, शक्ति
म !
शब्द
साधन
र
शक्तिको स्वामी । स्वतन्त्र ।
म अधिकार ।
म साधन ।
म नै तन्त्र ।
म सर्वशक्तिमान
म नै देश, काल
म नै ईश्वर–
म नै ईश्वर ।
(अपार जनताको त्राहि-त्राहि, काटमारको स्वर उम्रिन्छ :)
महँगी ।
मिसावट ।
अनाचार ।
अत्याचार ।
भ्रष्टाचार ।
हत्या, हत्या ।
आत्महत्या
बलात्कार
बलात्कार (एक भयङ्कर आवाज ।)
(फेरि त्यही स्वर उम्रिन्छ :)
मार, मार,
लुछ-लुछ
लुट
नाङ्गो पारिदेऊ
सम्पूर्ण जनतालाई
म शासक–
म तन्त्र–
म ईश्वर–
आदेश दिन्छु
मार-मार
लुछ-लुछ
लुट
नाङ्गो पारिदेऊ
सम्पूर्ण जनतालाई ।
जनता !
जनता मेरा शत्रु हुन्
जनता मेरा शत्रु हुन्
ईश्वर !
ईश्वर म हुँ
मसँग शक्ति छ ।
मसँग साधन छ ।
मसँग शब्द छ ।
म ब्रह्म हुँ
–मैले नै शब्द–
शब्द अर्थात् कानुनलाई जन्म दिएको हो ।

म विष्णु हुँ–
मैले नै साधन
साधन अर्थात् अपार धनको सञ्चय गरेको छुँ
म शिव हुँ–
विनाशको सबै शक्तिहरू ममा केन्द्रित छन्।
(अपार जनताको हाहाकार :)
बचाऊ-बचाऊ !
(क्रूर अट्टहास र भयङ्कर स्वर :)
भुटिदेऊ-भुटिदेऊ
समात
निचोर
नछोड।
(अट्टहास र आँधी केही हुनासाथ नै व्यक्ति वैभवशाली राजसी भेषभूषामा कामुक चर्तिकला गर्दै आफ्नो दलबलका साथ आउँछ।)

व्यक्ति : (सगर्व) तिम्रा लागि
कुन सम्बोधनको प्रयोग गरूँ
साधक भनूँ
वा
बाधक ?
(साधक हत्प्रभ भएर उसलाई हेर्दछ।)
म !
म अर्थात् शब्द, साधन र ईश्वर
म अर्थात् तन्त्र–
अनुभूत के हुन लागेको छ भने
तिमी मेरो मार्गमा
सबैभन्दा ठुलो बाधक हौ
अनि
बाधा कुनै पनि होस्
बाधा कतै पनि होस्
साधन जस्तो पनि होस्
मलाई स्वीकार छैन।

साधक : म...म
अब...अब
तिम्रो के
सहायता गर्न सक्दछु ?

व्यक्ति : सहायता होइन
सेवा भन।

साधक : तिमी जेसुकै भन
म तयार छु।

व्यक्ति : तिम्रो तयार हुनु वा नहुनुले
के फरक पर्दछ
म !
जेसुकै सेवा चाहना गरूँ
लिनमा समर्थ छु।

साधक: (दीनहीन भावले सहायतार्थ उद्धत हुन्छ।)
भन !
भन, के सहायता गरूँ ?

व्यक्ति : (क्रोधले)
फेरि सहायता भन्यौ तिमीले !
जे होस् !
शब्दहरूको चातुर्यमा नै
रहन चाहन्छौ भने
रहि नै रहू,
तर सबै कुरा
मौन भएर सहू।
खबरदार !
कुनै पनि प्रश्न गर्‍यौ भने।
मलाई तिम्रो–
हड्डी चाहिनेछ। (अट्टहास गर्दछ।)

साधक : (जस्तो घाँटीमा केही अट्केको होस्।)
ह...हड्डी
मेरो हड्डी ?

व्यक्ति : हो। हड्डी।

साधक : किन ?
आखिर किन ?

व्यक्ति : किनकि यही तिम्रो परम्परा हो
यही तिम्रो संस्कृति हो।
किनकि
तिम्रो हड्डी
मेरो अस्तित्वका लागि चुनौती हो।
तिमी !
तिमी कुनै पनि बेला धेरै महत्त्वपूर्ण–
साबित हुन सक्नेछौ।
त्यसैले
मैले तिम्रो हड्डीबाट आफ्नो रक्षाको
योजना बनाएको छु
तिम्रो
हो।
केवल तिम्रो नै हड्डी
मेरो तन्त्रको
रक्षा-कवच बन्न सक्तछ

यही ब्रह्म-वाक्य हो ।
यही मेरो इच्छा हो ॥

साधक : म जिउँदै
आफ्नो हड्डी कसरी दिऊँ ?

व्यक्ति : जसरी तिम्रा पुर्खाले दिए ।

साधक : म विवश छु ।

व्यक्ति : कुनै विवशता छैन
तिमीलाई
–आफ्ना पुर्खाको मर्यादा हेतु
–परम्पराको रक्षा हेतु
–धर्म हेतु
–आफ्नो ईश्वररूपी राजा हेतु
हड्डी त दिनु नै पर्नेछ ।

(एक्कासि सम्पूर्ण वातावरणमा परिवर्तन आउँदछ । बस्तै, मन्द हुँदै साधक आफूआफूमै फर्कन्छ । उसमा अपार शक्ति जागृत हुन पुग्दछ । एक उठ्दै गरेको आलापका साथ उसमा समाहित जनता निस्कन लाग्दछ । असङ्ख्य कण्ठ-स्वर आलापमा सम्मिलित हुन लाग्दछ, जसमा साधकको गम्भीर स्वर प्रकट हुन्छ ।)

साधक : होइन ।
होइन ।
अब धर्म र स्वर्गको नाममा
परम्परा र मर्यादाको याचना दिएर
तिमी
कुनै पनि अरूलाई
दधीचि बनाउन पाउने छैनौ
हामी !
अब यस देशमा
कुनै पनि षड्यन्त्र
वा
कुनै पनि जडतन्त्रको रक्षा हेतु
वा
सुरपति इन्द्रको अस्तित्व हेतु
आफ्नो हड्डी दिने छैनौं ।–दिने छैनौं ।
हामीले नै भनेका थियौं–
शब्द ब्रह्म हुन्छ
तिमीले
त्यसलाई जुत्ता बनाएर खुट्टामा लगायौ ।
हामीले नै त भनेका थियौं–
शब्ददेखि अर्थसम्मको पावन यात्रा आरम्भ गर
तिमीले !
–अर्थको हत्या गरेर
शब्दबाट अपशब्द
अनि
अर्थको अनर्थ गऱ्यौ ।
हामीले नै त
–धनलाई साधन भनेका थियौं
तिमीले !
–साधनलाई साध्य मान्यौ
–अधिकारलाई हक सम्झ्यौ
–अनुशासनलाई अधिकार ।
तिमीले :
अरूमाथि शासन गर्नका लागि
स्वयम्लाई खुल्ला छोडिदियौ
खुल्ला
निर्द्वन्द्व,
स्वतन्त्र,
स्वतन्त्र
अर्थात् आफ्नै तन्त्र चलायौ
चलायौ आफ्नो नै मन्त्र ।
तिमीले !
–शब्द, साधन र शक्तिको
घोर अपमान गऱ्यौ ।
जाऊ । हामी
हामी, जनता
हामी, लोकतन्त्र
हामी, साधक
हामी !
–जो तिमीलाई शब्द, शक्ति र साधन दिएर
–पुरुष सिंह बनाउन सक्तछौं
हामी !
आफ्नो समस्त शक्तिको बलमा
तिमीलाई फेरि
मुसा बनाउँदछौं
जाऊ । जाऊ...

(वातावरणमा परिवर्तन । प्रकाश फर्केपछि दीनहीन व्यक्ति पहिलेकै अवस्थामा भुइँमा टाउको ठोकिरहेको देखिन्छ ।)

(बाँसुरीको स्वरका साथ त्यही कोरस आउँदछ ।)

जय जय जनता
जय जय जनता...!

अनु. रोशन थापा 'नीरव'

मालिनी

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ("Malini" by Rabindrabnath Tagore)

पात्र : मालिनी
राजा
रानी
केमान्कर
सुप्रिय
राजकुमार
सेवक
ब्राह्मण १, २ र ३

दृश्य १

मालिनी : कमलको फूलमा शीतको थोपा थरथराएजसरी त्यो समय मेरो जीवनमा आइसकेको छ र मेरो हृदय बेचैन भइरहेछ। म जब आँखा बन्द गर्छु तब आकाशमा मेघ गर्छन् भएर अनायासै मेरो हृदय पीडाले अँठचाउँछ।

(रानीको प्रवेश)

रानी : प्रिय राजकुमारी, तिमी किन यस्तो गरिरहिछ्यौ ? किन आफ्नो सौन्दर्य र रूपलाई अपमान गरिरहिछ्यौ ? तिम्रा आभूषण र सुन्दर वस्त्रहरू कहाँ गए ? मेरी उषाकी लाली तिमी किन आफ्ना कोमल अङ्गहरू सुनले सजाउँदिनौ ?

मालिनी : आमा दरबारमै पनि धेरै निर्धनहरू छन्। ती निर्धनहरूको भागमा के मेरो जस्तो सुनमा सजिने क्षण आउला ?

रानी : मेरी सानी छोरी आज किन पहेलीहरूमा बोलिरहिछ्यौ ? तिम्रा शब्दहरूले मेरो हृदय त्रसित भइरहेछ। तिमीले यस्ता अनौठा कुराहरू कहाँबाट सिक्यौ ? तिमीलाई बौद्ध भिक्षुले मोहिनी जालमा फसाएको भनेर सारा प्रजाले भन्दै छन्। सायद यसैले तिमी बहकिरहिछ्यौ ? के हामीले धर्म आफैँ खोज्नुपर्छ र ? धर्म त सूर्यकिरण जस्तै सर्वत्र छरिएको हुन्छ हैन र ? म एक नारी हुँ त्यसैले मलाई पुरुषहरूको जस्तो अनेक कृत्यको खासै ज्ञान छैन। नारीधर्म त पतिसेवा र सन्तानप्रतिको प्रेम मात्र हो।

(राजाको प्रवेश)

राजा : प्यारी छोरी, हाम्रो घरलाई आँधीले घेर्दै छ। तिमी त्यों कहालीलाग्दो जीवनमार्गमा नहिँड। एक पलका लागि मात्र भए पनि रोकिदेऊ आफूलाई।

रानी : कति भयङ्कर शब्दहरू।

राजा : मेरी अबुझ छोरी तिम्रो कदमले हाम्रो जीवन बाढीले झैं तहसनहस पार्ने छ। तिम्रा विचारहरू अरूलाई नपोख। आफूलाई हास्यपात्र नबनाऊ।

रानी : महाराज हजुर मेरी छोरीलाई आफ्नो कूटिल राजनीतिमा नफसाउनुहोस्। ऊ आफ्नो जीवनको स्वयम् निर्णायक बनोस्।

राजा : प्रजाहरू अत्यन्त क्रुद्ध भएका छन्। हाम्री छोरीलाई देश निकाला गर्न व्याकुल छन्।

रानी : देश निकाला ? हाम्री छोरीलाई ?

राजा : सारा धार्मिक गुरुहरू हाम्री छोरीको धर्ममाथिको उपहासबाट क्रोधित भएका छन्।

रानी : धर्मको उपहास ? के सत्य उनीहरूको धार्मिक ग्रन्थहरूमा मात्र सीमित हुन्छ ? तिनीहरूले आफ्ना पुराना पुस्तकहरू मिल्काएर मेरी छोरीसँग ज्ञान लिन आउनू भनिदिनुस्। महाराज, हाम्री छोरी ज्ञानको पवित्र ज्योति हो। उसलाई बाधा नपऱ्याउनुहोस् नत्र हजुर पश्चात्तापमा जल्नुहुने छ।

मालिनी : बाबा हजुरले आफ्ना प्रजाहरूको माग पूरा गरिदिनुहोस्। महान् कार्यको उचित समय आएको छ। मलाई देश निकाला गर्नुहोस्।

राजा : असम्भव छोरी। के तिमीलाई हाम्रो प्रेमको कुनै मोल छैन ?

मालिनी : मेरो विरोध गर्नेहरू गरिरहुन्। आमा मेरो हृदयका भावनाहरूलाई शब्दमा बयान गर्न असमर्थ

छु । रुखले फूललाई त्यागेसरि मलाई त्यागिदिनुहोस् र मलाई आफ्ना प्रजाहरूलाई सुम्पिदिनुहोस् ।

राजा : छोरी, म तिमीलाई कसरी बुझूँ ?

मालिनी : बाबा, हजुर राजा हुनुहुन्छ । त्यसैले धैर्यतासाथ आफ्नो कर्तव्य पूरा गर्नुहोस् ।

रानी : छोरी, तिमीलाई आफ्नो घर-परिवारको कुनै मोह छैन ? तिमी संसारका लागि हामीलाई त्याग्छ्यौ ?

मालिनी : म जागै सपना देख्छु, हावा वेलगाम भएको छ, पानी आहातित छ, रात झन् कालो भएको छ र जीवनको डुङ्गा स्वर्गतिर उठाइँदै छ । बाटो भुलेका यायावरहरूलाई पथप्रदर्शन गर्ने ज्योति हराएको छ । मलाई जीवनमार्गको ज्ञान प्राप्त भएजस्तो लाग्छ । सायद म बन्न सक्छु कि त्यो ज्योति ।

रानी : महाराज सुन्नुभो ? यो बोली कसको हो ? हाम्री सानी छोरी कता हराई ? मैले जन्म दिएकी छोरी । महाराज, जसरी कालो रातले उज्यालोलाई जन्म त दिन्छ तर उज्यालो उसको नभएर संसारको हुन्छ । हाम्री छोरी पनि संसारकी छोरी हुन् ।

महाराज, यो ज्ञानको ज्योतिलाई हाम्रो दरबारमा सीमित नराखौं । छोरी, म तिम्रा छरिएका कपाल समालिदिन्छु, आऊ । यदि उनीहरूको धर्मले हाम्री छोरीको देश निकालालाई सही मान्छ भने मेरी छोरीसँग सत्ज्ञान लिन आउन् उनीहरू ।

राजा : हाम्री छोरीलाई बार्दलीबाट हटाउनुहोस् महारानी । सडकमा भिड जम्मा हुँदै छ ।

(निस्कन्छन् ।) (एक हुल ब्राह्मणहरू सडकमा जम्मा भएर चिच्च्याउँछन् ।)

दृश्य २

ब्राह्मण १ : राजकुमारीलाई देश निकाला गरियोस् ।

केमान्कर : साथीहरू आफ्नो मागमा अडिग रहनुहोस् । राजकुमारी हाम्रो धर्मका लागि शत्रु हो । ऊ हाम्रो लज्जाको विषय हो । उसको मिठो बोलीमा नफस्नुहोला । ऊ मायावी जादुगर्नी हो ।

ब्राह्मण १ : हामीले महाराजलाई बिन्ती गर्नुपर्छ । उनको घरमा दुध पिएर साँप हुर्कदै छ । जो विष वमन गरेर हाम्रो धर्म नाश गर्न तत्पर भएकी छे ।

सुप्रिय : धर्म ? कस्तो ? हे पूज्य ब्राह्मण गण, मलाई बताउनुहोस् हाम्रो धर्ममा कहाँ एक अबोध नारीलाई देश निकाला गर्न भनिएको छ ?

ब्राह्मण १ : तँ मूर्ख होस् सुप्रिय । हाम्रो बाटाको तगारो नबन् तँ ।

ब्राह्मण २ : हामी हाम्रो धर्मको रक्षार्थ एक भएका छौं तँ भने फाटो ल्याउन खोज्दै छस् । सुप्रिय, के तेरो सत्य हाम्रो भन्दा फरक छ ? हाम्रो अपमान नगर् ।

सुप्रिय : अपमान मैले हैन, बरु धर्मलाई आफ्नो स्वार्थ पूरा गर्न तल्लीन तपाईंहरूले नै धर्मको र स्वयम् आफ्नो अपमान गर्दै हुनुहुन्छ ।

ब्राह्मण २ : यसलाई धपाऊ । यो पनि हाम्रो शत्रु हो ।

ब्राह्मण १ : हाम्रो माग राजकुमारीको देश निकाला हो । हाम्रो विचारमा असहमतहरू यहाँबाट जान सक्छन् ।

सुप्रिय : ब्राह्मण गण, मेरो उपस्थिति हजुरहरूलाई असह्य होला तर म कसैको कठपुतली हैन । अनि चर्को आवाजमा चिच्च्याउँदैमा असत्य सत्यमा रूपान्तरण हुन्न । आज मलाई आफू ब्राह्मण भएकोमा ग्लानि भएको छ जो असत्यलाई बढावा दिइरहेछन् । (केमान्करसँग) बिदा देऊ साथी ।

केमान्कर : म बिदा दिन सक्तिनँ । तिमी हामीविरुद्ध अप्रिय कदम उठाउन सक्छौ । शान्त होऊ । अहिले सही समय आएको छैन मित्र ।

सुप्रिय : संसारमा अन्धविश्वास जस्तो भयङ्कर भ्रम केही छैन । धर्मको नाममा एक निर्दोषलाई देश निकाला गर्नु कस्तो धर्म हो ? राजकुमारीले ***सत्य र प्रेम नै धर्मको शरीर र आत्मा हो*** मात्र त भनेकी हुन् । के यही उनको महापाप हो ?

केमान्कर : धर्म एक हो, यसको स्वरूप मात्रै भिन्न हुन्, जसरी पानी स्थानअनुरूप बदलिन्छ । तिमी ज्ञानी छौ त्यसैले अरूको अपमान नगर ।

सुप्रिय : म पहिले जसरी नै तिम्रो विचारलाई यस पटक पनि चुपचाप स्वीकार गर्छु ।

(तेस्रो ब्राह्मणको प्रवेश)

ब्राह्मण ३ : खुसीको खबर । हामीलाई सेनाले साथ दिने भएका छन् ।

ब्राह्मण २ : सेना ? मलाई सेनामा विश्वास छैन ।

ब्राह्मण १ : यसले त राजद्रोह निम्तने छ । यो त खतराको सङ्केत हो ।

ब्राह्मण ३ : केमान्कर, म राजविद्रोहमा साथ दिन सक्तिनँ ।

ब्राह्मण १ : हामीलाई हतियारले हैन हाम्रो विश्वासले विजय गराउने छ । हामी जप, तप र मन्त्रोचारण गरेर हाम्रा पितृ र देवताहरूको आह्वान गरौं ।

ब्राह्मण २ : हे देवी, दर्शन दिनुहोस् र आफ्नो क्रोधाग्निले पापको नाश गरेर अधर्मीहरूलाई धुलोमा परिणत गरिदिनुहोस् । हाम्रो प्रार्थना सुनेर शक्ति प्रदान गर्दै हामीलाई विजय गराइदिनुहोस् ।

सबै : हामी आह्वान गर्छौं, हे माता, आफ्नो लोकबाट पदार्पण भएर हामीलाई विराट् रूपको दर्शन दिनुहोस् ।

(मालिनीको प्रवेश)

मालिनी : हे ब्राह्मण जन, मैले तिमीहरूको प्रार्थना सुनें ।(सबै जना झुक्छन् । सुप्रिया र केमान्कर भने परबाट हेरिहन्छन् ।)

ब्राह्मण २ : हे देवी, हजुर आफ्नो रौद्र रूप त्यागेर सुन्दर मानवदेहमा प्रकट हुनुभएको हामी धन्य भएका छौं । माता आज्ञा होस् ।

मालिनी : म तिमीहरूको इच्छा पूरा गर्न निर्वासन भोग्न तयार छु ।

ब्राह्मण ३ : हाम्रो आह्वानमा देवी स्वर्गबाट निर्वासित भएर धर्तीमा प्रकट हुनुभएको छ ।

ब्राह्मण १ : क्षमा देवी, यो धर्ती पापले काम्दै छ । हजुरको कृपाको याचना गरिरहेछ ।

मालिनी : म तिमीहरूबाट कहिल्यै टाढिएकी छैन र मलाई विश्वास थियो कि मेरा लागि तिमीहरूको हृदयको द्वार सदा खुल्ला रहने छ । तिमीहरूको आह्वानमा नारी स्वरूपमा म प्रकट भएकी हुँ ।

केमान्कर : राजकुमारी !

सबै : महाराजकी प्रिय छोरी ।

मालिनी : म मेरो घर त्यागेर आएकी छु ता कि तिमीहरूको घरमा रहन सकूँ । के तिमीहरूलाई मेरो आवश्यकता भएकै हो ? कृपया साँचो बोल । म एकान्तबास त्यागेर यहाँ आएकी छु ।

ब्राह्मण १ : माते, हजुर हाम्रो हृदयमा विराजमान हुनुभएको छ ।

मालिनी : म दरबारिया सानमा जन्मिए तापनि मेरो आँखाबाट संसारको सारा दुःख लुकेको छैन । तथापि मैले यी पीडाहरूलाई महसुस गर्न सकिरहेकी छैन । हे ब्राह्मण गण, मलाई दिशा निर्देश गर ।

ब्राह्मण १ : हजुरको मृदु बोलीले हाम्रा आँखा भरिए देवी ।

मालिनी : आकाशमा भर्खर चन्द्रमा उदाएको छ र आकाश शान्त छ । चन्द्रमाले आफ्नो किरण छरेर सारा संसार अँगालोमा बेरेजस्तो देखिन्छ । सडक, रुखका छाया र पर घर, नदी अनि मन्दिर धूमिल देखिन्छन् । म सपनाको बादलबाट झरी भएर धर्तीमा प्रकट भएकी छु ।

ब्राह्मण १ : देवी, हजुर यो संसारको अलौकिक शक्ति हुनुहुन्छ ।

ब्राह्मण २ : हामीले कुबुद्धिले हजुरलाई देश निकालाको माग गर्‍यौं । हामी घोर पापी हौं ।

(मालिनी ब्राह्मणवरिपरि घुम्छिन् ।)

केमान्कर : यो भ्रम हो सुप्रिय । तिमी निद्राबाट जाग । मालिनी देवी हैन ।

सुप्रिय : मलाई जान देऊ केमान्कर ।

केमान्कर : आफूलाई समाल साथी । बत्तीमा पुतलीझैं हाम नफाल तिमी ।

सुप्रिय : के ती सब सपना हुन् त केमान्कर ?

केमान्कर : हो, मिठो सपना हो । अब आँखा खोल ।

सुप्रिय : तिमीले बोलेका शब्दहरू झुटा हुन् केमान्कर । म मिथ्या धार्मिक ग्रन्थहरूमा रुमलिरहें तर सत्य-ज्ञान प्राप्त गर्न सकिनँ । भगवान् पुस्तकहरूमा कैद नभएर यत्रतत्र छन् । ती पुस्तकका भगवान् मेरा हुन सकेनन् । मेरा प्रश्नहरूको जवाफ दिन सकेनन् जसले गर्दा म अझ अशान्त भएँ । आज मैले मानवीय स्वरूपमा साक्षात् देवीको दर्शन पाएको छु । धन्य भएँ ।

केमान्कर : होसियार साथी । तिमी आफ्नै मनको अधीनमा कैद भएका छौ । यो अत्यन्त भयङ्कर अवस्था हो । यो बेला तिम्रो मस्तिष्कमा भ्रमले शासन गरेर भगवान्को रूप धारण गरेको छ । के त्यो बादलमाझको चन्द्रमा नित्य रहन्छ ? हैन, भोलिको नयाँ बिहानीमा त्यो कतै बिलाउने छ । हो, यसरी नै मालिनीको मायाजालको पनि एक दिन अन्त्य भएर सत्यको प्रादुर्भाव हुने छ ।

सुप्रिय : म चेतनाशून्य भएँ साथी ।

केमान्कर : अब सपनाबाट जाग र सत्यको साक्षात्कार गर । सबै भ्रममा रमाइरहेका छन् । सत्य कतै घोर सङ्कटमा फसिरहेको छ ।

सुप्रिय : म तिमीलाई सर्वदा साथ दिन्छु साथी ।

केमान्कर : म यहाँबाट बिदा हुन चाहन्छु सुप्रिय ।

सुप्रिय : कहाँ ? केका लागि साथी ?

केमान्कर : छिमेकी देशमा जाँदै छु ता कि सैनिक सहायता ल्याएर पापीहरूको सर्वनाश गर्न सकूँ ।

सुप्रिय : हाम्रा आफ्नो सेना मदत गर्न तयार छन् त साथी ।

केमान्कर : ती सब कायर छन् । सबै मालिनीको जालमा फसिसकेका छन्, बत्तीमा पुतली झुम्मिएसरि । ती ब्राह्मणहरूलाई हेर त, के गर्दै छन् । सारा सहर

बौलाहा भएको छ अनि हाम्रो धर्मको चितामा आगो बालेर दीपावली मनाइरहेछन् ।

सुप्रिय : मलाई पनि साथै लिएर जाऊ केमान्कर ।

केमान्कर : तिमी यहीँ बसेर सारा गोप्य सूचनाहरू सङ्कलन गर । तर तिमीले मलाई धोका दिने कामचाहिँ नगर्नू । मालिनी केवल भ्रम हो ।

सुप्रिय : हाम्रो मित्रता मालिनीभन्दा पुरानो हो । हामी बाल्यकालदेखि नै साथसाथ जिइरहेका छौं हरेक पल । अनि यो हाम्रो जीवनकै पहिलो बिछोड हो ।

केमान्कर : यो बिछोड अन्तिम होस्, मेरो यही कामना छ । विनाश नजिक आउँदा सम्बन्धहरू छियाछिया पर्छन् । भाइभाइबिच काटाकाट हुन्छ । म अँध्यारो बाटो पाइला बढाउँदै छु । आशा छ, तिमी मलाई हातमा दियो लिएर पर्खिरहने छौ ।

(दुवै निस्कन्छन् ।)

(राजा राजकुमारसँग बार्दलीमा देखा पर्छन् ।)

दृश्य ३

राजा : मलाई अशुभको सङ्केत भइरहेछ । सायद मालिनीलाई देश निकाला गर्नु नै उचित होला ।

राजकुमार : हजुरको जो मर्जी महाराज । बिलम्ब गरे अनर्थ होला ।

राजा : धैर्य गर छोरा । मलाई मेरो कर्तव्यको ज्ञान छ ।

(राजकुमार निस्कन्छ ।)

(रानीको प्रवेश)

रानी : महाराज हाम्री छोरी कहाँ छिन् ? मबाट उसलाई नखोस्नुहोस् ।

राजा : कसको कुरा गर्दै हुनुहुन्छ महारानी हजुर ?

रानी : हाम्री मालिनीको ।

राजा : ऊ आफ्नो कोठामा छैन र ?

रानी : छैनन् महाराज । आफ्ना सैनिक लगेर सहरका हरेका घरमा तलासी गर्नुहोस् । सायद उनीहरूले हाम्री छोरीको अपहरण गरेका होलान् । मालिनीलाई फिर्ता नगरे सबैलाई देश निकाला गरिदिनुहोस् ।

राजा : म मेरी छोरीका लागि जे गर्न पनि तयार छु । आफ्नो राज्य पनि सङ्कटमा पार्न हिचकिचाउने छैन ।

(ब्राह्मणहरू र सैनिकहरू हातहातमा दीप प्रज्वलन गरेर मालिनीका साथमा आउँछन् ।)

रानी : मेरी प्रिय छोरी, मेरो आँखा छलेर तिमी कहाँ गएकी थियौ ? मलाई यति धेरै पीडा नदेऊ ।

ब्राह्मण : हे देवी, हजुर हाम्रो मार्गदर्शक हुनुहुन्छ । हामीलाई जीवनको मोहबाट मुक्ति दिनुहोस् ।

मालिनी : मेरो प्रेम सबैका लागि समान छ । अब चाँडै सम्पूर्ण असमानताहरूको अन्त्य हुने छ ।

सबै ब्राह्मण : हामी, हाम्रो जीवन र हाम्रो देश धन्य भयो ।

(सबै निस्कन्छन् ।)

मालिनी : आमा, ब्राह्मणहरू मभित्र समाहित भएका छन् । म मेरो तनको सीमाभन्दा उच्च स्थानमा पुगेकी छु ।

रानी : अवश्य छोरी । तिम्रो धन्य होस् । अब तिमीले यो देश छोड्नु पर्दैन । सारा संसारलाई आफ्नो ज्ञानले भरिदेऊ र शान्त भएर जीवन प्रकाशलाई अनुभव गर ।

मालिनी : (अँगाल्दै) आमा म थाकेकी छु । मेरो शरीरमा अनौठो तरङ्ग पैदा भइरहेछ । संसार त अति विशाल रहेछ । मेरो आँखामा आँसु र हृदयमा पीडा भरिएका छन् । मलाई लोरी गाइदिनुस् आमा, म निदाउन चाहन्छु ।

रानी : मलाई खासै कुनै ज्ञान छैन छोरी । मैले जीवनमा केही पनि अध्ययन गरेकी छैन ।

सुप्रिय : म त मूर्खहरूमाझ मात्र विद्वान् कहलिएको रहेछु । मैले आजसम्म अध्ययन गरेको ज्ञानहरू बिर्सिसकेको छु । राजकुमारी, मलाई ज्ञानको प्रकाश प्रदान गर्नुहोस् । मलाई मुक्ति दिनुहोस् ।

मालिनी : ओ ब्राह्मण, म तिम्रो प्रश्नको जबाफ दिन म सक्षम छैन । म तिम्रो सामु निस्तेज छु । तिमी जस्तो ज्ञानीले पनि मसँग ज्ञानको याचना गर्दै छौ ?

सुप्रिय : म यहाँ मेरो ज्ञान प्रदशन गर्न हैन, मैले आजसम्म आर्जन गरेका गलत ज्ञान बिर्सन आएको छु । मसँग केवल ज्ञान छ तर प्रकाश छैन ।

मालिनी : म निःशब्द भएकी छु । मभित्रको सारा ज्ञान समाप्त भएको छ । तिमी म ज्ञानले भरिपूर्ण भएको समयमा किन आएनौ ? ममाथि शङ्का गरेर बस्यौ । आज म यो विशाल संसार देखेर विचलित भएकी छु । ज्ञानको मार्गमा एक्ली भएकी छु । बरु भन मलाई कसले साथ दिन्छ ? को छ त्यस्तो महाज्ञानी ? मेरो मदत गर सुप्रिय ।

सुप्रिय : हजुरलाई मदत गर्न पाउनु मेरो अहोभाग्य हो ।

मालिनी : बेलाबेला निराशाले घाँटी निमोठ्छ मेरो । म भिडहरूमाझ असत्य महसुस गर्छु । यो अत्यन्त अप्ठ्यारो परिस्थितिमा तिमी मेरो साथी बन्न सक्छौ सुप्रिय ?

सुप्रिय : म सर्वदा हजुरका साथमा छु । म पवित्र हृदय र शान्त मन लिएर हजुरको सामु उपस्थित भएको छु ।

(सेवकको प्रवेश)

सेवक : प्रजाहरू हजुरको दर्शन गर्न बाहिर मरिहत्ते गरिरहेछन् ।

मालिनी : आज म माफी माग्न चाहन्छु । म मानसिक थकान र पीडाबाट विश्राम लिन चाहन्छु । (सेवक निस्कन्छ ।) मलाई तिम्रो मित्र केमान्करका बारेमा बताऊ । म तिमीहरूका जीवनबारे जान्न चाहन्छु ।

सुप्रिय : केमान्कर मेरो मित्र मात्र हैन, ऊ त मेरो भाइ, अझ गुरु पनि हो । म बेलाबेला विचलित हुन्छु तर ऊ सदा जीवनमा दृढ रहँदै आएको छ । म कमजोर भए तापनि उसले मलाई सदा आफ्नो प्रिय बनाइरह्यो जसरी चन्द्रमाले आफूभित्र कालो दागलाई समाहित गरेको छ । यसैले सायद म उसको जीवन कुनै पनि समय तहसनहस पार्ने कारण बन्न सक्छु ।

मालिनी : जीवन तहसनहस पार्ने रे ?

सुप्रिय : जुन दिन हजुरविरुद्धको विद्रोह हजुरको मृदुल बोली र अलौकिक ज्ञानको अगाडि हार्‍यो म पनि हारैं । तर केमान्कर आफ्नो विचारमा स्पष्ट थियो । त्यसैले ऊ छिमेकी देश गएको छ ता कि सैनिक सहायता पाउन सकियोस् र पाशुपत क्षेत्रको यो पवित्र भूमिमा पाप नाश गरी धर्मको स्थापना गर्न सकियोस् । खासमा ऊ हजुरलाई समाप्त गर्न चाहन्छ । तर मैले हजुरको दर्शनबाट नयाँ जीवन प्राप्त गरैं । हजुरले सिकाउनुभएको ***सारा जीवनप्रति गरिनुपर्ने प्रेम*** नै मेरो जीवनदर्शन भयो । मेरो हृदय उसका लागि व्याकुल भइरहेछ । म पीडामा छु । ऊ अर्को देशको सैनिक लिएर आउँदै गरेको पत्र मैले पाएको थिएँ तर त्यो पत्र मैले हाम्रो महाराजलाई चढाएँ ।

मालिनी : तिमीले किन आफ्नो मित्रलाई धोका दियौ सुप्रिय ? मलाई ऊ र उसका सहयोगी सैनिकप्रति दया जागेर आयो । मेरो हृदय प्रताडित भयो ।

(राजाको प्रवेश)

राजा : आऊ अङ्कमाल गर मलाई सुप्रिय । मैले केमान्करको योजना विफल पार्न सैनिक टुकडी पठाएको छु । मेरो राज्यको रक्षा गरेका छौ तिमीले । तिमी मेरो परम मित्र हौ ।

सुप्रिय : भगवान् क्षमा गर्नुहोस् ।

राजा : तिम्रा लागि मेरो हृदय खुल्ला छ । माग के दिऊँ तिमीलाई ?

सुप्रिय : मलाई केहीको पनि लालच छैन ।

राजा : म तिम्रो कुरा बुझ्छु । तिमीले पनि मेरी छोरीलाई देश निकाला गर्नुपर्ने माग राखेको पल म अझै सम्झन्छु तर आज मालिनीले तिमीलाई क्षमादान दिएकी छिन् ।

सुप्रिय : महाराज, यो विषयलाई बन्द गरौं हामी । मलाई हजुरले आफ्नो मित्र मान्नुभो, यही नै मेरा लागि काफी छ । म हजुरबाट प्रेम प्राप्त गर्न चाहन्छु किनकि हजुर प्रेमका सागर हुनुहुन्छ । मलाई प्रेमको अंश मात्र भए हुन्छ । मेरो दुष्कर्मलाई क्षमा दिनुहोस् ।

मालिनी : महाराज, केमान्करलाई के सजाय दिनुहुने छ ?

राजा : मृत्युदण्ड ।

मालिनी : म हजुरसँग घुँडा टेकेर उसको जीवनको भीख माग्छु ।

राजा : तर छोरी, त्यो त देशद्रोही हो ।

सुप्रिय : महाराज, ऊ केवल पापको नाश गर्न यो कदम उठाउँदै छ । ऊ हजुरको सत्ता हत्याउन चाहँदैन । ऊ हजुरलाई पापको संरक्षक मान्दछ ।

मालिनी : उसलाई जीवनदान दिनुहोस् महाराज अनि मात्र हजुर सुप्रियको असल मित्र बन्नुहुने छ । ऊ नै हो जसले हजुरलाई विपत्मा साथ दियो ।

राजा : सुप्रिय, भन तिमी के चाहन्छौ ? के तिम्रो साथीले जीवनदान पाओस् ?

सुप्रिय : महाराजको जो आज्ञा ।

राजा : म तिम्रो इच्छा अवश्य पूरा गरिदिने छु । तर म राजा हुँ, त्यसैले म तिमीलाई कुनै उपहार दिन चाहन्छु, भन के माग्छौ ? छोरी, तिम्रो जीवनमा सारा व्यवधानहरू मेटिएर नयाँ सुरुवात भएको छ । (सुप्रियसँग) मेरो पाउ नसमात । आऊ मलाई अँगाल । म अति खुसी छु । मलाई मालिनीसँग केही पल एक्लै समय व्यतीत गर्न देऊ ।

(सुप्रिय निस्कन्छ ।) मैले मेरी छोरीलाई पुनः पाएको छु । तिमी अब आकाशको चम्किने तारा नभएर मेरो हृदयमा फुल्ने फूल भएकी छयौ ।

(सेवकको प्रवेश)

सेवक : केमान्करलाई हाजिर गरिएको छ महाराज ।

राजा : भित्र लिएर आऊ त्यसलाई । हेर, त्यसको आँखाको आक्रोश, घमन्डले उचालिएको शिर र आकाशमा गर्जिने बादल जस्तो त्यसको मुहार !

मालिनी : फलामे जन्जिरले केमान्करको अपमान गरिरहेको छ महाराज । उनी जस्तो ज्ञानीलाई यसरी बाँध्न सुहाउँदैन ।

(जन्जिरमा बाँधिएको केमान्करको प्रवेश)

राजा : तिमी मबाट के चाहन्छौ ?

केमान्कर : मृत्युदण्ड ।

राजा : म माफी दिन्छु तिमीलाई । मन्जुर छ ?

केमान्कर : म फेरि हजुरविरुद्ध विद्रोह गर्ने छु महाराज ।

राजा : तिमीलाई आफ्नो जीवनको माया छैन ? भन, के छ तिम्रो अन्तिम इच्छा ?

केमान्कर : म अन्तिम पटक सुप्रियलाई भेट्न चाहन्छु ।

राजा : (सेवकसँग) सुप्रियलाई भित्र पठाऊ ।

मालिनी : महाराज, म केमान्करको क्रोधित अनुहारदेखि त्रसित छु । सुप्रियलाई भित्र नबोलाउनुहोस् ।

राजा : यो तिम्रो मिथ्या त्रास हो छोरी ।

(केमान्करतिर हात फैलाउँदै सुप्रियको प्रवेश)

केमान्कर : पख साथी, एकछिन । पहिले मभित्रको केही प्रश्नको समाधान गरिदेऊ अनि देखाउनू यो प्रेम र आत्मीयता । म धेरै बोल्न जान्दिनँ र मसँग समय पनि छैन । मेरो परीक्षा समाप्त भयो तर तिमीले दिन बाँकी छ । भन, मलाई किन धोका दियौ ?

सुप्रिय : साथी, तिमीले मलाई बुझेनौ । मेरा लागि तिम्रो प्रेमभन्दा सत्य प्रिय थियो ।

केमान्कर : म बुझ्छु साथी । मैले पनि राजकुमारीको अलौकिक मुहार देखेको छु । तिमीले हाम्रो धर्म र संस्कारलाई अनि पुर्खाको धरोहरलाई बेच्यौ र आफूलाई छलको फन्दामा सुम्पिदियौ ।

सुप्रिय : तिमी सही छौ । तर म उनलाई सत्य मान्छु । मलाई तिम्रो धार्मिक ग्रन्थहरू फुस्रा लागे । मैले मेरो मनको आँखामा जब उनको अलौकिक मुस्कान देखेँ र प्रेम नै जीवनको सार हो भन्ने बुझेँ तब मेरो जीवन धन्य भयो । मैले उनीबाट दैवी ज्ञान प्राप्त गरेँ साथी र त्यो ज्ञान मेरो हृदयभरि छाएको छ । जसले प्रेम नै ईश्वर र सर्वज्ञान हो भन्छ ।

केमान्कर : मैले पनि मालिनीमा धर्मस्वरूप खोज्ने मिथ्या प्रयास गरेको थिएँ । मलाई उनी नारी स्वरूपमा साक्षात् देवी लागेकी थिइन् । मेरो हृदयमा पनि अद्भुत सङ्गीत गुन्जिएको थियो । तर मैले त्यो भ्रमलाई तोडेँ । मलाई राजकुमारीले आफ्नो मायावी शक्तिद्वारा तिमीबाट दूर गरिएको छ । म अति पीडामा छु । तिमी र म त बालसखा पो हौँ त । तिमीले मलाई किन यसरी घात गऱ्यौ ?

सुप्रिय : साथी, यो संसारमा हरेक प्रकारका मानिस अटाएका छैनन् र ? ती आकाशमा चम्किने ताराहरू आपसमा कहिल्यै लड्छन् ? हामी पनि यसरी नै अलगअलग सोच भए तापनि मिलेर बस्न सक्तैनौ र ?

केमान्कर : शब्दको जाल नबुन साथी । सत्य र असत्य कसरी एकसाथ रहन सक्छन् ? यो संसार त्यति विशाल पनि छैन । विष र अमृत एकसाथ रहन सक्तैनन् । प्रेम र घृणा पनि एकसाथ जीवित हुन्नन् । तिम्रो धोकाले हाम्रो पवित्र मित्रताको हत्या गरेको छ । म आफ्नो विश्वासका लागि मर्दै छु, तिमी भने धोका दिएर पनि सम्मानपूर्वक जीवित रहने छौ । यो संसार त्यति निर्दयी पनि छैन साथी ।

सुप्रिय : (मालिनीसँग) म मेरो साथीको तर्फबाट माफी माग्छु । केमान्कर, तिमी जीवन आफ्नो विश्वासका लागि चढाउँदै छौ तर मैले तिमीभन्दा बढी त्याग गर्नुपर्दै छ । त्यो त्याग तिम्रो प्रेम हो, जुन मलाई मेरो जीवनभन्दा प्रिय छ ।

केमान्कर : भो, बन्द गर तिम्रो शब्दजाल । अब सत्य मृत्युको न्यायालयमा जाँचिने छ । तिमीलाई हामीले गुरुकहाँ बिताएका क्षणहरू याद छ ? हामी रातभर बहस गर्थ्यौं तर सही उत्तर नपाउँदा हामी बिहानीको प्रतीक्षामा रहन्थ्यौँ र बिहान हाम्रो गुरुलाई सोध्थ्यौँ । आज त्यो बिहानीको प्रतीक्षा त्यागौँ र खडा भएर मृत्युलाई सत्य-असत्यको निर्णय गर्न लगाऔँ । आऊ, साथी सत्यको त्यो उच्च शिखर पुगौँ र एकअर्कालाई हेरेर हाँसौँ । के तिमी तयार छौ ?

सुप्रिय : तिम्रो इच्छा पूरा होस् साथी ।

केमान्कर : त्यसो भए तिमी मेरो हृदय समीप आऊ । तिमी आफ्नो प्रिय मित्रबाट टाढिएका छौ-अब हामी सदाको लागि एक होऔँ । तिमीले मेरो मृत्यु-उपहार प्रेमका रूपमा स्वीकार गर ।

(केमान्करले सुप्रियलाई जन्जिरले प्रहार गरेर मार्छ ।)

केमान्कर : (सुप्रियको मृत शरीर अँगाल्दै) महाराज, मृत्युदण्ड दिनुहोस् ।

राजा : (उठ्दै) मेरो तरवार खै ?

मालिनी : केमान्करलाई क्षमा दिनुहोस् ।

(केमान्कर आफूलाई पनि प्रहार गर्दै रुन्छ । अचानक सुप्रियको लासमाथि घोप्टेर प्राण त्याग गर्छ ।)

(मालिनीको आँखाबाट आँसु बग्छ ।)

(राजा छक्क पर्छन् ।)

(स्तब्धता छाउँछ ।)

अनुवाद: नेचुरल्ली दीपक

होइन

लक्ष्मीनारायण लाल ("Nahi Hai" by Lakshmi Narayan Lal)

चरित्र -सात जना – र एक पुरुष

(खाली शून्य मञ्चमा सात जना युवकहरू मार्च गर्दै आउँछन् । पुरुष उनीहरूलाई सञ्चालन गरिरहेको छ ।)

पुरुष : चाँडो गर, सावधान ! दायाँ-बायाँ ! बायाँ-दायाँ ! दायाँ-बायाँ ! बायाँ-दायाँ ! सीधा लाइन बनाऊ ! आराम ! सावधान ! एक-दुई ! एक-दुई !

(सबै जना एक पङ्क्तिमा दर्शकहरूका अगाडि उभिएर एक-दुई, एक-दुई भन्दै खुट्टा उठाउने र राख्ने गर्दै छन् ।)

पुरुष : सावधान ! हाजिर श्रीमान् !

पहिलो : एक । हाजिर श्रीमान् !

दोस्रो : दुई । हाजिर श्रीमान् !

तेस्रो : तीन । हाजिर श्रीमान् !

चौथो : चार । हाजिर श्रीमान् !

पाँचौँ : पाँच । हाजिर श्रीमान् !

छैटौँ : छ । हाजिर श्रीमान् !

सातौँ : सात ।

पुरुष : हाजिर श्रीमान् किन नभनेको ?

सातौँ : जो हाजिर छ, फेरि किन भन्नु ?

पुरुष : के भन्यौ ?

सातौँ : के भनेँ ?

पुरुष : सटअप !

पहिलो : सावधान !

(सबै जना हाँस्छन् ।)

पुरुष : सावधान !

(सबै जना सावधान खडा हुन्छन् ।)

पुरुष : नम्बर सात !

सातौँ : **येस सर ! होइन-होइन, हजुर श्रीमान् !**

(सबै जना हाँस्छन् ।)

पुरुष : खबरदार ! यदि अब कसैको हाँसो सुनियो भने सख्त सजाय मिल्नेछ । नियम भङ्गको दण्ड ।

सातौँ : नियम भङ्गको दण्ड ।

(सबै जना हाँस्छन् ।)

पुरुष : नम्बर सात, सावधान ! अगाडि आऊ । निकाल ।

सातौँ : मेरो नाम पहिलो हो । नम्बर एक, हजुर श्रीमान् !

(अब उल्टो क्रमबाट मान्छे क्रमशः बोल्दछन् । पहिलो सातौँ हुन पुग्दछ ।)

पुरुष : यो के ठट्टा हो, पहिलो सातौँ भयो, सातौँ पहिलो भयो । फेरि देऊ हाजिरी ।

(पहिला बायाँबाट, फेरि दायाँबाट)

पहिलो : क्रम बदल्नासाथ सङ्ख्या बदलिन्छ ।

दोस्रो : स्थान बदल्नासाथ एक अर्को भइसक्छ ।

तेस्रो : जब हामी कसैले भन्नासाथ हिँड्न थाल्दछौँ, तब हामी मनुष्य होइन, सङ्ख्या हुन पुग्दछौँ ।

चौथो : म चौथोबाट तेस्रो भएँ भने फरक के पर्‍यो ?

(हाँसो)

पाँचौँ : खबरदार यदि कसैको हाँसो सुनियो भने ?

छैटौँ : हामीहरू यतिविघ्न किन डराइरहेका छौँ ?

सातौँ : हामीहरू एकसाथ हिँडेका थियौँ ।

पहिलो : हामी समान थियौँ ।

दोस्रो : हामी सबै आठ जना थियौँ । अब सात नै भएका छौँ ? त्यो आठौँ कहाँ छ ?

पुरुष : फेरि गन । सावधान !

(एक, दुई, तीन...भन्दै गणना गर्दछ ।)

पुरुष : पख ! म गणना गर्दछु ।

(एक-एकलाई धक्का दिँदै गन्न थाल्दछ ।)

पुरुष : सात थियौ ।

पहिलो : होइन, आठ थियौँ ।

पुरुष : व्यर्थको ! सात थियौ । एकदम सात ।

पहिलो : म गन्दछु ।

(ऊ आफू स्वयम्लाई मिलाएर आठ गन्दछ ।)

पुरुष : होइन । म गन्दछु । सावधान, खडा होऊ एकै लाइनमा । हात उठाएर हाजिरी देऊ । हाजिरी देऊ ।

(सबै सङ्ख्याले क्रमशः बोल्दछन् ।)

पहिलो : अनि आठौं तिमी ।

पुरुष : गलत । एक-दुई-तीन-चार-पाँच-छ-सात ।

सातौं : तिमी आठ ।

पुरुष : हाजिरी लिने मान्छे छ, हुने गर्छ होइन । हामी यहाँ केवल सात जना छौं । भन हामी सात जना छौं । भन्छौ कि भन्दैनौ ?

चौथो : हम सात जना छौं ।

पुरुष : सबै जना भन–एकसाथ–हामी यहाँ केवल सात जना छौं ।

(बायाँबाट पहिलो, तेस्रो, पाँचौं र सातौं मौन छन् । शेष एकसाथ भन्दछन्–हामी यहाँ केवल सात जना छौं ।)

पुरुष : तिमीहरू किन होइन ? भन, भन किन होइन ?

पहिलो : तिमी को हौ र यसरी हामीमाथि च्याँट्टिने ?

तेस्रो : हामी अलग्ग-अलग्ग आफ्नो घरबाट हिँडेका थियौं, जस्तो कि तिमी हिँडेका थियौ । एउटा बाटोमा सबै साथ भयौं । तिमी यसरी हामीलाई रोकेर...।

पाँचौं : को हौ र यसरी गन्ने ?

सातौं : कसले भन्यो तिमीलाई हामीलाई यसरी गन ?

पुरुष : अब तिमीहरू यो प्रश्न सक्ने छैनौ ।

पहिलो : किन ?

पुरुष : म तिमीहरू सबैभन्दा अगाडि थिएँ । तिमीहरू मेरा पछाडि-पछाडि हिँड्यौ । हिँड्यौ कि हिँडेनौ ? किन हिँड्यौ ?

तेस्रो : बाटो यति साँघुरो थियो कि एकको पछाडि अर्को एक जना मात्र गरेर हिँड्न सकिन्थ्यो ।

पाँचौं : अनि यो केवल संयोग थियो कि तिमी अगाडि थियौ ।

सातौं : हामीलाई यो थाहा थिएन कि तिमी त्योबाट यो निस्कने छौ भनेर ।

पुरुष : सावधान ! एक सीधा लाइनमा । खबरदार, यदि लाइनबाट यताउता भयौ भने । चुप ! कोही पनि फुसफुसाउने होइन ! मुख बन्द ! कान खोलेर सुन ! यो केवल संयोग थिएन, म तिमीहरू सबैभन्दा अगाडि थिएँ । तिमीहरूलाई कसैको आवश्यकता थियो, जसको पछि-पछि तिमीहरू हिँड्न सकोस् । अनि त्यो म नै थिएँ । केवल म । मबाहेक अरू कोही पनि होइन । बुझ्यौ त वा बुझाऊँ ?

पहिलो : अब हामीलाई तिम्रो आवश्यक छैन ।

पुरुष : अब यो निर्णय तिमीहरूको हातमा छैन ।

चौथो : तपाईंको भनाइ एकदम सही हो ।

दोस्रो : म तपाईंको कुरामा एकदम सहमत छु ।

छैटौं : हामी तपाईंले भनेजस्तो हिँड्नेछौं ।

पुरुष : अर्को कुनै मार्ग पनि त छैन । अर्को कुनै उपाय पनि छैन ।

चौथो : हजुर, हो । अर्को मार्ग छैन । कुनै उपाय छैन ।

दोस्रो : तपाईं हामीलाई जहाँ लैजाँदै हुनुहुन्थ्यो, त्यसै बाटोबाट हामी आफ्नो लक्ष्यमा पुग्नेछौं । त्यही हो हाम्रो मार्ग ।

छैटौं : त्यही ठिक छ । अरू कुनैको छैन हाम्रो चासो । (मौनता)

चौथो : एक्कासि महोदय, समय भयो । मलाई आफ्नो डिउटीमा पुग्नु छ । मलाई जान दिनुहोस् । म एकदम सीधा बाटो जानेछु, मलाई कसैसँग कुनै मतलव छैन । म र मेरो काम, यसबाहेक अरू केही पनि होइन । तपाईं चाहनुहुन्छ भने म फेरि फर्केर आउनेछु । धेरै मनोरञ्जक छ । (जान लाग्दछ । पुरुषको सोझिएको हातसँग ठोकिन्छ ।)

पुरुष : उभिरहू आफ्नो ठाउँमा !

चौथो : म आफ्नो डिउटीमा पुगिनँ भने मेरो हाजिरीमा गयल हुन्छ महोदय ! एक दिनको तलब काटिनेछ । मेरो डिउटी मेरो धर्म हो । मेरो धर्म...। हेर्नुस्, धेरै भयो । कामको समय हो । सबैलाई जानु छ । ठट्टा नगर्नोस् ।

पुरुष : तिम्रो धर्म के हो, त्यो म बताउनेछु ।

पहिलो : कसैले भन्दैमा धर्म बदलिँदैन ।

तेस्रो : यसरी धर्म बन्न लाग्यो भने त बस भइहाल्यो ।

दोस्रो : चुप रहू ।...श्रीमान्‌जी, मेरी जुन अर्धाङ्गी छे नि...मेरी 'वाइफ' जसलाई अङ्ग्रेजीमा भनिन्छ, ऊ आफ्नो माइती जाँदै छे । बजारबाट उसका लागि केही सामान लिएर गइरहेको छु । यताबाट बायाँतिर मोड्डुँला, फेरि सीधै गएर सीधै जाउँला । राम कसम, मलाई कसैसँग केही लिनुदिनु छैन । केवल आफ्नो कामसँग काम । ठट्टा होइन । म धेरै जिम्मेदार मान्छे हुँ–कसैसँग पनि सोध्नुहोस् । किन भाइ, मलाई त तपाईंले चिन्नु नै हुन्छ...। (जान लाग्दछ । पुरुष उसलाई तानेर रोक्तछ ।) मेरी स्वास्नी मसँग रिसाउनेछे । हामी दुईमा धेरै प्रेम-प्यार छ । विश्वास लागेन भने हेर्नोस् हामी दुवैको फोटो ।

पुरुष : प्रेम-प्यार के हो, यो म बताउनेछु । चुपचाप यहीं उभिरहू !

दोस्रो : अचम्म छ । मेरो फोटो त दिनुस् । (बिस्तारै

लिन्छ ।)

चौथो : हामीलाई के थाहा थियो...।

दोस्रो : कसलाई के थाहा थियो ।

छैटौँ : अरे रेरे, भाइसाब त ठट्टा गरिरहनुभएको छ । (हाँस्तछ ।) तिमीहरू यति 'सिरियस' किन भयौ ? अरे, भाइसाबलाई त म बाल्यकालदेखि नै चिन्दछु । एकदमै ठटचौलो हुनुहुन्छ । एक्कासि कुनै न कुनै चमत्कार गरिदिनु उहाँको बायाँ हातको खेल हो । (हाँस्तछ ।) एकचोटि यस्तो भयो कि यस्तो भयो कि...।

पुरुष : चुप रहन्छौ कि रहँदैनौ ?

छैटौँ : जे भन्दछन्, त्यो यसको मतलब हुँदैन । यदि यिनी धेरै गम्भीर छन् त बुझ यिनी एकदम गम्भीर छैनन् । यदि क्रोधमा छन् त (हाँस्तछ ।) बुझ हामीलाई हँसाउन चाहन्छन् । भाइसाबको जीवनको यही उद्देश्य रहेको छ कि मान्छेहरू हर्षित होउन् । हाँसुन् । खेलुन् । मान्छेहरूको स्वास्थ्य उच्च रहोस् ।॰यिनले कति धेरै पुस्तक लखेका छन्–'हर्षित रहू, स्वस्थ रहू ।' एकचोटि कस्तो पनि भयो भने हामी दुवै गइरहेका थियौँ–यो केही दिनअगिको कुरा हो । हामी दुवै 'क्लासफेलो' हौँ नि । त यस्तो भयो कि हामी दुवै गइरहेका थियौँ–भाइसाबलाई आफ्नो प्रशंसा सुन्न एकदम मन पर्दैन । त हामी दुवै गइरहेका थियौँ–भाइसाब अलि छिटो हिँड्छन् । त हामी दुवै गइरहेका थियौँ–छिटो हिँड्नु यिनको स्वभाव हो । त हामी सँगसँगै हिँडिरहेका थियौँ–यिनी यति 'पपुलर' मिजासिलो, नेक, विशाल हृदयी प्रत्येक क्षण अरूलाई सहायता गर्ने खालका छन् कि मान्छेहरू त्यसै नै यिनको पछि लाग्दछन् । त भएको यो छ कि म भाइसाबका साथ हिँडिरहेको थिएँ–कता ? यो पछि पो थाहा भयो । त हामी दुवै हिँडिरहेका थियौँ । मौसम राम्रो थियो । यही फेब्रुअरी मार्चका दिन थियो होला । (यसबिच पुरुषले पटक-पटक उसलाई हप्काएको छ । मौन गराउन चाहेको छ । तर यसमा कुनै असर छैन ।)

छैटौँ : त यो सम्झनुस् कि हामी दुवै हिँडिरहेका थियौँ ।

पहिलो : (कराउँछ ।) त फेरि के भयो ?

तेस्रो : अगाडि केही भन्यौ कि आफ्नो टाउको आफैँले पिट्नेछ ?

पाँचौँ : नचाहिने कुरा गर्दछ ।

सातौँ : हामीले पनि पहिला त यही सोचेका थियौँ, तपाईंका यी भाइसाब कुनै ठट्टा गरिरहेका छन् । यसो मनोरञ्जनका लागि...।

छैटौँ : अरे रेरे ! भाइसाब, हेर्नुस् न यिनीहरू कस्तो कुरा गरिरहेका छन् । च्व, च्व, च्व तपाईंहरूले भाइसावलाई यति पनि बुझ्नुभएन । भाइसाव, हेर्नुस् न, कस्तो समय आयो । मान्छेहरू व्यर्थै भ्रम-हल्लाको सिकार हुन्छन् ।

पुरुष : चुप हुन्छौ कि हुँदैनौ ?

छैटौँ : तपाईंहरूका साथ समय छैन । तपाईंहरू जहाँ लाग्दै हुनुहुन्थ्यो, त्यहाँ पुग्नका लागि हतार छ । तपाईंको समय धेरै बहुमूल्य छ । भाइसाबको समयको कुनै मूल्य छैन ? तपाईंहरू सोच्नुहुन्छ, भाइसाबलाई कुनै हतारो छैन ? तपाईंहरूलाई भ्रम छ । यस्तो नगर्नुस्...।

पुरुष : चुप्प ! (झापड हानेर लडाइदिन्छ ।)

छैटौँ : तपाईंहरू यो न सोच्नुस् कि भाइसाबले मलाई थप्पड हान्नुभयो र म लडेँ । यो हाम्रो प्रेम हो । हामी बाल्यकालका साथी हौँ । यो हाम्रो मनोरञ्जन हो । बुझ्ने प्रयास गर्नुहोस् । -पुरुष उसको मुखमा पट्टी बाँधिदिन्छ । फेरि पनि अगाडि ऊ हातखुट्टाको सङ्केतमा कुरा गर्दछ ।)

पुरुष : भन, कहाँ जानु छ ?

पहिलो : भन्न आवश्यक नै छ के ?

पुरुष : आवश्यक छ !

पहिलो : भन्दिनँ ।

पुरुष : भन्नैपर्छ ।

पहिलो : कतै जानु छैन ।

पुरुष : यसरी यहाँ कोही पनि उभिरहन सक्तैन ।

पहिलो : तिमी यहाँ हामीलाई रोकेर किन उभिएका छौ ?

पुरुष : तिम्रो कल्याणका लागि ।

पहिलो : मेरो कल्याणको चिन्ता तिमीलाई ?

पुरुष : म यति वर्षसम्म चुपचाप तिमीहरू सबैलाई हेरिरहेको छु । तिमीहरूको जीवन उद्देश्यहीन रहेको छ । तिमीहरूको जीवनको कुनै उद्देश्य छैन, तिमीहरूको आफ्नो कुनै विश्वास छैन । कुनै जीवन-लक्ष्य छैन । कोही आफ्नो डिउटीतिर भागिरहेको छ । कोही स्वास्नीलाई हर्षित पार्न बजार गइरहेको छ । कोही...।

दोस्रो : म डाक्टरकहाँ जान लागेको हुँ । मेरो बच्चा एकदमै बिरामी छ । म आफ्नो बच्चालाई राम्रो,

स्वस्थ राख्न सकूँ, यो मेरो विश्वास के कम छ ? तपाईं हामीहरूलाई त्रसित पारेर के दानव बन्न चाहनुहुन्छ ?

चौथो : म आफ्नो पसलतिर जान लागेको हुँ । मेरो आफ्नो सानो खाले पसल छ कपडाको । म आफ्नो पसल खोल्दिनँ भने, केही बेचिनँ भने त खाना कहाँबाट खाउँला ? स्वास्नी, छोराछोरीलाई के खुवाउँला ?

पुरुष : तिमीलाई कहाँ जानु छ ?

तेस्रो : म सत्यको खोजमा निस्केको हुँ ।

दोस्रो : सत्य गयो पेटभित्र । (पुरुष चारैतिर घुरेर हेर्दछ ।)

पुरुष : तिमी कहाँ जान लागेका थियौ ?

पाँचौँ : के भन्नुभयो ?

पुरुष : यो बहिरो हो कि के ? कहाँ जान लागेका थियौ ?

पाँचौँ : जान होइन आइरहेको थिएँ ।

पुरुष : कहाँबाट ?

पाँचौँ : त्यहाँबाट ।

पुरुष : त्यहाँ के हुने गर्दछ ?

पाँचौँ : त्यहाँ केही हुँदैन, यहाँ (मुटुमा) हुने गर्दछ ।

पुरुष : के ?

पाँचौँ : विश्वास ।

पुरुष : के भनेको ? विश्वास ?

(त्यहीं सबै जनाले एकसाथ भन्दछन्–'सत्य ।')

पुरुष : राम्रो, तिमीहरू जान सक्छौ ।

(उनीहरू बायाँ तिरवाट जान थाल्दछ ।)

पुरुष : रोक ! (पिस्तोल निकाल्छ ।) 'ह्यान्ड्स अप !' हात माथि उठाऊ ! म यही हेरिरहको थिएँ, तिमीहरूको बाटो कता छ र कुन दिशामा जानेछौ । ओह, बायाँ दिशाबाट जाँदै थियौ ? स्याबास ! यो हिम्मत । अरू जाऊ । वढाऊ पाइला । एक-एकलाई भुटेर राखिदिनेछु ।

(छैटौं उठ्दछ । दायाँतिर जान थाल्छ । उसका साथ दोस्रो र चौथो भाग्न लाग्दछ ।)

पुरुष : खबरदार ! जसले भाग्ने प्रयास गरे ! ओह, दायाँतिरवाट निस्केर जान चाहन्थ्यौ । जाऊ, हेर्नेछु कसरी जान्छौ !

दोस्रो : हामी सोच्तथ्यौ, दायाँतिरबाट जानु सुरक्षित छ ।

चौथो : हाम्रो विश्वास थियो कि...।

पुरुष : अब केवल एकै मार्ग छ, सीधा–अगाडि ।

पहिलो : सीधा अगाडि त तिमी उभिएका छौ ।

पुरुष : म नै बाटो दिन्छु । किनकि बाटो रोकेर म नै उभिएको छु । किनकि अगाडि म नै थिएँ । बाटोका सबै अप्ठेरा मैले नै भोगेको छु ।

तेस्रो : किन ?

पुरुष : किनकि म नै भोग्न सक्तथेँ ।

पहिलो : किन ? केका लागि ? कसले भनेको थियो ?

पाँचौँ : व्यर्थको ।

पुरुष : हात माथि, ह्यान्ड्स अप ! दृष्टि सीधा ! अगाडि ! हल्लिनु-डल्लिनु होइन ! मैले पाएँ, तिमीहरू सबै स्वार्थी हौ । स्वार्थी, बेगुनी ! केवल आफ्नो-आफ्नो धन्दा । आफ्नो-आफ्नो चिन्ता । न कुनै विश्वास, न धर्म, न सत्ता । यसैले मैले सोचेँ... मैले निर्णय गरेँ...।

(छैटौं आफ्नो पट्टी खोल्दै पुरुषको खुट्टामा भुक्तछ ।)

छैटौं : मलाई देऊ विश्वास । मलाई देऊ धर्म । हामीलाई देऊ सत्य । (उठ्तछ ।) हो, यही त म भनिरहेको थिएँ । म भाइसाबका साथ हिँडिरहेको थिएँ त्यही सत्य र विश्वास प्राप्त गर्न । सत्य नै ईश्वर हो- हामी दुवै यही प्राप्त गर्न हिँडिरहेका थियौँ नि भाइसाब ! सत्य नै ईश्वर हो...। ठिक भनिरहेको छु नि भाइसाब !

पुरुष : चुप लाग ! (मौनता) सुन ! विश्वास र सत्य स्वयम्मा केही हुने गर्दैन । सत्य हुने छैन, बनाइने गरिन्छ । विश्वासबाट सत्य कुँद्ने गरिन्छ । विश्वास बन्दछ भयबाट । कुनै शक्तिबाट, जसले हामीलाई सुरक्षा दिन्छ ।

पहिलो : अनि शक्ति त्यही हो, जसले विकल्पलाई समाप्त गरिदेओस् ।

पुरुष : यही हो मेरो सत्य । ल खुरुक्क स्वीकार गर र सीधा सुरक्षित आफ्नो-आफ्नो बाटो जाऊ । हिँड...हिँड ! (पुरुष सबैलाई घेरेर तिनीहरूका चारैतिर घुम्न लाग्दछ ।)

पुरुष : (घुम्दै) हिँड-हिँड !

सबै : (एकै स्वरमा) नाइँ ।

पुरुष : खुरुक्क एकै लाइनमा उभिऊ ! चाँडै, अझ चाँडै । हात पछाडि बाँधिएका छौ । हात पछाडि । दृष्टि अगाडि, हात पछाडि, दृष्टि अगाडि ।

(सबै जना त्यसरी नै उभिन्छन् ।)

पुरुष : तिमी सबै भयभीत छौ; कोही आफ्ना मालिकसँग, कोही आफ्नो डिउटीदेखि, कोही आफ्नी स्वास्नीसँग, कोही मृत्युबाट, कोही ईश्वरसँग, कोही आफ्नो जीवनदेखि, कोही भविष्यदेखि, कोही विगतसँग, तब तिमीहरूलाई कुनै एक विश्वास चाहिन्छ । अनि त्यो

विश्वास म दिनेछु ।

तेस्रो : ता कि हामी आफ्नो सत्यता देख्न नसकौं ! मैले पाइसकें आफ्नो सत्य ।

पुरुष : रोक ! तिम्रो सत्य म दिन्छु ।

तेस्रो : सत्य भविष्यमा होइन, सत्य प्रत्यक्ष छ ।

पुरुष : यता आओ ! हिँड !

(छैटौं आउँदछ ।)

पुरुष : हेर । प्रत्यक्ष आफ्ना आँखाबाट हेर–के हुने गर्दछ विश्वास । म जसमाथि जति जसै हात फैलाउँछु, ऊ त्यहीअनुसार, उँचो-नीचो हुनेछ । सानो-ठुलो...उँचा-नीचा, जस्तो म चाहन्छु, जसै मेरो हात उठ्नेछ । हेर मेरो हात । ध्यानले हेर । हेर । हेर । जहाँ म चाहन्छु, हात पुऱ्याउन सक्तछु । जहाँ चाहें, रोक्न सक्छु । यो कसैले हल्लाउँदै-डुलाउँदैमा हल्लिँदैन । जहाँ म चाहन्छु त्यहाँ यो हात पुग्नेछ । जहाँ चाहन्छु त्यहाँ रोकिदिन्छु । यो अभ्यासबाट होइन, विश्वास र सङ्कल्पबाट हुने गर्दछ । हिँड, म दिनेछु तिमीहरूलाई त्यही विश्वास । मलाई थाहा छ, तिमीहरूसँग सबै कुरा छ, तर विश्वास छैन । (छैटौं, पुरुषको बढेको हातका अनुसार सानो-ठुलो हुन लाग्दछ ।)

छैटौं : अरे, यो त सत्य हो ।

सातौं : होइन ।

छैटौं : मलाई विश्वास प्राप्त भयो ।

सातौं : होइन । यो विश्वास होइन, भय हो । हिँड, म हेर्दछु यो हात ।

(पुरुषको त्यो हात उसलाई सानो गर्न पाउँदैन ।)

सातौं : देख्यौ, यो झुट हो । भयबाट विश्वास बनाउन चाहन्छ ।

सबै : किन ?

पुरुष : तिमीहरूले जेसुकै गर, तर मसँग यति शक्ति छ कि म यस झुटलाई सत्य बनाइदिनेछु ।

(सबै जना उसलाई घेर्दै एकै स्वरमा भन्दछन्– 'होइन ।')

पुरुष : हो ।

सबै : होइन ।

पुरुष : हो ।

सबै : होइन ।

पुरुष : तिमीहरू एकै भयौ ?

सातौं : तिम्रो यस भयङ्कर खेलको रहस्य हामीले थाहा पायौं ।

पुरुष : होइन ।

सबै : हो ।

(सबैका बिचमा त्यो पुरुष मौन उभिन पुग्दछ ।)

–पर्दा–

– अनु. रोशन थापा 'नीरव'

नाटक/भारत (India)

मरणोपरान्त

सुरेन्द्र वर्मा ("Maranoparanta" by Surendra Verma)

पात्र : पहिलो युवक/दोस्रो युवक

स्थान-समय : समुद्रको किनार/साँझको बेला

नेपथ्यमा तेज हावा। समुद्रका छालहरूको किनारामा ठोक्किएको आहट। मञ्चमा प्रकाश हुन्छ। माछा मार्ने दुई-तीन जाली सुकाइरहेका छन्–घोप्टिएको, भाँचिएको डुङ्गामा बाँधिएका। केही क्षणपछि पहिलो युवकको प्रवेश। विङ्समा एकातिर राखिएको प्याडस्टल पङ्खाको जोड हावामा उसको कपाल छरिरहेका छन्। ऊ यताउता हेर्दछ। नाडीघडीमा दृष्टि लगाउँछ। यसै नै एकाध चक्कर लगाउँदछ। एकातिर उभिन्छ। एक चुरोट निकालेर मुखमा च्याप्छ। दुईतीन सलाईंका काँटी कोरेर निभेपछि मात्र चुरोट सल्काउन पाउँछ। कस तान्दै दायाँबायाँ खोजपूर्ण ढङ्गबाट हेर्दछ। विराम। दोस्रो युवकको प्रवेश। दुवै एकअर्कालाई हेर्दै आफ्नो-आफ्नो ठाउँमा उभिन्छन्। अनि दोस्रो युवक बिस्तारै-बिस्तारै सामुन्ने आउँदछ। एकटक पहिलो युवकका तिर हेरिरहन्छ। पहिलो दृष्टि लुकाउँछ। फेरि खल्तीबाट प्याकेट निकाल्दछ।

पहिलो : (हात अगाडि बढाउँदै) तपाईं मन पराउनुहुन्छ ?...त्यसो त तपाईं तान्नुहुन्न।
(दोस्रो युवक केही क्षणपछि बिस्तारै अस्वीकारमा टाउको हल्लाउँछ। अनि एक्कासि दोस्रो युवकतिर हेर्न लाग्दछ।) (विराम)

दोस्रो : मेरो फोन पाएर तिमीलाई अनौठो लाग्यो होला ?

पहिलो : (केही रोकिएर अनिश्चित जस्तै) सम्भवतः...!

दोस्रो : पहिला कहिल्यै तिमीले देखेका छौ मलाई ?

पहिलो : (अस्वीकारमा टाउको हल्लाउँछ।) केवल दुईतीन फोटोमा...। (विराम)
त्यसो त विगत पाँच दिनदेखि म स्वयम् यो सोचिरहेको थिएँ कि...!

दोस्रो : कि ?

पहिलो : थाहा पाऊँ (अर्कोतिर हेर्दछ। किञ्चित् आवेगले) कसरी ?

दोस्रो : (सन्तुलित स्वरमा) ट्रकका साथ हेडलङ क्रस थियो। अस्पताल पुगेको सातआठ मिनेटपछि नै...। (विराम)

पहिलो : (चिसो सास लिएर) अन्त्य समयमा के भन्यो उसले ?

दोस्रो : उसलाई होस कहाँ थियो ?...अनि मलाई स्वयम् सात बजे थाहा भयो...घर पुगेपछि।

पहिलो : अर्थात् ती क्षणमा तिंमी उसका साथ थिएनौ ?
(दोस्रो अस्वीकारमा बिस्तारै टाउको हल्लाउँछ। विराम)

दोस्रो : तिमीलाई कहिले थाहा भयो ?

पहिलो : दुई दिनपछि।

दोस्रो कसरी ?

पहिलो अफिसमा फोन आएको थियो।

दोस्रो : किन ?...(रोकिएर) ओह...गलत प्रश्न हो।

पहिलो : (ध्यान नदिएरै) किनकि पछिल्लो दिन भेट्ने कुरा थियो र उनी आएकी थिइन।

दोस्रो फेरि ?

पहिलो : एक्सिडेन्टको एक लाइनको खबर पाइयो।

दोस्रो : फेरि ? (पहिलो दोस्रोतिर हेर्दछ अबुझ तरिकाले) कस्तो लाग्यो ? (पहिलो केही क्षण अगाडि हेर्दछ। व्यथाले मुस्कुराउँछ। चुरोट भुइँमा फालेर जुत्ताले कुचलकाचल गर्दछ।) (पीडा भरेको भावले) अपसोच त भएकै होला कि हृदय डुलाउनलाई एक वस्तु सित्तैले हातबाट निस्केर गई।

पहिलो : (फर्केर तीव्र स्वरमा) लाज लाग्दैन तिमीलाई ? जो गयो, उसका लागि...(आफूलाई समाल्ने प्रयत्न गर्दछ। बिस्तारै वेदनायुक्त स्वरमा) तिमी कसरी बुझ्छौ कि ऊ...के थिई मेरा लागि...! (दोस्रो स्थिर भावले पहिलोका तिर हेर्दछ। विराम।)

दोस्रो : (प्रश्न भएर पनि बोली सामान्य कथनको छ।)

त तिमी भेट्न चाहन्थ्यौ मसँग...!

पहिलो : हो ।

दोस्रो (केही छिन रोकिएर) किन ?

पहिलो : किनकि तिमीलाई हेरूँ...तिमीसँग कुरा गरूँ ।

दोस्रो : फेरि ?

पहिलो : दुईचोटि फोनसम्म आएँ । पहिलो पटक सात-तीन-पाँच-नौसम्म डाइल गरेँ । फेरि रिसिभर राखिदिएँ...अर्कोचोटि नम्बर पूरा मिलाएँ । तर घण्टी बज्नासाथ नै...।

दोस्रो : किन ?

पहिलो : लाग्यो, तिमीलाई थाहा छैन...कसरी लिनेछौ ।

दोस्रो : डर ?

पहिलो : (क्षणिक विराम) होइन । पूरा रूपमा डर होइन...तर केही नबुझिनेको...अथवा गलत सोच्नेको...जोखिम...र...हुन सक्ने अनपेक्षित भार...।

दोस्रो त मेरो फोन पाएर तिमीले...।

पहिलो : (बिचमै) मुक्तिझैँ मिल्यो ।

दोस्रो : किन ?

पहिलो : किनकि तिमी नै हौ, जो...(अड्किन्छ ।) किनकि हामी दुवै नै एकअर्काको चोटलाई बुझ्न सक्छौँ ।

दोस्रो : (करुण स्मित भावले) हो, तिमी...मलाई दिएपछि । (विराम)

पहिलो : (विचारपूर्ण स्वरमा) त तिमी यसरी सोच्तछौ ?

दोस्रो : (आरोपको स्वरमा) के गलत छ र यसमा ?

पहिलो : जिम्मेदारी एकमाथि राखिदिँदैमा कुरा सुल्झेको अवश्य पनि लाग्दछ, तर त्यस स्थितिमा सत्यता पूरा हुँदैन ।

दोस्रो : अर्थात् ?

पहिलो : जे कुरा मैले गरेँ, त्यो...आफ्नो हर्षका लागि ।

दोस्रो : तर तिम्रो यो हर्ष मेरा लागि के बन्यो त ?

पहिलो : (दुई शब्दको भावमा) यसको चिन्ता म किन गरूँ ? (क्षणभर दुवैका दृष्टि मिलिरहन्छन् । फेरि पहिलो अन्यत्र हेर्न लाग्दछ । बिस्तारै स्वरमा) अनि फेरि केवल म नै उत्तरदायी छैन यसका लागि–यदि उत्तर दिनु छ भने...यदि उसले पनि आफ्नो हात अगाडि नबढाएकी भए कुन प्रकार...(लामो विराम) ।

दोस्रो : त मेरो फोन पाएर तिमीलाई अचम्म भएन ।

पहिलो : (मन नलागेको भावले) उहुँ...।

दोस्रो : त के तिमीलाई...अनुमान थियो कि...?

पहिलो : मलाई के लागिरहेको थियो भने कतै केही न केही यस्तो अवश्य छुटिनेछ, जसबाट...।

दोस्रो : (केही रोकिएर) उसको पर्समा एक मखमली बट्टा निस्कियो । त्यसमा जडिएको कफलिङ्क । कागतको एक टुक्रामा तिम्रो इनिसियल्सका साथ जन्मदिनको शुभकामना...उसको दराजमा डायरी थियो । एक फोन नम्बर नाउँबिनाको । डाइरेक्ट्रीमा हेर्दा त पी. र एम्. पूरा खोलियो । **(विराम)**

पहिलो : यदि यी वस्तुहरू फेला नपरेको भए...?

दोस्रो : के मतलब ?

पहिलो : तिमीलाई केही पनि...खट्केको छैन ?

दोस्रो : (केही क्षण सोचिरहन्छ ।) कतिचोटि दुबिधा अवश्य हुने गर्थ्यो...।

पहिलो : जस्तो ?

दोस्रो : उसको एक्कासि मौन हुनु...आफूआफैँभित्र मुस्कुराउनु...कति साँझको अनुपलब्धता...(सुँकसुकाउँदो स्वरमा) अनि...।

पहिलो : हँ ?

दोस्रो : (एक्कासि घ्वाँघ्वाँ रुँदै) ऊ धेरै चिसो भएकी थिई ।

पहिलो : (आवेशका साथ) कहिलेदेखि ?

दोस्रो : (त्यसै प्रकारमा) कहिलेदेखि थियो यो क्रम ?

पहिलो : (त्यसरी नै) पहिला मैले सोधेको हुँ ।

दोस्रो : (त्यही ढङ्गमा) तर थाहा पाउन म आएको हुँ ।

पहिलो : (दोस्रोतिर हेरिरहन्छ । आफूलाई समाल्ने प्रयत्न गर्दछ । सन्तुलित स्वरमा) एक वर्षभन्दा केही कम ।

दोस्रो : पहिलो भेटघाट ?

पहिलो : मेरो अफिसको रिनोभेसन हुनु थियो । त इन्टिरिअर डेकोरेसनका लागि...(दोस्रो प्रश्नसूचक दृष्टिबाट हेर्दछ ।) ठाउँ देखाई । अनि बजेट र प्लानिङमाथि कुरा भयो र उसको फर्मले एसाइनमेन्ट पूरा गऱ्यो । (विराम)

दोस्रो : हुँ ?

पहिलो : फाइनल पेमेन्टको एक हप्तापछि एक्कासि भेटघाट भयो ।

दोस्रो : कहाँ ?

पहिलो : चर्चगेटमा ।

दोस्रो : (क्षणिक विराम) त्यसो भए ?

पहिलो : फेरि हामीले कफी खायौँ...(दोस्रोतिर हेर्दछ ।) वेम्वोलीमा...! कर्नर कफी...चिज स्यान्डविचका साथ...।

दोस्रो : यसका लागि भनेको कसले थियो ?

पहिलो : निश्चय पनि मैले...।

दोस्रो : अनि उसले एकदमसँग सहमति जनाई ? एकचोटि पनि यो भनिन कि उसलाई ढिलो भइरहेको छ वा केही अरू काम छ ?

पहिलो : अहँ । (विराम)

दोस्रो : अनि ?

पहिलो : अगिल्लो हप्ता मैले फोन गरेँ...के भनेर भने मसँग 'इरोस'को फिल्मको एक एक्स्ट्रा टिकट छ । एक मित्रका लागि मगाएको थिएँ, तर उनलाई एक्कासि बाहिर जानुपर्ने भयो । यदि तपाईंको रुचि छ भने वा समय निकाल्न सकिन्छ भने...।

दोस्रो : भने ?

पहिलो : उसले भनी, उसलाई खुसी नै हुनेछ ।

दोस्रो : (केही छिन रोकिएर) पहिलोचोटि उसको हात त्यही थामेका थियौ ?

पहिलो : हुँ ।

दोस्रो : उसले एकचोटि पनि हटाइन ? (पहिलो अस्वीकारमा टाउको हल्लाउँछ । विराम ।) तिमीहरू कहाँ बसेका थियौ ?

पहिलो : वेम्बोली...पर्सियन डेरी... लियोपोल्ड...।

दोस्रो : पहिलोचोटि उसलाई कहाँ म्वाइँ खाएका थियौ ? (पहिलो अगाडि हेर्न लाग्दछ । पहिलोका अगाडि आएर, तनावमा) अनि पहिलोचोटि कहाँ...?

पहिलो : (मुहार फर्काउँदै) नसोध ।

दोस्रो : (तीव्र स्वरमा) किन ?

पहिलो : (चुनौतीले) किनकि चोट पुग्नेछ...किनकि घोचिनेछ...।

दोस्रो : (व्यथाले मुस्कुराउँछ) त्यो त त्यहिलेदेखि नै भइरहेको छ, जहिलेदेखि थाहा भयो । (पहिलो तल हेर्न लाग्दछ ।) (स्थिर दृष्टिले हेर्दछ ।) मेरो घरमा ? (विराम) मेरो कोठामा ?...(पहिलोको हात समाउँदै यसो झकझकाउँदै) मेरो ओछ्यानमा ?

पहिलो : (आवेगले उसको हात झट्कार्दै) होइन-होइन... (मुहार घुमाउँछ ।) त्यहाँ कहिल्यै होइन ।

दोस्रो : किन ?

पहिलो : चाहँदैनथ्यौँ ।

दोस्रो : को ?

पहिलो : दुवै ।

दोस्रो : किन ?

पहिलो : त्यस घरमा पस्नासाथ...धेरै तिखो हुने गर्दथ्यो पापको अनुभूति...।

दोस्रो : ए, हो ?

पहिलो : (केही आत्मलीन जस्तो) कस्तो लाग्दथ्यो भने जस्तो...तिम्रो उपस्थितिमा नै...।

दोस्रो : (एक्कासि स्थिर हुन पुग्दछ ।) को गर्दथ्यो अनुभूत ?...तिमी ?

पहिलो : दुवै ।

दोस्रो पहिला कसले भनेको थियो ?

पहिलो : (केही सोचेर) सम्झना भएन ।

दोस्रो : (विह्वल भएर) प्रयास गर ।

पहिलो : (क्षणिक विराम) सम्भवतः उसले नै ।

दोस्रो : (केही क्षण विचारमग्न रहन्छ । एक्कासि फुटेर) तर किन गर्दथी यस्तो अनुभूति ?

पहिलो : (एक दृष्टि हेर्दछ ।) किनकि गर्दथी ।

दोस्रो (भर्त्सनाले) यी सबैका बाबजुद ?

पहिलो : यसैकारणले ।

दोस्रो : (क्रोधित हुँदै) झुट हो ।

पहिलो : (वितृष्णाले) किन बोलुँला र ?

दोस्रो तिमीलाई नै थाहा होला नि । (विराम)

पहिलो : (अन्तर्मुखी जस्तै) यदि ! तिमीले हेरेको भए उसको मनको टिस...सामु आउँदै-आउँदै उसको उछिटिनु...अनि पछि तकियामा मुहार लुकाउनु...(क्षणिक विराम) कमजोर हुनुको सुख...अनि त्यस सुखको लज्जाबोध...। (विराम) (सजग भएर) उसलाई तिम्रो धेरै ध्यान रहन्थ्यो । (दोस्रो पहिलोका तिर हेर्दछ ।) ऊ तिम्रो बारेमा धेरै कुरा गर्दथी...तिमीलाई पर्कोलेटरको कफी मन पर्छ...तिमीलाई तरकारीमा प्याज मन पर्दैन...तिमी मिठाईका लागि एलर्जिक छौ...बरफको पानी पिउनाले तिम्रो घाँटी खराब हुन जान्छ...(आवेशमा) कहिलेकाहीँ त मलाई के लाग्दथ्यो भने जस्तो उसले सजाय दिइरहेकी छ मलाई ।

दोस्रो : (घृणापूर्वक) यति पनि सहन सक्तैनथ्यौ र तिमी ?

पहिलो : (हतारले) कुरा स्पष्ट रूपमा मेरो र उसका बिचमा थियो ।

दोस्रो : (तीव्र स्वरमा) तर मेरो नाता के थियो उससँग ?

पहिलो : (आवेशमा) यति नै घमन्ड छ यस नाता-सम्बन्धमा भने किन उसको सिक्री बनाएर उसका खुट्टामा...।

(एक्कासि मौन हुन्छ । दोस्रो मुहारमा आक्रोशका साथ एक पाइला अगाडि बढ्छ, फेरि झस्किएर स्वयम्लाई समाल्ने प्रयत्न गर्दछ । सुस्ताएका खुट्टाबाट एक डुङ्गासम्म पुग्दछ । टोलाएर उभिन्छ–अशक्त जस्तै गरी । दुवै हातमा मुहार लुकाउँछ । पहिलो

केही क्षण टाउको झुकाएर उभिरहन्छ । फेरि बिस्तारै-बिस्तारै नजिक आउँछ । दोस्रो मुहारबाट हात हटाउँछ, तर अगाडि हेरिरहन्छ ।)

पहिलो : (सानो स्वरमा) उसका लागि कति ठाउँहरूका साथ तिमी जोरिएका थियौ...हामी ब्यारिज जाँदैनथ्यौं, किनकि त्यहाँको पेस्ट्री तिमीलाई धेरै मन पर्दथ्यो...लङ ड्राइभका लाग पूना रोड होइन...अस्ताउँदो सूर्य हेर्नका लागि जुहु होइन...रेन्देभु होइन । किनकि त्यहाँ तिमीले प्रपोज गरेका थियौ...।

दोस्रो : (भावहीन) को जान चाहँदैनथ्यो ?

पहिलो : (अलि अडिएर) दुवै ।

दोस्रो : किन ?

पहिलो : उसलाई के लाग्दथ्यो भने उसको पहिलाको...अनुभव...झुटा हुने थियो ।

दोस्रो : अनि तिमी ?

पहिलो : (गहिरो श्वास लिएर) किनकि ऊ डुब्न पाउँदिनथी यस साथमा...हिँडिरहेको हिँडुवाका सरह ध्यान एकचोटि यसतिर, एकचोटि त्यतातिर...(विराम) तिमी सदैव उपस्थित थियौ कतै न कतै...उसको साडीको सप्कोमा कतै तिम्रो औँलाको स्पर्श...अँधेरोमा कतै तिम्रो सुस्तरी पाइला हिँडाइको पदचाप, बन्द झ्यालका पछाडि कतै तिम्रा आँखाको ज्वाला...। (विराम)

दोस्रो उसो भए...?

पहिलो : म ती क्षणहरूमा कहिले भावुक हुन पाइनँ...सदैव रहन्थ्यो यो घोचाइ...कि तिमीले हिजो राति उसलाई छोएका थियौ...कि तिमी आजको राति फेरि...। (अगाडिको संवादका बिच दुवै अन्तर्मुख जस्ता छन् ।)

दोस्रो : (केही रोकिएर करुण मुस्कानले) अनि मलाई कुनै प्रकारको घोचाइ थिएन...जब ऊ मेरो नजिक रहन्थी, त मलाई के लाग्दथ्यो भने बस, यसभन्दा अगाडि अब केहीको पनि खाँचो छैन–सम्पूर्ण आश्वस्त । सम्पूर्ण सुख, सम्पूर्ण आनन्द...यही त हो । (एक्कासि विस्वल भएर) तर होइन, एकदम गलत थिए ती क्षणहरू...त्यो पूरा अनुभूति नै दिग्भ्रम थिए...।

पहिलो : (आवेशमा) अनि मैले यही दोष लगाएको हुँ उसमाथि कि मेरा सामु ऊ केवल...बिहेको आफ्नो उद्विग्नता टाढा गरिरहेकी छ ।

दोस्रो : तर मैले भनेकै त हो तिमीलाई कि ऊ धेरै कठोर...(वाक्य अधुरो छोडिदिन्छ) ।

पहिलो : (विस्वल भएर) एक वर्ष पहिलादेखि ?

दोस्रो : (झिँजो मान्दै) यस एक वर्षमाथि यति जोड किन दिइरहेका छौ तिमी ?

पहिलो : (फुलेल भएर) किनकि तब त भेट्नु थियो उससँग । (आफूलाई नियन्त्रित गर्ने प्रयत्न गर्दछ । विराम । आत्मकेन्द्रित जस्तो) विगतका केही दिन...जब बारम्बार यो शङ्का ठुङ्थ्यो...जब अगाडि बढेका हात पनि यसै फर्केर आउँदथे...कि जस्तो उसले लामो, घुम्रिएको कपाल होइन–सर्पले छोडेको काँचुली छोएकी होस्...जब यस शङ्काको तिक्तता यसरी घोलिएको थियो मनमा...कि साथै रहेका क्षणहरूपछि जुन अनुभूति बाँकी बच्तथे–ती यसै बिखालुपनाको...(लामो विराम । उदास मुस्कानले) तर तिखो-तिखो कुरा सुनेपछि जब ऊ टाउको निहुराएर औँलामा रुमालको कुना बेर्दै खोल्दै...ठुला-ठुला नयन उठाएर हेर्दथी यतातिर, त...।

दोस्रो : (पहिलोका तिर हेरिरहन्छ । मन्द स्मितले) त तिमीले चिनेका थियौ त्यो विशेषता (केही रोकिएर, किञ्चित् उमङ्गले) वास्तवमा सबैभन्दा अगाडि जुन कुराले मलाई तानेको थियो, त्यो...यही नयन थियो...एक मित्रकहाँ, गार्डेन पार्टीमा जब पहिलो पटक उसले हेरेकी थिई, तब...।

पहिलो : (हराएझैं) अनि उसको हाँसो, जुन म सयकडौंको भीडमा चिन्न सक्तथेँ...जुन...।

दोस्रो : (एकटक हेर्दछ । उत्तेजित भएर) जुन ?

पहिलो : श्यारीको दुई प्याग पिएपछि कति हलुको हुने गर्दथी...एक अबोध परेवाका सरह–कहिले यस डिलमा, कहिले त्यस झाडीमा, कहिले लामो उडानका साथ तालको त्यसपारि...।

दोस्रो : (पहिलोका तिर आत्मीयताले हेर्दछ ।) अनि ?

पहिलो : (त्यस्तै ढङ्गले) अनि दायाँ गालामा...अधरको तिर्खा...हुरहुराउँदो गोल जस्तै त्यो कोठी...। (दुवै आफ्नो-आफ्नो स्मृतिमा आत्मविस्तृत । दीर्घ विराम ।)

दोस्रो : (एक्कासि) तिमीले उसलाई त्यस प्रकारले त लिएनौ...? (अखरिएर मौन हुन्छ । मुहारमा तनाव । पहिलो प्रश्नसूचक दृष्टिले हेर्दछ ।) मतलब...सस्तो ढङ्गले...?

पहिलो : (केही रोकिएर चिसो श्वासले) लिएका भए हुन्थ्यो...बिहेको कुरा हुन्थ्यो कहिले ।

दोस्रो : (एकटक हेर्दछ । सन्तुलित स्वरमा) भएको थियो ?

पहिलो : (आवेशमा) किन भएको थिएन ?...ऊ कुनै जिन्दगी थियो आखिर ?...सधैं लुक्तै, डराउँदै...कतै कसैले नदेखोस्, कतै कोही नभेटियोस्, कसैले तिमीलाई

नभनिदेओस्...र लगातार छोडाउँदै गएको त्यो अपराधको छाप...मबाट सहन सकिन्नथ्यो । पछाडिको गल्लीको त्यो सुनसान र कुहिरो...मलाई सफा आकाश चाहिन्छ–चम्किलो घाम र...। (दोस्रोको मुहारको भाव देखेर मौन हुन्छ । विराम ।)

दोस्रो : (शान्त स्वरमा) उसले के भनी ?

पहिलो : मलाई सोच्ने केही समय देऊ । (केही अखरिएर) अनि तीन पटक समय लिई, तर फैसला गर्न पाइन केही ।

दोस्रो : किन ?

पहिलो : किनकि दुवै नै नातामा ऊ अहिले त्यहाँसम्म पुगिन, जहाँ...(क्षणिक विराम) किनकि तिमीलाई लिएर ऊ अहिले पनि आफूभित्र केही कमजोरी पाउँछे...कमसेकम तिमीलाई चोट दिनुको धाप जुटाउन पाउनु धेरै कठिन छ उसका लागि, किनकि बितेका दिनहरूका लागि...।

दोस्रो : (रोएर) मलाई चाहिँदैन कसैको दया । म माग्ने भएको छैन । जुन...(आफूलाई सन्तुलित गर्ने प्रयास गर्दछ । पहिलो उसको काँधमा सान्त्वनाको हात राख्तछ । केही क्षणपछि आत्मसहज भएपछि हटाउँछ । विराम ।)

(केही आत्मलीन जस्तै) म अहिलेसम्म बुझ्न सकिरहेको छैन कि हामीबिच सबै कुरा...कसरी थाहै नपाई निभेका थिए कि...(विराम) ठिक छ, यदि हाम्रो यहाँ बच्चा भएको भए एक...त के केही फरक पर्न सक्थ्यो ?...(अलि रोकिएर) तर यदि फरक पर्ने भए केही त उसले यो तर्क नै किन दिन्थी कि ऊ...बाँधिन चाहन्न अहिलेदेखि...(विराम । खल्तीबाट हात निकाल्छ त मुठीमा बट्टा खोलेर हेर्दछ । गहिरो श्वास लिएर पहिलोतिर बढ्दछ ।) यो तिम्रा लागि थियो । (पहिलो केही क्षण दुबिधामा उभिरहन्छ । फेरि हात बढाएर लिन्छ । विराम ।)

पहिलो : छुट्टी लिएका छौ अहिले ? (दोस्रो स्वीकृतिमा टाउको हल्लाउँछ ।) कहिलेसम्मका लागि ?

दोस्रो : पर्सि पूरा हुन्छ, तर अझ थप्नेछु ।

पहिलो : किन ? (क्षणिक विराम । बिस्तारै-बिस्तारै) के यो राम्रो हुँदैन कि काममा नै डुबेर...(केही अन्तर्मुखी जस्तै) मैले पनि छुट्टी लिएको थिएँ दुई दिनको...तर खालीपन यसरी छाउँछ मुटुमस्तिष्कमा कि...सम्झनाको दबाबबाट नसा नै फुट्न लाग्दछ...अनि बेकारको कुरा...कि यदि यस्तो भएको भए यो हुँदैनथ्यो । यदि त्यस्तो भएको भए त कुरा त्यहाँसम्म पुग्दैनथ्यो...एकदम व्यर्थको सोचाइ, जसको कुनै अर्थ नै छैन अब...(उदास मुस्कान भावले) यसैले बस, दिनभर काम, ढिलो रातसम्म कुनै रेस्टुरेन्ट...अनि फेरि ओछ्यान...।

दोस्रो : निद्रा कसरी लाग्दछ ?

पहिलो : कहिले गहिरो, केहिले अनिदो ।

दोस्रो : कोको छन् घरमा ?

पहिलो : सबै जना ।

दोस्रो : (केही क्षण रोकिएर) ऊ कहिले गएकी छ तिमीकहाँ ? (पहिलो अस्वीकृतिमा टाउको हल्लाउँछ ।) (गहिरो श्वास छोडेर) यसैले...(पहिलो प्रश्नसूचक दृष्टिले हेर्दछ ।) (बिस्तारै स्वरमा) तिमी एक सीमासम्म काट्न सक्तछौ आफू स्वयम्लाई...(एक्कासि आवेशमा) तर मेरो घरको त एक-एक चीजसँग उसको स्मृति जोडिएको छ...म एक झ्याल खोलूँ त...म एक पर्दा हटाऊँ, त...म त दश सेकेन्ड काट्न सक्तिनँ त्यस चार भित्तामा, अब कुनै न कुनै बहाना...(विराम ।)

पहिलो : (मधुरो स्वरमा) केही दिनका लागि नयाँ ठाउँ जानाले सम्भवतः...।

दोस्रो : (केही रोकिएर सन्तुलित स्वरमा) जाँदै छु–आज राति नै ।

पहिलो : कहाँ ?

दोस्रो : दुईतीन नाम बताएका थिए । जुन ठाउँको पहिला रेलको बर्थ पाइन्छ ।

पहिलो : कहिलेसम्म ?

दोस्रो : दुईतीन हप्ता । (विराम) यदि यो...सत्यता सहन सकियो भने फर्केर आउने छु...नत्र कतैतिर सरुवा गराउनेछु । (विराम)

पहिलो : (गहिरो श्वास लिएर) हुम्म...।

दोस्रो : अनि तिमी ?

पहिलो : (केही अबुझ जस्तो) म...?

दोस्रो : तिमीले के सोचेका छौ ?

पहिलो : बिहे गर्नेछु चाँडै नै । (विराम)

दोस्रो : (बिस्तारै-बिस्तारै) पछिल्लो तीन दिनदेखि म बारम्बार सोचिरहेको छु कि...। (पहिलो प्रश्नसूचक दृष्टिले हेर्दछ ।) मानिलेऊ, यो बट्टा वा अरू कुनै पनि चीज नपाइएको भए यसपालि मलाई केही पनि थाहा हुँदैनथ्यो, त...? (केही छिन दुवैको दृष्टि मिल्दछ । फेरि पहिलो अगाडि हेर्न लाग्दछ ।) म बारम्बार यही सम्झिरहेँ कि...उसको हुनुले सबै ठिक थियो...(पीडा

भरिएको आवेगले) भने के गल्ती हुन जान्थ्यो र यसमा ? अब आश्वासनको त्यो अनुभूति धमिलो किन भएको छ ?...ती आरम्भका दिनहरूको सम्झनाले पनि लज्जाबोध हुन लाग्दछ, जब तिमी हामीबिच कतै थिएनौ...त्यो आरामको चम्काइ पनि यसरी झुटो लागिरहेको छ कि...जसै छोऊँ त औँलामा नै टाँसिने छ... ।

(क्षणभर अड्किरहन्छ । फेरि लामो पाइलाले बाहिर निस्केर जान्छ । पहिलो मुहारमा तनावका साथ त्यसैको दिशामा हेर्दछ, फेरि हातको बट्टाका तिर । एक्कासि बट्टा एकातिर हुत्याएर फालिदिन्छ । नेपथ्यमा हलुका 'छपाक्क' आवाज । उल्टिएको डुङ्गाको सहारा लिएर उभिइरहन्छ बेसुध जस्तै । नेपथ्यबाट किनारामा छालको ठोकिएको आवाज अनि जोडको हावा...मञ्चको प्रकाश बिस्तारै-बिस्तारै मन्द हुन लाग्दछ ।)

अनुवादः रोशन थापा 'नीरव'

बाइपङ्खी मनहरू

एन्टोन चेखोभ ("Bear" by Anton Chekhov)

पात्रहरू
- **एलिना इभानोभ्ना पोपोभा** (गालामा खोपिल्टा भएकी एक जमिनदार महिला)
- **ग्रिगोरी स्टेपानोभिच स्मिरनोभ,** (अधबैंसे पुरुष जमिनदार)
- **लुका** (पोपाभाकी सुसारे महिला)
- **केही नौकरहरू**

स्थान : पोपोभाको घरको बैठक कक्ष।

(पोपोभा आफ्नो श्रीमान्को मृत्युको शोकमा डुबेकी छिन्। उनी शोकवस्त्रमा देखिन्छिन्। उनका आँखा मृत श्रीमान्को तस्बिरमा ध्यानस्थ छन्।)

(पोपोभा र लुका, आपसमा संवाद गरिरहेका छन्।)

लुका : भयो-भयो, मालिकनी हजुर। यसरी रोएर आफैंलाई बरबाद पारिसिँदै छ हजुरले। त्यो अर्दली केटो र भान्से केटो पनि फलफूल टिप्न बगैंचातिर हिँडिसके। घरमा रहेका अरूहरू आआफ्नै धुनमा रमाइरहेका छन्। यहाँसम्म कि, उः त्यो बिरालीलाई समेत थाहा छ, जीवनमा कसरी रमाउने भनेर। उः हेरिस्यो न, नपत्याए। ऊ घामकिरा समात्नमा व्यस्त छे। हजुर मात्रै यहाँ कोठामा बसेर दिनभरि शोकग्रस्त होइसिन्छ, कुनै व्रत बसेजस्तो, केही नखाई, नपिई। अब त वर्ष दिन नै भइसक्यो, हजुरले घर नछोडिसेको।

पोपोभा : भो, म बाहिर जान्नँ। किन जाने ? मेरो जीवन अब डाँडाको घाम हो। मेरो प्रिय निकोलाइ चिहानभित्र छ, शान्त। मैले पनि आफैंलाई यस कोठाका यस चार भित्ताभित्र बन्द गरेकी छु। हामी दुवै मरिसकेका छौं।

लुका : हुन त हो। मालिक हजुर निकोलाइ मिहाइलोभिच स्वर्गे भइसक्नुभएको छ। भगवान्को मर्जी हो यो। उहाँको आत्माले स्वर्गमा शान्ति पाओस् भन्छु। हजुरले मालिक हजुरको मृत्युमा निकै शोक मनाइसक्स्यो। यो सत्य हो। तर यसरी सधैंभरि रोएर र शोकमा डुबेर बस्न त कहाँ सकिन्छ ? समय आएपछि मेरी आमाको पनि मृत्यु भएकै हो क्यारे। म पनि रोएँ, शोकमा डुबें। तर जीवनभर रुनु र शोकमा डुबिरहनु...यो बिलकुल आवश्यक छैन। (सुस्केरा) हजुरले त छरछिमेक सबैलाई बिर्सिस्यो। कहीँ पनि गइसिन्न। कसैलाई भेटिसिन्न। हामी त माकुरा जस्तै बाँचिरहेका छौं– आफ्नै जालोमा जेलिएर, बाहिरको दिनदुनियाँसँग बेखबर। मुसाले लुगा पनि सप्पै काटिसक्यो। हुन त, हाम्रा वरिपरि सहयोगी मानिसहरू नभएका कहाँ हुन् र ? जिल्लाभरि कति हो कति छन्, त्यस्ता मान्छे। रिभ्लोभमा सैनिकको एउटा प्लाटुन छ। ओहो, त्यहाँका जवान अफिसरहरू कति सुन्दर छन्। हेरेर आँखा कहिल्यै अघाउँदैनन्। हरेक शुक्रबार उनीहरूको शिविरमा नाचगानको कार्यक्रम हुन्छ। हरेक दिन सैनिकहरू बाजा बजाउँछन्। मालिकनी हजुर, हजुर अझै जवान नै होइसिन्छ र सुन्दर पनि उत्तिकै। हजुर अलिकित खुसी मात्रै होइसिने हो भने हजुरका गालामा अझै पनि गुलाफ फक्रन्छन्। सौन्दर्य भनेको पनि सधैं उस्तै त कहाँ हुन्छ र, मालिकनी हजुर ! अबको दश वर्षमा त हजुर पनि मयुरनी जस्तै होइसिने छ। अनि त जवान सैनिक अफिसरले पनि हेर्ने छन् र ? त्यो बेला समय धेरै बितिसकेको हुने छ।

पोपोभा : (दृढताका साथ) लुका, अबदेखि मसँग यस्तो कुरा कहिल्यै नगर ल, तिमी। तिमीलाई थाहा हुनुपर्ने, जब निकोलाइ मिहाइलोविचको मृत्यु भयो, मेरा लागि जीवनको सारा अर्थ त्यसै दिन समाप्त भयो। त्यसै दिन मैले सङ्कल्प गरेकी हुँ, म बाँचुन्जेल यी शोकवस्त्र लगाइरहने छु र बाहिरको उज्यालो कहिल्यै हेर्ने छैन। सुन्यौ ? हुन त मेरो निकोलाइ मरेर पनि प्रेत भइसक्यो, तर उसलाई म माया गरिरहन्छु। उसले देखोस्, म उसलाई कति माया गर्छु। साँच्चै

भन्ने हो भने, ऊ जिउँदो छँदा मलाई निकै दुःख दिन्थ्यो, दुष्ट थियो र इमानदार पनि थिएन । तर म आफ्नो सतीत्व मृत्युसम्मै छोड्दिनँ । म ऊप्रतिको मेरा मायालाई पूर्णरूपमा देखाउन चाहन्छु । उः पर, चिहानघारिबाट उसले देखिरहोस् । उसको मृत्युअगाडिको मेरो सतीत्व र मृत्युपछिको सतीत्वमा कुनै कमी आएको छैन ।

लुका : यस्तो बेकारको कुरा गर्नुभन्दा यसो बगैंचामा गएर केही वेर घुम्नु वेस, मालिकनी हजुर । नत्र, टोबी बा जाइन्टमाथि करेली बाँध्न लगाउँछु म घोडावाललाई । घोडा चढेर यसो छरछिमेकतिर घुम्न गए पनि वेसै हुने थियो ।

पोपोभा : हा, हाई । (रुन थाल्छिन् ।)

लुका : मालिकनी हजुर । यो के हो ? हजुर किन यसरी रोइसेको ?

पोपोभा : ओहो, उसलाई टोबी कस्तो मन पर्थ्यो । टोबीमाथि चढेर कस्तरी रमाएर ऊ कोर्चागिन्स र भ्लासो तीर हान्दथ्यो । ओहो, कस्तो सिपालु थियो, घोडचडीमा । पूरै बल लगाएर करेली खिँज्दा कस्तो आकर्षक देखिन्थ्यो ऊ । तिमीलाई सम्झना छ ? डोबीलाई थप जौ ख्वाउनू भनेर भन्देऊ नौकरहरूलाई । बुझ्यौ ?

लुका : हुन्छ, मालिकनी हजुर । (यसै बेला, कानै खाने गरी दैलोको घण्टी बज्छ, टचाङ...डङ...डङङ...।)

पोपोभा : (जिङ्ग्रिङ्ग भएर काँप्दै) को हो ? कसैलाई नभेटने अरे भनेर भन्देऊ ।

लुका : हुन्छ, मालिकनी हजुर ।

पोपोभा : (लोग्नेको तस्बिर हेर्दै) निकोलाइ, तिमीले देख्ने छौ कि म तिमीलाई कस्तरी माया गर्छु र कस्तरी माफी पनि दिन सक्छु । मेरो यस निरीह मुटुले धडकन छोडेपछि, जब म मर्ने छु, त्यस दिन मात्रै मर्ने छ, तिम्रा लागि मेरो माया । (आँसुहरूबिच अलिअलि हाँस्दै) तर निकोलाइ, तिमीलाई अलिकति पनि लाज लाग्दैन हि ? तिमीले मलाई झुक्क्यायौ, मसँग झगडा गर्‍यौ, हप्तौंसम्म मलाई एक्लै छोडेर कहाँकहाँ चहारिरह्यौ ।

(लुकाको प्रवेश । अलि चिन्तित देखिन्छिन् ।)

लुका : मालिकनी हजुर । कोही हजुरलाई भेट्न चाहन्छ । नभेटी भा' छैन भन्दै छ...।

पोपोभा : उसलाई भनिनौ, निकोलाइको मृत्युपछि मैले मान्छे भेट्न छोडिदिएँ भनेर ?

लुका : मैले भन्न त भनें, मालिकनी हजुर । तर मान्दैमान्दैन । एकदमै जरुरी काम छ भन्छ ।

पोपोभा : एक भेट्दिनँ, दुई भेट्दिनँ, भेट्दै भेट्दिनँ ।

लुका : मैले उसलाई सबै कुरा भनिदिएकी हुँ, मालिकनी हजुर । तर त्यो मोरो, मान्दैमान्दैन । मेरो कुरो सुन्दै नसुनी घरभित्र पसिहाल्यो । उतापट्टि, भान्साकोठामा राखेर आएकी ।

पोपोभा : (आक्रोशित) : हैन, कस्तो खालको मान्छे हो ? के पारा हो त्यसका ? अँ...पठाऊ न त पठाऊ । के भन्न आएको रै'छ, सुनौं ।

(लुकाको प्रस्थान ।)

पोपोभा : हैन, कस्तो हुर्मत लिएका यिनीहरूले मेरो ? केचाहिँ भन्नुपरेको छ हँ त्यसले मलाई ? मान्छेको एकान्त किन भङ्ग गर्नुपरेको होला ? (सुस्केरा) । हैन, म त कुनै गिर्जाघरतिरै गएर पो लुकौं कि क्या हो, हँ ? (गम्भीरतापूर्वक केही सोचेर) हो, उतैतिर जानुपर्ला ।

(स्मिरनोभलाई लिएर लुकाको प्रवेश ।)

स्मिरनोभ : (लुकालाई) उल्लू । कतिसारो बोल्नुपरेको, पतर-पतर । (पोपोभालाई देख्छ र फेरि बडो आदरपूर्वक बोल्छ ।) भद्र महिला । यहाँसम्मुख आफैँलाई यसरी प्रस्तुत गराउन पाउँदा अत्यन्त हर्षित छु । मेरो नाउँ ग्रिगोरी स्टेपानोभिच स्मिरनोभ हो । म थलसेनाको सेवानिवृत्त लेफ्टिनेन्ट हुँ र हाल अलिकति जमिन छ मसँग । एउटा एकदमै महत्त्वपूर्ण विषयमा छलफल नगरी नहुने हुनाले मात्रै मैले यहाँको शान्ति खलबल्याउन बाध्य भएको हुँ । (हात मिलाउन ऊ हात पोपोभातिर बढाउँछ ।)

पोपोभा : (स्मिरनोभले बढाएको हातलाई बेवास्ता गर्दै) के भन्नु छ, भन्नुस् ।

स्मिरनोभ : तपाईंका श्रीमानसँग मेरो राम्रै हिमचिम थियो । उनको मृत्यु हुँदाताक, उनले मलाई बाह्र सय रुबल पैसा तिर्न बाँकी थियो । दुईपल्टको बाँकी गरेर । भोलि मात्रै मैले एक ठाउँ ब्याज नचुकाई नहुने भएकाले म तपाईंसँग मेरो बाँकी पैसा उठाउन आएको ।

पोपोभा : बाह्र सय रुबल...हैन, निकोलाइले के गर्नलाई यत्रो पैसा काढ्यो, तपाईंसँग ?

स्मिरनोभ : मकहाँबाट जौ ल्याउँथे, बाँकीमा । घोडालाई ख्वाउँथे, क्यार ।

पोपोभा : (लुकातिर हेरेर लामो श्वास फेर्दै) ए, लुका ।

टोवीलाई थप जौ दिन नभुल्नू नि आज पनि। (लुकाको प्रस्थान) (स्मिरनोभतिर हेरेर) यदि निकोलाइले तपाईंको ऋण खाएरै मरेको हो भने, मैले तिर्नुपर्छ, तिर्छु। तर आज सक्तिनँ। मसँग आज पैसै छैन। पर्सि मेरो गोठालो केटो सहरबाट फर्कन्छ। म उसलाई पैसा लिएर तपाईंकहाँ पठाइदिउँला। अहिले त छँदै छैन। तपाईंलाई थाहै छ, मेरो श्रीमान् मरेको भर्खर सात महिना हुँदै छ र म शोकमा छु। मेरो दिमागको अवस्था नाजुक छ। म यो पैसाको लेनदेनका बारेमा ध्यान दिन सक्ने अवस्थामै छैन।

स्मिरनोभ : र मेरो दिमागको अवस्था पनि यति नाजुक छ कि भोलि मैले ब्याज बुझाइनँ भने तिनीहरूले मलाई मार्छन्। मेरो अलिकति भएको जग्गा पनि कब्जा गर्ने छन्।

पोपोभा : तपाईंले आफ्नो पैसा पर्सि पाउनुहुने छ।

स्मिरनोभ : पर्सि होइन, मलाई आजै चाहिन्छ, मेरो पैसा।

पोपोभा : मसँग पैसै छैन भने म के गर्न सक्छु ?

स्मिरनोभ : हैन तिर्नै सक्तिनँ भन्नुभाको हो कि क्या हो, हँ ?

पोपोभा : सक्तिनँ।

स्मिरनोभ : त्यही हो त तपाईंको अन्तिम कुरा ?

पोपोभा : हो, त्यही हो।

स्मिरनोभ : अन्तिम कुरा ? पक्कै हो त ?

पोपोभा : हो, पक्का।

स्मिरनोभ : धन्यवाद। म यो कुरा याद राखुँला। (कुम खुम्च्याउँछ।) यस्तो छ पारा, अनि मान्छेहरू भन्छन् चुप लाग, चुप लाग। आउँदा बाटामा एउटा मान्छे भेटें। भन्छ, "सधैं किन रिसाइरहन्छौ, स्टेपानोविच ?" नरिसाएर सकरी बस्नु हँ, मान्छेको पारा यस्तो भएपछि ? यहाँ मान्छेलाई पैसाले कस्तो फिटफिटी परेको छ। हिजो बिहान जुरुक्क उठेदेखि, रातिसम्म आसामीकहाँ धाउँदा-धाउँदा, हत्तु। कसैले एक सुक्का दिने हैनन्। म त रन्थनिएर, खै कुन मूले यहुदीले खोलेको भट्टीमा पसेर तनतन दन्काइदिएँ भोड्का र सुतिदिएँ। लु जा त, त्यसका बाउको। आज घरबाट सत्तरी माइल हिँडेर यहाँसम्म आइपुग्दा पनि ताल उही। "नाजुक" छ रे, दिमागको अवस्था। हैन कसरी नउठोस् हँ, रिस ?

पोपोभा : मैले त भनें नि, पर्सि मेरो नोकर केटो सहरबाट फर्केपछि त्यसको हातमा पठाइदिन्छु भनेर।

स्मिरनोभ : मलाई नोकर केटोसँग मतलब छैन। म त तपाईंसँग पैसा उठाउन आएको। तपाईंको नौकरसँग मेरो के लिनुदिनु ?

पोपोभा : भयो बाबा भयो। मलाई यस्तो घटिया स्तरको भाषण सुन्ने बानी छैन। भो, अब म एक शब्द सुन्दिनँ। (फुत्त बाहिर निस्किन्छिन्।)

स्मिरनोभ : ओहो, कस्ताकस्ता हुन् गाँठे, बहाना पनि। "दिमागको अवस्था।" "लोग्ने मरेको सात महिना मात्रै भाको..." ओ-हो-हो, भगवान्। हैन, यस्तो बकम्फुसे कुरा म सुनिरहूँ कि नसुनूँ हौ, हँ ? (दर्शकतिर हेरेर) मैले तपाईंहरूलाई नै सोधेको : सुनूँ कि नसुनूँ ? भन्नुस् त। मानिलिऊँ, तपाईंका श्रीमान् मरे, अनि तपाईंको "दिमागको अवस्था..." भो। पागल कुरा। अनि गोठालो केटो सहर गयो, ह्यानत्यान। हैन, के खोज्या छन् हँ यी मान्छेहरूले ? हैन, म मेरा आसामीहरूका यस्ता कुराले उनीहरूबाट त्यत्तिकै भाग्छु, कुनै बेलुनमा चढेर ? कि के ? कि म गएर इँटाको भित्तोमा ठोकूँ आफ्नै टाउको ? हँ ? ग्रुस्चेभकहाँ गयो, घरैमा छैन मान्छे। यारासेभिचकहाँ गयो, कहाँ लुक्यो-लुक्यो, मूले। कुरिस्तिनकहाँ त चर्काचर्की नै परिहाल्यो। झन्डै झ्यालबाट निउरीमुन्टी पारेर नफ्याँकेको मैले त्यस सोडरलाई। उता मजुगोको चाहिँ पेट पो गडबड भयो रे। कसैको नभाको पेट त्यसको। अनि यो आइमाई। "दिमागको अवस्था" भनेर पड्किन्छे। हैन, पैसो तिर्ने कुरो त कुनै मूला पो गर्दैन त हौ, गाँठे। म सोझो छु भनेर यिनीहरूले भुल्लो नगनेका होलान्, मलाई। मैले पनि जानेको छु। म के हुँ, देखाइदिन्छु। मसँग खेलबाड गर्ने ? हेरौँला। यो बुढीले खुरुक्क पैसा नतिर्दासम्म म यहाँबाट जाँदै जान्नँ। हेरम् न के गर्दिरै'छे ? रिसले पनि, टाउको फुट्न आँट्यो भन्या, आज त। म त, रिसले सास फेर्न पनि सक्न छोडें भन्या, अब त। हँ, हँ, मरैं मरैं। कोही छ, छेउछाउ ? मरैं। मरैं। हँ। मरैं।

(लुका दौडेर प्रवेश गर्छिन्।)

लुका : हैन के भो हँ, तपाईंलाई।

स्मिरनोभ : पानी, पानी। अलिकति चिसो रक्सी भए पनि हुन्छ। सास फेर्न गारो भो।

(लुकाको प्रस्थान।)

स्मिरनोभ : हैन कस्ता कस्ता बहाना हँ, मान्छेका ? मान्छेलाई यहाँ पैसा चाहिएर कस्तो फिटफिटी छ,

तिर्ने त कुरै पो छैन बा। यो बुढीलाई त म। "लेनदेन गर्दिनँ," रे। आइमाईका जातको बकम्फुसे कुरा। त्यही भएर मलाई आइमाई मान्छेसँग कुरै गर्न मन लाग्दैन। बरु म पड्किन आँटेको बारुदको थुप्रोमाथि बस्न तयार छु, आइमाईका जातसँग अब ज्यान जाओस्, कुरा गर्दिनँ। कस्तो, पारै तातेर आयो मेरो त, त्यसको कुरो सुनेपछि त। हैन, कति जानेका हुँ कुरा बनाउन ? कुनै महाकविजत्तिकै पो छन् बा। यस्ता महाकविलाई त, एक कोस परबाट देख्दा पनि म त, रिसले आगो हुन्छु। तिनीहरूलाई त, फुटेका आँखाले पनि हेर्नु नपरोस्।

(लुका पानी लिएर प्रवेश गर्छिन्।)

लुका : मालिकनी हजुर बिरामी होइसिन्छ। अब कसैलाई नभेट्ने अरे।

स्मिरनोभ : चुप। यहाँबाट निस्किहाल्, तँ पनि।

(लुकाको प्रस्थान।)

स्मिरनोभ : बिरामी ! कसैलाई नभेट्ने ! पर्दैन भेट्न। किन भेट्नु ? तर म यहीँ बसिराख्छु, त्यस बुढीले खुरुक्क पैसा नगन्दासम्म, खनखनी। बिरामी। एकछिन त के, एक हप्तै बिरामी भएर थला परे पनि म यहाँबाट हिँड्ने वाला छैन। एक साता त के, वर्षै दिन थला परे पनि म जान्नँ। अनि के गर्छेस्, कठैबरी, बुढी ? ती विधवाका चाल र गालाका खोपिल्टाले भुक्क्याउन सक्छु भन्ठान्या होली। कठैबरा ! अब, म त वसैं-वसैं, यहीँनिर। पैसा नलिई त ज्यान गए पनि जान्नँ। (झ्यालबाट बाहिर हेरेर।) उसको घर अलि पर छ क्यारे। (त्यसै हेरेर उसको नोकरलाई कराउँछ।) ऐ सिमियन ! ती घोडालाई खोलिदे। आज हामी कहीं नजाने। म यहीँ बस्छु, घर आउँदिनँ अहिल्यै। घोडालाई राम्ररी जौ र पानी दे। फेरि अस्तिको जस्तो, त्यो घोडाले खुट्टा अल्झाउला नि, दाम्लोमा। तर पख...। म आफैँ आउँला...। हैन, म जान मिल्दैन। (झ्यालबाट अलि पर जान्छ।) हैन, कस्तो अचम्म ! पैसा तिर्ने त कुरै गर्दैनन् मान्छेहरू। यो बुढी, शोक मनाएको स्वाङ पार्छे। दिमागको अवस्था ठिक छैन रे। त्यसको दिमाग। पारै तातेर आइसक्यो। हैन, के गरौं हँ ? अलिकति भोड्का खाइदिन्छु, जे पर्ला, टर्ला। कोही छ ? सुन्नुस् त ?

(लुकाको प्रवेश।)

लुका : हजुर !

स्मिरनोभ : अलिकति भोड्का दिनुस् न।

(लुकाको प्रस्थान।)

स्मिरनोभ : उफ् ! (बस्छ, आफैँलाई नियाल्छ।) देखिन त म राम्रै देखिन्छु, यतिको। धुलैधुलो छ जताततै। जुत्ता पनि फुस्रै भइसके। कोटभरि पराल हो कि के हो यो टाँसिएको, खै। धुन पनि भ्याएको होइन, कति दिन भइसक्यो। त्यो बुढीले त मलाई गुन्डै पो हो भन्ठानी कि क्या हो ? (हाइ काढ्छ।) हुन त, मान्छेको बैठक कोठामा, यस भेषमा यसरी पस्नु अलि नहुने हो, मैले। तर के गर्नु ? म पाहुना लाग्न आएको हो र ? म त पैसा पो उठाउन आएको। अनि पैसा उठाउन आउने साहूले यस्तो वा उस्तो लुगा लाउनुपर्छ भन्ने कहाँ लेखेको छ र ?

(लुका, भोड्का लिएर पस्छिन्।)

लुका : ई, लिनुस् महाशय र खाएर तपाईं जानुस्।

स्मिरनोभ : (रिसाएर) हुम्, के रे ?

लुका : (आफैँसँग) कस्तो राक्षसचाहिँ आइपुगेछ आज यो घरमा। हैन, कुन दशाले यसलाई यहाँ ल्याइपुऱ्याएछ आज...मरिजानु नि, थुइया। (लुकाको प्रस्थान।)

स्मिरनोभ : रिसले पनि मर्नै लागें आज त। सारा पृथ्वीलाई चपाएर धुलोपिठो पार्दिऊँ कि क्या हो। म त, बिरामी नै भइसकें।

(पोपोभाको प्रवेश।)

पोपोभा : (आँखा भुइँतिर) महाशय ! एकान्तवासमा बस्दाबस्दा, मलाई पुरुषको बोली सुन्ने बानी हराइसकेको छ। म तपाईंसँग विवाद गरेर बसिरहन पनि सक्तिनँ। तपाईं कृपया अब आफ्नो बाटो लाग्नोस् र मलाई मेरो एकान्तवासमा छोडदिनोस्।

स्मिरनोभ : पैसा दिनुस्। म गइहाल्छु।

पोपोभा : मैले अघि नै स्पष्टै भनिसकें, मसँग आज पैसा छैन। पर्सि पाउनुहुन्छ।

स्मिरनोभ : मैले पनि अघि नै स्पष्टै भनिसकें, मलाई पर्सि होइन, आजै चाहिन्छ मेरो पैसा। आज तपाईंले मलाई पैसा दिनुभएन भने, म त भोलि बिहानै पासो लागेर मेरे पनि हुन्छ।

पोपोभा : अब, मसँग पैसै छैन भने म के गर्न सक्छु ? हैन, के तालको मान्छे हुँ, तपाईं ?

स्मिरनोभ : भनेपछि, तपाईं मेरो पैसा नतिर्ने ?

पोपोभा : आज त सक्तिनँ।

स्मिरनोभ : उसो भए, म यहीँ बसिरहन्छु। पैसा नपाउँदासम्म त, जाँदै जान्नँ। (भुइँमा बस्छ।) तपाईं पर्सि दिने हैन त, मेरो पैसा ? ठिक छ। म पर्सिसम्म

यहीं बस्ने भएँ । म यहीं बसिरहन्छु । ई, यही ठाउँमा । (फुत्त उफ्रन्छ, बसैकै ठाउँमा ।) म तपाईंलाई फेरि सोध्दै छु : मैले भोलि ब्याज तिर्नुपर्ने छ कि छैन ? तपाईंलाई म ठट्टा गर्दै छु जस्तो लागेको कि क्या हो ? हँ ? (चिच्च्याउँदै) हँ ? ठट्टा गर्दै छु जस्तो लाग्छ ?

पोपोभा : हैन, तपाईं किन चिच्च्याउनुहुन्छ हँ, यसरी ? यो त घोडाको तबेला त होइन त ।

स्मिरनोभ : मैले तबेला हो कि होइन भनेर सोधेको होइन । मैले भोलि ब्याज बुझाउनु छ कि छैन भनेर सोधेको, तपाईंलाई ।

पोपोभा : आइमाई मान्छेसँग कसरी व्यवहार गर्ने भन्ने कुराको कुनै हेक्का छैन हगि, तपाईंलाई ?

स्मिरनोभ : हो, छैन । मलाई आउँदैन, आइमाई मान्छेसँग कसरी व्यवहार गर्ने भन्ने ।

पोपोभा : साँच्चै आउँदैन रहेछ तपाईंलाई । कस्तो बद्तमिज, नकचरो मान्छे । भद्र मान्छेहरू कहाँ त्यसरी बोल्छन्, आइमाई मान्छेहरूसँग ?

स्मिरनोभ : ओहो, क्या कुरा ! क्या बहाना ! हैन, कस्तरी बोल्नुपर्‍यो मैले, हजुरसँग ? फ्रेन्च भाषामा बोल्दिनुपर्‍यो कि अरू कुनै ? (रिसले चुर) म्याडम । जे होस्, तपाईंले मलाई पैसा दिनुभएन । तर केही छैन । मैले तपाईंलाई तङ्ग त गरें नि । यस्तो राम्रो मौसम खुलेको दिन आज । अनि क्या शोकमा हुनुहुन्थ्यो होइन, तपाईं ? प्रणाम, भद्र महिला, प्रणाम । (नाटकीय तरिकाले झुक्छ ।)

पोपोभा : कस्तो छिल्लिएको मान्छे ! दुष्ट !

स्मिरनोभ : (जिस्क्याउँदै) कस्तो छिल्लिएको मान्छे ! दुष्ट ! मलाई त आइमाई मान्छेहरूसँग कस्तो व्यवहार गर्नुपर्छ, थाहै छैन । म्याडम, मैले मेरो उमेरमा, तपाईंले जिन्दगीभर देखेका भँगेराभन्दा धेरै आइमाई मान्छे देखें । आइमाईकै विषयलाई लिएर तीनपल्ट त युद्ध लडेको छु । बाह्रओटी जतिलाई त मैले सीधै नाइँ भन्दिएको । नौ जनाले मलाई पनि नाइँ भने, भन्न त । तर सुन्नुस् । एकताका, उमेरमा म पनि झिल्के थिएँ । ओहो...अत्तर छर्किएर हिँड्थें । मह जस्ता मधुर शव्द बोल्थें । गरगहना पनि कति थरी लगाएर हिँड्थें, गाँठे । कस्ताकस्ता धनुकाँड लिएर हिँडिन्थ्यो, उसताका । प्रेम ? प्रेमको त कुरै नगरौं । कति गरियो, गरियो । ओहो, कम्ता दुःख पाइएको होइन, प्रेममा । आहा...चन्द्रमालाई हेरेर गहिरो सुस्केरा पनि भरिन्थ्यो...भित्रभित्रै तड्पिइन्थ्यो, रिसाइन्थ्यो, फेरि पग्लिइन्थ्यो, अनि फेरि हिउँ जस्तै जम्न पनि समय लाग्दैनथ्यो । प्रेममा कस्तो पागल हुने गर्थें म, ओहो । पूरै पागल । पागल प्रेमी भन्छन् नि, हो, त्यस्तै । हरेक दृष्टिबाट पागल । थुइय ! आफूले माया गरेका महिलाहरूको मुक्तिका लागि नारा पनि कम लगाइएन । आधाउधी सम्पत्ति त प्रेममै स्वाहा पारियो । तर अहिले...अहिले अवस्था फरक छ । महिलाका बारेमा मेरा विचार फेरिएका छन् । कहाँ एकै रहँदो रहेछ र विचार ? भो, धेरै दुःख पाइयो, महिलाकै कराणले । ओहो, कालाकाला कामुक आँखा, गुलाफ जस्ता राता ओठ, खोपिल्टा परेका गाला, चन्द्रमाको जस्तो आभा, त्यो मन्द गतिको साउती, त्यो कोमलकोमल श्वास...तर अहँ, यस्ता मूले कुराका लागि अब त एक सुक्को फालिन्न जिन्दगीमा । तपाईंको कुरा फरक होला, तर मैले देखेभेटेका अधिकांश महिलाहरू धेकेबाज थिए, दुष्ट थिए, कुरा काट्ने खालका थिए, भित्रैदेखि झुटा, पापी प्रवृत्तिका, घमन्डी, बेकारका कुरा गर्ने, क्रूर र अतार्किक र जहाँसम्म यो कुराको प्रश्न छ । (हरे, भगवान, भन्दै निधार पिट्छ ।) मैले धेरै बोलें, माफ गर्नुहोला । तर कुरा सत्य हो । तपाईंहरूलाई कस्तो पेटीकोट मन पर्छ वा पर्दैन भन्नेबारेमा दशौं तर्क त एउटा भँगेराले पनि दिन सक्छ । कुनै दार्शनिकै चाहिँदैन त्यसका लागि । हेर्दा त आइमाईहरू कविता जस्ता देखिन्छन् : बडो मुलायम, अप्सरा जस्ता, हजार खुसीका अनन्त स्रोत...तर तिनीहरूको मनभित्र चियाएर हेर्‍यो भने गोही पालेका हुन्छन्, गोही । सबैमा उस्तै हो, कुरो । (कुर्सीको पछाडिपट्टि समाउँछ । क्याक्कुरुक गरेर भाँचिन्छ कुर्सी ।) तर सबैभन्दा घिनलाग्दो कुराचाहिँ के भने यो गोहीले, विविध कारणले, आफूभित्रको भावुकतालाई नै प्रमुख हतियार र अग्राधिकार ठान्ने गर्छ । सत्ते । धरोधर्म । बरु म मरिजौं । बरु मलाई उँधोमुन्टे लगाएर झुन्ड्याइयोस् । तर यो आइमाईको जातले साँच्चीकै माया गर्ने भनेको काखे कुकुरलाई मात्रै हो । अरू कसैलाई होइन । प्रेममा परेको बेला, रुनु र ऱ्याल चुहाउनुबाहेक केही गर्न सकिँदैन । एउटा पुरुष, उनीहरूको मायामा तड्पिरहँदा, उनीहरूका लागि सबै खाले त्याग गरिरहँदा उनीहरू के गर्छन्, आफ्नो स्कार्फ खेलाएर बस्छन् र त्यो प्रेमीलाई मनको भन्दा पनि नाकको बल्छीमा पार्ने

प्रयास गरिरहन्छन् । तपाईंका लागि पनि महिला भएर जन्मनु बडो दुर्भाग्यको कुरा भयो, भद्र महिला । तपाईंलाई थाहा छ, महिलाहरूको दुष्ट स्वभाव । अब नढाँटी भन्नुस् त, तपाईंले कुनै त्यस्तो महिला देख्नुभा'छ, जो साँच्चीकै इमानदार, बफादार र आफ्नो कुरोमा दृढ छ ? मलाई थाहा छ, तपाईंले त्यस्तो कुनै पनि महिला देख्नुभा'को छैन । कि अशक्त, कि बुढी महिलाहरू मात्रै अलि इमानदार होलान् । अरू त सबै पिपलपाते । अलि दृढ महिला भेट्नुभन्दा बरु तपाईंले सिङ भएको बिरालो भेट्टाउनुहोला कतै ।

पोपोभा : उसो भए तपाईंका विचारमा, प्रेममा कोचाहिँ इमानदार हुन्छ त, पुरुष ?

स्मिरनोभ : हो, पुरुष ।

पोपोभा : पुरुष । ख्याल होइन ! (हाँस्छिन् ।) हो, पुरुषहरू त साँच्ची नै इमानदार र दृढ नै हुन्छन् हौ, मायामा । (अलि चर्किएर) अब हामी यस विषयमा कुरा गर्न थालि नै सक्यौं भने म तपाईंलाई भन्दिऊँ, पुरुषहरूमा सबैभन्दा इमानदार र दृढ भनेकै मेरो दिवङ्गत लोग्ने थियो । ओहो, कम माया गर्थें म, उसलाई ? जवान र कल्पनाशील नारीले मात्रै गर्न सक्छन्, त्यस्तो गहिरो माया । मैले उसलाई के दिइनँ ? जोवन दिएँ । मेरा सबै खुसी दिएँ । जिन्दगी दिएँ । भएभरको सम्पत्ति पनि दिएँ । मैले उसैले फेरेको श्वास फेरें । पूजा गरें । अनि ? तपाईंले भनेजस्तो "सर्वश्रेष्ठ" त्यसै पुरुषले मलाई के दियो ? धोका । पाइला-पाइलामा धोका । ऊ मरेपछि उसको टेबलको घर्रामा एकपछि एक प्रेमपत्र फेला परे । ऊ जिउँदो छँदा...उफ्, सम्झँदा पनि पारै तातेर आउँछ । मलाई घरमा एक्लै, हाप्तौँसम्म छोडेर कहाँ जान्थ्यो, कहाँ । मेरै आँखाअगाडि अरू आइमाईसँग सम्बन्ध राख्थ्यो र मलाई धोका दिन्थ्यो । उसले मेरो सारा सम्पत्ति पनि नष्ट गरिदियो र मेरा भावनाहरूको खिल्ली उडायो । त्यति हुँदाहुँदै पनि, मैले उसलाई माया गरिरहें । उसप्रति बफादार भइरहें । अहिले पनि हेर्नुस् न । ऊ मरेर गइ नै सक्यो । तरै पनि म उसको सम्झनामा कति इमानदार र सङ्कल्पित छु ? मैले आफैंलाई यिनै चार भित्ताहरूभित्र बन्द गरेर राखेकी छु र मृत्युसम्मै यिनै शोकवस्त्रका भुत्ता लगाएर बस्ने छु ।

स्मिरनोभ : (अट्टाहासपूर्ण हाँसो) भुत्ता ? मलाई थाह छैन र शोकवस्त्रको अर्थ ? शोकमा यसरी चार कोठाभित्र आफैं कैद भएर बस्नुको अर्थ म बुझ्छु । यो बडो रहस्यपूर्ण र काव्यिक कुरा हो । कुनै पुराना फलाम सङ्कलन गर्ने मान्छे वा कुनै कवि, तपाईंको झ्याल हुँदै हिँड्यो भने सोच्दो हो, "यस घरभित्र तिनी रहस्यपूर्ण तवरमा बस्छिन्, आफ्नो मृत लोग्नेको सम्झनामा चार दिवारभित्र आफैंलाई कैद गरेर ।" हामीलाई यस्ता सबै खेलहरू थाहा छ, भद्र महिला ।

पोपोभा : (रिसले चुर भएर) के भन्नुभो ? मलाई त्यस्तो भद्दा आरोप लाउने ?

स्मिरनोभ : आफूलाई जिउँदै कैद गर्नुभा'को कुरा सत्य होला । तर गालाभरि पाउडर पनि त घस्नुभा'को छ ।

पोपोभा : त्यस्तो बोल्ने हिम्मत कसरी गर्नुभो तपाईंले, हैं ?

स्मिरनोभ : त्यतिसारो चिच्च्याउनु बेकार छ, भद्र महिला । म तपाईंको गोठालो होइन । म जे देख्छु, त्यही भन्छु । म आइमाई मान्छे त होइन नि, कुरा बनाउने । म त लागेको कुरा सीधै भनिहाल्ने मान्छे हुँ । त्यसरी कराउनु पर्दैन मलाई ।

पोपोभा : म कहाँ कराएकी छु त ? मलाई एक्लै छोडदिनुस् पो भन्दै छु ।

स्मिरनोभ : पैसा दिनुस् । म गइहाल्छु ।

पोपोभा : दिन्नँ । एक सुका दिन्नँ ।

स्मिरनोभ : हुँदैन । हेरौंला, कसरी दिनुहुन्न ।

पोपोभा : एक फुटेको कौडी दिन्नँ । अब खुरुक्क जानुहोस् यहाँबाट ।

स्मिरनोभ : म न तपाईंको लोग्ने हुँ, न त प्रेमी नै । मेरो अगाडि कुनै स्वाङ पार्नु पर्दैन । (बस्छ ।) मलाई त्यस्तो स्वाङ मन पर्दैन ।

पोपोभा : (रिसले चुर) फेरि बस्नुभो ?

स्मिरनोभ : बसें त ।

पोपोभा : गइहाल्नुस् ।

स्मिरनोभ : मेरो पैसा दिनुस् । ओहो, दिमाग खराब भइसक्यो, आफ्नो त ।

पोपोभा : म तपाईं जस्तो ठिस मान्छेसँग कुनै कुरा गर्न चाहन्नँ । खुरुक्क बाहिर गइहाल्नुस् ।

स्मिरनोभ : जान्नँ ।

पोपोभा : नजाने ?

स्मिरनोभ : नजाने ।

पोपोभा : उसो भए ठिकै छ । (घण्टी बजाउँछिन् । लुकाको प्रवेश ।)

पोपोभा : लुका । यस मान्छेलाई घोक्र्याएर बाहिर लेजाऊ । (लुका स्मिरनोभतिर जान्छिन् ।)

लुका : महाशय, तपाईं आफैं बाहिर जानुहुन्छ कि म...!

स्मिरनोभ : (उफ्रँदै) चुप । तँ को होस्, बिचमा बोल्ने । काटेर टुक्राटुक्रा पारिदिन्छु अहिले ।

लुका : (उसको गला समातेर) हे भगवान् । कस्ताकस्ता, मान्छे पनि । (फ्यात्त बस्छिन्, कुर्सीमा ।)

पोपोभा : खै, दशा ? दशालाई बोलाऊ त । दशा, ए दशा ? पेलागाया ? दशा ? (घण्टी बजाउँछिन् ।)

लुका : कोही छैनन् घरमा । सबै फलफूल टिप्न गएका छन् बारीतिर । मलाई खरो भो । पानी, पानी, पानी ।

पोपोभा : अब तँ खुरुक्क बाहिर निस्की । निस्की जा, राक्षस ।

स्मिरनोभ : हैन, अलि नरमसँग बोल्न आउँदैन ?

पोपोभा : (मुड्की पारेर खुट्टा बजार्दै) : आउँदैन । साला मूर्ख । तँ पिचास होस् । साला जङ्गली । राक्षस ।

स्मिरनोभ : के रे ? के भनिस् रे ?

पोपोभा : तँ राक्षस होस् । पिचास । बुझिस् ?

स्मिरनोभ : (पोपोभाको नजिक जाँदै) मलाई यसरी अपमान गर्ने अधिकार तपाईंलाई कसले दियो, हँ ?

पोपोभा : हो, तेरो अपमान गरें र गर्छु । डराउँछे भन्ठान्या छस् ? राक्षस ।

स्मिरनोभ : अलिअलि शब्द जाल जान्या छु भन्दैमा मलाई यस्तो अपमान गर्न मिल्छ भन्ठान्नुभा'को ? हेरिराख्नोस्, म कसरी लड्छु, तपाईंहरूसँग ।

लुका : भगवान् । कस्तो मान्छे । पानी, पानी ।

स्मिरनोभ : पानी होइन, पिस्तोल ।

पोपोभा : ठुलो मुड्की र साँढेको जत्रो गर्दन देखाउँदैमा डराउँछौं भन्ठान्या छस् ? साला जङ्गली ।

स्मिरनोभ : आउनुस् लडौं । एकएक गरेर आउनुस् । म मेरो अपमान सहदिनँ, आइमाईकै जातले गरेको किन नहोस् । "कमलो जात..." रे । ख्याल कमलो होइन ।

पोपोभा : राक्षस । तँ राक्षस होस् ।

स्मिरनोभ : पुरुषले चाहिँ सबै अत्याचार सहँदै जानुपर्ने, महिलाले जति मात्तिए पनि केही गर्न नमिल्ने भन्ने विचार पुरानो भयो । समानता चाहिने हो भने उत्तिकै लड्न पनि सक्नुपर्‍यो नि । खोजेकै हो ?

पोपोभा : पिस्तोलसँग ? ठिक छ ।

स्मिरनोभ : लु, आओ । म तयार छु ।

पोपोभा : ल, यही बेला । मेरो लोग्नेसँग केही पिस्तोल थिए । पर्ख, म लिएर आउँछु । (बाहिर जान लाग्छिन् तर फेरि फर्किन्छिन् ।) तर, तँ मूलेको टाउकोमा गोली हान्दा, मलाई कुन पो आनन्द हुने हो र ? भो । (केही बेर रोकिन्छिन् र फेरि बाहिरै जान्छिन् ।)

स्मिरनोभ : मैले यो बुढीलाई, कुखुरा भुटेजस्तै भुट्छु गोलीले । मचाहिँ केटाकेटी वा पुलपुलिएको कुकुरको छाउरो हुँ र ? कमलो जात न समलो जात । भुटिदिन्छु ।

लुका : हे भगवान् । हे परमात्मा । (घुँडा मार्छिन्, स्मिरनोभका पाउमा) मालिकनी हजुरलाई बचाउनुस् हजुर । तपाईंले उहाँलाई धेरै धम्क्याइसक्नुभो । अब गोली हान्ने ?

स्मिरनोभ : (सुनेको नसुन्यै गरेर) उनी झगडा गर्छिन् मसँग भने उनको तर्क हो, लैङ्गिक समानताका लागि...समान अधिकारका लागि, मुक्तिका लागि...र त्यस्तैत्यस्तै अरूअरू । दुवै लिङ्ग समान हुन् । यसै सिद्धान्तका आधारमा म उनलाई गोली हान्छु । ओहो, क्या जब्बर आइमाई, गाँठे । ओहो, "तर, तँ मूलेको टाउकोमा गोली हान्दा..." रे । अनुहार पनि रिसले कतिसारो जलेको । गाला पनि कतिसारो भतभती जलेका । तर उसले मेरो चुनौतीलाई स्वीकार गरी । मैले जीवनमा पहिलोपल्ट देखें, एउटी आइमाईले...।

लुका : महाशय, तपाईं कृपा गरेर यहाँबाट गइदिनुहोस् । म तपाईंका लागि पनि भगवान्सँग प्रार्थना गरिदिन्छु ।

स्मिरनोभ : उनी एक जना आइमाई हुन् । त्यो कुरा म बुझ्छु । एक खाँटी महिला । चानचुने, रुन्चेपिन्चे महिला होइनन् । बारुद गाँठे । रकेट । यस्तीलाई मार्नु मेरा लागि पनि पछुतोकै विषय हो हुन त ।

लुका : (रुँदै) सर हजुर, तपाईं यहाँबाट गइदिनुस् ।

स्मिरनोभ : मलाई उनी असाध्यै मन पर्छ । धरोधर्म । उनका गाला खोपिल्टा परेकै भए पनि मलाई मन पर्छ । बरु मेरो ऋण...नतिरे पनि । मेरो रिस उत्रिसकेको छ । ओहो, कस्ती अचम्मकी नारी !

(पोपोभाको पिस्तोल लिएर प्रवेश ।)

पोपोभा : ई, ल्याएँ पिस्तोल । तर युद्ध सुरु हुनुभन्दा अगाडि यो कसरी पड्काउने, तिमीले मलाई सिकाउनुपर्छ । मैले यसभन्दा अगाडि कहिल्यै पिस्तोल समातेकी थिइनँ ।

लुका : प्रभु । मालिकनी हजुरमाथि दया गरिबक्सियोस् । उफ्, उफ् । त्यो घोडावाल र माली पनि कहाँ मरेछन् यही बेला । हैन, कस्तो फसादमा फसियो आज ।

स्मिरनोभ : (पोपोभाको पिस्तोल हेर्दै) हेर्नोस्, पिस्तोल अनेक खालका हुन्छन् । मोर्टिमोर पिस्तोलचाहिँ खास गरी यस्तै दोहोरो खेलका लागि बनेका हुन्छन् । स्मिथ र वेसन रिभोल्भर भन्ने पनि हुन्छन् । तीनपल्टसम्म गोली हान्न सकिन्छ, एकपल्टको भराइले । खतरा हुन्छन्, यिनीहरू । नब्बे रुबलभन्दा कममा त पाइँदैनन् । हेर्नुस् त । ई, यसरी समाउनुपर्छ, रिभोल्भर । (आफैँलाई भन्छ ।) "हेर न आँखा, आँखा । ओहो, कस्ती आकार्षक नारी ।"

पोपोभा : ए, यसरी ?

स्मिरनोभ : हो, त्यसरी । अनि त्यो ट्रिगरमा औँलो राखेर निसाना दाग्नुपर्छ । टाउको अलि पछाडि । हो । हात अलि बाहिर । हँ, ठिक छ । अनि हेर्नुस् त...यो दबाउने, यो । औँलाले । अनि...त्यही हो । बुझ्नुभो ? तर महत्त्वपूर्ण कुरा के भने, हडबाउनु हुँदैन र निसानमा एकदमै ध्यान दिनुपर्छ । हात कँपाउनु हुँदैन ।

पोपोभा : ठिक छ । बाहिरभन्दा त यहीँ, कोठाभित्रै पड्काउन सजिलो होला । बरु पछाडि, बगैँचामा जाऔँ । कसो होला ?

स्मिरनोभ : हुन्छ । जाऔँ न त । तर खबरदार । मैले चाहिँ हावामा पड्काउने हो, गोली । बुझ्नुभो ।

पोपोभा : फेरि । किन हावामा ?

स्मिरनोभ : किनभने, यो मेरो रोजाइ हो ।

पोपोभा : तपाईंलाई डर लागेर हो ? ए, होला । तर महाशय, यो युद्धबाट तपाईं बाहिरिन पाउनुहुन्न । आउनुस्, मसँग । मैले तपाईंको कन्चटमा दुलो नपार्दासम्म मेरो आत्माले शान्ति पाउँदै-पाउँदैन । त्यो कन्चट, जसलाई म भित्रैदेखि घृणा गर्छु । तपाईंलाई डर लागिरहेको छ ?

स्मिरनोभ : हो, मलाई डर लागिरहेको छ ।

पोपोभा : झुट । हैन, किन नलड्ने हँ तपाईं यो युद्ध ?

स्मिरनोभ : किन ? किन ? किनभने...भद्र महिला...मलाई तपाईं असाध्यै मन पर्छ ।

पोपोभा : (हाँस्दै) ओहो, म मन पर्ने ? हैन कुन साहसले भन्नुभो हँ, तपाईंले त्यस्तो ? उः उः त्यो दैलोबाट खुरुक्क बाहिरतिर जाने । खुरुक्क । तपाईंको बाटो त्यतातिर हो ।

स्मिरनोभ : (चुपचाप रिभोल्भरमा गोली भर्छ, टोपी उतार्छ र दैलोतिर जान्छ । आधा मिनटजति त्यहीँ उभिन्छ । उनीहरू चुपचाप एकअर्कालाई हेर्छन् केही बेर । त्यसपछि, केही सङ्कोचका साथ पोपाभा भएतिरै नजिकिन्छ ।) सुन्नुस् । तपाईं अझै मसँग रिसाउनुभा'छ ? त्यसो हो भने म निकै दुःखी छु, तपाईंसँग । तर...तपाईंले बुझ्नुपर्ने हो । खै, यो कुरा, म कसरी भनूँ, तपाईंलाई । कुरा के भने, अब भनूँ न, कुरा कसो भने...(उँचो स्वरमा कराउँदै) के मैले तपाईंलाई मन पराउनु मेरो अपराध हो ? (कुर्सीपछाडितिर तान्छ, पोपोभालाई । कन्याक गरेर कुर्सी भाँचिन्छ ।) मरोस्, त्यसका बाउको करङ । हैन, जुन छोयो त्यही पो भाँचिन्छ त हौ, कुर्सी त ? तर भद्र महिला, म तपाईंलाई मन पराउँछु र त्यो साँचो हो । कुरा बुझ्नुभो ? म, म झन्डै तपाईंको मायामा फसिसकेको छु ।

पोपोभा : र म तपाईंलाई घृणा गर्छु, घृणा । तपाईं खुरुक्क जानुस् यहाँबाट ।

स्मिरनोभ : हे भगवान्, के खालकी आइमाई हँ ? मैले त जिन्दगीमा कहिल्यै देखेको थिइनँ यस्ती उदेककी आइमाई । हे भगवान्, म त बरबादै भएँ । फसेँ, फसेँ । म फन्दामा परेँ ।

पोपोभा : अलि पर उभिनुहोस् । म गोली हान्छु, तपाईंलाई ।

स्मिरनोभ : हान्ने भा हान्नोस् । हानिहाल्नोस् । तपाईंलाई के थाहा, तपाईंका ती सुन्दर आँखाकै अगाडि मर्नुमा कति आनन्द हुन्छ । ती मखमली हातले समातेको रिभोल्भरको गालीले मर्नु । आहा ! म पागल भएको छु, भद्र महिला । एकपल्ट सोच्नुस्, अनि निर्णय लिनुस् । तपाईंले गोली चलाइहाल्नुभो भने, म सिद्धिने छु । अनि त्यसपछि कहिल्यै हाम्रो भेट हुने छैन । निर्णय लिइहाल्नुस् । थाहा छ, म एउटा भूमिपति हुँ र टोलछिमेकमा म निकै सम्मानित छु । मेरो वार्षिक आम्दमी मात्र दश हजार रुबलभन्दा कम हुँदैन । आकाशमा फालिएको सिक्कालाई म हावामै गोलीले उडाइदिन सक्छु । मसँग जिल्लाकै सर्वश्रेष्ठ घोडाहरू छन् । के तपाईं मेरी श्रीमती बन्नुहुन्छ ?

पोपोभा : (रिसले बटारिँदै) आइज, खेलौँ । बाहिर आइज । युद्ध गरौँ ।

स्मिरनोभ : म पागल भएको छु । अरू कुरा म केही बुझ्दिनँ । (हम्म, चिच्च्याउँछ ।) पानी, पानी ।

पोपोभा : (चिच्च्याउँदै) आइज बाहिर । आइज । खेलौँ युद्ध आज ।

स्मिरनोभ : पागल । पूरै पागल । म कुनै किशोर जस्तै, मायामा पागल भएको छु । कुनै मूर्ख जस्तै ।

(एक्कासि पोपोभाको हात समाउँछ ।) म तपाईंलाई प्रेम गर्छु, भद्र महिला । (घुँडा टेक्छ ।) मैले विगतमा कहिल्यै कसैलाई यति माया गरेको थिइनँ मैले । मैले बाह्र जना महिलाको मायालाई अस्वीकार गरेको छु । नौ जनाले मेरो मायालाई अस्वीकार गरे । तर मैले तपाईंलाई जति कसैलाई माया गरिनँ । सत्ते । म मैन जस्तै कमजोर छु र पग्लिइरहेको छु । हेर्नुस् न, मैले कुनै मूर्खले झैँ घुँडा टेकिसकेँ, तपाईंको अगाडि । ई, मेरा हात अगाडि बढाउँदै छु आज । विगत पाँच वर्षदेखि मैले कसै अरूलाई माया गरेको भए त मरिजानु । म कसम खान्छु । कसम । तर अहिले, एक्कासि, मलाई कस्तो हर्र माया लागेर आयो, तपाईंको । म पानीबाट निकालिएको माछो जस्तै छटपटाइरहेको छु, पोपोभा । लु, लु...म तपाईंलाई मेरा हात दिन्छु । हुन्छ ? कि हुन्न ? के, तपाईंलाई म मन पर्दिनँ ? ल, ठिकै छ, उसो भए । (जुरुक्क उठ्छ र दैलोतिर जान्छ ।)

पोपोभा : पर्खनुस् ।

स्मिरनोभ : (रोकिएर) किन र ?

पोपोभा : किन पनि होइन । जानुस् । तर पर्खनोस् एकैछिन् । भयो जानुस् । मलाई तपाईं पटक्कै मन पर्दैन । तर एकछिन नजानुस् । पर्खनोस् । म कति रिसाएकी छु भन्ने तपाईंलाई थाहा भइदिएको भए... (हातको रिभोल्भर डयाम्मै टेबलमा फ्याँक्छिन् ।) यो बन्दुक समाउँदा-समाउँदा मेरा त हातै सुन्निइसके । (रिसको आवेगमा रुमाल च्यात्छिन् ।) तपाईं किन अझै यहीँ ? बाहिर जानुस् ।

स्मिरनोभ : ल, म हिँडें ।

पोपोभा : जानुस्, जानुस् । (चिच्च्याउँदै) हैन, तपाईं किन जान लाग्नुभो, हँ ? तर भो, जानुस् । मलाई त, रिस पनि कम्ता उठ्या छ र ? मेरो छेउ आउँदै नआउनुस् है, अब । आउँदै नआउनुस् ।

स्मिरनोभ : (नजिक आउँदै) अनि मचाहिँ आफैँदेखि रिसले चुर भएको छु । म त एक अबुझसँग पो प्रेम गरिरा'को रै'छु । यहाँसम्म कि, घुँडै पो टेकेछु । (रिसाएर) तर यो पनि सत्य हो, म तपाईंलाई औधी माया गर्छु । तर यसरी माया गरेर खै, मैले के पाउन खोज्या हो, कुन्नि ? भोलि कुनै पनि हालतमा मैले ब्याज बुझाउनुपर्ने छ । अनि मचाहिँ बेकारको झार फाँड्दै बसिरा'को छु । तपाईं...(पोपोभालाई अँगालो मार्न खोज्छ ।) मेरो आजको मूर्खताका लागि मैले आफैँलाई कहिल्यै माफ गर्न सक्तिनँ ।

पोपोभा : छोड्नुस् मलाई । मबाट टाढा बस्नुस्, बुझ्नुभो ? हटाउनुहोस, ती हात । म तपाईंलाई घृणा गर्छु । आउनुस्, भिडौँ । (दुवै जना केही बेर पिस्तोल ताक्छन् । आँखाको कुरा हुन्छ, आँखैको भाषामा । पिस्तोल बोकेका हात लथ्रक्क भुइँतिर लत्रिन्छन् । उनीहरू अनायासकै नजिक आउँछन् एकअर्काको, अनि लामो चुम्बनमा तल्लीन हुन्छन् ।)

(हातमा बन्चरो लिएर लुकाको प्रवेश । माली पनि हातमा गैंती लिएर आउँछ । ऊसँगै घोडावाल काँटा लिएर र कामदार महिला घोचा लिएर पस्छन् ।)

लुका : (चुम्बनमा लीन दुवैलाई देखेर) हे भगवान् ।

पोपोभा : (आँखा भुइँतिरै) लुका । तबेलामा गएर आज टोबीलाई थप जौ दिनु पर्दैन भन्दिनू । अब टोबीको के काम ?

– पर्दा–

–अनु. महेश पौड्याल

ओभरकोट

निकोलाइ गोगोल ("The Overcoat" by Nikolai Gogol)

पात्रहरू :

- अकाकिभिच बास्माकिन – एक सरकारी क्लर्क (टाइपिस्ट)
- पोट्रोभिच - टेलर मास्टर
- पोट्रोभिचकी स्वास्नी
- इभानोभ - अकाकिभिचकै अफिसका एक सहायक क्लर्क
- कर्मचारी १, २, ३
- जर्नेल
- प्रहरी १, २
- अन्य केही सहरवासी
- एक सहरी महिला

दृश्य : १

स्थान : पुरानो सरकारी आफिसको कुनै पुरानो कार्यकक्ष। टेवल, टेबलमाथि पुरानो टाइपराइटर।

जताततै टालेको, पुरानो, कलरतिर च्यात्तिएको, वाहुलामा पनि कताकति च्यात्तिएको ओभरकोट लगाएर **अकाकिभिच बास्माकिनको** प्रवेश। भित्तोमा "--- विभाग" भनेर लेखिएको छ। उनी प्रवेश गर्दा उनका दुवै हात टाइपराइटरमा खेलेजस्तो गरी चलायमान छन्। यस्तै मुद्रामा, टाइप गरेको अनिभयमा हात हल्लाउँदा उनका ओठ पनि अक्षरहरूको आकार जस्तै विभिन्न आकारमा हल्लिन्छन्। यसै गरी उनी आफ्नो कुर्सीमा बस्छन् र टाइप गर्न थाल्छन्। उनको टाउकोभरि परालका त्यान्द्रा र भुवा देखिन्छन्।

यत्तिकैमा कताबाट हो, फुत्त एउटा कागज फ्याँकिन्छ, अकाकिभिचको कार्यकक्षमा। कसले फ्याँक्यो हेर्दै नेहेरी उनी कागज टिप्छन् र टाइप गर्न थाल्छन्। फेरि फुत्त अर्को कागज फालिन्छ। त्यसलाई पनि त्यसै गर्छन्। बेलाबेला लामो बसाइले ढाड दुखेजस्तो पनि गर्छन्, तर काम जारी रहन्छ।

यत्तिकैमा **तीन जना अन्य कर्मचारी** प्रवेश गर्छन्।

कर्मचारी १ : लौ, हेर न यो अकाकिभिच बास्माकिन! यसको टाउकोभरि परालैपराल। कहिले धागाका त्यान्द्रा हुन्छन्, कहिले के, कहिले के...।

कर्मचारी २ : तिमीहरूलाई थाहा छैन, ऊ सडकमा हिँडदा पनि ट्वाङ-ट्वाङ टाइप गरिरहेको हुन्छ। माथि झ्यालबाट मानिसहरू फोहारमैलो फालिरहन्छन्। त्यो फोहोर यसको टाउकोमा परेको पनि पत्तो हुँदैन विचरा उसलाई। यसको टाउकोमा परेको पराल खान कहिलेकाहीँ घोडाले थुतुनु उसको टाउकाको छेउमा लगेर तातो सास फालेपछि मात्रै झस्किन्छ विचरा। हा हा हा हा...।

कर्मचारी ३ : हा, हा, बिचरा बास्काकिन।

कर्मचारी १ : हा, हा, हा, हा, हा। नाम पनि के हो यस्तो, **अकाकिभिच बास्माकिन**! हा, हा, हा...अचम्मको नाम...अकाकिभिच बास्माकिन।

कर्मचारी २ : थाहा छ, "बास्माक" बाट बास्माकिन भएको हुनुपर्छ। बास्माक भनेको जुत्ता। यसले जुत्ता लाएको छ, हेर त। हा, हा, हा, हा।

कर्मचारी ३ : यसका बाउबाजेले पनि लाउँथे जुत्ता। तीन-चारपल्ट टालेर पनि लाउँथे।

कर्मचारी १ : टालेर लाउने त यिनीहरूको खानदानी प्रवृत्ति नै हो। त्यो "ड्रेसिङ गाउन" हेर न, कति ठाउँ टालेको छ?

अकाकिभिच : (क्रोधित) यो "ड्रेसिङ् गाउन" हैन महाशय, यो ओभरकोट हो, ओभरकोट। बुझ्नुभो?

सबै : हा, हा, हा...ओभरकोट। सतचाउरी ओभरकोट। त्यही सतचाउरी ओभरकोट हेरेर होला, घरबेटी बुढी...।

अकाकिभिच : के घरबेटी बुढी?

कर्मचारी १ : हा, हा । सबैतिर गाइँगुइँ छ । त्यो घरबेटी बूढीसँग...हा, हा, हा...कुरा बुभ्नुभो होला नि । च्यानाकुटी, च्यानाकुटी...।

कर्मचारी २ : बिहे खान पाइने भो, गाँठे ।

कर्मचारी ३ : अनि, त्यो बिहेमा पनि, यही सतचाउरी गाउन लाउने होला...हे हे हे हे हे हे...।

कर्मचारी १ : विचरा अकाकिभिच ! यस्तो हिउँ पर्छ । यही सतचाउरी पनि नलाएर के लाउँछ त, विचरो ! तर यस्ता गाउनले जाडोचाहिँ छेल्छ जस्तो मलाई लाग्दैन ।

कर्मचारी २ : त्यही गाउनले जाडो छलेन भनेर त बिहे गर्न लाको छ घरवेटी बुढीसँग, त्यति थाहा छैन ? हा हा हा हा हा...।

कर्मचारी ३ : ल, मानिलिऊँ हिउँ पऱ्यो । मानिलिऊँ, अकाकिभिचले यही ड्रेसिङ गाउन लगाएको छ । अब, उसले कसरी जाडो छल्छ त ?

कर्मचारी १ : त्यो त हिउँ पारेर हेर्नुपऱ्यो नि ।

सबै जना कागज च्यातेर टुक्रा बनाउँछन्, अनि अकाकिभिचमाथि टुक्रा फाल्दै कराउँछन्, "हिउँ पऱ्यो, अकाकीको टाउकोमा हिउँ पऱ्यो । हिउँ पऱ्यो, सतराउरी कोटमाथि हिउँ पऱ्यो ।" यति भन्दै, ताली बजाउँदै, नाच्दै, गाउँदै, रामाइलो गर्दै उनीहरू बाहिर निस्किन्छन् ।

अकाकिभिच : (रिसले मुरमुरिँदै) "ड्रेसिङ् गाउन" रे । कम्ताका दुःखले सिलाएको आभरकोट हो यो ? गला र कलरमा अलिअलि खुइलिएको त हो नि । (कोट फुकाल्छ, भ्यालको उज्यालोमा हेर्छ । ठाउँठाउँमा पारदर्शी, पातलो ।) यहाँनिर अलि पातलो भएछ । टालेका ठाउँमा त बलियै छ नि । यहाँनिर एउटा टालो हालेर खुट्ने हो भने त चलिहाल्छ नि । पख् । आज साँझ पेत्रोभिचकहाँ गएर सिलाइमाग्छु ।

(सहायक क्लर्क **इभानोभ**को प्रवेश)

इभानोभ : अकाकिभिच, के भयो ? एक्लै भतभताउँदैछौ नि ?

अकाकिभिच : साब, मानवता छैन मान्छेसँग ।

इभानोभ : किन, के भयो त्यस्तो ?

अकाकिभिच : साब, यिनीहरू सधैं मेरो उपहास गर्छन् । ममाथि यतिका कागज च्यातेर फ्याँकेर गए । मेरो घरबेटी बुढीसँग गाइँगुइँ छ रे । म त्यस घरमा बसेको तिस वर्ष भयो । न यिनीहरूले मेरो घर देखेका छन्, न घरवेटी बुढी नै । मेरो नाउँलाई जुत्तासँग जोडेर गए ।

इभानोभ : गर्नु नपर्ने गरेछन्, फटाहाहरूले । ए साँच्ची, तिम्रो नाउँका बारेमा त मलाई पनि सोध्न मन लागेको थियो । के हो त्यो **बास्माकिन** भनेको चाहिँ ?

अकाकिभिच : साब, म हुनेखाने परिवारमा जन्मेको हुँ । मेरा बा पनि अफिसका कर्मचारी थिए । उनको नाउँ **अकाकी बिस्माकिन** थियो । आमाले बाकै नामसँग मिल्ने नाम मलाई राखिदिनुभा' हो । जुत्तासुत्ता केही होइन ।

इभानेभ : ए, फटाहाहरूले बेकारमा उडाएछन्, तिमीलाई ।

अकाकिभिच : साब, सधैं यस्तै हो यहाँ । कसैले कसैको सम्मन गर्दैन । सनाहरू टेर्दै नटेर्ने, ठुलाठालु त ठुलै भइगए, के कुरा गर्नु ? अरू त सहँदै आएको हुँ साव, तर यो ओभरकोटका बारेमा उनीहरूले गरेको टिप्पणी मलाई चित्त बुझेन । सारै चित्त दुख्यो, साव ।

इभानोभ : हैन के भने, त्यस्तो ?

अकाकिभिच : साव, यो 'ड्रेसिङ गाउन' रे, सुत्दा लाउने । ई, हेर्नुस् न । यो 'ड्रेसिङ गाउन' हो त साव ? (खोलेर दिन्छ । इभानोभले त्यो कोट ओल्टाई-पल्टाई हेर्छ ।)

इभानोभ : यहाँनिर अलि पातलोचाहिँ भएको नै रहेछ । यस्तो चिसो छ, ठिहिराउने । जाडो छल्ला त ?

अकाकिभिच : टाल्न लाउँछु साब, पोट्रोभिचलाई । दुई रुबलजतिमा त सिलाइदिइहाल्ला । मोरो सोझो छ । हुन त पहिले ऊ अर्काकोमा काम गर्थ्यो । पछि, कामदारहरूको मुक्ति भएपछि आफ्नै काम थाल्यो । रक्सी नै नाथे त कति धोक्छ कति । नमातेको मौका पारेर भेट्नुपर्छ त्यसलाई । सस्तोमै गरिदिन्छ । त्यसकी श्रीमतीले थाहा पाई भने भोलिपल्ट आउँछे, "हजुर, सारै सस्तो भनेछन्, झुक्किएर । अलिकति थपिदिनुपऱ्यो ।" त्यसलाई त मैले जानेको छु ।

इभानोभ : भइहाल्छ नि । मान्छेलाई कहिलेकाहीं दुःख पर्छ । आखिर जिन्दगी सुखदुःखको कथा न हो । चिन्ता नगर, अकाकिभिच । तिम्रो कुरा बुझ्ने हामी छौं नि । म त तिम्रो भाइ जस्तै त हुँ नि । वरु सुन त । कति त्यो मसिनमा ट्वाक्क-ट्वाक्क पारिरहन्छौ, एकोहोरो । मैले केही कागजपत्र ल्याएको छु, यी हेरेर एउटा राम्रो रिपोर्ट बनाइदेऊ । टाइपमा होइन, हस्ते चाहिएको छ । कापीमा बनाइदेऊ ।

अकाकिभिच : (कागज लिँदै) हुन्छ साब ।

इभानोभ : भोलिसम्ममा त सकिहाल्नेछौं । म अहिले हिँडें ।

अकाकिभिच : हुन्छ साब ।

(इभानोभको प्रस्थान । अकाकिभिच ती कागजपत्र हेरेर हातले कापीमा केही लेख्न खोज्छ । टाइपमा बानी परेका उसका हात टेबलमाथि पटट-पटट गरिरहन्छन् । अन्तमा उसले ती कागज फ्याँक्छ, र पुन: टाइपराइटरमा बसेर अक्षर कुट्न थाल्छ, पटट...पटट...पटट...।

–पर्दा–

दृश्य २

स्थान : पोट्रोभिच दर्जीको सानो कोठा । पोट्रोभिच दर्जी, एकआँखे छ, खाली खुट्टा । सिलाई मसिनको सियोमा धागो उन्ने कोसिस गरिरहेको छ ऊ, तर धागो उन्न सकिरहेको छैन । छेउमा उसकी बुढी, तरकारी केलाउँदै । पर्दाले अलिकति छेलिने ठाउँमा अकाकिभिचलाई दर्शकले देख्छन्, पोट्रोभिचले देख्दैन ।

पोट्रोभिच : त्यसकीमाको त्यान्द्रो ! पटक्कै पो जाँदैन त । खान पनि चोक्टै खायो, त्यसको आन्द्रोले । आइज, लु, पस् पस् पस् पस् पस् पस् पस् पस्...थुक्क, मरिजा, त्यसका बाउको आन्द्रो ।

अकाकिभिच : (सानो स्वर...दर्शकले सुन्ने पोट्रोभिचका लोग्नेस्वास्नीले नसुन्ने गरी) ला, रिसाएको रै'छ मुर्दा । यस्तो बेलामा मारेकाटे घटाउँदैन ज्याला । बुढी भन्थी, यसलाई कि खुसी भा'को बेला समाउनु, कि मातेको बेला । तर अहिले न खुसी छ, न मातेको । भो, फर्किन्छु ।

(अकाकिभिच फर्कन लाग्छ ।)

पोट्रोभिच : अकाकिभिच ? एउटै आँखो भए पनि मेरो दृष्टि तिखो छ । मैले तिमीलाई अघि नै देखिसकें । सियोको दुलो मात्रै हो, मैले मज्जाले नदेख्ने । किन फर्कन लाग्यौ ? केही काम थियो ?

अकाकिभिच : (भित्र आउँदै) खासै केही थिएन, पोट्रोभिच ।

पोट्रोभिच : अनि के हो नि, त्यो हातको ? केही खुद्तु-सिलाउनुपर्ने थियो ?

अकाकिभिच : हैन, खासै...कुरा के भने...भनौं...।

पोट्रोभिच : के हो ? भन न ।

अकाकिभिच : कुरा के भने...यो ओभरकोट...। छ न त नयाँ नै छ...धुलोले अलि पुरानो जस्तो देखिने मात्र हो । बलियो छ...तर यहाँनिर यो कुममा, अनि अर्को कुममा अलिकति खुट्नुपर्ने मात्रै हो...अलिकति मात्रै, छयास्स । धेरै बेरको कामै छैन ।

(पोट्रोभिच कोट हातमा लिन्छ, झ्यालको उज्यालोमा नियालेर हेर्छ । छेउमा राखेको सुर्तीको बट्टा तान्छ, अलिकति सुर्ती माडेर खान्छ, अनि फेरि हेर्छ..निकैबेर गम्छ...अनि बोल्छ...।)

पोट्रोभिच : अहँ, यो टाल्न सकिँदैन । सारै पुरनो ।

अकाकिभिच : (अलिकति हाँसेर) किन नसकिने ? नयैँ छ नि । अलिकति यहाँनिर त हो...यहाँ कुमनिर । ससाना टाला होलान् नि तपाईंसँग । एक-एकओटा टाला लाएर खुट्ने त हो ।

पोट्रोभिच : टाला त जति पनि छन् । तर धागो अडिँदैन । यो कपडा मक्किएको छ । जहाँ खुट्यो, त्यही दुलो पर्छ ।

अकाकिभिच : उसो भए, के गर्न सकिन्छ त ? केही लाएर अलि दरो बनाउन सकिन्छ ? सकिनुपर्ने हो ।

पोट्रोभिच : अहँ, कुनै उपाय छैन । बरु यो च्यातेर मोजा सिलाउनु, जाडोका लागि । ती जर्मनहरूले बनाएका नक्कली मोजाभन्दा यो काइदा । ओभरकोटकै कुरा गर्नुहुन्छ भने नयाँ सिलाउनुको विकल्प देखिँदैन ।

अकाकिभिच : (विचलित) नयाँ ?

पोट्रोभिच : हो, अकाकिभिच ।

अकाकिभिच : अनि नयाँ सिलाउँदा कति लाग्छ ?

पोट्रोभिच : एक सय पचास रुबलभन्दा कममा त बन्दैबन्दैन ।

अकाकिभिच : (चकित) एक सय पचास रुबल ?

पोट्रोभिच : कम्तीमा ।

अकाकिभिच : एक सय पचास रुबल...।

पोट्रोभिच : त्यो कम्तीमा । कलरमा बक्रम लाउने हो भने अलि बढ्छ । रेसमको टोपी जस्तो जोड्ने हो भने त दुई सय रुबलको हाराहारी हुन आउँछ ।

अकाकिचिभ : पोट्रोभिच...कसै गरी यसैलाई टालटुल पारिदिनुस् ।

पोट्रोभिच : त्यो समयको नाश हो, फजुलको हाँजिरा । केही काम छैन यसलाई टालेर ।

अकाकिभिच : (धेरै बेर सोचेर) हुन्छ त हजुर ।

(नि:शब्द प्रस्थान, अकाकिभिचको । पेट्राभिच हेरिरहन्छ उसलाई, झ्यालबाट । फेरि पोट्रोभिच सियो उन्न

थाल्छ, फेरि सक्तैन अनि कराउँछ, "त्यसका बाउको आन्द्रो..." फेरि सुर्तीको बट्टा तनेर अलिकति सुर्ती खान्छ । फेरि सियो उन्न थाल्छ । फेरि अकाकिभिचको प्रवेश ।)

अकाकिभिच : पोट्रोभिच ।

पोट्रोभिच : फेरि फर्केर आयौ? के नयाँ कोट सिउने विचार आयो कि क्या हो? ती, मैले भनेको मनेछौ न ।

अकाकिभिच : पोट्रोभिच, बरु म यो दश कोपेक पनि थप्छु । दुई रुबल, दस कोपेक दिन्छु । मेरो यो कोट जसरी पनि टालिदेऊ । नयाँ कोट सिलाउने पैसा मसँग छैन, पोट्रोभिच...अफिसमा साथीहरू सधैँ उडाउँछन् । जाडो त म जति पनि सहन्छु पोट्रोभिच, तर यो उपहास सहन...(भावुक हुन्छ ।)

पोट्रोभिच : (अलि गम्भीर) त्यो कुरा म बुझ्छु, अकाकिभिच । तर धागो अडिने ठावैं छैन । हुने भए म गर्दिनथैं होला र ? यो मैले नै सिलाएको ओभरकोट हो । बिसपल्ट जति त मैले नै टालेको पनि हो । अब त हुँदैन । नयाँ सिलाउनुको विकल्प छैन । म तिम्रा लागि सुन्दर नयाँ कोट सिलाइदिन्छु । मेरो कालिगडीमा विश्वास गर, फरक पर्दैन । आजभोलि चलनचल्तीको फेसनमा सिलाइदिन्छु, गलामा चाँदीको हुक, अन्यत्र चाँदीकै टाँक राखेर ।

अकाकिभिच : (धेरै बेर सोचेर) हुन्छ हजुर । म हेर्छु ।

(अकाकिभिचको प्रस्थान)

पोट्रोभिच : हेर् बुढी । त्यतिसारो गिर्नु पनि हुँदैन क्या । बुझिस् । एक-दुई रुबलका टुक्रे काम लिनै हुन्न । मान्छेले हेप्छन् ।

बुढी : म त्यही त भन्दै छु त । मान्छेहरू म नभा'को मौकामा आउँछन् अनि चौका हानेर जान्छन् । आज पनि म घर नभा'की भए, तिमीले हुन्छ हजुर भनेर त्यो थोत्रो कोट सिउँथ्यौ, बुझ्यौ ?

पोट्रोभिच : सिउने थिइनँ हौ, बुढी । त्यो सिउने ठावैं छैन । धागै अडिँदैन, सबै मक्किएको छ ।

बुढी : के थाहा ? तिम्रो बानी जानेकै हो । अलिकति मन परिलने कुरा कसैले गऱ्यो भने जे पनि गर्छु भन्छौ ।

पोट्रोभिच : कसम गर्दिनँ । त्यसको कोट सिउने ठावैं छैन । बरु त्यो जर्साबको इस्टकोटमा हाल्ने बक्रम सकिएको थियो । जा त, चोकमा गएर त्यति लिएर आइज । ती चाँदीका टाँक पनि ले है दुई-चारओटा ।

बुढी : अब जा भन्छौ भने जानै त पऱ्यो । त्यहाँ म नभा'को बेला पारेर कोही आइहाल्यो भने पनि जसको पायो त्यसको काम नसमाउनू नि ।

पोट्रोभिच : हुन्छ बुढी हुन्छ । गरौँला भनेपछि गरौँला । कतिसारो बास्न पनि सकेको ।

–पर्दा–

दृश्य ३

स्थान : अकाकिभिचको अफिस । अकाकिभिच चिटिक्क परेको कोटमा । टेबलमा उही टाइपराइटर । अकाकिभिचका हात टाइपमै । एक्कासि इभानोभको प्रवेश ।

इभानोभ : हैन ए, अकाकिभिच । यो के हल्ला सुन्छु हँ ? ओहो, हल्ला भनेको त साँच्चीकैको पो रै'छ बा । हैन, कसरी सिलायौ हँ यो ओभरकोट ? बाबाबा । ओहो...चाँदीका टाँक, गलामा मखमलको कलर...हैन कति पऱ्यो हँ ?

अकाकिभिच : दुई सय रुबलको हाराहारी । बडा दुःखले जोहो गरियो, साब । आधा पेट खाएको धेरै भयो । खुत्रुकेमा पनि जम्मा भएछन् चालिस रुबलजति । फेरि यसपाला बिदाको बोनस पनि साठी रुबलको हाराहारी पाइयो । सबै जोडजाड गर्दा पुऱ्याइयो । बिचरा पोट्रोभिचले पनि सस्तै सिलाएको हो । बार रुबल मात्रै लियो । नेभ्स्कीकोमा सिलाएको भए पचहत्तर रुबलभन्दा कममा हुने कुरै थिएन । ऊ मान्छे असल छ । अलि स्वास्नीले बिगार्छे बेलाबेला ।

इभानोभ : लौ राम्रो भो ।

(यतिकैमा तीन कर्मचारीको प्रवेश)

कर्मचारी १ : ओहो, अकाकिभिचज्यू...!

इभानोभ : ओहो, आज त अकाकिभिचज्यू रे । हिजोसम्म तिमीहरू नै होइनौ उनलाई उडाउने ?

कर्मचारी २ : ओहो दाइ पनि, कस्तो कुरा गर्नुहुन्छ भन्या । हामीले त्यति नगरेको भए यो नयाँ ओभरकोट आउँथ्यो ?

कर्मचारी ३ : हो भन्या । हामीलाई पनि थाहा छ नि त्यति कुरा । सधैँ कति त्यही पुरानो सतचाउरी हल्लाइरहने भन्या ?

इभानोभ : तिमीहरू बढी हल्ला नगर । मलाई सब थाहा छ ।

कर्मचारी १ : जे भए पनि नयाँ कोट त आयो नि, दाइ । अब अकाकिभिचले पार्टी त दिनैपर्छ ।

अकाकिभिच : (टाइपबाट हात उठाएर) पार्टी ?

कर्मचारी २ : ल ! पार्टी त दिनुपरिहाल्यो नि ।

अकाकिभिच : यो कुनै नयाँ कोट होइन । पुरानै कोटलाई धोइपखाली गरेको हुँ ।

कर्मचारी ३ : हैन, यो कस्तो पुरानो कोट हो, दश वर्षसम्म यही अफिसमा जागिर खाँदा नदेखिएको ? उम्कन पाइँदैन है, दाइ । आह, पार्टी त खाइन्छ, खाइन्छ ।

कर्मचारी १ र २ : पार्टी त खाइन्छ, खाइन्छ ।

इभानोभ : (एकछिन सोचेर) सुन । अकाकिभिचले भोलि बेलुका पार्टी दिन्छ । म ऊसँग सल्लाह गरेर मनाउँछु । तिमीहरू अहिले जाओ । बरु अरूलाई पनि खबर गर ।

तीनै जना : लौ हुन्छ । लौ है, भोलि पार्टी । अकाकिभिचको नयाँ कोट । भोलि पार्टी है, साथीहो ! सब जना आउनुहोला । अकाकिभिचको नयाँ कोटको पार्टी...। (कराउँदै कराउँदै बाहिर निस्किन्छन्...।)

अकाकिभिच : दाइ, म यो पार्टीसार्टी दिन सक्तिनँ । मैले कति दिन नखाएर यो कोट सिलाएको हुँ । अब यो कोटको पूरा मोलभन्दा महँगो पार्टी म कसरी दिन सक्छु ? मैले त उही पुरानो कोट टाल्दिनँ कति बिन्ती गरेँ पोट्रोभिचलाई । मान्दै मानेन । बाध्य भएर खुत्रुकेका पैसासमेत जोरजाम गरेर यतिको सिलाएको हुँ । म सक्तिनँ दाइ यो पाटीसार्टी । बरु म यो विभागको जागिर नै छोड्छु । भोलिदेखि नै आउँदिनँ म यहाँ ।

इभानोभ : भाइ, मैले त्यो कुरा बुझेको छु । कुरा के भने, भोलि मेरो जन्मदिन हो । पार्टी त म नै दिन्छु । तिम्रो नाउँ पनि जोड्ने हो । कुरा त्यसो । त्यति गरिएन भने यी फटाहाहरूले बसिखान दिँदैनन् ।

अकाकिभिच : (धेरै बेर सोचेर गम्भीर भावमा) साब...।

इभानोभ : हो भाइ । मलाई थाहा छ, गरिबीको राप । मैले पनि यी सबै खेपेर आएको हुँ । सहायक क्लर्क भएपछि मात्रै अलि सास फेरेको हुँ । यो विभागमा तपाईंको कोही छैन भनेर चिन्ता लिनु पर्दैन । म छु नि...।

अकाकिभिच : साब...(अँगालोमा सुँक्कसुँक्क गरेर रुन्छ...।)

–पर्दा–

दृश्य ४

स्थान : मध्यरातको सडक । अकाकिभिच एक्लै हिँडिरहेको छ । नयाँ कोट लाएकै छ । अलि पर, आधा छेलिने गरी एउटा प्रहरी पहरा दिइरहेको देखिन्छ । ऊचाहिँ प्रायः निदाएजस्तो नै देखिन्छ ।

अकाकिभिच : (आफैँसँग) हैन, यही पिटर्सबर्गमा बसेको यत्तिका वर्ष भयो...यो रातको दृश्य कहिल्यै देखेको रहेनछु मैले, हँ । यस्तो चिसोमा राति कहिल्यै बाहिर निस्कन सकिएको भए पो । बल्ल पो गतिलो ओभरकोट आयो र निस्किएँ । हैन, रातभरि बत्ती बालिरहने यत्तिविधि पसल केका हुन् ? गाना-बजाना पनि सुनिन्छ कतैकतै । हैन, यो सहरमा मान्छे रातभरि नाच्छन् कि क्या हो ? लौ हेर...यी तन्नेरीहरू...कस्ता लबस्तरा । हैन यिनीहरूका बाबुआमाले गाली गर्दा रै'नछन् रातभरि यसरी हिँड्दा । बग्गी पनि कति हुन् । बिचरा चालकहरू आफ्ना मालिकलाई घर पुऱ्याउन कुदेका होलान् ।

(यत्तिकैमा ऊ सडकमा हिँडिरहेकी एक युवतीसँग ठोक्किन पुग्छ ।)

युवती : ए, के चाला हो यो ? आँखा छैनन् ?

अकाकिभिच : क्षमा हजुर । रातमा अलि आँखा देखिएन ।

युवती : आँखा देखिएन...। मान्छे पनि कस्ताकस्ता ।

अकाकिभिच : अन्यथा केही हैन हजुर...राति हिँड्ने बानी छैन ।

युवती : हुँ...।

(युवतीको प्रस्थान)

अकाकिभिच : अचम्म छ बा । हैन, यो सहरमा के भा'को यस्तो ? रातिमास केटीहरू एक्लैदुक्लै हिँड्छन् गाँठे ठमाठम । हैन, यो सहर पनि कहाँबाट कहाँ पुगेछ । लौ हेर त । एउटा राम्रो कोट नहुँदा कति कुरा गुमाइँदो रै'छ सडकमा...।

नेपथ्य आवाज : ए, को हो त्यो बरबराउने ? ए...पख्...।

अकाकिभिच : (एकछिन विचार गरेर) आ...मलाई के मतलब । अरूलाई नै भनेको होला...कराइराखोस् । आफूलाई यहाँ कति राति भइसक्यो । फेरि घरबेटी आमैले दैलो खोलिनन् भने सडकको बास । जान्छु ठमाठम ।

नेपथ्य आवाज : ए, पख् भनेको सुनिनस् ? गोली हानिदिऊँ ?

(अकाकिभिच उभिन्छ...पछाडि फर्कन्छ...। यतिकैमा दुईओटा गुन्डाले आएर उसलाई घेरिहाल्छन् ।)

गुन्डा १ : के बरबराइरा'को मध्यरातमा एक्लै ? यो सडक हाम्रो हो, हाम्रो । बुझिस् ? यहाँ हामीलाई नसोधी हावा पनि बग्दैन । कहाँ गएर आएको ?

अकाकिभिच : हजुर...म विभागको कर्मचारी । हाम्रो साथी इभानोभको जन्मदिन थियो आज । त्यसैमा गएर आएको हजुर ...।

गुन्डा २ : कुन विभाग ?

अकाकिभिच : त्यो...त्यो...हाम्रो विभाग, हजुर ।

गुन्डा १ : (कोट समातेर) यो कोट मेरो हो । कहाँबाट ल्याइस् ?

अकाकिभिच : ग्वाँ...।

गुन्डा २ : (घाँटी ङ्याकेर) कराइस कि मरिस्, बुझिस् ।

(दुई जना अकाकिभिचलाई लडाउँछन्, ओभरकोट लुट्छन्...दुईचार लात्ती हान्छन्...अनि जान्छन् । ऊ भुइँमा केहीबेर लडिरहन्छ...निकै बिलौना गर्छ । रोइकराइ गर्छ, गुहार माग्छ, तर कोही आउँदैन । केही बेरमा उठ्छ । कोही छैन वरिपरि । उठेर बिस्तारै त्यो पर उभिएको प्रहरीतिर जान्छ ।)

अकाकिभिच : (रुँदै, बिलौना गर्दै) साब...म लुटिएँ । मेरो नयाँ कोट लुटियो । ती फटाहाहरू यतैबाट भागे । तपाईंले देखेको हुनुपर्ने ।

प्रहरी : मैले देखिनँ । निद्राले केही देखिएन...। हुन त दुई जनाले तपाईंसँग कुरा गरे-गरेजस्तो त केही देख्या हुँ । म त तपाईंका साथी होलान् भन्ठानेर फेरि निदाएछु ।

अकाकिभिच : मेरो नयाँ ओभरकोट । केही गरिदिनुपऱ्यो हजुर ।

प्रहरी : यो रातिमास केही गर्न सकिन्न हेर्नुस् । बरु तपाईं प्रहरी चौकीमा आउनुस्, भोलि । सबै कुरा मिल्छ ।

अकाकिभिच : हैन हजुर...तिनीहरू यतै गएका छन् । टाढा पुगेजस्तो मलाई लाग्दैन । रक्सी गनाउँथ्यो उनीहरूको सासमा । मातेको मान्छे टाढा पुगेको हुन सक्तैन । बरु यसो पिछा गरौं न हजुर । मलाई त पक्क भेटिन्छन् जस्तो लाग्छ ।

प्रहरी : मैले अघि नै भनिनँ ? अहिले केही गर्न सकिन्न । भोलि आउनुस्, चौकीमा । हवलदारसाबलाई भेटेर सबै कुरा भन्नुस् । अहिले जानोस्, जानोस् ।

अकाकिभिच : (निकै बेर अलमलिएर, बाटो लाग्दै) भेट्दिनँ कुनै हवलदार-सबलदार । सीधै कमिसनरलाई नै भेट्छु, जे पर्लाटर्ला । घरबेटी दिदीलाई फोन गरिदिनू भन्छु । धन्न उनले चिनेको मान्छे पऱ्यो र सजिलो हुने भयो । उनकैमा काम गर्ने अन्ना आजभोलि कमिसनरकहाँ सुसारे छिन् रे । चिनजानले काम हुने देश...चिनजान नहुनेको त के हबिगत होला..? उनले भनेअनुसार त कमिसनर अलि दयालु स्वभावकै छन् रे ।

(निरास, अकाकिभिचको प्रस्थान)

—पर्दा—

दृश्य ५

स्थान : अकाकिभिच जर्नेलका घरबाहिर, एक्लै । उही पुरानो कोट, जिउमा ।

प्रहरी २ : कसलाई भेट्न आउनुभो ? के काम थियो ?

अकाकिभिच : हजुर, म जर्नेलसाबलाई भेट्न आएको ।

प्रहरी २ : अहँ, उहाँ बिजी हुनुहुन्छ । आज भेट्न मिल्दैन ।

अकाकिभिच : हैन, यो के कुरा हो ? सुन्नुस्, म हिजो कमिसनरकहाँ पनि गएको थिएँ । उहाँ त सुतिराख्नुभा'छ, अहिले भेट्न मिल्दैन, भोलि आउनुस् भन्यो उनको अर्दलीले । आज बिहान पनि गएको थिएँ । त्यो बेला पनि सुतिराख्नुभा' छ भनेका थिए । फेरि दिउँसो पनि गएँ । फेरि त्यसै । अनि मैले अलि रिसाएर सोधें, "हैन साब, हामीले कमिसनरलाई भेट्नै नमिल्ने हो ? मलाई जसरी पनि भेट्नु छ । म निकै ठुलो विपत्मा छु । जनताको विपत्ती सुन्नै नभ्याउने कमिसनरको के काम ? म पनि उहाँ जस्तै सरकारी कर्मचारी नै हुँ नि आखिर । मैले उजुरी गरिदिएँ भने त अप्ठेरो पर्छ नि । त्यति भनेपछि प्रहरीले बल्ल सोध्यो, "कुन विभागबाट आउनुभा'को ?" मैले भनिदिएँ । अनि बल्ल बोलायो कमिसनरलाई । उनलाई सबै कुरा भनें । अनि त मध्यरातमा किन हिँडेको रे, रक्सी खाएर, वेश्यालय गएर आएको होला रे । म त विरक्तिएर सीधै जर्नेलसाबलाई भेट्छु भनेर आएको ।

प्रहरी २ : कुन विभाग रे ?

अकाकिभिच : हाम्रै विभागबाट हो । जर्नेलसाबलाई थाहा हुनुपर्ने । हेर्नोस्, मैले गुमाउनुपर्ने अब केही छैन, त्यसैले डर पनि छैन । मिल्छ भने भनिदिनुस्, मिल्दैन भने म हिँडें ।

प्रहरी : पख्नुस् । (भित्र पस्छ ।)

अकाकिभिच : (आफैँसँग) हैन, मान्छे पनि कस्ताकस्ता ? जर्नेलकहाँ कुरा पुऱ्याउनै दिँदैनन् बिचौलियाहरूले । अलि थोत्रो–थाम्रो लुगा लगाएकालाई त गन्दै पो गन्दैनन् हो, गाँठे । तर हप्काएपछि वल्ल बज्यो बाजा । अब जानेको छु, मैले ।

(जर्नेलको प्रवेश)

जर्नेल : ए, तपाईं नै हो, मलाई भेट्न आउनुभा' भनेको ?

अकाकिभिच : हो साब । बडो विपत्मा परेँ । कत्रा दुःखले सिलाएको नयाँ कोट, बिच बाटोमा लुटे गुन्डाले ।

जर्नेल : ए, अनि त्यस्तो जावो कुरा उजरी गर्ने हो जर्नेललाई ? फेरि खोइ तपाईंको उजुरी गर्ने प्रक्रिया ? पहिले दर्ता शाखामा जाने र निवेदन दिने । त्यसपछि हेड क्लर्ककहाँ जान्छ । त्यसपछि आवश्यक पऱ्यो भने मकहाँ आउँछ । जानुस्, प्रक्रिया मिलाएर आउनुस् । फजुल मान्छे ।

अकाकिभिच : जर्नेलसाब । तल्लो स्तरको कर्मचरीले पटक्कै काम गर्दैनन् । मैले पनि अफिसमा तिस वर्ष बिताइसकेँ ।

जर्नेल : के रे ? कल्ले भन्यो तपाईंलाई त्यस्तो कुरा ? कोसँग कुरा गर्दै छु भन्ने कुराको हेक्का छ तपाईं ?

अकाकिभिच : छ साब । म जर्नेलसाब सँग कुरा गर्दै छु । मैले पनि सरकारी अफिसमा तिस वर्ष काम गरिसकेको छु । मलाई सब थाहा छ, साब । मैले उजुरी गर्ने सबै ठाउँमा गरिसकेँ । मेरो कोट लुटिँदा तपाईंको एउटा प्रहरी त्यहीं थियो । मैले कति अनुनय गरेँ । निदाइरा'को थियो, केही गरेन । फेरि मैले तपाईंको कमिसनरलाई भेटेँ । उल्टो गाली । त्यही भएर म यहाँ आएको साब ।

जर्नेल : त्यस्ता सानातिना चोरीका काम जर्नेलले गर्दैन बुझ्नुभो ?

अकाकिभिच : बुझेको छु साब । अनि ठुला काम पनि गर्दैन जर्नेलले...यो पनि बुझेको छु । मेरो जाबो कोट फिर्ता ल्याउने ल्याकत रूसको प्रहरीसँग छैन, त्यो कुरा मैले थाहा पाएँ ।

जर्नेल : त्यो थाहा पाएको भए किन आउनुभा'को त यहाँ ?

अकाकिभिच : तपाईंका प्रहरी, तपाईंका हबलदार र कमिसनर, अनि तपाईं आफैँ कति लाचार र निकम्मा हुनुहुन्छ भनेर देखाउन आएको, बुझ्नुभो ?

जर्नेल : के रे ? हामी लाचार र निकम्मा रे । आउट, आउट । यहाँबाट गइहाल । (प्रहरीलाई) ए केटा ! यसलाई लात हानेर उः त्यो गेटमा पुऱ्याएर आइज । साला...लाचार रे...निकम्मा रे...।

(गलहत्याएर अकाकिभिचलाई बाहिर गरिन्छ ।)

–पर्दा–

दृश्य ६

स्थान : पिटर्सबर्गको कुनै चोक । बिचमा लुगाले छोपेको लास । मान्छेको भिडभाड । जाडो निकै छ । सबै मानिस कामिरहेका छन् । एक जना बुढी र अन्य केही छन् ।

बुढी : (पूर्वतिर फर्केर) प्रहरी भाइ...प्रहरी भाइ...सुन्नुस् न । अकाकिभिचलाई बचाउनै सकिएन । अस्पताल लाँदालाँदै यहीं बिते । हामी पाँच घण्टादेखि यहीं छौं । तपाईंलाई कति बोलाइसकेँ । सुन्नु नै भएन ।

प्रहरी : कसरी सुन्नु ? उः त्यो बाँसघारी छेउमा एउटा फटाहाले ममाथि आक्रमण गऱ्यो । मेरो कोटमाथि झुन्डियो, र भन्यो, "यो मेरो कोट हो, खोल् । यो मेरो कोट हो खोल् ।" चार घण्टा त त्यसैसँग लडेँ । अन्त्यमा कोट चोरेर भाग्यो । यो चिसो सिरेटोमा गर्नु गऱ्यो बज्याले ।

बुढी : हो, यहींनिर अकिकोभिचको कोट पनि चोरी भा'को । तिनै फटाहाले होला ।

प्रहरी : कमिसनर र जर्नेलसाबलाई पनि खबर गरिसकेँ । तुरुन्तै आइपुग्छु भनेको पनि तीन घण्टा हुन लाग्यो । न कमिसनरसाब आइपुग्नुभो, न तै जर्नेलसाब । (बुढीलाई) ए, तपाईं उहाँकी घरबेटी ? अनि यो सब कसरी भयो, भन्नोस् त ?

घरबेटी बुढी : हिजो मध्यरातमा घर आइपुगे । मैले दैलो खुलै राखेकी थिएँ । तिस वर्ष भयो मेरो घरमा डेरा बसेका...आजसम्म बाहिर बसेको थाहा थिएन । ओहो, जिउ पूरै तुसारोले कठयाङ्ग्रिएको । अस्ति राति ओभरकोट चोरी भएछ । कुनचाहिँ भाते प्रहरीलाई उजुरी गर्दा सुतिरा'थेँ भन्यो रे । कमिसनरलाई भेट्न गए । कमिसनरले उल्टै गाली गरेर पठाएछन् । फेरि जर्नेललाई भेट्न गए । जर्नेलले पनि लात मारेर गेटबाट फ्याँकेका रे । फर्कंदा चिसोले कठयाङ्ग्रिका थिए । डाक्टरकहाँ ल्याइपुऱ्याउँदा नपुऱ्याउँदै...।

(यत्तिकैमा पोट्रोभिचको प्रवेश)

पोट्रोभिच : के भएछ ? मैले बिहानैदेखि यहाँ चहलपहल त देखिरा'को । आऊँ भन्ने सोच्दासोच्दै अकिकोभिच आइपुग्यो । दुई-चारओटा ओभरकोट सिलाइदे भन्छ, चाँदीका टाँक हाल् भन्छ, बक्रम हालिदे भन्छ...पागल मोरो । एउटा कोट त कति कर गरेर सिलाइदिएको हुँ, अब चारओटा कोट सिला भन्छ । बल्लबल्ल हिँडचो र यतातिर लागेँ ।

घरबेटी : अकाकिभिच ? कति बजेतिर ?

पोट्रोभिच : अन्त । अहिले । भर्खरै हो । घरै पुगेको छैन । तपाईं निस्कँदा घर पुगिसकेको थियो ?

(यत्तिकैमा अकाकिभिचको कोट चोर्ने दुई गुन्डा पनि लुगलुग काम्दै त्यही आइपुगे ।)

गुन्डा १ : साब, हामीलाई कसैले लुटचो । उः उहाँका घर बस्ने त्यो छ नि ... के रे, त्यो क्लर्क के...त्यसले हाम्रा नयाँ लुगा लुटचो । जाडोमा बिजोग भयो सर । उः त्यहाँ, तपाईंको सेन्ट्री बस्ने ठाउँको ठचाक्कै अगाडि सर । लौन सर, त्यसलाई समाउनुपऱ्यो ।

घरबेटी : कसले रे ? कति बजेतिर ? वाहियात ।

प्रहरी : (घरबेटीलाई) तपाईं चुप लाग्नुस् त एकछिन । (गुन्डालाई) एकछिन पर्खनुस् । मैले मात्रै केही गर्न सक्तिनँ अहिले । यो लास रुँग्नु कि चोर खोज्न जानु ? अहिले कमिसनरसाब आइपुग्नुहुन्छ, अनि कुरा गरौँला ।

(यत्तिकैमा अफिसका तीन कर्मचारी पनि त्यहीं दौडँदै आइपुग्छन् ।)

कर्मचारी १ : (प्रहरीलाई) हेर्नुस् न साब । हाम्रो अफिसको एउटा क्लर्क बहुलाएर हामीले लाएका कोटसोट फुकालिदियो, अनि कुम्लो बनाएर लिएर यतैतिर आयो । उसलाई खेद्दैखेद्दै हामी यहाँसम्म आइपुग्यौं । त्यसलाई समाइदिनुपऱ्यो सर । अकिकाभिच हो उसको नाउँ ?

घरबेटी : के रे ?

प्रहरी : हैन, यो सहरमा के भा'को छ हँ यस्तो ? जो पनि कोट चोरी भो, कोट चोरी भो भन्दै उजुरी गर्न आउँछन् बा । मेरो पनि उही हाल । हैन, यो कोट चोरी गर्ने गिरोह कहाँबाट पस्यो यो पिटर्सबर्गमा ? पर्खनुस्, जर्नेलसाब आइपुग्नुभयो । म उहाँलाई सबै बिन्ती बिसाउँछु ।

(जर्नेलको प्रवेश । पातलो सर्टमा...लुगलुग काम्दै ।)

प्रहरी : (स्यालुट गर्दै) साब, हामी पाँच घण्टादेखि यहाँ लास कुरिरहेका छौं । हजुरको आगमन नभई केही निर्णय लिन सकिएन । साब, यस्तो चिसोमा यस्तो पातलो लुगा ?

जर्नेल : म ? म उः त्यो, तिमी सेन्ट्री बस्ने ठाउँमा तीन घण्टाअगाडि आइपुगेको थिएँ । एउटा मातेको मान्छेले जबरजस्ती बाटो छेक्यो । कस्तो जब्बर हो । कता हो कुन विभागको क्लर्क रे । कस्तो जब्बर । मेरो यो कोटमा झुन्डियो..."मेरो कोट हो... खोल्, मेरो कोट हो, खोल्" भन्छ बा । मेरा केटाहरूले लाठी नै नाथे त कति बजारे-बजारे । तर केही लागेन । जबरजस्ती मेरो कोट खोसेर लग्यो । केटाहरूलाई पनि लखेटचो । केटाहरू खै कता हो, कुलेलम ठोके । मचाहिँ काम्दैओर्दै भए पनि आएँ ।

गुन्डा १ : हो साब, हाम्रो पनि त्यहींनिर कोट लुटियो ।

कर्मचारी १,२,३ : साब, हामी त्यही उजुरी गर्न त आएका, यतातिर ।

प्रहरी : हैन साब, यो सहरमा के भाको ? सबको कोट लुटिएको उजुरी आएको छ । मेरो पनि आज बिहानै लुटियो ।

जर्नेल : त्यसको छानबिन गरौँला । पहिले यो लासको कुरा सल्टाउँ । कसको रे ?

घरबेटी : अकाकिभिचको हो, साब । मेरो घरमा बस्थे । अफिसमा जागिर खान्थे । छोरो जस्तै लाग्थ्यो...(रुन थाल्छिन्...।)

जर्नेल : प्रहरी ! अनुहार उघार त यसको...।

(प्रहरीले अनुहार उघार्छ...।)

एक क्षण सन्नाटा । त्यसपछि "आ...।" गरेर चिच्च्याएर सबै भाग्छन् । घरबेटी बुढी अकाकिभिचको लासलाई पुनः छोपेर स्टेजबाट सुस्त बाहिर निस्किन्छिन् ।

–पर्दा–

अनुवाद : महेश पौड्याल

सैतानको पानी

लियो टल्सटोय ("Imp and the Peasant's Bread" by Tolstoy)

पहिलो अङ्क

कृषक : (जोत्दछ, माथि हेरेर) दुई प्रहर भइसक्यो। गोरुहरूलाई खोल्ने बखत भइसक्यो; टिकटिक, अगाडि बढ, के थाकिसक्यौ? ठीक छ, हिँड, एक पटक अरू घुमेर आऊँ, त्यो नै अन्तिम...हुनेछ र त्यसपछि भोजन। यो राम्रो भयो कि म रोटी आफ्नो साथमा लिएर आएँ। म अब घर जान्नँ र कुवाको किनारामा बसेर रोटी खानेछु एक लोटा चिसो पानी पिएर एकछिन आराम गर्नेछु। तबसम्म कलुवा र ललुवा घाँस चर्नेछन् त्यसपछि फेरि काममा जुटिनेछु र भगवान्ले चाहे भन्यो ठिक समयमा जोताइ खतम भइहाल्छ।

(दूतको प्रवेश, एउटा झाडीको पछाडि लुक्दछ।)

दूत : यो कृषक पनि खुब छ, भद्र मानिस हर बखत भगवान्को नाम लिन्छ। मित्र, अलिकति पर्ख, अहिले तिमी सैतानलाई डाक्न थाल्नेछौ। बस, म यसको रोटी चोरिहाल्छु, केही बेरपछि त्यसलाई नपाएर त्यो त्यसलाई खोज्दै हिँड्नेछ। जब बच्चालाई भोक लाग्नेछ तब ऊ भगवान्लाई बिर्सिहाल्नेछ र गाली दिन थाल्नेछ।

(रोटी उठाइहाल्छ र झाडीको पछाडि लुकेर हेर्न थाल्छ।)

कृषक : (गोरुहरूलाई खोलिदिन्छ) जय भगवान् शरणम् (कपडाको नजिक गएर) मलाई धेरै भोक लागेको छ। श्रीमतीले रोटी त खुब मोटी बनाएकी रहेछिन्। म त सबै खाइदिन्छु। एउटा कनिका पनि छोड्दिनँ। हो। उडिसक्यो। होइन, मैले तन्नामुनि राखेको होउँला। (तन्ना उठाउँछ।) यो के? यहाँ पनि छैन। रोटी के भयो। (तन्ना झट्कार्छ।)

दूत : (झाडीको पछाडिबाट) खोज्दै जाऊ, खोज्दै जाऊ। त्यो मेरो नजिक छ। कृषक (हललाई हटाएर र फेरि तन्ना झट्कारेर) यो त एउटा मात्र छ। बडो गजबको कुरो हो। यतातिर कोही आएन पनि र रोटी गायब भइसक्यो। यदि चरा त्यसलाई खाएको भए केही टुक्रा त जरुर हुन्थ्यो। तर यहाँ त एउटा कनिका पनि छैन। यहाँ कोही आएन, तर पनि कसैले लग्यो। (उठेर हेर्छ।) हेर, अब त्यसले गाली गर्नेछ र सैतानको शरणमा जानेछ।

कृषक : यस्तो लाग्छ, रोटी त अब पाइँदैन। खैर, केही कुरो होइन, म भोकले त मरिहाल्दिनँ। यदि कसैले रोटी लिएको छ भने लिन देऊ, ईश्वर उसको कल्याण गरुन्।

दूत : (थाक्दछ) अरे अभागी कृषक। गाली दिनुको सट्टा भन्छ ईश्वर उसको कल्याण गरुन्। भला यस्ताको साथ कोही के गरोस्!

(कृषक आराम गर्नका लागि पल्टिहाल्छ, हाईहाई गर्न थाल्दछ, ईश्वरको नाम लिएर सुतिहाल्दछ।)

दूत : (झाडीभन्दा बाहिर आइहाल्छ) गफ गर्नेलाई कुरा गर्न खुब आउँछ। उनीहरू भन्छन्- तिमी नर्कमा कृषकहरूलाई राम्रो सङ्ख्यामा लाउँदैनौ। हेर, कति व्यापारी र धनी मानिस र अर्को किसिमको मानिस हूलको हूल यता आउँछन्। तर कृषकहरूको सङ्ख्या कति थोरै छ। अब मलाई कसैले यो बताइदेओस् कि म कसरी यसलाई फसाऊँ। मैले उसको रोटी चोरेको, त्यो भोको थियो, तर पनि उसले गाली गरेन। मलाई थाहा छैन, म के गरूँ? जाऊँ, रिपोर्ट गरूँ।

(जमिनभित्र गायब भइहाल्छ।)

(पर्दा)

दोस्रो अङ्क

(नर्कलोक। सैतानहरूको सरदार सबैभन्दा माथि बसिराखेको छ। उसका मन्त्री केही तल एउटा टेबुलको नजिक छ। टेबुलमाथि लेख्ने सामान छ।

दुवैतिर सन्तरी उभिएका छन् । दायाँतिर पाँच दूतहरू छन्, देब्रेतिर ढोकामा पालेहरू छन् । एउटा सोखिनहरूको दूत बनेर सरदारको सामुनेमा खडा छ ।)

रङ्गिला दूत : तीन वर्षमा २, २०, ००५ मानिसहरूलाई समातेँ, ती सबै मेरा कब्जामा छन् ।

सरदार : राम्रो कुरा हो, धन्यवाद । तिमी जाऊ । (रङ्गिला दूत दायाँतिर जान्छ ।)

सरदार : (मन्त्रीसित) म थाकिसकेको छु । के अहिले धेरै काम बाँकी छ । कसकसको रिपोर्ट आइसक्यो र कसकसको आउन बाँकी छ ।

मन्त्री : (औँलामा गन्न थाल्छ । जसरी जसरी गन्छ, दायाँतरिको दूतहरूतिर इसारा गर्दै जान्छ । जुन दूतको नाम लिइन्छ त्यो दूत सलाम गर्छ ।) अमिरहरूको रिर्पोट आइसक्यो । उसले जम्माजम्मी १, ८, ३६ को सिकार गरेको व्यापारीहरूको दूतले ९, ६४३ लाई फसायो । बाँकीहरूको दूतले ३, ४२३ लाई महिलाहरूको दूतको रिर्पोट पनि हामीले सुनिसक्यौँ ।१, ८६, ३१५ विवाहित महिलाहरू र १७, ४३८ कुमारीहरू । केवल दुई दूत बाँकी छन् । एउटा अमिरहरूको दूत र अर्को कृषकहरूको दूत । फेहरिस्तमा जम्माजम्मी २, २०, ००५ आत्माहरूको सङ्ख्या छ ।

सरदार : राम्रो, तब हामी यस कामलाई आजै गरिहाल्छौं । (पालेसित) उनीहरूलाई आउन देऊ । (अमिरहरूको दूत आउँछ र सरदारलाई नमस्कार गर्छ ।) भन न, कति सफलता भयो ?

अमिरहरूको दूत : (हाँस्दै) मेरो काम बिलकुल दुरुस्त छ । मेरो हातमा यस्तो माल प्राप्त भएको छ कि मैले आफ्नो जीवनभरि प्राप्त गरेको थिइनँ ।

सरदार : के तिमीले धेरै मानिसहरूलाई फसाएको छ ?

अमिरहरूको दूत : सङ्ख्या त धेरै छैन । केवल १,३५० मानिसहरू छन् तर सबै एकभन्दा एक । एउटा उनीहरूमा यस्तै छ कि जसलाई देखेर सैतान पनि लजाउन सक्छ । उनीहरू मनिसहरूलाई लुट्न र धोका दिनमा हामीभन्दा पनि बढी चलाख छन् । मैले उनको भित्र एउटा नयाँ कुरो पैदा गरिदिएको छु ।

सरदार : त्यो नौलो कुरो के हो ?

अमिरहरूको दूत : पहिलाको जमानामा वकिल र जजहरूको साथमा रहेर मानिसहरूलाई ठग्ने गर्दथे । अब मैले यस्तो बन्दोवस्त मिलाएको छु कि उनीहरू जजहरूसित अलगिएर पनि काम गर्न सक्छन् । जसले धेरै पैसा दिन्छ, बस उनीहरू उसैको काम गर्दछन् । तिनीहरू यसका निमित्त यति मेहनत गर्छन् कि कुनै कुरा नहोस् । त्यहाँ पनि एउटा भारी मुद्दा खडा गरिदिन्छिन् । वकिल कर्मचारी मिलेर मानिसहरूलाई जुस किसिमवाट धोका दिन्छन् र जालमा फसाउँछन् । त्यस्तो त हामी सैतानहरूले पनि गर्न सक्तैनौं ।

सरदार : राम्रो कुरो, म उनलाई हेर्छु । तिमी जान सक्छौ । (कर्मचारी दूत दायाँतिर जान्छ ।)

सरदार : (पालेसित) राम्रो, अब अन्तिम दूतलाई बोलाऊ । (किसानहरूको दूत रोटी लिएर आउँछ, ऊ भुइँसम्म झुकेर सलाम गर्छ ।)

किसानहरूको दूत : हजुर, म यो काम गर्न सक्तिनँ, मलाई अर्को काम दिनुस् ।

सरदार : कुन ठाउँ छ, तिमी के भनेको ? होसमा आएर कुरा गर । आफ्नो रिर्पोट देखाऊ, यस हप्तामा कति किसानहरू समातेका छौ ?

किसानहरूको दूत : (रुँदै) एउटा पनि छैन ।

सरदार : के, एउटा पनि होइन ? तब तिमी के गरिराखेको ? कता घुमिराखेको त ?

किसानहरूको दूत : म कहीं पनि घुमेको होइन, म दिनभरि जिउज्यान लगाएर कोसिस गरिराखेको थिएँ, तर केही गर्न सकिनँ । यो हेर्नुस्, मैले गएर एउटा किसानको आँखाको सामुन्नेमा अरूको रोटी चोरेँ । त्यो धेरै भोको थियो, तर उसले गाली गर्नुको सट्टा उसले भन्यो, ईश्वर उसको कल्याण गरुन् ।

सरदार : के रे ? तिमी के भटभटाइरहेका छौ ? अलि समालेर कुरा गर । म केही बुझ्दिनँ, के अर्थ न बर्थको कुरा गरिराखेको ?

किसानहरूको दूत : हजुर, हिजो एउटा कृषक खेत जोतिराखेको थियो । मलाई थाहा भइसकेको थियो कि उसले आफूसँग एउटा रोटी लिएर आएको छ र त्यसबाहेक ऊसँग खाने कुरा केही छैन । मैले त्यो रोटी चोरेँ । उसलाई अधिकार थियो, ऊ रोटी चोर्नेलाई गाली गर्न सक्दथ्यो तर उसले गरोस् के ? ऊ भन्छ- 'जसले रोटी लिएको छ, त्यो उसैको हिस्साको थियो ? ईश्वर उसलाई यसो गरोस् ।' मैले त्यो रोटी आफूसँग लिएर आएको छु; ई, हेर्नुस् ?

सरदार : हो र, अनि अर्को कृषक ?

किसानहरूको दूत : यो सबैं एउटै किसिमको छ । मैले

एउटालाई पनि फसाउन सकिनँ ।

सरदार : खाली हात लिएर मेरो सामुन्ने आउने तिम्रो हिम्मत कसरी भयो ? त्यसमाथि यो सडेगलेको रोटी उठाएर आउने ! तिमी मेरो हाँसो उडाउन चाहन्छौ ? तिम्रो यत्रो हिम्मत ! अरे, तिमी त नर्कमा रहेर सित्तै खान चाहन्छौ । अरू सबै कडा मेहनत गर्छन् । (दूतहरूतिर इसारा गर्दै) यिनीहरूमध्ये प्रत्येकले १०,००० या २०,००० ल्याएको छ र कसैकसैले त २,००,००० आत्माहरूलाई नर्कमा घिसारेर ल्याएको छ र एउटा तिमी हौ । जुन खाली हात हल्लाउँदै आइ पुग्या छौ र त्यसमाथि एउटा रद्दी रोटी देखाएर कुरा काटिराखेका छौ । तिमी गफ खुब गर्छौं, काम केही पनि गर्दैनौ । तसर्थ किसान तिम्रो हातबाट फुस्कियो । तर हेर, एक दिन पर्ख, म अहिले तिमीलाई यसको मज्जा चखाउँछु ।

किसानहरूको दूत : हजुर, सजाय दिनुभन्दा पहिला मेरो कुरो सुन्नुस् । ती दूतहरूको काम धेरै सजिलो छ जुन अमिरहरू, व्यापारीहरू, महिलाहरूलाई फसाउनका लागि नियुक्त गरिएका छन् । उनीहरूको बाटोमा कुनै बाधा अड्चन छैन । कुनै अमिरसमेतलाई लालच नदेखाईकन फस्न सकेन । फेरि उसलाई जहाँ पनि लिएर जान सक्छ । व्यापारीहरूको पनि त्यही हालत छ ।

सरदार : रुपियाँ देखाएर उनीहरूलाई लालच बढाइदेऊ र फेरि तिमी आफ्नो अङ्कुशमा ल्याएर उसलाई जता चाहियो उता घुमाउन सक्छौ । महिलाहरूलाई फसाउन भने धेरै सजिलो छ । उनीहरूलाई गर, गहना, कपडा र मिठाई देऊ । फेरि जे चाहन्छौ तिनीहरूसित गरिहाल । तर कृषकहरूको कुरो अर्कै छ । उनीहरूलाई फसाउन असम्भव छ । उनीहरू बिहानदेखि रातिसम्म र कहिलेकाहीं आधारातसम्म काम गरिरहन्छन् । ईश्वरको नाम नलिईकन कुनै पनि काम सुरु गर्दैन । हेरूँ, यस्तो मानिसलाई कसैले कसरी फसाउँछ !

किसानहरूको दूत : मालिक, मलाई किसानहरूको कामबाट अलग गरिदिनुस् ? उनीहरूले गर्दा म आजित भइसकें । त्यसमाथि तपाईंलाई नाराज गरिदिएँ ।

सरदार : अरे कामचोर, तिमी कुरा खुब गर्छौ । अरूको कुरा काटेर के फाइदा ! उनीहरूले मेहनत गरेर मानिसहरूलाई फसाउनका लागि नयाँनयाँ जाल रच्यो । अतः उनीहरूले व्यापारीहरू, महिलाहरूलाई आफ्नो वशमा गरी कर्मचारीहरूको दूतले त एउटा नयाँ तरिका निकालिछाडे । तिमीले पनि कुनै तरिका सोच्नुपर्‍यो । तिमीले गरेको नै के छ ? त्यसमाथि गफ गरिराखेका छौ । किसानहरूको चारैतिर जाल ओछ्याइदेऊ, फेरि उनीहरू कुनै न कुनै जालमा फसिहाल्नेछ । तर तिमी यताउता हिँडिरहेका हुन्छौ र किसानहरूलाई एक्लै छोडिदिएका छौ । अतः उनीहरू त्यति बलियो भइसकेका छन् । उनीहरूलाई आफ्नो खानु-पिउनुसित पनि कुनै मतलब रहेन । यदि यही स्थिति रह्यो भने र उनीहरूले आफ्नी स्वास्नीहरूलाई पनि यही कुरा सिकाइदिए भने ती सबै हाम्रो हातबाट फुत्किसक्छन् । कुनै नयाँ कुरा निकाल र कुनै न कुनै तरिकबाट उनीहरूलाई फसाऊ ।

किसानहरूको दूत : मेरो त बुझाइमा कुनै कुरा आउँदैन, म के गरूँ ? तपाईं मलाई बरखास्त गरिदिनुस् । यो काम अब मबाट हुन सक्तैन ।

सरदार : (रिसाउँदै) हुन सक्तैन ? उसो भए तिमी के चाहन्छौ ? के म गएर तिम्रो काम गरूँ ?

किसानहरूको दूत : हजुर, मबाट यो काम हुन सक्तैन ।

सरदार : हुन सक्तैन ? हो र, एकछिन पर्ख । ए, यहाँ कोही छ ? दूतलाई समातेर कोर्रा हान । (सन्तरी दूतलाई समातेर कोर्रा हान्न थाल्दछ ।)

किसानहरूको दूत : ओ, हो ।

सरदार : अरू हान । किन, केही सोच्यो ?

किसानहरूको दूत : हो-हो, सोचें, सोचेको छु । सोचें ।

सरदार : राम्रो, बताऊ के हो ?

किसानहरूको दूत : मैले एउटा तरिका सोचेको छु । यसबाट ती सबै मेरो वशमा आइहाल्छ । बस, तपाईं मलाई त्यस किसानको मजदुर बन्न जान दिनुस् । तर यो तरिका के हो ? म अहिले बताउन सक्तिनँ ।

सरदार : राम्रो कुरो । तर याद राख, तिमी तीन वर्षको त्यो रोटीवाल गल्तीलाई दूर गरेर उसको बदला लिएनौ भने म तिम्रो हाल बेहाल गरिदिन्छु ।

किसानहरूको दूत : तीन वर्षभित्रमा ती सबै मेरो वशमा आइहाल्छन् ।

सरदार : राम्रो कुरो । तीन वर्षपछि म आफैं आएर हेर्नेछु ।

(पर्दा खस्छ ।)

तेस्रो अङ्क

(खलियानमा अन्नले भरिएका गाडी खडा छन् । दूत मजदूरको भेषमा गाडीबाट अन्न उतारेर दिन्छ र किसान डालोमा भरेर जान्छ ।)

किसान : कति मन भयो ?

मजदुर : छयहत्तर मन भयो । यो सत्तरियौं मनको तेस्रो छ ।

किसान : यो सबै त्यसमा अट्दैन । तेस्रो भकारी पनि भरिसकेको छ ।

मजदुर : धेरै नै खाँदेर भरेको छु ।

किसान : खुब खाँदेर भर ।

किसान : हो, म भर्छु त धेरै खाँदिर (डालो लिएर प्रस्थान) ।

मजदुर : (एक्लै, आफ्नो टोपी उतार्छ, सिङ देखिन थाल्छ ।) उसलाई फर्किन समय लाग्नेछ, तबसम्म म आफ्नो सिङलाई आराम दिऊँ । सिङ उड्दछ र आफ्नो जुत्ता पनि फुकाल्छु । उसको सामुमा त म यसलाई उतार्न पनि सक्तिनँ । (जुत्ता फुकालेपछि कुर्कच्चा देखिन थाल्छ । जँघारमा बसिहाल्छ ।) यो तेस्रो वर्ष हो । अब हिसाब दिने बेला भइसक्यो । अन्न त यति छ कि त्यसलाई राख्ने ठाउँ पनि छैन । बस, त्यसलाई एउटा अर्को कुरो पनि सिकाउन बाँकी छ र तब सरदार स्वयम् आएर मेरो चर्तिकला हेरोस् । म त्यस वेलासम्म उसलाई देखाउने गरी केही चमत्कार गरिराख्नेछु । उसले मेरो रोटीवाला मामिलामा माफ गरिदिनेछ ।

(छिमेकी आउँछ, मजदुर आफ्नो सिङ र कुर्कच्चालाई लुकाउँछ ।)

छिमेकी : राम, राम ।

मजदुर : राम, राम, दाजु राम, राम ।

छिमेकी : तिम्रो मालिक खोइ ?

मजदुर : ऊ अन्नलाई खाँदेर भर्न गएको छ । यो सबै अन्न भकारीमा अट्दैअट्दैन ।

छिमेकी : हे राम । तिम्रो मालिकको भाग्य पनि कति राम्रो छ । अन्न राख्ने ठाउँ पनि भएन । तिम्रो मालिकलाई त यी दुई वर्षमा यति बाली प्राप्त भएको छ कि त्यसलाई देखेर मलाई बडो आश्चर्य लाग्दछ । यस्तो लाग्दछ, मानौं कसैले उसलाई भविष्यको हाल बताइदिएको छ । गत साल पानी प्रशस्त परेन, उसले तलको जग्गामा बिउ रोप्यो । अरूको फसल त मरिसक्यो त तिम्रो घरमा अन्न नै अन्न भइसक्यो । यस साल राम्रो पानी पऱ्यो उसले बुद्धि पुऱ्याएर जुन जमिनमा बिउ रोप्यो । अरू सबैको अन्न त सडिसक्यो तर तिम्रो बाली राम्रै भयो । दाना कस्तो छ । हेर त, कति ठुलाठुला दाना छन् । (केही दाना उठाएर हातमा राखेर त्यसको तौल हेर्छ र त्यसलाई चपाउन थाल्छ ।)

किसान : (खाली डालो लिएर आउँछ ।) भन्नुस् दाइ, कस्तो छ । राम, राम ।

छिमेकी : दाइ राम, राम । म अहिले तिम्रो मानिससित भनिरहेको थिएँ कि तिमीले कस्तो चतुराइपूर्वक ऋतुलाई विचार गरेर बिउ रोपेको । सबैलाई हेरेर आश्चर्य लाग्दछ । कति अन्नको राशि तिमीलाई प्राप्त भएको छ तिमी त दस वर्षसम्म पनि खान सक्तैनौ ।

किसान : यसका लागि म बेनीप्रति आभारी छु । (मजदुरतिर इसारा गर्दै) यसको भाग्यले गर्दा यो सबै मलाई मिल्यो । गत साल मैले यसलाई जोत्नका लागि पठाएँ । तर जो यसले तल्लापट्टिको जग्गाबाहेक कहीं कतै खनजोत गरेन । मैले यसलाई हप्काएँ पनि तर उसले मलाई त्यही जग्गामा बिउ छर्ने सल्लाह दिए । मैले त्यस्तै गरें र त्यसको नतिजा धेरै राम्रो भयो । यस साल पनि यसको धारणा ठिक निक्लियो । यस साल उँचो जग्गामा बिउ छरें ।

छिमेकी : यो त यस्तो लाग्छ कि मानौं यसलाई पहिलादेखि नै यसलाई खबर थियो कि यसपल्ट कस्तो पानी पर्नेछ । यसमा कुनै शङ्का छैन । तिमीलाई धेरै अन्न मिलेको छ (चुपचाप) र म तिमीसित एक बोरा अन्न माग्न आएको थिएँ । मेरो अन्न सकियो, अर्को साल फर्काइदिन्छु ।

किसान : हुन्छ, तिमी लिएर जाऊ ।

मजदुर : (किसानलाई मनाही गर्दै) अन्न नदेऊ ।

किसान : धेरै कुरा गर्नु पर्दैन, तिमी लिएर जाऊ ।

छिमेकी : हुन्छ त म बोरा लिएर आऊँ ।

मजदुर : (स्वागत) अहिले आफ्नो पुरानो चालमा हिँडिराखेको छ । अहिले दिनका लागि मनाही गर्दैन । कहिले मेरो भनाइ मान्दैन । तर अलि पर्ख, छिटो नै यसरी दान दिन छोडिदिन्छ । (छिमेकीको प्रस्थान)

किसान : (जङ्घारमा बसेर) कसैलाई आवश्यक छ भने किन नदिने ।

मजदुर : दिनु एउटा कुरा हो, तर दिएपछि अर्को कुरा । मानिसहरू लिन्छन् तर फर्काउँदैनन् । कसैले सही भनेका छन् । देऊ-देऊ सबैले भन्छ, कसैले पनि

फर्काउँदैन । दुनियाँको ढङ्ग हेरेर, चतुर मानिस मूर्ख हुनु हुँदैन ।

किसान : चिन्ता गर्नु जरुरी छैन । मसँग धेरै अन्न छ ।

मजदुर : यसबाट के फरक पर्छ ?

किसान : मसँग धेरै अन्न छ । अर्को फसल नहुन्जेल मात्र होइन, त्यो दुई वर्षसम्म पनि सकिँदैन । मैले के गर्नुपर्ला ?

मजदुर : उसले पनि के गर्छ ? म त यस अन्नसित यस्तो चीज बनाएर तिमीलाई दिन्छु कि तिमी कहिले पनि बिर्सन सक्तैनौ । मैले के गर्नुपर्छ ?

किसान : किन, तिमी के बनाउँछौ यसबाट ?

मजदुर : एक किसिमको रस; यस्तो रस, जुन कि बुढाहरूलाई जवान र दुर्बलहरूलाई बलवान् बनाइदिन्छ भोकोको भोक हर्छ र प्यास, रोगीलाई निरोगी बनाइदिन्छ र रुन्चेलाई हँसाइदिन्छ, काँतरलाई निडर र स्याललाई बाघ । म यस्तो रस तयार गर्छु ।

किसान : कस्तो गफ गरेको ?

मजदुर : गफ गर्छु । जब मैले पोहोर साल तल्लो जग्गामा बिउ छर्नका लागि र यस साल उँचो जग्गामा बिउ छर्नका लागि भनें तब पनि मेरो कुरोमा विश्वास गर्दैनथ्यो । अब मेरो कुरो साँचो लाग्दछ तिमीलाई । यस्तै तिमीले हेर्नेछौ कि यो रस बनाउने कुरो पनि साँचो हुनेछ ।

किसान : तर तिमी रस के चीजले बनाउँछौ ।

मजदुर : यसै अन्नको ।

किसान : तर यसबाट पाप त लाग्दैन ?

मजदुर : हरे, यसको कुरो सुन । पाप किन लाग्छ ? मज्जैमज्जा गर्नका लागि मानिसलाई हरेक चीज दिइएको छ ।

किसान : तर बेनी, तिमीले यो सब कुरा सिक्यौ कहाँबाट ? हेर्दा त तिमी साधारण मानिस जस्तो देखिन्छौ र मेहनती पनि । मैले तिमीलाई यो दुई वर्षभित्र जुत्ता फुकालेको कहिले पनि देखिनँ तर पनि मलाई लाग्दछ तिमीलाई सबै कुराको ज्ञान छ । तिमीले यो सबै ज्ञान कसरी पायौ ?

मजदुर : म देश-देशान्तरमा धेरै घुमेको छु ।

किसान : अनि तिमी भन्छौ यसबाट शरीरमा बल आउनेछ ?

मजदुर : पर्ख एकछिन, फेरि हेर कि पिउनासाथ कति फाइदा हुन्छ ?

किसान : तर त्यसलाई बनाउने कसरी ?

मजदुर : एकपल्ट थाहा पाइसकेपछि फेरि बनाउन मुस्किल छैन । बस, तामाका केही भाँडाकुँडाको आवश्यकता पर्छ ?

किसान : त्यो पिउँदा पनि स्वादिलो लाग्छ ?

मजदुर : यस्तो मिठो जस्तो मह, एकपल्ट मुखमा लागिसकेपछि त जन्मभर छुट्दैन ।

किसान : यस्तो पो छ कुरो । राम्रो, म आफ्नो छिमेकीको घर जान्छु । ऊसँग केही तामाका भाँडाकुँडा छ । हामीले त्यसलाई प्रयोग गरेर हेर्नेछौं ।

(पर्दा खस्छ ।)

चौथो अङ्क

खलियानको बीचमा एउटा तामाको बन्द भाँडा एक अर्को भाँडाको साथ आगोमाथि राखिएको छ । अर्को भाँडामा पाइप लगाइएको छ ।

मजदुर : (पाइपको नजिक गिलास लिएर जान्छ र रक्सी पिउँछ ।) मालिक यो रस तयार भइसक्यो ।

किसान : (खुट्टाको औंलाको आड लिएर र बसेर हेर्छ ।) कस्तो गजबको कुरो छ । यसबाट त पानी निस्किरहेको छ । तिमी यस पानीलाई किन निकाल्छौ ?

मजदुर : यो पानी होइन, यो त रस हो ।

किसान : यो यति सफा कसरी भएको छ ? मैले त के ठानेको थिएँ भने अन्नको जस्तो पहेँलो रङको होला । यो त एकदमै पानी जस्तो छ ।

मजदुर : अलिकति यसलाई सुँघ त ।

किसान : आहा, कस्तो मिठो बास्ना आएको ! ल्याऊ, अलिकति चाखेर हेरूँ कि यसबाट कति मज्जा छ । (मजदुरको हातबाट गिलास लिन चाहन्छ ।)

मजदुर : हेर, त्यसलाई नपोख । (पाइप बन्द गरेर चाख्दछ । ओठ चाट्दछ ।) यो तयार छ । ल, यसलाई पिऊ ।

किसान : पहिला बिस्तार-बिस्तार पिउँछ, फेरि मज्जासित पिउन थाल्छ अनि गिलास खाली गरेर दिन्छ । हा, अलिकति अझ थप, भन्न सकिन्न यसको स्वाद कस्तो ?

मजदुर : (हाँसेर) तर मलाई लाग्दछ, तिमीलाई यो मन पर्छ (केही अरू झिक्छ) ।

किसान : (पिउँछ) ओहो, यस्तो छ । आइमाईलाई पनि बोलाउनुपर्छ । ए मुन्नी, यता त आऊ । यो हेर, रस तयार भइसक्यो, छिटो आऊ ।

(आइमाई र सानी केटीको प्रवेश)

आइमाई : के हो, किन यति धेरै कराएको ?

किसान : अलिकति चाखेर त हेर, मैले के हालेको ! (गिलास दिन्छ) सुँघ त, कस्तो राम्रो बास्ना आएको !

आइमाई : (सुँघ्छ) ओहो !

किसान : पिऊ ।

आइमाई : यसले कतै नराम्रो गर्ला कि !

किसान : तिमी त मूर्ख हौ, अलिकति पिएर त हेर ।

आइमाई : हो, यो त राम्रो चीज हो ।

किसान : (केही नशामा) राम्रो चीज हो । अलिकति, पर्ख फेरि के हुन्छ । बैनी, के भन्छ भने यसले अल्छीपना र थकावटलाई एकदमै ठिक गरिदिन्छ । जवान बुढो भइहाल्छ होइन । बुढा जवान हुन्छ । यो हेर, मैले केवल दुई गिलास पिएँ र शरीरमा नयाँ ज्यान आइसक्यो । (लरबराउँछ) हरे ! जब म र तिमी हरेक दिन यसलाई पिउनेछौं, त्यसपछि हामी जवान भइहाल्छौं । आऊ प्यारी (अङ्कमाल गर्छ) ।

आइमाई : हेर, यसले त तिमीलाई एकदम बेकुप बनाइदिएको छ ।

किसान : तिमी त भन्दै थियौ, हामी दुई जना मिलेर अन्न खराब गरिदिएको छ, तर हेर ? हामीले कस्तो राम्रो रस तयार गरेका छौं ? किन, राम्रो छैन ?

आइमाई : यदि बुढोलाई जवान बनाइदिन्छ भने तब वास्तवमा राम्रो हो । हेर न यसले तिमीलाई कस्तो मदमस्त बनाइदिएको छ । आऊ, आऊ यता आऊ, मज्जा, मज्जा छ । (गाउँछ)

"अब हो आपसमा इसारा भइसक्यो
म तिम्रो, तिमी मेरो भइसक्यो ।"

किसान : यो कुरो हो । हेर हामी सबै जवान भइसक्छौं ।

आइमाई : सासूलाई पनि बोलाऊ, किनकि ऊ सधैं दुखी रहनुहुन्छ ।

किसान : (नशामा) हो, आमालाई बोलाऊ, उसलाई र हजुरबालाई पनि बोलाऊ । ओ मुन्नी, दौडेर जाऊ, आफ्नी हजुरआमा र हजुरबालाई बोलाऊ । भन न छिटो आऊ । तिमीलाई फेरि जवान बनाइदिन्छ । हो, छिटो जाऊ । एक, दुई, तीन, जाऊ । तीर जस्तो उडेर जाऊ । (केटी दगुर्छिन् ।) (आइमाईसित) आऊ, एकएक गिलास अरू पिऊँ ।

(मजदुर गिलास भरेर दिन्छ ।)

किसान : (पिउँछ) पहिला त हाम्रो शरीरमा जवानी आयो र फेरि हातमा, अब त खुट्टासम्म पुगिसक्यो । मेरो खुट्टामा ज्वरो आइसक्यो । त्यो त आफैं चल्न थाल्यो । (नाच्न लाग्दछ ।)

आइमाई : (पिउँछे) बेनी, तिमी त ठुलो कारीगर हौ । हँ, अलि सारङ्गी त बजाऊ ।

(मजदुर सारङ्गी लिएर बजाउँछ । किसान र उसकी स्वास्नी नाच्न थाल्छन् ।)

मजदुर : (सामुन्ने रङ्गमञ्चको अगाडि आएर बजाउँछ र ऊतिर हेरेर हाँस्छ र आँखा सन्काउँछ । फेरि ऊ बजाउन बन्द गरिदिन्छ । तर उनीहरू नाचिरहन्छन् ।) तिमी रोटीको बदला चुकाउँछौ । राम्रोसित फसेको छ । अब यसबाट निस्कन सक्तैनौ, सरदार अब जहिले चाह्यो आएर हेर्न सक्छ ।

(एउटी मोटी आइमाई, एउटा धेरै बूढो सेतो कपाल भएको मानिसको प्रवेश ।)

हजुरबा : के मामिला हो ? अरे बहुलाएको हो ? सबै जना काम गरिरहेको छ र तिमी यहाँ नाचिरहेका छौ !

आइमाई : (नाच्दछिन् र ताली बजाउँछिन् ।) वाह रे वाह, वाहे रे वाह (गाउँछे) ममा यदि खराबी छ भने के नराम्रो ?

प्रौढा : अरे ओ हरामी, अहिलेसम्म भान्सा-भात भएको छैन र तिमी यहाँ नाचिरहेकी छयौ !

किसान : आमा, अलिकति हेर्नुस् । यहाँ कस्तो-कस्तो करामत हुन्छ । हामी बुढोलाई जवान बनाउन सक्छौं । यो लेऊ, यसलाई अलिकति पिऊ त ।

प्रौढा : पिउनका लागि कुवाँमा धेरै पानी छ । (सुँघ्छिन्) तर यसमा तिमीले के हालिदिएका छौ ? (गिलास दिन्छ ।)

किसान : ओ आमा, बास्ना कस्तो आउँछ ? पिएर त हेर्नुस् ।

प्रौढा : (चाख्दछिन्) ओहो, तर यो पिएपछि मानिस त मर्दैन ?

आइमाई : यसले तिम्रो शरीरमा नयाँ ज्यान हालिदिन्छ, फेरि तिमीलाई जवान बनाइदिन्छ ।

प्रौढा : झुटो कुरा गर्छौ । (पिउँछ) तर राम्रो छ, हाम्रो सर्बतमा यस्तो मज्जा आउँदैन । यो लेऊ, काका अलिकति तिमी पनि पिऊ ।

(हजुरबा बस्दछ र टाउको हल्लाएर मनाही गर्छ ।)

मजदुर : राम्रो, उनलाई भैगो, तर काकीले त एक गिलास अरु पिउनुपर्छ ।

(प्रौढालाई गिलास भरेर दिन्छ ।)

प्रौढा : बस, यसबाट केही हानि त हुँदैन । ओहो, यसबाट जलन त हुन्छ, तर पिउनमा राम्रो लाग्छ ।

आइमाई : यसलाई पिऊ, फेरि तिमी हेर्नेछौ कि यो तिम्रो नसा-नसामा दौडिन थाल्छ ।

प्रौढा : राम्रो, म पिएर हेर्छु । (पिउँछिन् ।)

आइमाई : के, तिम्रो खुट्टासम्म पुगिसक्यो ?

प्रौढा : वास्तवमा पिउनासाथ शरीरभरि फैलिन्छ र हृदयमा उमङ्ग ल्याउँछ । ल्याऊ, अरू अलिकति थप पिउँछिन् । अहा, अब त म फेरि जवान भइसकें ।

किसान : हेर, मैले तिमीलाई भनेको थिइनँ ?

प्रौढा : (नशामा) अपसोच छ, मेरो लोग्ने अब छैन, नत्र एक पटक फेरि ऊ मेरो जवानीको बहार हेर्ने थियो । (मजदुर बजाउँछ, किसान र उसकी स्वास्नी नाच्दछन् ।)

प्रौढा : (बीचमा आएर) तिमी यसलाई नाच भन्छौ ? हेर, म बताउँछु । (नाच्छ) हेर, यो तरिका हो, पहिला यस्तो फेरि कस्तो, त्यसपछि यस्तो हेर ?

(हजुरबा उठेर भाँडाको नजिक जान्छ र पाइप खोलेर रक्सी खसाल्छ ।)

किसान : (हेरिहाल्छ र आफ्नो हजुरबालाई हप्काउँछ ।) ओ, बूढो स्वाँठ, यो के गरेको ? यस्तो राम्रो चीजलाई बरबाद गरिदियौ । स्वाँठ कहीँको । (उसलाई धक्का दिएर हटाँउछ र पाइपमुनि गिलास लगाउँछ ।) सबै खाली गरिदियौ ।

हजुरबा : यो राम्रो होइन, धेरै नराम्रो हो । ईश्वरले तिमीलाई अन्नको राम्रो बाली दिए, तर तिमीले अन्नलाई सैतानको पानीमा हाल्यौ । यसबाट केही फाइदा भएन, यसलाई छोडिदेऊ । तिमी यसलाई पिउने चीज सम्झन्छौ ? यो आगो हो, आगो । यसले तिमीलाई जलाइदिन्छ । (एउटा बलेको काठले रक्सीलाई जलाइदिन्छ, रक्सी बल्न थाल्यो, सबैले चकित आँखाले हेर्न थाल्छन् ।)

(पर्दा खस्छ ।)

पाँचौं अङ्क

(छाप्रोको भित्री भाग, मजदुर एक्लो छ, उसको सिङ र कुर्कुच्चा देखा पर्छ ।)

मजदुर : अन्न धेरै छ, यति छ कि त्यसलाई राख्नका लागि ठाउँ छैन र जब यसलाई बानी पनि परिसकेको छ । मैले यसबिचमा तीनचोटि रक्सी खसालिदिएको छु । मैले एउटा ठुलो भाँडा भरेर यसलाई लुकाइदिएको छु । त्यो कसैलाई सित्तैमा पिलाउँदैनौं । जब कसैबाट केही काम लिनुपर्‍यो भने बस, अनि उसलाई भने पिलाउँछौं । अनि गाउँका मुखियालाई बोलाएर उसको स्वागत, सत्कार गर, जसबाट उसलाई सम्पूर्ण सम्पत्ति तिमी र तिम्रो हजुरबाको बिच यस किसिमबाट बाँडफाँड गरिदियोस् कि सबै चीजबीज तिमीलाई प्राप्त होस् र उसलाई केही पनि नमिलोस् । आज मेरो तेस्रो वर्ष खतम हुन्छ र मेरो काम पनि पूरा हुन्छ । अब आएर ऊ आफैं हेरोस्, मलाई कुनै कुराको डर-भय छैन ।

(सरदार जमिनभित्रबाट निस्कन्छ ।)

सरदार : म्याद गुज्रिसक्यो । त्यस रोटीवाला गल्तीलाई तिमीले सच्याइहाल्यौ ? मैले तिमीलाई भनेको थिएँ कि म स्वयं आएर हेर्नेछु । के तिमीले ती किसानहरूलाई काबुमा गरिहाल्यौ ?

मजदुर : पूरै किसिमबाट काबुमा गरिसक्यो, तपाईं आफैं यस कुराको फैसला गरिहाल्नुहुन्छ । केही किसान मानिसहरू अहिले यहाँ भेटमा हुन्छन्, तपाई यहाँ माथि लुकेर बसिहाल्नुस् र हेर्नुस् कि तिनीहरू के गर्छन् ! तपाईं पूर्णरूपले सन्तुष्ट भइहाल्नुहुन्छ ।

सरदार : (माथि चढिहाल्छ) हो र, म हेर्छु ।

(किसान र चार बुढा मानिसहरूको प्रवेश पछि-पछि उसकी स्वास्नी आउँछिन् । मानिसहरू बस्दछन् । आइमाई केही खानेकुरो ल्याएर राख्दछिन् । बुढा मानिस मजदुरसँग भलाकुसारी गर्छ ।)

पहिलो मुखिया : किन, के तिमीले यो रस केही अरू बनाएको हो ?

मजदुर : हो, जति जरुरत हुन्छ मैले सबै निकालिसकेको छु ।

दोस्रो मुखिया : र यो राम्रो बनेको छ ।

मजदुर : ओहो, पहिलाको भन्दा पनि राम्रो छ ।

दोस्रो मुखिया : तर तिमीले यो बनाउन कहाँबाट सिक्यौ ?

मजदुर : दुनियाँमा घुम्दा-फिर्दा मानिस धेरैजसो कुरो सिकिहाल्छ ।

तेस्रो मुखिया : हो, तिमी धेरै जान्ने मानिस लाग्दछौ ।

(आइमाई रक्सीको बोतल र गिलासहरू ल्याउँछिन् ।)

किसान : अलिकति चाखेर हेर न ।

(आइमाई बोतलबाट निकालेर गिलास भर्छिन् ।)

आइमाई : यो लेऊ ।

पहिलो मुखिया : (पिउँछ) ओहो, हुन त राम्रो चीज हो । पिउनासाथ नसा-नसामा दौडिहाल्छ । यही त पिउने चीज हो । (बाँकी तीनवटै मुखियाहरू पिउँछन् । सरदार तल ओर्लन्छ । मजदुर गएर उसको नजिक

उभिहाल्छ ।)

मजदुर : (सरदारसित) हेर, अब के तमासा हुन्छ ! म गएर खुट्टाले उसलाई हल्लाइदिऊँ, जसले गर्दा आइमाईको हातबाट रक्सी खसिहाल्नेछ । पहिलोचोटि उसले भोको भएपछि पनि आफ्नी रोटीको परबाह गरेन, तर अहिले हेर्नू, एक गिलास रक्सीका लागि यो कस्तो भ्रगडा गर्छ ।

किसान : हो र, गिलास भरेर एउटा-एउटा सबैलाई देऊ । पहिला मेरो यस मित्रलाई, फेरि हजुरवालाई । (आइमाई गिलास भरेर दिन जान्छ । मजदुर आफ्नो खुट्टा बिचमा अडाइदिन्छ, ठक्कर लागेपछि गिलास खसिहाल्छ ।)

आइमाई : हेर-हरे, यो सबै पोखिसक्यो । हरे स्वाँठ, तिमी किन मेरो बाटोमा आएर बसेको !

किसान : (आइमाईसित) ओहो, कस्तो जङ्गली जनावर जस्तो ! हात त भाँचिसकेको छ र गाली दिन्छ अरूलाई, कस्तो राम्रो चीज भुईंमा खसालिदिएको !

आइमाई : मैले जानाजान खसालेको हुँ र ? आले हेर, म अहिले आउँछु । यस्तो राम्रो रसलाई भुईंमा खसालेको मज्जा चखाउँछु । (मजदुरसित) ओ गधा, तिमी यहाँ के गरिराखेको ? तिमीलाई सैतानले लिएर जाओस् । (आइमाई फेरि गिलास भरेर दिन्छे ।)

मजदुर : (सरदारको नजिक गएर) तपाईंले हेर्नुभो ? पहिला उसले भोको भए पनि आफ्नो रोटी हराए पनि केही भनेन र अब एक गिलास रक्सी खसेपछि त्यो आफ्नी स्वास्नीलाई कुट्न गएको र मलाई तपाईंको नजिक– सैतानको नजिक पठाउँछु भनेको ।

सरदार : यो राम्रो छ, धेरै राम्रो छ । म सन्तुष्ट छु ।

मजदुर : अलिकति पर्खनुस् । उनलाई यो बोतल खतम गर्न दिनुस्, फेरि हेर्नुस्, यी मानिसहरू कस्तो तमासा गर्दछन् । अहिले त एकआपसमा मिठो-मिठो चाकडी चाप्लुसीले भरिएको कुरा गरिराखेका छन् । केही बेरपछि एकअर्कालाई चलाख स्याल जस्तो खुसामद गर्न थाल्नेछन् ।

किसान : हो र, मेरा पुराना मित्रहरू, मेरो मामिलाको सट्टा तपाईंहरूको के राय छ ? मेरो हजुरबा मसँग बस्नुहुन्थ्यो र अहिलेसम्म मैले उहाँलाई खिलाएँ, पिलाएँ । तर अब उहाँ मेरो काकाको साथमा गइसक्नुभएको छ । उहाँ के चाहनुहुन्छ भने आफ्नो सम्पत्ति लिएर मेरो काकालाई दिन चाहनुहुन्छ । तिमी बुद्धिमान हौ । यस कुरामाथि ध्यानपूर्वक विचार गर । तिमी जस्तो मानिस गाउँभरिमा छैन । उदाहरणका लागि तिमी आफूलाई लेऊ । के सबै मानिस भन्दैन कि तिमी मानिसहरूमा सर्वश्रेष्ठ हौ ? र जहाँसम्म मेरो कुरो छ त म साँचो कुरा गर्छु, म त साँचो सोध्छु, तिमीलाई आफ्नो बुबाआमालाई भन्दा बढी चाहन्छु र गिरधारी त्यो त मेरो पुरानो मित्र छ ।

पहिलो मुखिया : (किसानसित) राम्रो मानिससित कुरा गर्न फाइदा छ । यसबाट बुद्धि आउँछ र ज्ञान बढ्छ । तिमी पनि एउटै मानिस हौ । तिम्रो जस्तो अर्को राम्रो मानिस मिल्ने छैन ।

दोस्रो मुखिया : बुद्धिमान र मिलनसार छौं । अतः म तिमीलाई यति चाहन्छु ।

तेस्रो मुखिया : म तिमीलाई धेरै मन पराउँछु । हिजो मात्रै म आफ्नी स्वास्नीलाई भनेको थिएँ ।

चौथो मुखिया : तिमी हाम्रो सच्चा मित्र हौ ।

मजदुर : (सरदारतिर इसारा गरेर) तपाईं सुन्नुहुन्छ ? यो सबै भ्रुटो बोलिरहेको छ । परोक्षमा सबै एकअर्कालाई सोच्ने गर्छन्, तर हेर्नुस्, यस बखत कस्तो कुरा गरिराखेको छ ! स्याल जस्तो आफ्नो पुच्छर हल्लाइराखेको छ र यो सबै यसै रक्सीको करामत हो ।

सरदार : यो चीज त धेरै राम्रो छ । यी मानिसहरू यस्तै भ्रुटो कुरा गर्न थाले भने थोरै दिनमा यो सबै हाम्रो कब्जामा आउनेछ । ठीक छ, म सन्तुष्ट भइसकें ।

मजदुर : अहिलेकति पर्खनुस्, दोस्रो बोतल खतम भएपछि अरू मज्जा आउनेछ ।

आइमाई : (दिन्छे) एक गिलास अरू लिनुस् ।

पहिलो मुखिया : यो धेरै त छैन । हस् त नमस्कार । (पिउँछ) राम्रो मानिसको साथमा पिउनमा आनन्द आउँछ ।

दोस्रो मुखिया : यदि शोकले पिलाउँछ भने पिउनमा के नराम्रो छ र !

तेस्रो मुखिया : जय परमेश्वर !

चौथो मुखिया : यो रस ठिक बनेको छ । आऔं हामीहरू आनन्द मनाऔं (किसानसित) तिमीले केही चिन्ता लिनु पर्दैन । म सबै ठिकठाक पारिदिन्छु । किनकि सबै कुरो मेरो हातमा छ ।

पहिलो मुखिया : तिम्रो हातमा ? होइन, तिम्रो हातमा होइन । बल्कि हामी ठूला मुखियाहरूको हातमा छ ।

चौथो मुखिया : ठुलो मुखिया धेरै मूर्ख छ । जाऊ, तिमी

आफ्नो बाटो तताऊ ।

दोस्रो मुखिया : बेकुपहरू, तिमी के भनिरहेका छौ ?

तेस्रो मुखिया : ऊ साँचो कुरो गरिरहेको छ, किनकि ऊ हामीलाई सेतीमा पिलाइरहेको त छैन । उसको केही काम छ र बडो सजिलोसित बनिहाल्नेछ । बस, तिमी राम्रोसित ख्वाऊ-पिलाऊ र हाम्रो इज्जत गर, किनकि तिम्रो काम अट्केको छ । हाम्रो काम तिमीले गर्दा अड्केको छैन र यदि तिमी मान्दैनौ भने तिमी गधा हौ ।

किसान : र तिमी गधा हौ, गधाको बच्चा हौ र गधाको नाति । तिमी यो के बकिरहेको छ । मलाई धाक देखाउँछौ र सबै भाते हौ, तिमीबाट केही हुने होइन ।

पहिलो मुखिया : तिमी घमन्ड कसमाथि गरिरहेका छौ, समातेर तिम्रो टाउको घुमाइदिन्छु ।

किसान : ल त, हेरौं न, को कसको टाउको घुमाउँछ ।

दोस्रो मुखिया : तिमी आफूलाई बच्चा ठान्छौ भने जाऊ, चुलो भाडामा । म तिमीसित बोल्ने छैन । म जान्छु ।

किसान : (उसलाई समातेर) के तिमी गोष्ठीबाट जान्छौ ?

दोस्रो मुखिया : म जादिनँ, तिम्रो के हक छ ?

दोस्रो मुखिया : यो हक छ, हेर (हिर्काउँछ) ।

किसान : (अरू मानिसहरूसित) अरे दौड, मलाई बचाऊ । (एकअर्कासँग भिड्दछ र सबै एकैसाथ बोल्न थाल्छन् ।)

पहिलो मुखिया : यसको अर्थ के छ भने हामीहरू बडो तमासा गरिराखेका छौं ।

दोस्रो मुखिया : म सब प्रबन्ध गर्न सक्छु ।

तेस्रो मुखिया : हो र, अलिकति अरू पिउनुपर्‍यो ।

किसान : (आइमाईसँग) हेर्नुभो, तपाईंले । ब्वाँसाहरूको रगत उम्लिसकेको छ, अब यिनीहरू मजदुर (सरदारसँग) एक बोतल अरू लिएर आऊ । ब्वाँसोको जस्तो भयङ्कर भइहालेका छन् ।

सरदार : यो चीज वास्तवमा धेरै राम्रो छ । म सन्तुष्ट छु ।

मजदुर : अलिकति अरू पर्खिनुस् । यिनीहरूलाई तेस्रो बोतल पनि खतम गर्न दिनुस्, तब अरू धेरै मज्जा आउनेछ ।

(पर्दा खस्दछ ।)

छैटौं अङ्क

गाउँको गल्ली । दायाँतर्फ केही मानिस किसानको हजुरबासँग बसेका छन् । बेन्चमा केही केटाहरू, केटीहरू र महिलाहरूको झुन्ड । तिनीहरू गाउँदै, बजाउँदै र नाच्दै छन् । झुपडीमा हल्ला खल्लाको आवाज आउँछ र रक्स्याहाहरूको कराएको आवाज । एक बुढो मान्छे निस्केर पियक्कड मानिसहरू जस्तो कराउँछ । किसान बाहिर आउँछ र उसलाई फेरि फर्काएर लिएर जान्छ ।

हजुरबा : ओ हो, यी मानिसहरू कस्ता कुकर्मी छन् । राम्रो, कोही सोचोस् कि योभन्दा बढी अरू के चाहियो ! मानिस सप्ताहभरि मज्जासित काम गरोस् र जब छुट्टी होस् तब घरको र कपडा आदिको सफाइ गरोस् र केही आराम गरेर आफ्नो परिवारका साथ राम्राराम्रा कुरा गरोस् या बाहिर गएर बुजुर्गहरूका साथ धर्म चर्चा गरोस् र यदि बालक या नवयुवक होस् त धेरै हाँसोस् र खेलोस् । यो हेर, ती मानिसहरू खेलिरहेका छन् । तिनीहरूलाई देखेर कति आनन्द आउँछ । यो सबै राम्रो र ठिक छ । छाप्रोभित्रै कराओस् । तर यस किसिमको कुरो । ओहो । यो सबै भयानक । यसबाट मानिस बहकेर कुमार्गमा गएर पर्छ । यो सबै आराम व्यसनको नतिजा हो । (नशामा पियक्कड मानिसहरू छाप्रोबाट बाहिर निस्केर कराउँछन् र केटीहरूलाई समातिहाल्छन् ।)

केटीहरू : छोडिदेऊ, मलाई छोडिदेऊ । अरे, तिमी यो के गरिरहेको ?

केटाहरू : हिँड् त्यस गल्लीमा जाऊँ, यहाँ मानिसहरू थोरै खेल्न दिन्छन् ।
(सबै खेल्ने मानिसहरू गइहाल्दछन् ।)

किसान : (हजुरबाको नजिक जान्छ) अब तिमीले के पायौ ? मुखियाले सबै सम्पत्ति मलाई दिनुहुनेछ । (औंला देखाएर) तिमीलाई त बस यो मिल्नेछ । यो थाहा पाइसकें, तिमीलाई केही मिल्नेवाला छैन । सबै मेरो भागमा आइसक्यो, तिमीलाई केही मिल्नेवाला छैन । सबै मेरो भागमा आउनेछ । मुखिया स्वयं तिमीलाई यो सबै भन्दिछन् । (चारै मुखिया एकैसाथ बोल्दछन् ।)

पहिलो मुखिया : किनकि मलाई थाहा छ, के कुरो छ ?

दोस्रो मुखिया : म सबै जान्दछु किनकि म बडो बुढो हुँ ।

दोस्रो मुखिया : मित्र-मित्र, प्यारा मित्र !

चौथो मुखिया : धेरै कुरा गर्दै हिँड्दथ्यौ, अब बच्चो कसरी फसेको छ ! हेर त, आऊ हामी सबै हिँडौं । (मुखियाहरू एकअर्काको हात समातेर लडबडाउँदै जान्छन् । किसान छाप्रोतिर फर्किन्छ तर लडबडाउँदै

खस्दछ र अनर्गल कुरा गर्न थाल्छ । के भन्छ, केही बुझिँदैन । हजुरबा र त्यो मानिस जसको साथ ऊ कुरा गरिराखेको थियो, जान्छन् । मजदुर र सैतानहरूको सरदारको प्रवेश ।)

मजदुर : देख्नुभो त साब ? अब उसको नशामा सुँगुरको रगत उम्लिरहेको छ र ब्वाँसोबाट सुँगुर बनिसकेको छ ।

(किसानतिर औँलाले इपसारा गरेर) यो देख्यौ, हिलोमा परेको कुकुर जस्तो भुकिरहेको छ ।

सरदार : तिमीले राम्रै गऱ्यौ । पहिला स्याल जस्तो, त्यसपछि ब्वाँसा जस्तो र अहिले सुँगुरको जस्तो, यो त धेरै राम्रो चीज हो । म ठान्दछु कि यो चीज स्याल, ब्वाँसा र सुँगुरहरूको रगतबाट बनेको होला ।

मजदुर : होइन, साधारण खाने-पिउने चीजबाट बनेको छ ।

सरदार : आखिर यसको स्वाद कस्तो छ ? के धेरै राम्रो छ ?

मजदुर : (खल्तीबाट एउटा सिसी झिकेर) यो लिनुस्, अलिकति चाखेर हेर्नुस् ।

सरदार : (पिएर तुरुन्त गाली दिन्छ ।) थु-थु । यो के पिलाइदिएको, के यसैलाई मानिसहरू पिउँछन् ?

मजदुर : हो, हजुर ।

सरदार : यो चीज यिनीहरूबाट कसरी पिउने गरिन्छ ?

मजदुर : (हाँसेर) हजुर, यो नै मज्जा छ । जुन चीज हामी सैतानहरूलाई पनि राम्रो लाग्दैन, त्यसलाई यिनीहरूलाई फसाउनका लागि यसको स्वाद राम्रो बनाएको थिएँ, तर अब त यिनीहरू यसलाई पनि मज्जासित पिउँछन् ।

सरदार : तिमीले यसको नाम के राखेको छ ?

मजदुर : शराब (रक्सी) ।

सरदार : यसको के अर्थ हो ?

मजदुर : हजुर, यो फारसीको शब्द हो, शर र आबबाट मिलेर बनेको छ । यसको अर्थ हुन्छ बदमासको पानी या यो भनूँ 'सैतानको पानी ।'

सरदार : यो त ठिक होइन । 'सैतानको पानी' भनेपछि यसलाई कसले पिउला । मानिसहरूलाई धोका दिएर फसाउनका लागि यसको नाम राख्न चाहिन्थ्यो, 'खुदाब' अर्थात् 'खुदाको पानी ।'

मजदुर : हजुर, डराउने केही कुरो छैन । अहिले दुनियाँमा हाम्रो राजाधिराज सैतानदेवको राज्य हो । आखिर बिचरा खुदा (ईश्वर) लाई कसले वास्ता गर्छ ? तपाईं हेर्नुहोला, ठुलाठुला पढ्या-लेख्या रक्सी (शराब) को व्याख्या गर्नुहुन्छ । उसको प्रशंसामा कविताहरू लेख्नुहुनेछ । सब थाहा हुँदा पनि हुँदैन । पिउनु पनि हुनेछन् । अरूलाई पनि पिलाउनेछन् । यिनीहरूमध्ये त धेरैजसो मर्नुभन्दा पहिला जिउँदै, यसै दुनियाँमा रहँदारहँदै नालाहरूमा खसेर नर्कको पैशाचिक आनन्दको अनुभव गर्नेछन् ।

सरदार : तर यो सबै कसरी हुनेछ ?

मजदुर : मानिसहरूको बुद्धि भ्रष्ट हुनाले ।

मजदुर : यो त धेरै सजिलो छ । बस, आवश्यकताभन्दा धेरै धन प्राप्त गर्नाले ।

सरदार : के भन्छौ ? अलिकति मतलब सम्झाएर भन ।

मजदुर : तपाईंलाई थाहा छ कि नर्क अहिले पनि धनी स्वास्नी, लोग्नेमानिसले भरिएको छ । ठुलाठुला सेठहरू, साहुजीहरू, वकिलहरू, बालिष्टहरू, पदाधिकारीहरू, धनीहरू, जमिनदार र धेरैजसो तहसिलदार धेरैजसो नर्कमा जम्मा हुन्छन् । तर मेहनत, मजदुरी गर्ने किसानहरू धेरै फस्दैन ।

सरदार : यो त ठिक छ । त्यस दिन पनि तिमीले यही भनेको थियौ । तर यसको कारण के छ ?

मजदुर : जबसम्म मानिससँग आवश्यकताअनुसार अथवा आवश्यकताभन्दा कम धन रहन्छ तबसम्म उसको हृदयमा मानवप्रेम र भागवद भक्तिको वास रहन्छ । ऊ अर्काको दुःख जान्दछ । ऊ भोको रहेर पनि आफ्नो रोटीबाट आधा रोटीका साथमा बसेका बटुवासँग बाँडेर खान मन पराउँछ । तर जससँग आवश्यकताभन्दा बढी धन हुन्छ उसको हृदयमा लोभ, मोह र स्वार्थको उदय हुन्छ ।

सरदार : तिम्रो भनाइ ठिक हो ।

मजदुर : हेर्नुस्, पानी जबसम्म बहिरहन्छ, स्वच्छ र विशुद्ध बनिरहन्छ । तर जहाँ उसको प्रवाह बन्द हुन्छ, त्यो फोहोर र दुर्गन्धमय हुन जान्छ । हावा जबसम्म खुल्ला रूपमा भित्र बन्द भएपछि फोहोर हुन जान्छ । यस्तै धन जबसम्म आफ्नो र अर्काको आवश्यकता पूरा गर्नमा लागिरहन्छ, श्रेष्यकर हुन्छ । तर जब त्यो स्वार्थपनाले गर्दा ताल्चाभित्र बन्द रहन्छ, तब नर्कप्रद बन्दछ ।

सरदार : ठिक छ, एकदम ठिक छ ।

मजदुर : मानिस आवश्यकता भएपछि बडो श्रद्धा र भक्तिसित आमाको झैँ लक्ष्मीको पूजा र आराधना गर्दछन् । जब लक्ष्मी आउँछ, भाइ, बहिनी र

छिमेकीहरूका साथ मिलेर खुसी मनाउँछन्। तर यदि लक्ष्मी उनको नजिक धेरै बेरसम्म बस्छिन् तब उनीहरू त्यस ताल्चाको भित्र बन्द गरेर राख्न चाहन्छन्। लक्ष्मी आमाको झैं आफ्ना छोराहरूको दुःख हटाउनका लागि स्वर्गबाट मर्त्यलोकमा उत्रेर आउँछिन् र जब कुनै धूर्त नोकर्नीको झैं त्यसलाई बन्द गर्ने कुचेष्टा गर्छ। तब छोरा-नातिहरूसित त्यो नर्कगामी हुनु अवश्यम्भावी छ।

सरदार : ठिक छ, यदि यस्तो भएन भने त हाम्रो नर्क राज्यलाई ठुलो हानि हुनेछ।

मजदुर : यसमा कुनै शङ्का छैन। त्यसपछि त धनी मानिस लुट्दैन र चोर मानिस चोरी गर्दैन। डाँका पनि लाग्दैन। न हत्यारा हत्या गर्नेछ। त्यसपछि अमिर (धनी) हरूको छोरा अपच रोगबाट मर्दैन। गरिबहरूको बच्चाले भोकबाट तड्पी-तड्पी ज्यान दिँदैनन्। त्यसपछि धनीका स्वास्नीहरू धनको घमन्डमा चुर भएर सतीत्वलाई लुटाउँदै हिँड्छन् र न गरिब आइमाईहरू आफ्नो सतीत्वलाई बेच्नका लागि लाचार हुँदैनन्। फेरि न अर्कोतिर पहाड हुन्छ न अर्कोतिर न धेरैजसो खाडल र न अर्कोतिर नितान्त गरिबी। सबै ठाउँमा हर्ष र आनन्द होस्। यो दुनियाँ नै स्वर्ग बन्छ।

सरदार : साँचो कुरा गर्छौ। हेरक दुनियाँको कुनै मानिस यस रहस्यलाई थाहा नपाओस्। ठिकै भन्दछौ, ठिकै भन्दछौ। म तिम्रो पदोन्नतिको सिफारिस गर्नेछु।

मजदुर : धन, रक्सी र वेश्या। बस, फेरि सबै मानिस त्यस बूढा स्वाँठ मानिसको सम्पूर्ण सन्तान, हाम्रो कब्जामा सम्झ।

सरदार : साँचो, साँचो हो, म तिमीलाई यमदूतहरूको सरदार बनाउने कोसिस गर्नेछु। यमराज महाराजसँग सिफारिस गर्नेछु। आऊ हामी हिँडौं।

(दुवैको प्रस्थान, मजदुर जुँगा मुसार्दै जान्छ।)

(पर्दा)

अनुवादः डा. रामदयाल राकेश

एकाङ्की/चीन (China)

वर्षातबाट ओत

गाओ जिनजियान ("Hiding form the Rain" by Gao Xingjian)

पात्रहरू :

- एक जना सेनानिवृत्त वृद्ध, जसको हातमा एउटा सुटकेस छ, टाउकोमा टोपी तथा खुट्टामा कपडाका एक जोडी जुत्ता छन्।
- स्पष्ट आवाज
- सुमधुर आवाज

(गोधुलीको समय, रुखहरू बिछ्याइएको एउटा बाटोछेउ, सडक निर्माण कार्यमा लागेकाहरूका लागि बनाइएको त्रिपालको एउटा अस्थायी आवास। स्टेजमा सिमेन्टका केही बोरा)

सेवानिवृत्त वृद्ध देखा पर्छन्। यताउति हिँड्छन्, अनुहार पुछ्छन्, टोपी झिक्छन्, रोकिन्छन्, आकाशतिर हेर्छन् र पुनः जमिनतिर हेर्छन्। पातमाथि परेको पानीको आवाज क्रमशः स्पष्ट बन्दै जान्छ। वृद्ध टोपी लाउँछन् र पानीबाट ओत लाग्नका लागि छिटोछिटो सडक किनारको अस्थायी डेरातिर दगुर्छन्। पुनः टोपी झिक्छन्, जुत्ता झट्कार्छन्, आफ्ना हात आफ्नो पिठिउँतिर लान्छन् र आकाशतिर हेर्छन्। स्टेजबाट उज्यालो क्रमशः मधुर हुँदै जान्छ। बाहिर पानी परेको आवाज यथावत् छ। उनी आफ्नो दायाँतिर अवस्थित सिमेन्टको बोरामाथि बस्छन्। उनी एक्कासि उठ्छन्, सुटकेस आफूमुनि राख्छन् र लामो सुस्केरा लिँदै त्यसैमाथि बस्छन्।

दुई जवान किशोरी मञ्चमा कुदिरहेका देखिन्छन्। हाँस्छन् र पानी छल्न उही अस्थायी डेरातिर दगुर्छन्।

स्पष्ट आवाज : हेर-हेर, तेरो आँखाका डिल, तेरो नाकको टुप्पो...उः यहाँ अर्को पनि पानीको थोपा छ।

सुमधुर आवाज : यो त मेरो घाँटीतिर पो बग्यो। यो सब तेरो गल्ती हो। मेरो कपाल पूरै भिज्यो।

स्पष्ट आवाज : यस्तैमा राम्री देखिन्छेस् तँ।

सुमधुर आवाज : वाहियात! तँ कति खराब, हँ?

(सेवानिवृत्त वृद्ध बसेकै अवस्थामा तिनीहरू भएको दिशाबाट अनुहार मोड्छन्। केटीहरू केही बेर हाँसिरहन्छन्।)

स्पष्ट आवाज : तँलाई वर्षा मन पर्छ?

सुमधुर आवाज : पर्छ।

स्पष्ट आवाज : तर निङ दिदीको कपालचाहिँ नभिजा नि।

सुमधुर आवाज : पूरै भिज्दा त क्या मज्जा हुन्छ।

स्पष्ट आवाज : भिजेको कुखुरो जस्तै।

सुमधुर आवाज : भिजेको कुखेरो हुनु पनि त नराम्रो होइन नि।

स्पष्ट आवाज : ए निङ दिदी।

सुमधुर आवाज : ईर्ष्या लाग्यो?

स्पष्ट आवाज : लाग्यो।

(केही छिन हाँस्छन्, छेवैमा सिमेन्टको बोरामाथि बसेको मान्छेलाई देख्दै नदेखी। बसेकै अवस्थामा वृद्ध यताउति फर्कन्छन् र टाउको उनीहरूबाट अर्कैतिर घुमाउँछन्।)

सुमधुर आवाज : कस्तो मूर्खतापूर्ण व्यवहार!

स्पष्ट आवाज : म मूर्खै हुँ। *(उनी आफ्ना हात अर्की केटीको घाँटीवरिपरि बेर्छिन्।)*

(वृद्ध अप्ठ्यारो मानेजस्ता देखिन्छन्। उनी मन्द गतिमा खोक्छन्।)

सुमधुर आवाज : यो मूर्ख चाल बन्द गर्। तँ मलाई काउकुती लाउँदै छेस्। हेर् न, कति सुन्दर छ यो वर्षात! *(अस्थायी डेराबाहिर, वर्षातको पानी साँझको उज्यालोमा चम्किरहेछ, उफ्रिरहेछ। दुई जवान केटी सिमेन्टको बोरामाथि बस्छन्। वर्षा अझै तीव्र बन्छ। सेवानिवृत्त वृद्ध उभिन्छन्, र पुनः बस्छन्, बिस्तारै।)*

स्पष्ट आवाज : निङ दिदी, तिमीलाई थाहा छैन, एकताक वर्षा हेरेको भनेर मेरो आलोचना पनि भएको थियो।

सुमधुर आवाज : वर्षा हेर्दा पनि किन तिम्रो आलोचना गरे तिनीहरूले?

स्पष्ट आवाज : त्यो दिन पनि पानी परेको थियो। प्रदर्शनी कक्षमा थोरै मात्रै आगन्तुक थिए। कक्षमा हामी सबै एउटा बैठकका लागि जम्मा भएको थियौं।

म भने एक्लै, बाहिरै उभिइरहेँ, वर्षा हेरेर। पानी छेउतिरको सिँढीमा पनि पऱ्यो र माथिल्लो खुट्किलोबाट क्रमशः बग्दै तलको खुड्किलोतिर, सानो नदी जस्तो गरेर बग्यो, सेतो, चाँदीको रङमा...।

स्पष्ट आवाज : पारा जस्तै ?

सुमधुर आवाज : हो। कति चम्किला, कति भरभराउँदा थोपा, एकपछि अर्को ! आह, क्या मज्जा आएको नि ! मैले नजिकबाट हेरेँ। जब म कक्षमा प्रवेश गरेँ, हाम्रो टोली नेताले म कहाँ गएकी थिएँ भनेर सोध्यो। मैले भनेँ, म बाहिर पानी हेर्न गएकी थिएँ।

(दुई युवतीहरू एकअर्काको आडमा ढल्किएर खुब हाँस्छन्। वृद्ध आफ्नो सुटकेसबाट बाक्लो काँच भएको चस्मा निकाल्छन् र ध्यानपूर्वक हेर्छन्। उनी निकै उदास देखिन्छन्।)

स्पष्ट आवाज : त्यस बेला सबैले बैठक छोडे र रमाइलो मानेर मलाई हेर्न थाले। भने, "तिमीले किन वर्षात हेरेर बसेँ भनेकी त ? शौचालय गएकी थिएँ भन्नु पर्दैनथ्यो ?"

सुमधुर आवाज : वर्षात हेर्नु क्या सुन्दर काम हो ! तर उनीहरू त्यो बुझ्दैनन्।

स्पष्ट आवाज : हुन त हो, तर हाम्रा हाकिम भन्छन्, "सबै बैठकमा थिए। तर कार्यालय समयभित्र पनि तिमी वर्षात हेरेर बस्यौ।" मैले आफैँमा सोचेँ, "जे भन्नु छ, भन। तर मैले केही अत्यन्त सुन्दर हेरिछाडेँ।"

(फेरि हाँसेको आवाज। सेवानिवृत्त वृद्ध आफ्नो चस्मा पुनः सुटकेसभित्रै राख्छन् र आफूलाई साँझको उज्यालोमा लुकाउँछन्। मञ्चको बत्ती क्रमशः धिमा बन्दै जान्छ।)

सुमधुर आवाज : वर्षातको कुरा गर्दा हेर्ने मान्छेको मनस्थितिमा पनि भर पर्छ। अस्ति, म कामको सिलसिलामा गरिएको भ्रमणबाट फर्केर आउँदै गर्दा...।

स्पष्ट आवाज : *(उनलाई रोक्दै)* ओए, मैले सोचेँ, पानी परेका बेला आकाश धुम्म थियो, छेउको सानो झरनाको चमक छोडेर। एउटा बुढो, लुगाले टाउको छोपेर पानीमा छिटोछिटो दगुरेको दृश्य पनि मलाई निकै रमाइलो लाग्यो।

सुमधुर आवाज : त्यस बेला, हामी कामबाट फर्कंदा, पानी परिरहेको थियो। हाम्रो एकाइले हामीइलाई लिन स्टेसनसम्म कार पठाएको थियो। म विशेष रूपमा खुसी भएकी थिएँ। गमिङ पनि आए...।

स्पष्ट आवाज : को गमिङ ?

सुमधुर आवाज : अस्ति तिमी मलाई भेट्न आउँदा, तिमीले भेटेको होइन र ? त्यो मान्छे क्या, जसले मलाई कुरा गर्नु छ भनेर गेटमै रोकेको थियो नि ! त्यो सुनौलो फ्रेम भएको कालो चस्मा लगाएको मान्छे।

स्पष्ट आवाज : ए, बुझेँ।

सुमधुर आवाज : उसले मलाई भन्यो : "मलाई वर्षात पटक्कै मन पर्दैन। यो धूमिल आकाशले मलाई यति विरक्त बनाउँछ कि म मर्छु जस्तो लाग्छ।" मैले भनेँ, "हो र ? पानी परेको दिन मन झनै प्रसन्न हुन्छ जस्तो लाग्दैन र ?" उसले भन्यो, झरीको दिनमा पटक्कै सहज लाग्दैन। मैले भनेँ, "यो त सारै अचम्मको कुरा भयो।"

स्पष्ट आवाज : यस्ता मानिसहरूसँग संवाद गर्ने कुनै माध्यम हुँदैन।

(वृद्ध मानिस उठ्छन् र त्यहाँबाट हिँड्ने सुरमा आफ्नो सुटकेस बोक्छन्। तर हिचकिचाउँछन्।)

सुमधुर आवाज : एकपल्ट मैले एउटा चलचित्र हेरेँ। त्यो मोदिग्लियानी नाम गरेका एक जना इटालियन चित्रकारका बारेमा थियो। उनी एक यथार्थवादी चित्रकार थिए। उनी कुनै रेनकोट ओढ्दैनथे र झरी परेको बेला भिज्दै हिँड्थे। मलाई लाग्छ, त्यो दृश्य पनि अति प्रिय छ। कतिपय मानिसहरू वर्षात प्रिय छैन भनेर किन भन्दा हुन् ? किन प्रिय छैन वर्षा ? वर्षातको पानीले पखालेपछि भित्र र बाहिर रहेको सबै फोहोर...।

स्पष्ट आवाज : पखालिएर जान्छ।

सुमधुर आवाज : हामी साँचा हुनु र आफैँ जस्ता हुनु भने हामी कति खुसी हुन्थ्यौँ होला !

(वृद्ध हिचकिचाउँदै आफ्नो सुटकेस भुइँमा राख्छन् र अन्त्यमा, उनी पनि बस्छन्।)

स्पष्ट आवाज : मेरो कुरा सुन। मलाई झरीमा हिँड्नु र छातामाथि परेका पानीका थोपाको आवाज सुन्नु ज्यादै रामाइलो लाग्छ। छाता अलि पर सार्नु, हात उठाउनु, पानीका केही थोपा एकपछि अर्को गर्दै अनुहारमा पर्न दिनु, विशेष आनन्ददायी लाग्छ। यदि सबै कपडा फुकाल्न मिल्दो हो र पानीमा भिज्दै हिँड्न सकिँदो हो त, नुहाउँदाको भन्दा पनि धेरै मज्जा हुन्थ्यो होला।

(वृद्ध एक्कासि उठ्छन् र खोक्छन्। उनी जान लाग्छन्, तर फेरि रोकिन्छन्।)

सुमधुर आवाज : सुन। म काममा जानुअघि उनले मलाई एउटा चिठी दिए र यात्राकै क्रममा जबाफ पठाउन

भने । तर मैले एक शब्द पनि लेखिनँ र पछि मलाई देख्दा, उनी निरास भए । मलाई वर्षात मन पर्छ भन्ने उनलाई थाहा थिएन । जति भारी भयो, उति राम्रो, ताकि म काममा नगई घरमै बसिरहन सक्ने छु ।

(वृद्ध आफ्नो टाउको हल्लाउँछन् ।)

स्पष्ट आवाज : पानी परेको वेला चम्किला थोपाहरू क्रिसमस ट्री जस्ता देखिने सल्लाका हाँगाका झुन्डिएका थिए ।

सुमधुर आवाज : मेरो कुरा सुन । पानी परेको दिन बगैंचामा यतायति हिँड्नु पनि आनन्ददायी हुन्छ । बगैंचामा कोही हुँदैन । आफूलाई जे मन लाग्यो, त्यही गर्न सकिन्छ ।

स्पष्ट आवाज : अराजक केटी !

(अँगालो मार्छन् र केही बेर हाँस्छन् । वृद्ध बिस्तारै पछि हट्छन्, केही झुक्छन् र बस्छन् । उनको सुटकेस भुइँमा हुन्छ । अँध्यारोमा उनी अदृश्य हुन्छन् । गाढा अँध्यारोमा वर्षातको आवाज भने निरन्तर छ । गाढा, पहेँलो उज्यालोको घेरा मात्रै देखिन्छ, दुई युवतीका वरिपरि । स्पष्ट आवाज भएकी केटी टाढा भएको जस्तो भान हुन्छ । सुमधुर अवाज भएकी भने सहज र सुस्त सुनिन्छे ।

स्पष्ट आवाज : म अझै सम्झन्छु, म सानी छँदा झरी परेको दिन सधैं सुत्थें । आँखा चिम्लनु कम्ती आनन्ददायी हुँदैनथ्यो ! केही छिन सुतेर उठ्दा झरी रोकिएको हुन्थ्यो । त्यसपछि चराहरूको कलबर सुनिन्थो– चिरबिर चिरबिर र पातबाट पानीको थोपा झरेको सुनिन्थ्यो : तप, तप, तप !

सुमधुर आवाज : अझ कम्बलभित्र सुत्दा भ्यागुता कराएको सुन्थें– टर, टर, टर !

स्पष्ट आवाज : मचाहिँ, कामबाट घर पुग्दा पानी थामिइसकेको हुन्थ्यो । मेरो घिमेकमा एउटा केटो थियो । ऊ बाइकमा हिँड्थ्यो र मलाई घर पुऱ्याइदिन्थ्यो । नजिकै रहेको पोखरीको किनारबाट हिँड्दा, भ्यागुता कराएको सुन्थें– टर, टर, टर । ती सबै ठुलो पेट भएका त्यस्तै खाले भ्यागुता थिए सायद ।

सुमधुर आवाज : थाहा छ, भ्यागुतालाई जति उक्सायो, उति ठुलो हुन्छ उसको पेट ।

स्पष्ट आवाज : हो र ? कति हाँसउठ्दो !

(मञ्चमा सन्नाटा । कसैको हाँसो छैन । मञ्चको नेपथ्यबाट कार गुडिरहेको आवाज आउँछ र त्यसपछि पानी भरिएको खाल्डोबाट गुड्दा आएको छप्ल्याङको आवाज सुनिन्छ । बिस्तारै कारको आवाज मधुरो भएर जान्छ ।)

सुमधुर आवाज : अझै पर्दै छ पानी ।

स्पष्ट आवाज : परोस् । छिटै छ । सडकका बत्ती पनि बलेका छैनन् अझै ।

(अँध्यारोमै, अस्थायी डेरामा पानी चुहिएको आवाज सुनिन्छ । वृद्ध आफ्नो चस्मा लगाएर चुहिएको ठाउँ खोज्छन् । तर पानी चुहिएको अवाज अझै तीव्र बन्दै जान्छ ।)

सुमधुर आवाज : कस्तो पत्याउनै गाह्रो, पानी परेपछि सबै भ्याउँकिरी शान्त हुन्छन् ।

स्पष्ट आवाज : एक्कासि फेरि कराउन सक्थे भने र तिनको आवाज क्या मिठो सुनिन्थ्यो होला !

सुमधुर आवाज : हो नि । मलाई पनि लाग्छ, त्यो आवाज सुन्नमा ज्यादै आनन्द हुन्थ्यो होला । तर पानी रोकिएपछि जब आकाश सफा हुन्छ, ती भ्याउँकिरी भ्याउँभ्याउँ गरेर कराउन थालिहाल्छन् । त्यो वेला निकै झर्को लाग्छ मलाई । लाग्छ, अब भ्याउँकिरीले कराउनु हुन्न । यस वेला किन कराएका ? सामान्यतः म तिमीहरूलाई मन पराउँछु । तर यस बेला यसरी कराउँदा तिमीहरू झर्को लाग्दो सुनिन्नौ ? लाग्छ, यस आवाजले मेरो भ्याउँकिरीप्रतिको धारणा नै नकारात्मक बनाइदिन्छ ।

स्पष्ट आवाज : मलाई त लाग्छ, म अझै पनि यसै गरी रमाउन सक्छु । मलाई यस्तो तुवाँलोपूर्ण वर्षात मन पर्छ– कुहिरोले छोपेको र बादल हावामा उडिरहेको । सोच्छु, म पहाडको टुप्पोमा उभिएकी भए, म यस बादलसरिको वर्षातलाई मलाई पूरै भिजाएर जाने अनुमति दिन्थें...मेरो शरीरलाई छेवैबाट छोएन...।

सुमधुर अवाज : मलाई केही भन्न देऊ ।

स्पष्ट आवाज : भो, दिन्नँ । मलाई अझै केही भन्नु छ ।

सुमधुर आवाज : भन्छु– मैले मोदिग्लियानी हेरें ।

स्पष्ट आवाज : पागल !

सुमधुर आवाज : त्यो कलाकार वास्तवमै पागल हो– त्यस्तो भारी वर्षामा समुद्र किनारमा हिँड्ने, हात फैलाउने र आकाशतिर हेरेर सास फेर्ने...।

(पानीका खाल्डा पार गर्दै गुडेका गाडीको आवाज । केही आइरहेका र केही गइरहेका– समुद्रका ज्वारभाटाको जस्तो आवाज निकाल्दै ! वृद्ध एक्कासि उठ्छन्, दुखेजस्तो मुद्रामा ।)

स्पष्ट आवाज : ऊ वर्षातको पानीले आफूलाई भिजाओस्

भन्ने चाहन्थ्यो । उसको मनभित्र, चित्रले अभिव्यक्त गर्न सक्नेभन्दा धेरै गहिरो पीडा थियो, तर पनि ऊ त्यसो गर्न चाहन्थ्यो । ऊ पागल हुनै लाग्दा उसले मन पराएकी केटी ऊतिर कुदेर आई । पछि, त्यो केटी उसकी श्रीमती भई । त्यस बेला मलाई लाग्यो ऊ मैले मन पराएको पुरुष भएको भए मैले उसलाई कुनै रेनकोट ओढाउने थिइनँ । बरु म आफू पनि उसैसँग पानीमा भिज्ने थिएँ । मलाई लाग्छ, कसैलाई साँच्चीकै माया गर्ने हो भने उसको असली भावना बुझ्नुपर्छ । उसैसँग किनारमा हुनुपर्छ र लहर र झरीले उसलाई...।

(समुद्री लहरको आवाज तीव्र बन्दै जान्छ । वृद्ध असमञ्जसमा देखिन्छन् ।)

सुमधुर अवाज : आहा, क्या सुन्दर ! तर म जब यथार्थबारे सोच्न थालेँ, पुनः शान्त हुन पुगेँ, अन्धकारमा बसेर चलचित्र हेर्न थालेँ ।

स्पष्ट आवाज : कति दिक्कलाग्दो हगि !

(मुसलधार पानी पर्छ । निरास भएका वृद्ध बस्छन्, हातले आफ्नो टाउको समातेर । दर्शकले भने उनको टाउको देख्दैनन् ।)

स्पष्ट आवाज : निङ दिदी, मलाई हिउँ विषेशतः मन पर्छ । म यसलाई लामपुच्छ्रे चरासँग जोडेर हेर्छु । लाग्छ, म अब लाम्मपुच्छ्रेको आवाज सुन्न लागेकी छु । अनौठो छैन त ?

(केटीहरूमाथि गोलाकार बनेर रहेको उज्यालो यस बेला नीलो र झन्झन् उज्यालो हुँदै जान्छ । दुवैका आवाज झन्झन् मधुरा बन्दै जान्छन् । वृद्ध अदृश्य हुन्छन् ।)

सुमधुर आवाज : मलाई पनि हिउँ मन पर्छ । जब जमिनमा हिउँ परेको हुन्छ तर पग्लेको हुँदैन, त्यो यति शुद्ध र सफेद देखिन्छ कि हिउँले भरिएको जमिनमाथि टेक्नु पनि असह्य लाग्छ ।

स्पष्ट आवाज : (*उभिएर*) तर मलाई हिउँले भरिएको जमिनमा हिँड्न असाध्यै मन पर्छ ।

सुमधुर आवाज : मलाई त हिउँमाथि टेकौँ मात्रै होइन, लडीबुडी खेलौँ जस्तो पनि लाग्छ । तर मलाई अरूले पागल भनुन्, त्यो पनि म चाहन्नँ ।

स्पष्ट आवाज : (*त्यसै ठाउँमा, हिँड्दै गरेको अभिनयमा टेक्दै*) मलाई हिउँले भरिएको जमिनमाथि हिँड्न मन पर्छ । यसरी कसैले हिउँमाथि छोडेका डोबहरू गहुँका बालाका झुप्पा जस्ता देखिन्छन् ।

सुमधुर आवाज : (*उभिएर, उनलाई समातेर*) तिमी हिउँले भरिएको जमिनमा लडीबुडी खेल्न मन पराउँछ्यौ ? भन न !

स्पष्ट आवाज : (*पाइतालाले भुइँमा टेक्दै*) मलाई त गहुँका बालको झुप्पा हुँदै हिँडौँ, हिडौँ र हिँडिरहूँ जस्तो लाग्छ ।

सुमधुर आवाज : (*पाइतालले अलिअलि गरेर दूरी नाप्दै*) त्यसो हो भने खुट्टाका औँला उँभोतिर पारेर हिँड्नुपर्छ ता कि हिउँमा परेका पाइला गहुँका झुप्पा जस्ता देखिऊन् । मैले हिँड्दा कहिल्यै पनि मेरा पाइला गुहँका झुप्पा जस्ता हुँदैनन् ।

स्पष्ट आवाज : वाहियात ! म परेवाका जस्ता औँला पारेर हिँड्न सक्तिनँ । मेरो पाइला सीधा हुन्छन्, कहिल्यै पनि गहुँका झुप्पा जस्ता हुँदैनन् । तिमी नै भन, तिनको आकार कस्तो हुन्छ ?

स्पष्ट आवाज : त्यो त फटाङ्ग्रो लत्रिएको जस्तो हुन्छ ।

सुमधुर आवाज : छ्या, कति घिनलाग्दो कुरा गरेकी !

(उनीहरूको मन्द हाँसोको आवाज । वर्षातको आवाज, जमिनमा हिउँ परेको जस्तो आवाज पनि सुनिन्छ ।)

स्पष्ट आवाज : (*साथीको कुमतिर ढल्कँदै*) नाङ दिदी ।

सुमधर आवाज : हजुर ?

स्पष्ट आवाज : म के भन्न लागेकी थिएँ ?

सुमधुर आवाज : कुनै हिउँ परेको दिन, एउटा भ्यागुतो एक्कासि उफ्रियो भने त्यो दृश्य रमाइलो होला ?

स्पष्ट आवाज : त्यो भयो भने मैले हिउँ परेको जमिनमा सर्प देखेको हुनुपर्छ ।

सुमधुर आवाज : म तिमीलाई सोध्दै छु– यस्तोमा भ्यागुतो उफ्रनु सम्भव छ ?

स्पष्ट आवाज : छ, तर त्यहाँ सर्प हुनुपर्छ । मैले हिउँमा सर्प देखेकी छु ।

सुमधुर आवाज : सर्प जमेको हुन सक्छ । त्यसैले यो सम्भव नहुनु सक्छ ।

स्पष्ट आवाज : त्यो हुन सक्छ, लौरो जस्तो अररिएको...।

सुमधुर आवाज : यसो भए, तिमी त्यो किसान जस्ती हुन चाहन्छ्यौ, जसले न्यानो पार्नका लागि अररिएको सर्पलाई छातीनजिक राखेको थियो ?

स्पष्ट आवाज : हैट, त्यो धेरै अनौठो हुने छ । दिदी, हिउँका डल्ला बनाएर केही रमाइलो गर्न चाहन्छ्यौ ? हिउँ परेको बेला म आफूलाई अझ जवान भएको सम्झन्छु र हिउँमाथि लडीबुडी खेल्न चाहन्छु ।

सुमधुर आवाज : किन मेरो नकल गर्ने नि ? मलाई पनि लडीबुडी खेल्न मन पर्छ । अनि तिमीलाई पनि ।

स्पष्ट आवाज : तिमीसँगै लडीबुडी खेल्न त कसलाई पो मन पर्ला र ? म तिमीलाई चिमोटिदिन्छु ।

सुमधुर आवाज : म तिमीलाई पोलिदिन्छु ।

स्पष्ट आवाज : म तिमीलाई चिम्टाले डामिदिन्छु । म सोझी छु भन्ने नसोच, मलाई धम्क्याउनलाई । हेरौँ को बलियो छ ! *(कुतकुत्याउँछे ।)*

(मधुर बोली भएकी केटीमा पनि उसप्रति कुनै दयाभाव छैन । उनीहरूको हँसाइ र तीव्र सासफेराइको आवाज सुनिन्छ । वृद्ध भने चुरोट सल्काउनका लागि सलाई कोर्छन् । माथि रहेको उज्यालो नीलो प्रकाश एक्कासि गायब हुन्छ । सलाईको उज्यालोमा वृद्धको अनुहारमा मुस्कान देखिन्छ । केही बेर सोचेर उनी चुरोट नपिउने निर्णय गर्छन् । त्यसैले चाँडो गरेर सलाईको उज्यालो निभाउँछन् । सिमेन्टको बोरामाथि बसेका केटीहरूमाथिको पहेँलो उज्यालो पनि मधुरो हुन्छ । मन्द गतिको वर्षातको आवाज सुनिन्छ ।)

स्पष्ट आवाज : मलाई माफ गर, निङ दिदी ! मेरो कुरा सुन । मेरो परिवार गाउँमै बस्दाताक पानी परेपछि पहाडबाट ओर्लने नदीमा सधैँ भेल आउँथ्यो ।

सुमधुर आवाज : ए ! तिमीलाई बरफ पग्लेको मन पर्छ ? बरफका ढिस्कामाथि अझै पनि हिउँ थियो । बरफ टुटेपछि हिउँ नदीको पानीमाथि उत्रन थाल्यो ।

स्पष्ट आवाज : मैले त्यो पहिले पनि देखेको । बरफका ढिस्का पग्लेका दृश्यै सारै मनमोहक लाग्छ । पहिले ती नदीको पानीमा बग्छन् । त्यसपछि एकअर्कामा ठोक्किएर फुट्छन् र अझ तीव्र गतिमा नदीसँगै बग्न थाल्छन् । त्यसताक नदी गाढा नीलो हुन्थ्यो र हेर्दा निकै आनन्ददायी देखिन्थ्यो । आह, कति चित्ताकर्षक देखिन्थ्यो !

सुमधुर आवाज : जीवन कति सुन्दर छ ! यो हो नि त जीवन !

स्पष्ट आवाज : मैले पनि ठुलो हिमपहिरोले बगेको देखेकी छु...।

सुमधुर आवाज : तर मलाई हिमपहिरो मन पर्दैन । त्यो विध्वंसकारी हुन्छ र मान्छे, कार र सडक सबै पुरिदिन्छ भन्ने मलाई थाहा छ । मलाई हिमपहिरो पटक्कै मन पर्दैन, किनभने यसले प्रकृतिप्रतिको मेरो सम्पूर्ण अवधारणा ध्वस्त पारिदिन्छ ।

स्पष्ट आवाज : तर तिमीले के बुझ्नुपर्छ भने जीवन यस्तै छ–कहिले सुन्दर, कहिले कुरूप...।

(हावा र पानीको आवाज । आफ्ना लुगा आफूतिर तान्दै र टाउको दुई घुँडाबीच निहुर्‍याउँदै, ती वृद्ध मानिस बलको आकारमा गुटमुटिन्छन् । बग्दो हावा र बर्सिंदो पानीको आवाज अझ तीव्र हुन्छ । छेउतिर देखिने मधुरो आवाजमा मधुरो आवाज भएकी केटीको आकृति मात्रै अलिअलि देख्न सकिन्छ ।)

सुमधुर आवाज : मलाई विशाल, जङ्गली जमिन पनि मन पर्छ...जहाँ उँचो स्वरमा कराउन सकिन्छ, चाहेजति समय कराउन सकिन्छ र आफूले चाहेजति इच्छ्याएको काम गर्न सकिन्छ । जङ्गली झारले भरिएको कुनै पल पनि मलाई सुन्दर लाग्छ, जो एकालास होस् र आफू नितान्त एक्लो होइयोस्...साथमा कोही नहोस्...र आफूले कराएको आवाज कसैले पनि नसुनोस् । *(आवाज मधुरो हुँदै जान्छ ।)*

स्पष्ट आवाज : *(छेउतिरको मधुरो प्रकाशमा यस केटीको छाया देखिन्छ ।)* मैले हाम्रो नजिकको ठुलो पहाडमाथिबाट घाम झुल्कँदै गरेको पनि देखेकी छु । कोही भन्थे, त्यस पहाडमा मानिसहरूको हत्या गरिएको थियो । तर मलाई लाग्छ, घामले जूनको अलिकति अंश जस्तै आफ्नो थोरै भाग देखाउँदा र बिस्तारै अलि धेरै माग देखाउँदै झुल्कँदा त्यो असाध्यै सुन्दर देखिन्छ । *(छेउतिरको रातो बत्तीले उसलाई प्रदीप्त बनाउँछ ।)* अति नै रातो, ठुलो रातो हलुवाबेद जस्तो । म स्कुल जाँदा सधैँ घामलाई आफ्नो पिठिउँमा बोकेर जान्थेँ ।

सुमधुर आवाज : तिमीलाई घाम मन पर्छ कि जून ?

स्पष्ट आवाज : म सधैँ आफ्ना किताबको झोला बोक्थेँ र छेउ लागेर हिँड्थेँ ।

सुमधुर आवाज : मैले सोधेको चाहिँ तिमीलाई घाम मन पर्छ कि जून भन्ने हो ।

स्पष्ट आवाज : दुवै ।

(रातो बत्ती बिस्तारै हट्छ । अगाडिबाट चिसो बत्ती बिस्तारै उदाउँछ र मधुरा बोली भएकी केटीको अनुहार उज्यालो बनाउँछ ।)

सुमधुर आवाज : तर मलाई जून मन पर्छ । घामजति चर्को हुँदैन नि । ओहो, चर्को घाममुनि त खपिसक्नु हुँदैन । तर जून जुन समय पनि सुन्दर हुन्छ, सधैँ पवित्र हुन्छ ।

स्पष्ट आवाज : *(चिसो प्रकाशले दुवैको अनुहार प्रदीप्त बनाउँछ ।)* तिमीलाई थाहा छ– एकचोटि म रेलमा चढेर हजुरआमाको घर गएकी थिएँ । त्यहाँबाट मैले जूनलाई फुटेको ऐना जस्तै देखेकी ।

(उनीहरू एकैचोटि आआफ्ना कथा भनिरहँदा चिसो उज्यालो दुवैको अनुहारमा पर्छ ।)

सुमधुर आवाज : म प्रत्येक पटक रेल चढ्दा मेरो गन्तव्य

पनि स्पष्ट भएर आउँछ ।

स्पष्ट आवाज : किनभने, वर्खामा भ्यालबाहिर सधैँ हाँगाबिँगा हुन्छन, जब तिनका पात सबै झरिसकेका हुन्छन् ।

सुमधुर आवाज : तर रेल गुडिसक्दा लाग्छ, मलाई थाहै छैन ।

स्पष्ट आवाज : ती पूरौ नाङ्गा हुन्छन्–केही छोटा र केही लामा । जून भने सधैँ चम्किरहेको हुन्छ, तर...।

सुमधुर आवाज : तर म जहाँ गएँ, दृश्यहरू देखेर रोमाञ्चित नै भएँ । मैले देखेँ...।

स्पष्ट आवाज : रेलको झ्यालबाट जो देखिन्छ, लाग्छ त्यो अन्त्यहीन छ...।

सुमधुर आवाज : पडाड, बाँसघारी र चियापत्तीका बुट्यानहरू एकपछि एक आउँछन् र म...।

स्पष्ट आवाज : देख्छु, फुटेको ऐना सग्लो जूनभन्दा सुन्दर लाग्छ ।

सुमधुर आवाज : मलाई थाहा छैन, मेरो भविष्य कहाँ छ !

स्पष्ट आवाज : (*मौनता ।*)

सुमधुर आवाज : को हो ?

(मधुर अवाज आउँछ, कुनै मूर्त तारमा जस्तो । उज्यालोको किरणमा स्पष्ट आवाज भएकी केटीको छाया देखिन्छ ।)

स्पष्ट आवाज : (*भित्री आवाज जस्तो*) तर कसैले मलाई खुसी दिन सक्ला भन्ने मैले सोचेकै छैन । लाग्छ, मेरा लागि म आफूले मात्रै खुसी प्राप्त गर्न सक्छु । आजको दिनसम्म मलाई अरू कसैले खुसी दिएको थाहा छैन...।

सुमधुर आवाज : (*गाएजस्तो*) सुरमा गाऊ । प्राकृतिक रूपमा गाउँदासम्म सुन्दर सुनिन्छ ।

स्पष्ट आवाज : तर कुनै चीज जति सुन्दर भयो, त्यो उति नै भ्रमपूर्ण पनि लाग्छ, कहिलेकाहीँ । उदाहरणका लागि एउटा फूल लिऔँ । कतिपय मानिसहरू भन्छन्, यो फूल क्या सुन्दर छ– मानौँ, यो बनाइएको हो । तर जब प्लास्टिकको फूल देख्छन्, फेरि भन्छन्, कति सुन्दर फूल– मानौँ, यो असली फूल हो । कति विरोधाभासपूर्ण कुरा – बिलकुलै अतार्किक । के तिमीलाई लाग्छ कि जब कुनै मानिस तिमीसँग अत्यन्तै असल व्यवहार गर्छ, त्यो बेला तिमी "यो सत्य हो र ?" भनेर सोध्छौ ?

सुमधुर आवाज : भावनाको तुलना नगर । यी दुवै एकै हुन् जस्तो गरेर कुरा गर्न मिल्दैन ।

स्पष्ट आवाज : म यही तर्कको प्रयोग गरेर यो कुरा सार्विक हो वा होइन भनेर जाँच्न चाहन्छु ।

सुमधुर आवाज : त्यसो भए, तिमी सोच्छौ– तिमीले माया गरेको मान्छे...।

स्पष्ट आवाज : उसको त झुट पनि सत्य जस्तो लाग्छ ।

सुमधुर आवाज : कामका लागि श्रुतिमधुर रहँदासम्म मानिसहरूलाई आडम्बर मन पर्छ ।

स्पष्ट आवाज : तर त्यो असत्य होस् भन्ने आशा त गरिँदैन ।

(नेपथ्यबाट आइरहेको सानो कार गुडिरहेको आवाज, सङ्गीत र हल्का उज्यालो सबै हराउँछन् । स्टेजको पश्चभागबाट सडक–बत्तीको घरी हरियो घरी नीलो हुँदै गरेको बत्ती देखिन्छ, जसको उज्यालोमा, सिमेन्टका बोरामाथि एकअर्काका पिठिउँ जोडेर बसेका ती दुई युवतीका आकृति देखिन्छन् । वृद्ध त्यहाँबाट अन्यत्रै जान्छन् र कतै पनि नचुहिएको ठाउँ भेटाउन सक्दैनन् । त्यसैले उनी अझै पर जान्छन् । तर केही काम लाग्दैन । अँध्यारोमा पानीका थोपा हेरिरहेका उनी निकै दीनहीन देखिन्छन् ।)

सुमधुर आवाज : एकपल्ट, मैले चुल्ठोमा सुनगाभा लगाएर अफिस जाने तयारी गरेँ । सबैले भने, यो सुन्दर छ र यसको बास्ना पनि मिठो छ । तर मेरो पिठिउँपछाडि कसैले मेरो कुरा काट्यो । जब मैले त्यो कुरा सुनेँ, म रिसले पागल भएँ ।

स्पष्ट आवाज : यसमा कुन ठुलो कुरा छ र साँच्चै ?

(वृद्धले आवासमा पानी नचुहेको ठाउँ खोजेर यी युवतीहरूलाई कुनै हिसाबले व्यवधान गर्न चाहँदैनन् ।)

सुमधुर आवाज : तिमीलाई पनि त्यस्तो फूल चुल्ठोमा सिउरिन मन पर्दैन ? अरूको किन आलोचना गरेको ? लाज लागेन ? मैले चाहिँ आडम्बर सिकेकै छैन ।

स्पष्ट आवाज : मलाई लाग्छ, कुनै पनि प्रकृतिक चीज सुन्दर हुन्छ । प्रकृतिलाई दवाउने कुनै पनि वस्तु मलाई मन पर्दैन ।

सुमधुर आवाज : तर वातावरण सहज भएन भने अभिनय गर्न पनि सिक्नुपर्छ । त्यस दिनपछि मैले फेरि कपालमा फूल लगाइनँ ।

स्पष्ट आवाज : विकल्पै छैन । हामीले वातावरणमा बाँच्नु र त्यसैमा अनुकूलित हुनु नै पर्छ ।

(हल्का पाइला चालेर वृद्ध पानी नचुहिएको कुनै स्थानको खोजी गर्छन्, तर भेट्दैनन् । वर्षातको पानीका थोपा झरेको आवाज भने अविराम आइरहन्छ ।)

सुमधुर आवाज : बाँच्नका लागि हामीले मिठो बोल्न सिक्नुपर्छ । कति दिक्कलाग्दो !

स्पष्ट आवाज : तिमी जीवनलाई माया गर्छ्यौ । त्यसैले बाँच्ने कला तिमीले सिक्नुपर्छ ।

सुमधुर आवाज : तर मलाई लाग्छ, मानिसहरू बुद्धिमानी हुनु हो भने उनीहरूले नयाँ जीवन निर्माण गर्नुपर्छ ।

(यसै बेला, पानी परेको आवाज सबैतिरबाट सुनिन्छ । पानी चुहिएको ठाउँमा हल्का पाइला चाल्दै ती वृद्ध मानिस आफ्नो टोपी फुकाल्छन् र टाउकोमाथि समाउँछन् र अन्ततः उनी टाउको निहुऱ्याएर ठिङ्ग उभिन्छन् ।)

सुमधुर आवाज : केही कुराको निर्माणका लागि दुवै हात, तथा इच्छाशक्तिको प्रयोग गर्नुपर्छ ।

स्पष्ट आवाज : तर कहिलेकाहीँ आफ्नो असली व्यक्तित्व लुकाउनुको पनि विकल्प नहुँदो रहेछ र कहिलेकाहीँ, अरूको आवश्यकताको पूर्ति गर्नु पनि अनिवार्य हुँदो रहेछ ।

(स्थिर वर्षातको आवाज झन्झन् चर्को सुनिन्छ, सबैतिर फैलँदै छ र उछिटिँदै गरेको । मञ्चको नेपथ्यमा रहेको सडक-बत्ती मधुरो गुलाबी रङको गोलाकार उज्यालोमा परिणत हुन्छ र समधुर आवाज भएकी युवतीको पछिल्तिर छरिन्छ ।)

सुमधुर आवाज : *(मधुरो, बैजनी उल्यालोमा युवती हावामा पौडिरहेझैँ देखिन्छे ।)* तर मलाई लाग्छ, मानिसहरू जति नै देखावटी देखिए पनि, उनीहरू सधैँ आत्मामा सत्य र पवित्र कुरा बचाएर राख्नुपर्छ । यो नै दैनन्दिन जीवनको सबैभन्दा बलियो स्तम्भ हो । यसबिना कोही पनि बाँच्न सक्तैन । यस प्रकारको सहाराबिना म पनि बाँच्न सक्तिनँ ।

स्पष्ट आवाज : *(प्रतिध्वनित भएजस्तो आवाजमा)* कहिलेकाहीँ यो वा त्यो कारणले अरूको आलोचना गर्नुको विकल्प हुँदैन । तिमी आफूलाई, आफू पनि प्रथम देखिनलाई नाटक गरिरहेकी छु जस्तो लाग्दैन ?

सुमधुर आवाज : तर म साँच्चै सोच्छु, मैले आफैँलाई खोल्न सके, मेरो आफ्नै धड्किरहने मुटु झिकेर यो रातो छ भनेरा तिमीलाई देखाउन पाए कति राम्रो हुने थियो ! त्यसो भए तिमीले मलाई माफ गर्ने थियौ ।

स्पष्ट आवाज : *(प्रतिध्वनित भएजस्तो आवाजमा)* हैट, त्यो त मूर्खतापूर्ण कुरा भयो । त्यसो गर्नु जरुरी छैन ।

सुमधुर आवाज : तर तिमी विशेषतः विश्वास गर्छ्यौ भने...।

स्पष्ट आवाज : अन्य कोही विश्वासयोग्य मान्छे खोज्नु राम्रो ।

सुमधुर आवाज : तिमीलाई थाहा छ, म साँच्ची नै त्यसो गर्न सक्छु ।

स्पष्ट आवाज : तिमीलाई नबुझ्ने कसैका लागि यसो गर्नु मूर्खता हुने छ ।

सुमधुर आवाज : पक्का हो । यसै जुनीमा यसो हुनु असम्भव छ ।

(वृद्ध मानिस लामो सुस्केरा हाल्छन् । मधुरो प्रकाश पूरै हराउँछ । दुई युवती सिमेन्टका बोरामाथि नै छन्, तर अहिले तिनको छाया मात्रै देखिन्छ । आफ्नो टोपी हल्लाउँदै वृद्ध मानिस दर्शकतिर हेर्छन्, पूरै भिजेको टोपी घुमाउँदै ।)

स्पष्ट आवाज : जो मलाई बुझ्दैनन्, तिनले वास्तवमा कहिल्यै मलाई बुझेका थिएनन् । म उनीहरूले बुझुन् भन्ने आशा पनि गर्दिनँ । उनीहरू जे चाहन्छन्, त्यो भनुन् । आलोचना पनि ठिकै छ । उनीहरूले बुझुन् भन्ने कुरा मेरो आवश्यकता पनि होइन । जसरी पनि उनीहरू बुझ्ने होइनन् !

मधुर आवाज : त्यसो भए तिम्रा हजुरबाले तिमीलाई बुझ्छन् भनेर किन दाबी गरिरहन्छयौ ?

(कुरा स्पष्ट सुन्नका लागि वृद्ध मानिस आफ्नो टाउको एकातिर झुकाउँछन् ।)

स्पष्ट आवाज : उनी मेरा आफन्त हुन् । उनले त बुझ्नैपर्छ ।

सुमधुर आवाज : तर उनी त पुरानो पुस्ताका हुन् । उनले हाम्रो पुस्तालाई बुझ्दैनन् । *(वृद्ध बेखुसी देखिन्छन् ।)*

स्पष्ट आवाज : पक्कै पनि ।

सुमधुर आवाज : तर तिम्रो वरिपरिका सबै मानिसले तिमीलाई बुझ्ने हो भने, कहिलेकाहीँ मार्न पनि सक्छन् तिम्रा...।

(झरीको आवाज । वृद्ध असमञ्जसमा देखिन्छन् । उनका हात खस्छन् ।)

स्पष्ट आवाज : तर म डराउँदिनँ । किनभने मसँग मेरै आफ्नै विचार छन् । तर पनि मलाई बुझियोस् भन्ने आशा म सदैव राख्छु । मलाई लाग्छ, विश्वमा मानिसहरूबिच न्यानोपन स्थापित गर्ने भनेकी आपसी समझदारीले हो र मनहरूको सम्यक् अवस्थितिले हो ।

(वृद्ध अर्कोतिर टुक्रुक्क बस्छन्, आँखा चिम्लेर केही सोच्दै । तीव्र गतिमा गुडिरहेका गाडीको चर्को आवाज सुनिन्छ । मञ्चको नेपथ्यतिर सडक-बत्तीहरू एकपछि अर्को बालिन्छन् । सहरमा राति सुनिने सबै प्रकारका

आवाजहरूको मिश्रण जस्तो केही सङ्गीत सुनिन्छ । मधुरो प्रकाशमुनि दुई युवती एकअर्काका छेउमा बसेका देखिन्छन् ।)

सुमधुर आवाज : यतिले पुगेन । मलाई लाग्छ, मलाई सबैभन्दा न्यानो अनुभव गराउने साँचो मायाले हो ।

स्पष्ट आवाज : त्यो किनभने तिमीले आफ्नो प्रेम भेटिसक्यौ । तिमीले कुनै पुरुषको माया पाइ नै सक्यौ र तिमीहरूका मुटुहरू एकअर्काका भइ नै सके ।

सुमधुर आवाज : जे भए पनि, एकअर्कालाई बुझ्नु मात्रै चाहिँ पर्याप्त छैन ।

स्पष्ट आवाज : उसको मुटु कसरी धड्कन्छ तिमीलाई थाहा छ र तिम्रो कसरी धड्किन्छ, उसलाई थाहा छ । तिमीले संसारकै सबैभन्दा सुन्दर प्रेम भेटिसक्यौ । म पनि मलाई बुझियोस् भन्ने मात्रै चाहन्छु, यद्यपि मलाई थाहा छ कि तिमीले जति सजिलै यस कुरालाई अनुमोदित गऱ्यौ, उसले त्यो गर्दैन । उनले तिमीलाई बुझ्दासम्म सबै कुरो सुन्दर हुने छ ।

सुमधुर आवाज : म तिमीभन्दा पनि बढी लोभी छु । मेरो आफन्त र साथीभाइले मलाई बुझे तर माया गरेनन् भने मलाई सह्य हुँदैन ।

स्पष्ट आवाज : तर पहिले बुझेपछि मात्रै प्रेम सम्भव छ नि ।

सुमधुर आवाज : तर पनि, त्यतिले पुग्दैन । प्रेमबिना यस धरतीमा बाँच्नु ज्यादै टिठलाग्दो हुन्छ ।

स्पष्ट आवाज : मेरो अवस्था तिम्रो भन्दा फरक हो । म केवल समझदारी चाहन्छु ।

सुमधुर आवाज : *(संवेगका साथ अँगालो मार्दै)* तर मेरो चित्त बुझ्दैन । कसैलाई प्रेम गर्नु भनेको मनमुटुले प्रेम गर्नु हो । केवल समझदारीले त पुग्नै कुरै छैन ।

स्पष्ट आवाज : त्यस्तो पूर्ण भन्ने केही कुरा छैन । प्रेमले पनि त्यस्तो पूर्णता हासिल गर्न सक्तैन । गऱ्यो नै भने पनि समयसँग घट्दै जान्छ ।

सुमधुर आवाज : कोही किन सधैँ माथि चढिरहेको हुन्छ– केही खोज्दै, केही अन्वेषण गर्दै ?

स्पष्ट आवाज : उत्कर्षपछि सधैँ एउटा अन्त्य हुन्छ । त्यसपछि...।

सुमधुर आवाज : कोही अर्को उत्कर्षमा पुनः किन पुग्छ ? यो पनि एक दर्शन हो । *(अर्कीको अनुहार हेर्दै)* मलाई उत्तर देऊ । उत्तर देऊ ।

स्पष्ट आवाज : मैले भनेँ भने निङ दिदी, म तिमीलाई बाँचुन्जेल पूर्णताको हदसम्म माया गर्छु । तर पनि, मेरो मनले कतै केही अपुग भएको अनुभव गर्छ ।

सुमधुर आवाज : *(अर्कीलाई आफूतिर फर्काउँदै)* यही कुरा फेरि कुनै दिन भन्यौ भने म तिम्रा तत्काल मृत्युको कामना गर्ने छु ।

स्पष्ट आवाज : *(अर्कीको अनुहारमा आफ्नो अनुहारले स्पर्श गर्छिन् । दुवै जना अङ्कमाल गर्छन् ।)* कति क्रूर छ यो कुरा, तर यो मानव हो – जिउँदो मानव । याद राख निङ दिदी, म तिमीलाई मृत्यपर्यन्त माया गर्छु भनेर फेरि कहिल्यै भन्दिनँ ।

सुमधुर आवाज : *(अर्कीलाई छोड्दै)* र म पनि तिमीलाई मर्न दिन्नँ । चिन्ता नगर ।

स्पष्ट आवाज : द्वन्द्ववाद ! यसमा पनि कत्ति मजा छ । साँच्चै, कसैले अर्कोलाई मृत्युपर्यन्त माया गर्ने खालको पनि प्रेम हुँदो हो त...।

सुमधुर आवाज : त्यसो भए त मृत्यु पनि मूल्यवान् हुने थियो ।

स्पष्ट आवाज : त्यसो भए त्यसमा पनि मजा हुने थियो । प्रेमको अन्त्य मृत्यु होइन ।

सुमधुर आवाज : मलाई थाहा छ– मर्नु अन्त्य होइन...।

स्पष्ट आवाज : तर प्रेमले, रोमियो र जुलियटले जस्तो एकअर्काका लागि मार्न बाध्य बनायो भने...।

सुमधुर आवाज : ओथेलोको जस्तो ! त्यो कारुणिक भए पनि त्यो साँचो प्रेम होइन र ?

स्पष्ट आवाज : तर त्यो पनि एक प्रकारको अधिकरण हो । *(वृद्ध आफ्ना आँखा बन्द गर्छन्, टाउकोबाट पानीको बाछिटा हटाउन खोजेजस्तो ।)*

सुमधुर आवाज : उनको प्रेम असल थियो भन्ने कुरा नकार्न सकिँदैन । उनी जसरी प्रेम गर्थे, त्यो भने फरक थियो ।

स्पष्ट आवाज : समय पनि फरकफरक थियो । त्यस बेला मानिसहरू सोच्थे, पूर्ण अधिकरण नै प्रेम हो । त्यसैले स्पष्टतः यो अधिकरणको मोहले प्रेमलाई बलियो र स्वार्थी बनाउने हो । तर अचेल मानिसहरू प्रेमलाई अधिकरणका रूपमा हेर्दैनन् । मलाई लाग्छ, कसैलाई अधिकरण गर्ने हो भने ऊ अब प्रेमको योग्य रहँदैन । त्यसैले भविष्यमा, म कसैसँग प्रेममा परिहालेँ भने पनि अथवा कोही मसँग प्रेममा पऱ्यो भने पनि, मैले उसमाथि अधिकार स्थापित गर्न खोजिसक्दा म उससँग प्रेम सम्बन्धमा हुने छैन । उसले पनि ममाथि अधिकार स्थापित गर्न खोज्यो भने हामी दुवै सकिने छौँ ।

सुमधुर आवाज : मानिसहरू कहिल्यै पनि शारीरिक

अधिकरणबाट मुक्त रहन सक्तैन । यो कस्तो दिक्क लाग्ने कुरा !

(वृद्ध आफ्नो टोउको हल्लाउँछन्, उभिन्छन् र झनक्क रिसाएझैं गर्छन्, मानौं पानीको कुनै थोपा उनको आँखीभौंमै परेको छ ।)

सुमधुर आवाज : प्रेममा देखिने शारीरिक अधिकरणलाई आत्माहरूको परस्पर संवादमा रूपान्तरित गर्नुपर्छ ।

(वृद्ध मुन्टो हल्लाउँछन्, मानौं उनी आफ्नो अनुहारबाट पानीको थोपो हटाउन खोज्दै छन् ।)

स्पष्ट आवाज : आत्मालाई नियन्त्रण गर्नु पनि सम्भव छैन, किनभने कसैले पनि आत्मामाथि पूर्ण नियन्त्रण कायम गर्द सक्तैन ।

सुमधुर आवाज : परिस्थितिमा भर पर्छ...।

स्पष्ट आवाज : होइन । ज्येष्ठ नागरिकहरू किन यति व्यावहारिक हुन्छन् र प्रेममा परेको बेला पनि कुनै बाचा गर्दैनन् ?

(वृद्धको अनुहार शान्त देखिन्छ ।)

स्पष्ट आवाज : किनभने यो के हो, उनीहरूलाई पहिल्यै थाहा भएको हुन्छ । तर हामी जवानहरू सधैं एउटा स्थायी बाचा चाहन्छौं र यो एक प्रकारको अधिरकण हो ।

(वृद्ध कुप्री पर्छन्, खोक्छन् र आफ्नो सुटकेस खोज्छन् ।)

सुमधुर आवाज : त्यसो हो भने यो पवित्र हुन्छ भन्ने कुरा पनि नकार्न सकिन्न ।

स्पष्ट आवाज : किनभने वास्तवमा यो के हो, त्यो हामीले पूरा बुझिसकेको हुँदैनौं ।

सुमधुर आवाज : जरुरी छैन । यो परिस्थितिमा भर पर्छ ।

स्पष्ट आवाज : त्यो पहिलो प्रेम हो ।

सुमधुर अवाज : शुद्धता सम्भव छ ।

स्पष्ट आवाज : कुनै पनि कुरो पूणतः शुद्ध हुन्छ भन्ने म विश्वास गर्दिनँ । म कुनै व्यक्तिसँगको प्रेममा परें पनि कुनै पनि स्थायी शाश्वत कुराको बाचा गर्दिनँ ।

(केटीहरूले सुनुन् र भागुन् भन्ने चेष्टाले वृद्ध मानिस आफ्ना गोडा भुइँमा बजार्छन् ।)

सुमधुर आवाज : यो पनि जरुरी छैन ।

स्पष्ट आवाज : तर पनि त्यस्तो कोही मान्छे भेटियो भने...।

सुमधुर आवाज : तिमी शाश्वत प्रेमको बाचा गर्दैनौ ?

स्पष्ट आवाज : गर्दिनँ । म विहे पनि गर्दिनँ ।

सुमधुर आवाज : जीवनभर एक्लो रहने ?

स्पष्ट आवाज : हो त ।

सुमधुर आवाज : तिमी सधैं एक्लो रहन सक्तिनौ । यो कुरा विश्वास गर्छौ ?

स्पष्ट आवाज : म मेरो पूरा जीवन निङ दिदीसँग बिताउँछु ।

सुमधुर आवाज : तिमीले माया गर्ने कोही न कोही अवश्यै भेटाउने छचौ ।

स्पष्ट आवाज : अहँ, भेट्दिनँ ।

सुमधुर आवाज : भेट्ने छचौ, प्रिय दिदी । अवश्यै भेट्ने छचौ ।

स्पष्ट आवाज : तर उसले मलाई सधैंका लागि प्रेम गर्छ वा गर्दैन, त्यो मलाई थाहा हुने छ । त्यसपछि मलाई झनै पीडा हुने छ...।

सुमधुर आवाज : त्यसो हो भने म सुटुक्क उसलाई छोडिदिन्छु र तिमीसँग बस्छु...।

स्पष्ट आवाज : निङ दिदी, तिमी रुँदै छचौ ?

सुमधुर आवाज : होइन...।

(वृद्ध रोकिन्छन्, अनुहारमा आश्चर्यको आभासहित अझै ध्यानपूर्वक सुन्छन् ।)

स्पष्ट आवाज : (*हात अर्कीको अँगालोमा बेर्दै*) हामी पनि कति मूर्ख !

(वृद्ध आफ्नो चस्मा लगाउँछन् ।)

सुमधुर आवाज : किनकि हामी केटी हौं ।

स्पष्ट आवाज : केही मूर्ख हुन्छन् ?

सुमधुर अवाज : (*उनलाई टाढा धकेल्दै*) यहाँबाट बाहिर जाऊ ! (*एक्लै मुस्काउँदै, आँसु पुछ्दै ।*)

(वृद्ध लामो सुस्केरा हाल्छन् ।)

स्पष्ट आवाज : सडकका सबै बत्ती बलेका छन् । तर पानी अझै परिरहेको छ ।

(दुई युवतीहरू उठ्छन् र त्रिपालबाहिर निस्कन्छन् । झरीको आवाज निरन्तर छ । उनीहरू दुवै जना दर्शक दीर्घाको विपरीत दिशामा हिंड्छन र बर्सिरहेको पानी थाप्न हात अगाडि बढाउँछन् । सडक-बत्तीमुनि, अझै पनि मन्द गतिको पानी परि नै रहेको छ । उनीहरू एकअर्कालाई हेर्छन् र हाँस्छन् । मधुर सङ्गीत प्रवाहमान छ । विपरीत दिशाबाट आएको प्रकाशको दुई लहर किरण तथा सङ्गीतको धुनसँगै उनीहरू मञ्चको नेपथ्यतिर जान्छन् र हाँस्दै ओझेल पर्छन् । वृद्ध आफ्नो टोपी लगाउँछन् र बिस्तारै मञ्चको पछिल्तिर अघि बढ्दै छेलिन्छन् । सडक-बत्तीमुनि पानी निरन्तर परिरहेको छ र झरीको आवाज आइ नै रहेको छ ।)

अनु. महेश पौड्याल

Interview

There's no Other University like Scarcity : Ashesh Malla

[Poet and playwright, Ashesh Malla (b. 1954, Dhankuta) is the founder of Sarwanam Theater. Associate Professor of Nepali Literature at Tribhuwan University, he has written, performed and directed several plays, and has won many prestigious awards like Sajha Puraskar, Musyachu Puraskar, Moti Award and Jalarika Award for his contribution in the field of Nepali theatre. He is the pioneer of street theatre in Nepal. He also served the Nepal Academy and headed the theatre department for five years. He also worked as a Board of Member of Nepal Television in early 90's. He is an honorary life member of Nepal Academy. He has published more than 25 books, including books of plays, poetry and fiction. Presented here is an edited excerpt of his conversation with Mahesh Paudyal for Rupantaran.]

Sir, greetings! Please tell us about your early inspirations for inclining towards the theater.

I grew up in a small town in Dhankuta. As children, my friends waited for Dashain and Tihar, but I waited for *Bhadauré Jatra*, a summer festival that lasted for months, and had dance, plays and several performances in every street. We had rehearsals for months before performing. When I saw my seniors meet and plan about the plays for the upcoming *Jatra*, I watched them from a corner. The plays were of two types: first, performed on huge stages erected on open grounds, and others performed on the front-yard of every home, and they included farces and short plays. In Tallo Kopché, my village, whenever my seniors discussed to select actors for their performance, I was never their pick, for I was very young. But my thirst for acting continued. And one day, though still a kid I was, I gathered all my peers and led a play of our own. I was a third or fourth grader then, not more than ten to twelve years old. Though I had no one to teach me, I caricatured one Purna Shrestha, a man in my locality, who limped as he walked. People called him Purna Lata. We performed the play for many days, moving from home to home, and every household gave us some money and breads. Everyone appreciated my performance, and I came to be known as a good actor. I was greatly encouraged. Even after the *Jatra* ended, I didn't feel like going to school; I wanted to continue with the performance. In a way, my family thought I was spoilt. But the play really drew me toward the theater.

How did you step up from such informal performance to the proper theater?

Some time later, Dayaram Shrestha 'Sambhav' directed one of Bijay Malla's plays, and asked me to act in it. Maybe he had seen me act earlier. My role was that of a man's son. We performed it on a make-shift theater at Tundikhel. Every month, there was one play or another. Besides short plays on small stages, we did some large plays on stages erected out of bamboos. Such plays were performed on important social occasions and festivals. I

saw two or three of such plays before they discontinued. It was a painstaking task to erect such plays. For curtains, people brought them from Calcutta, and artists painted patterns with colors to produce scenes they needed, including those of palaces, forests and rooms on small canvases, and held them in place with rolling strings. Nripenddra Malla, my own grandfather, was engaged as an artist. Those were the days when we had no electricity. Nor was there any vehicle. I wonder how they did such things those days. Such plays were performed in Tallo Tundikhel, one of the two open lawns in Dhankuta. The Army performed in Mathlo Tundikhel, the upper lawn, and the police performed on other grounds. These were the plays that formalized my acting.

It can be noticed that very early in your life as a playwright and actor, you developed a sort of rebellious attitude. What was the root of this sense of rebellion that has lasted till date, informing almost all the plays you wrote or directed?

Besides plays, there used to be frequent poetry sessions in Dhankuta. I used to take part and win some prizes. My childhood passed this way. We had clubs in every street. I wanted to mime the same. So, one day, I gathered some friends and started the Bal Sudhar Sangh, a children's organization. We also started a library, organized poetry and quiz competitions, and dances and theatrical performances on front-yards of people's homes. Six months after the foundation of this organization, one fine day, a policeman came to me and said I had been summoned by the Chief District Officer. On knowing this, my mother, Bharati Shrestha wept bitterly, because she recalled the old days during the 1951 revolution, when my grandfather Gajendra Bahadur Pradhanaga, the first member of parliament from Dhankuta after 2051 (also translator of Tagore's Geetanjali) used to be nabbed and hauled. One day, during the revolution, the police happened to find a piece of paper thrown outside our home, following which it summoned my grandfather and others. My mother recalled the same incident and cried. On reaching there, the CDO said I had done an illegal thing by starting the children's organization. I didn't know that it was illegal. When he asked me to shut it down, I had no answer. Perhaps I wept. On seeing me in tears, he said, the Prime Minister would be visiting Dhankuta and he would ask him, and I would be allowed to do whatever the Prime Minister instructed. A few days later, Prime Minister Kirtinidhi Bista came, and I was taken to meet him. He asked me to shut down my organization, and instead suggested me to join the state-owned Nepal Children's Organization. Deepak Krishna Shrestha, a friend of mine, had made a sign-board for my organization. The police smashed it, and thus bruised my sentiments. I wept bitterly. My father soothed me to some extent. I did not join the organization the Prime Minister suggested. That day, perhaps, a sense of revolt in me was planted, and it grew, infecting all of my future plays with a sense of rebellion.

This childhood rebellion appears to have lingered through your teenage and even later. What kept the fire burning?

My father Khagendra Pradhanaga, also a novelist, often came to Kathmandu. When he returned home, he bought for me several issue of *Gaijatra* journal, published once in a year, with open criticism of the state. When I read them, I learnt that even ministers could be criticized. Following it, I and my friends Rajendra and Nirajan Pradhananga, prepared a hand-written magazine on foolscap papers, and published it, criticizing the CDO and local leaders. We made three to four copies of it using carbon papers and pasted at important places where people gathered. A few days later, as we were sitting at Rajendra's shop, some policemen came and made us write

something on a piece of paper evidently to check our hand-writing. Rajendra's father had a copy of *Muluki Ain* at home, and it clearly said our act, without permission, deemed legal punishment. We then started fearing the police. Luckily, the inspector there was a distant relative of mine from mother's side. He came home and reprimanded, and said he had saved us; otherwise we would be behind bars. We warned us not to continue the prank. But the bitterness lasted in me. Later, when I was preparing for my matriculation, our guru Durga Pokharel, a scholar and a congressman, gathered all of us on a riverbank near our village and showed us magazines published by BP Koirala and others from Banaras (I think it was *Tarun*). He explained how BP, Ganeshman and others were launching a revolt. He inspired us to join the revolution, and washed our brain. He then gave me a letter-pad with congress flag on it. I went home with it, but my mother saw it. She reprimanded me, and snatched the paper, tore it and threw it down the toilet hole.

I also recall another bitter incidence. After matriculation, I started attending a college some half an hour walk from home. The path went past a jail. One morning, incidentally, I happened to see a gruesome incident in the jail from the outside walls: the police was dragging two men on the ground in an inhuman way. Later I learned, they were accused of Okhaldhunga Incident launched by Congress, and were Ram and Laxman, who were later killed. On seeing it, I was shocked. It was, however a time, I could write nothing. The grudge settled in me permanently, and I continued to be a rebellion.

What tickled you to move out of Dhankuta? How did this migration shape your theatrical career?

After finishing my IA in Dhankuta, I went to Biratnagar and joined the Mahendra Morang College in 2030 for doing my BA. There I met friends Krishna Bhushan Bal, Indira Prasai, Mahesh Prasai, Bishnu Bibhu Ghimire, Pramod Pradhan and others, and founded an origination. I often travelled between Biratnagar and Dhankuta on foot. Around the year 2030, we also founded an organization Nawakalakar Sanskritik Samudaya in Dhankuta, which started performing plays and this proved to be a turning point in my career. Initial plays were traditional ones, performed on open grounds. But we started modern plays on a stage in Gokundeshwar School. We started with plays by Bijay Malla, Govinda Gothalé and Mana Bahadur Mukhiya. For the first time in Dhankuta, we started ticket shows. I used to do the lead role, while my guru Upendra Dukhi, a versatile man—a poet, singer, musician, director, and a national level footballer—used to be our director. After some days, my friends suggested to me write a play of my own. I had never done that before, and I had never watched a play from outside. Yet, I wrote one. As soon as I wrote a page, my friends would take it away and get it typed on a typewriter at the office of one of my friends. The typewriter had just come to Dhankuta. This way, page after page, the play was typed (with no editing or revision), and a rough play came into existence. Soon, we went for rehearsal.

What was the play about? What was its theme? This is crucial, for this is your written play, which directed your future course of action.

We had a farm in Hattikharka, and Father would take me there often, and we used to stay there for some days. The one who tilled our field was Bakhaté. One day, I saw his sons fall out on the issue of land rights. The issue got settled in the unconscious part of my mind. I wrote the play on this subject and named it *Tuwanlolé Dhakeko Basti*. Upendra Dukhi directed it; I played the lead. It was such a huge success; people came from far and wide—including from villages in Bhojpur, Chainpur, Tehrathum

etc.—to watch us perform on petro-max light.

What brought you to Kathmandu from Dhankuta?

Universe is perhaps the thing that decides out destiny. Maybe the universe wanted it so. Before the series of *Tuwanlolé Dhakeko Basti* had ended, we grew quite ambitious and wanted to go to Kathmandu with the show. For our team of forty to forty-five people, Kathmandu was far like New York or Paris. We had no money. We came to Dharan after two days' walk and performed a show, collected some money, went to Biratnagar. Wherever we halted we performed to collect money. Those days, we did not have direct bus to Kathmandu as we do these days. After halting at several places, we finally reached Kathmandu after seven or eight days. Bijaya Malla owned a lodge at New Road. A brother of ours, who knew him, talked to him and we stayed there. Malla was a member at the Academy. Lain Singh Bangdel was the Vice Chancellor. Tulasi Diwasa and Stayamohan Joshi too were its members. We approached Satyamohan Joshi, Member Secretary, for help. Even before seeing our play, he said he would allow us to perform but laid the condition that we would have to share the income with the Academy equally. We rehearsed on a stage that was far bigger than the halls we used to perform in Dhakuta. Prachanda Malla and Harihar Sharma, who worked there, helped us. For the first time, we performed on electric lights, with dimmers for morning and evening scenes. Before this, I didn't know dimmers existed. There were electronic sounds for birds' chirping and other things. In Dhankuta, a tape-recorder had just been introduced, and we used to stay for hours in coops waiting for roosters to crow so that we could record its sound and use it in our plays. At last, Prachandra Malla, who helped us a lot, revised our ending, letting huge fans on two sides blow flour powder to devise the fog (*tuwanlo*). Many poets and prominent people had been invited. I was in *daura-surwal* before the play. A tall man walked from back-stage and asked who the artists from Dhankuta were. I said, "We are the ones, Sir." He said, "I am Balkrishna Sama." I was on top of the world. I fell onto his feet. He said he was there to watch the play and wanted a ticket. I said, "You don't need a ticket, Sir." But he said he would buy a ticket. My first play in Kathmandu had Balkrishna Sama in my audience, and this was a turning point in my theater life. In the audience were other prominent people like Bijay Malla and Haribhakta Katuwal as well. Everyone appreciated us but Bijay Malla vehemently criticized and said, "Why perform such a traditional play? You should perform a 'modern' play. Times have changed, you know." I never knew what a 'modern' play was. But then, if he had not scolded me that way, I would never have come thus far.

Back in the lodge, I was in deep distress. Seeing me listless, Hari Bhakta Katuwal said the play was marvelous. In fact, he was consoling me. He said, "From now on, Ashesh Mallas should move on, stepping on the shoulders of Hari Bhakta." But the idea of 'modern' play, mentioned by Malla continued to bother me. The play ran for many days and was a huge success. People lined up to Ganeshthan for buying tickets. At the end, we got our share of money, which we divided. My friends retumed to Dhankuta but I was so badly infected by theatrical ambitions that I decided to stay back, though I had no relative, and no place to stay in. With the cash thus earned, I stayed, joined MA Nepali program at Kirtipur, and became a hostel ward. Basudevi Tripathee, the warden, had watched my play, and knew me as a playwright. He placed me there.

At any rate, you discovered what a 'modern' play as hinted by Bijaya Malla was. Which pursuing this discovery, you have to meet many difficult challenges. Would you

recall the trajectory of this discovery?

As an MA student at Kirtipur, I continued to follow my dreams to become a famous playwright, director and writer. I wanted to know what a 'modern' play really was like. I had no one to teach me. I tried to meet Bal Krishan Sama, a reserved man, but it was not easy and so I could learn very little from him. I often watched plays performed at Academy and National Cultural Organization. They used to have huge curtains that closed at times, made clumsy preparations behind the screen, and resumed later. Even Bijaya Malla's plays were performed like that. I wondered if that was what he meant by 'modern' plays, but I did not like the curtains. I also did not like the gritting sound of the mike and thought, curtains and mikes are enemies of the theater. I never used curtains and mike in any play I did later. Kirtipur turned out to be a blessing for me. The Campus Chief allowed me to use the auditorium. His support has been immense. He also offered monetary help at times. One day, my hostel mate Bimal Koirala and I wrote a play on the issue of the scarcity of firewood in Kathmandu. Those days, people had to bribe others to get firewood even to burn dead bodies. We made a play on this issue. We performed it. Students were hooting, for those were the days when students enjoyed anything that criticized the government. In the middle of the performance, the curtain suddenly fell, and some goons came onstage and beat us black and blue, leaving us badly injured. If the Campus Chief had not shown up, we would be dead. He managed to lift us to the clinic and treat us. Those goons were supporters of the Panchayat, and they would not tolerate any criticism of the government.

My next play there was *Murdabadma Utheka Haatharu*, which ran for a few cycles in Kirtipur itself before the police forced us to stop it.

In the meantime, Nepal Academy started the Drama Festival. I decided to participated, for which I wrote *Raatka Banda Aankhaharu*. Bishnu Bibhu, Nawaraj Karki and Kishor Pahadi were my co-actors. In the meantime, I started visiting libraries, especially the Indian, British and American libraries, to read dramas. I had no one to ask which play I should read. Incidentally, I found a play *Aadhe–Adhure* by Indian playwright Mohan Rakesh in Hindi. I read it several times, and read Brecht's *Three-penny Opera*. The plays impressed me a lot. In the meantime, Dr. Shreeram Laghu, the famous Indian cinema actor and his team, came to Kathmandu to perform the same play *Aadhe Adhuri* at the City Hall. I went to watch it, and for the time, in such light, setting and design, I enjoyed a foreign play, and thought this was the 'modern' drama Bijay Malla was talking about. Even Academy plays were old and traditional, which I did not like at all.

As you confessed yourself, Aadhe-Adhure was the first 'modern' play you watched. When did you yourself write a play that was consciousness 'modern'?

I had an uncle at Thamel, at whose place I often stayed. From his place to Ratnapark, I used to walk meandering through New Road because I did not know a short-cut. One day, I discovered the short-cut through a narrow street in Asa. Asan, you know, is a mysterious place; one can procure virtually everything there, from votive items to household things, and the place has every type of character. One day, I went to Ashok Cinema in Patan to watch a movie. When I returned to my Uncle's home, it was quite late, and the doors had been locked. My Uncle and his family were in the USA, and the house was under the care of a caretaker. I knocked several times, but in vain. So I returned to Asan and knocked at a lodge. The lodge denied me a room. After nagging for a long time, it allowed me to roost underneath the ladder, where the workers slept. Early next morning, I saw women, with babies on their backs, sweeping the streets. On hearing the sound, I went closer and observed

them. It struck to me that if I could lift the entire Asan and place it on the Academy stage, it would be a play in itself. Accordingly, I wrote *Sadakdekhi Sadaksamma*, which was performed several times. It has no single incident; it has no single character. At last a drunkard comes and says, "Be warned; no one should sleep tonight." Chhetraparata Adhikari, the Manager at Sajha Publication, had come to watch my play. He called me and asked me to give him the scrip. He got it published from Sajha Prakashan sometime later. The play won me Sajha Puraskar. This is the first of my 'modern' plays I consciously wrote. It uses no mike or light. Its setting doesn't change. The same is true for all my subsequent plays.

At the heart of your 'modern' plays, there is always a call from freedom and a criticism of the conservative establishment. You risked this even during the heydays of the Panchayat. Wasn't that a risk? Who did you cope with it?

In 2033, the Panchayat had second amendment of the constitution. Freedom of speech was virtually withdrawn. My getting beaten up at Kirtipur is an outcome of the same. That was during the reign of Birendra. Though people call Birendra a liberal king, I don't believe it. Had been liberal, this would not have happened.

Around this time, I waṣ in a visit to Dhankuta. The BCC announced that Bhim Nayaran Shrestha and Yagya Bahadur had been hanged to death for attempting to bomb Birendra. The news shocked us, for Bhim Narayan was our neighbor. The same night, I wrote a solo play *Atirikta Akash*. It was performed at many places. Our plays used to be censored so much. Many pages from our scripts used to be cross-marked and banned. When performed, the police used to stay and monitor. This was very suffocating; we grew up in such an age.

How did the idea of Sarwanam sprout in your mind?

During those heydays of the Panchayat, when censorship was rampant and the police was always after us, I thought, unless we had a group, we would not be able to move. So, we founded Sarwanam in 2038. Though, much earlier, the name Sarwanam had been used as to perform the play *Murdabadma Utheka Haatharu*, we formally established it later in 2038. Since then, it was continued to survive and grow.

How do you observe the way our academia handles the drama as a discipline?

It is a bitter fact that university teachers, who teach drama, seldom come to the theater. In fact, they don't know what a theater is like. One-Act plays have practically died out from the world stage, but the professors are still teaching. I recently said in a public event that such professors do not even have the right to teach dramas. The division of plays as full or one-act plays does not exist anymore. All plays are plays, be it short or long. Scenes change with light; the traditional concepts of scenes have disappeared. I say my plays are plays; they are not one-act, or full plays. Only Mohan Himanshu Thapa agreed on what I said. Others have continued with their outdated methods. This is painful.

You are credited for pioneering street plays in Nepal. How did you arrive at this idea of street plays?

Those days, we did not have halls where we could perform. I wanted some easy ways to perform, in every place I could. I wanted a low-cost theater to come up, where, even a table could be made a theater. We could not always pay for halls, but should that mean we should not be performing? I thought the very place we are in could become a theater for some time. I said my plays should be able create the theater where they need. Read my plays with this idea in mind; you will find that my plays can work everywhere on earth. In the same vein, I wrote *Hami Basanta Khojiharechhau*. In fact, it was

about democracy we all had been seeking. It opens with a character asking, "Did you see my pigeon? Its wings have been severed. Who could have stolen it? I am here to find it." And at the end, the character says, "Our play did not end today as well. It will end the day we find the spring."

Those days, getting published in *Rooprekha* was a dream; it could make someone a writer overnight. With my script in hand, I went to meet its editor Uttam Kunwar. With much fear and hesitation, I gave him the script. He read the script there and there. Those were the types of editors those days. After reading it, he said, "This is what a play should be like! I will publish it in the current issue itself." I didn't believe my own ears. That was a dream-come-true! Maybe this was the 'modern' play Bijaya Malla hinted at.

We never had money, but we wanted the play to reach the public. So we decided to perform it openly. Censorship was always there. As an experiment, we performed it in Balmiki Campus Hall. The audience was there; the stage was there too. But we performed it among the audience, not on the stage. After this, we moved to Kirtipur hoping that if there was any reaction, the students and the public would save us. In fact, the police had been hunting for us. I can't tell how many times we were nabbed and hauled. We performed anyway, with students sitting all around us. We named this genre of plays 'sadak natak' or street plays. This was the first 'street play' in Nepal. People did not even know plays could be performed like that. My plays did not need a theater; they created one whenever and wherever needed. Later, street plays became a movement.

If your compare those smothering Panchayat days with uncensored and free time we have today, what difference do you find?

The recent political changes have had a great influence on Nepali art and literature, and theater is no exception. Changes that occurred in 2036, 46 or 62 have impacted the theater a lot. Before 2046 and, during the Panchayat era, we could never perform a play freely. Some plays performed by governmental organizations or pro-government groups continued to eulogize the state, while we advocated for freedom. For this reason, we were in peril. After these political changes, doors have been opened in many directions today. Our confidence has multiplied. In our days, one of our eyes used to be on the police, and the other on our rehearsal or performance. In districts outside Kathmandu, the CDO set police against us, and many times, we were warned to go away lest they would be obliged to arrest us. Even during rehearsals, there could be spies. But today, there is great freedom and many opportunities are at hand. This fact should be noted and scripted in history. Another thing is ours is a digital age. The world has become a small village. National boundaries have disappeared. Plays from all over the world can be watched on mobile phones and laptops. We have that access. What is happening in America, Europe or India can be seen instantly. That is a great achievement. I was lucky to see many things, including scarcities of an age when we did not have even a recorder. I remember once, for a play, we needed the sound of a cicada and a dog barking. I and Govinda Giri Prerana went to the Bagmati bank to record the voices and outstayed the night. After recording the cicada's voice, we followed a dog to record its bark. When we placed the recorder near the snout of the dog, it was by a thin margin that we escaped its biting! Look at this and compare I with the digital age today, where high technology gives us anything we need from anywhere in the world. Such a great help! Those days, we had no plays to watch and learn from; we performed whatever we knew. We had no gurus, no godfathers. But today, there are multiple facilities.

You have travelled to several countries in the world and have seen the theaters there. Where do you find Nepalese theater, compared to the global standard?

I visited many countries, performed there, and watched their plays. Our Nepali plays are in no way inferior to any other play. This is my estimation. At ours, where there is so much of scarcity and not even a play school, we are still doing great. I think there is no other university like scarcity. I was once in Canada to partake in a drama festival. There I said we use nothing in our plays because we don't have; you don't use things because you want an experiment. After all, we came from a time performing in the lantern light! We have little return; yet we are doing. We have no government support. Yet five to six play houses perform in Kathmandu daily, which is not a reality even in New Delhi. We have functional theaters. I recently told and American that our theaters have not been opened by business groups for income; they are founded by artists with extraordinary commitment, investing from their personal saving, or from the income earned by selling their properties. Still, they are performing. See the creative minds in our country! See the talent in our new actors and directors! I am very, very hopeful. Even without the state support, they are doing it. If only there was some state support, it would be magical. Yet, airing this complaint is of no much use.

And finally, a passing remark on Sarwanam—your dream project. Sarwanam has become an exhilarating fact today. How do you evaluate this achievement?

I had a dream—Sarwanam—for plays, and for several art forms including painting. I was once approached to become the Chancellor for the Academy of Music and Drama. Prominent politicians, including Minister Narahari Acharya and the then Minister for Culture Minendra Rizal approached me with the proposal. But I denied. I thought spending five years there would be a great loss. I am in my mid-sixties, and after fulfilling one dream (Sarwanam), I have to fulfill yet another dream. I always wonder why Sama, the Shakespeare of Nepal, in spite of being from the Rana family and so close to King Mahendra, did not start a theater. A school? And Bijaya, though such a legend, so close to palace, and many times a member of the Academy, did not do that either. Nor did Bhimnidhi Tiwari open any. They wrote plays and left, but I thought Ashesh Malla should produce thousands of Ashesh Mallas before leaving. I have to produce thousands of Ashesh Mallas in order to save the theater. I told the same to Narahari Acharya, who had come to inspire me to become the Chancellor. He said I could produce such people from there. I said, "No. You pick party workers. If you would allow me to pick my crew, I can think."

I did whatever I knew. Seventeen batches have graduated from Sarwanam. I call it a 'theater lab', more than a performance place. Many of my students have become playwrights and directors. Each one of them is so bright. Now, even if I die, Sarwanam, as a movement, will survive.

(Interview and Transcription: Mahesh Paudyal)

On the Beautiful Translation of M ahendra M alangiya's M aithili One-act Plays

Prof. Dr. Govinda Raj Bhattarai

Dhirendra Premarshi's Creative Gift

In the winter last year, Dhirendra Premarshi had given me a manuscript titled Malangiyaka Maithili Ekanki ("Malangiya's Maithili One-act Plays"). I consider Premarshi as my younger brother, who has been involved in Sisnupani Nepal for many years along with my own younger brother. I have known him for last three decades. He has been active in many social and artistic movements in Kathmandu through the medium of literature, art and culture. He has been in the forefront of all movements of liberation. As an individual, his contribution to the promotion of humorous/satirical art is significant through which he condemns injustice in the society. He is active in the literary circle through ghazals, singing, seminars and other activities.

I was excited about the publication of Malangiyaka Maithili Ekanki that Premarshi had translated into Nepali. American playwright Lorraine Hansberry's Kismisko Biskun, German playwright Bertolt Brecht's Prithvi Ghumirahekochha, Indian playwright Dharmabir Bharati's Andha Yug, Newari playwright Satyamohan Joshi's Baghbhairav and Maithili playwright Mahendra Malangiya's Malangiyaka Maithili Ekanki are important dramatic works in Nepali translation. Padma Prasad Devkota, Homer Shrestha, Niranjan Baral, Ramesh Kaji Sthapit and Dhirendra Premarshi will be remembered in the history of Nepali literature for their important contribution through translation. Kalpana Ghimire's translation of Albert Camu's The Just into Nepali as Nyayepremi was also performed in Gurukul in Kathmandu, but it is yet to be published.

About Playwright Malangiya

I do not have much idea about playwright Mahendra Malangiya. I had mentioned his name in the section "Modern Maithili Poems" in my work Kaviyik Aandolanko Parichaya ("Introduction to Poetic Movements") published in 1992. Though I tried to go back to the reference works I had used at that time, I am aware that Maithili literature has gone through various developments in the last two decades after I produced that work. I do not intend to provide a detailed history of Maithili literature here. I take help of Dhirendra Premarshi and Raman Ghimire's writings to introduce Mahendra Malangiya. Let me quote Dhirendra Premarshi from his long article titled "Itihaasko Garuarvma Rumaliyeko Maithili Natak tatha Rangamanch" (Maithili Plays and Theatre Lost in the Glory of History):

Mahendra Malangiya is also an Indian writer but he was inspired to write plays by Nepali literary mentor Dr. Dhirendra. He is still living in Nepal and has been continuing his theatrical activities. Malangiya's first play was Lakshmanrekha Khandit. He made the ground of the school at Lohana-Bavangama, where he taught, the laboratory of his plays. After that he wrote dozens of plays and radio-dramas including Ek Kamal Normey, Kamala Kaatak Ram, Lakshman Aa Sita, Okara Aangnak Barhamasa, Katthak Lok, Push Jaad Ki Maagh Jaad, Original Kaam, Gaam Nai Sutiye, and Juayel Kankanni.

In the world of Maithili plays, Malangiya is

considered as the most popular dramatist. He exploited the long tradition of dramatic performance and people's interest in such performances and started writing and performing plays in his own native language. He was able to counter the growing influence of low grade Hindi plays among Maithili audience through the revival of Maithili plays.

Earlier, Mithila Natyakala Parishad (MINAP) and Mahendra Malangiya's campaigns were successful only in Janakpur and its vicinities. The organization and its artists had no national or international exposure. Though MINAP had participated in some festivals in India, it could not take advantage of such participation. The main challenge was that it could not find female artists for its performances. Though Bidhya Chaudhari acted for MINAP for a brief time, she could not be retained.

The political change of the 1990s provided an impetus to Maithili Theater. A group of young people joined MINAP. They brought new vision for the organization. A few artists were also inducted to MINAP. In the beginning, Nepali-speaking female artists were used in the plays. But the lack of Maithili speaking female artists is not an issue any longer.

After MINAP performed a play Okara Aangnak Barhamasa in a theatre festival organized by Aarohanin Kathmandu, the organization was introduced at the national level. That play was scripted and directed by Malangiya himself. When Rekha Karna and Ramesh Ranjan had an opportunity to participate in the acting and directing trainings organized by Aarohan, new dramatic concepts were introduced in Maithili theatre. MINAP's theatre journey continued in the following days.

Similarly, Raman Ghimire in his forthcoming book Rangamanch Ka Jiyuda Sakshi . has included an interesting chapter titled "Adhyaroma Nirantar Baleko Yuta Raanko" (A flame continuously lighting in the dark). Mahendra Malangiya is that flame. Ghimire has tried to introduce Malangiya in a comprehensive way. I quote Ghimire here:

This theatre artist is active in the field giving continuity to the Maithili theatre tradition of a century. He has revived and performed the subject matters that were veiled in the century-long history. He wrote on the issues of women exploitation; he translated the injustices inflicted on the working people, bonded labourers and the poor into his dialogues. He trumpeted the voice of these voiceless people through his theatre works. He has spoken against the long tradition of exploitation and superstition which germinated and grew as bishabriksha (poison-tree) in Maithili culture. Malangiya says, "It is my duty to unveil the problems and social ills. It is the responsibility of the society and the critics to evaluate what impact [my works] made."

Retain yourself, fight and die. These are the essence of his plays where women are made the metaphors. In Malangiya's views, unless women internalize this mantra, their liberation is impossible. His plays warn, "O women! Be ready to retain yourself, fight and die for your existence". He repeats his commitment, "I will continue to write, perform these kinds of plays to caution the exploited class of Mithila."

His language and style of storytelling is understandable for the illiterate people. This is one of the reasons for the popularity of his plays. There is simplicity in the dialogues and the construction and narrative of the plot. Those who criticized his plays earlier for such simplicity have started praising him these days.

Audience will definitely be touched by the plays of Mahendra Malangiya. There are occasions when audience have cried and screamed while watching the play and they have also internalized the lessons from the play. That is why the playwright is confident that plays not only have impacts but are able to make changes in the society.

These days there is a growing trend to introduce these kinds of powerful plays and

playwrights in Nepali. Such developments in a span of one year indicate that Nepali drama is experiencing a change in direction. It is growing with the continuous interaction with world literature and literature from other national languages within Nepal. It is a matter of pleasure for us to know that the number of readers/audience who can value these works is increasing.

Subject Matter of the Plays

After a long interval, Premarshi informed me that Sajha Prakashan has agreed to publish the translation. I was immensely happy. I am writing about Mahendra Malangiya's plays and on Premarshi's translation with a sense of utter happiness. At this moment, translator becomes even more important. He transports an invaluable gift from one world to the other and enriches it with new ideas, knowledge, skill and information. All translators do the same.

In the present collection, there are seven one-act plays:
Birju, Biltu Ra Buwa (Birju, Biltu and Father)
Ek Puriya Bish (A Sachet of Poison)
Mukhakriti (Countenance)
Ek Chheu Khandit Dhagoko (One End of a Splinter Thread)
Yauti Bahulai Aayeki Thiyi (A Mad Woman Had Come)
Gagro Phutalepachhi (After Breaking a Clay Pot)
Mero Samba Dada (My Elder Brother Samba)

Five of the plays are related to the rural life of the plains, especially describing the lifestyle and culture of Mithila. The last play Mero Samba Dada is based on a mythical story. A part of Mahabharata's story is re-created in it. It tells the story of characters like Krishna, Jambi, Shyam, Samba soldier and many others.

All the plays in one or the other way tell the story of relationship between men and women. If studied deeply, they are stories of such women, whose life is turned wretched by poverty, scarcity and sufferings. The play dramatizes the situation of women created by such poverty, and how they are treated by men, family and the society in general. The plays also depict the injustice and discrimination prevalent in the societies and thus help us know the social psychology and our culture in general.

The first play Birju, Biltu Ra Buwa is a story of a common family. It tells us about problems faced by a joint family. The father character lives with his elder son Birju, who is relatively richer. But he shows his affection towards his younger son Biltu, who is poor, illiterate and his children do not get to eat and wear properly. Though Biltu was legally separated from the family, he still lives in his brother's house. The play dramatizes the tension between Birju's family and Biltu's family living under the same roof. It tells how the wife of Birju treats the wife of Biltu and how this difference leads to family tussle and enmity.

The richer brother is not sensitive to the problems of his own brother. He takes him as a competitor and exploits him. When Birju returns home after his education in Kolkata, he wants to share some gifts with everyone in the family. But his wife does not want to do so. She has developed jealousy and hatred against her brother-in-law's family and the situation at home grows worse. The main reason for this tension is the old man's love to his younger son and his children. At the end, the old man is forced to leave the house and go and live with poor Biltu's family in a different place.

The second play Ek Puriya Bish is a conflict between natural human desires and human conscience or the dharma. It dramatizes the conflict between duty and circumstances. It is a story of a family shattered by extreme poverty. When children have to go without meals, the wife asks for a sachet of poison from her husband as she cannot tolerate the situation created by scarcity and poverty. The husband brings poison to rescue her from this suffering. And he gets arrested for the death of his wife. But he defends himself in the

court by pointing at the prevalent social injustices and exploitations and how his deed was a rescue against those intolerable injustices. He is finally released at the end.

The third play Mukhakriti tells the story of a heinous crime. But the crime gets repeated when the victims goes on to seek justice against the crime. There are masters and a servant. He is exploited in an inhuman way. When he grows adult, he finds out that his face matches with the face of his master's son. He realizes that his master had sexually exploited his mother when she worked for the master's family, and that he was illegitimate son born out of that sexual exploitation. Instead of his mother, he continues to work for them now. The master pretends to be a religious person while his mother is in a helpless situation. One day, he kills his master (his biological father) with an axe, and screams:

Don't you see, how he fell like a log
He was sleeping; I hit him on his head with this axe

This play is a story about the quest for justice through revenge. The son acts out to take revenge against the injustice inflicted on his mother. It tells us the story of the suffering of a woman and also reveals the injustice and hypocrisy of a man.

The fourth play Ek Chheu Khandit Dhagoko is also based on the story a woman. The body of a woman continues to get dragged by scarcity and poverty. She was blamed in many ways because she was socially weak. She was called a thief. Due to poverty, she could not protect her motherhood. She says–I had almost become a cattle. But the male character in the play says–Write a story on the subject matter of motherhood and theft and give it a title "Balance".

The fifth play Yauti Bahulai Aayeki Thiyi also tells the story of a mother who struggles against scarcity and poverty. She turns to her neighbours to borrow some food. Her son is hungry. But no one gives her food. She is helpless. She says:

What else is more painful than this?

Prestige is the most invaluable wealth and no one is buying it.

Her intention is clear. She is ready to sell her own body. But her prestige does not sell. People consider her an insane woman.

The sixth play Gagro Phutepachhi tells the story of poverty, jealousy and human attitude. It is also a story about the motherly attitude. In this play, an old woman lives with her son and his wife with a very low income. She invites her married daughters and the children of her daughters' children to feast and gives them gifts to take back home. The son has difficult times managing the expenses; his wife finds it intolerable. This play dramatizes the problems of the joint family, psychology of the mother and the daughter-in-law. When scarcity is about to kill the family, the daughter-in-law says:

There was no good crop; all the ornaments are mortgaged and the debt amount has gone so high. I know nothing about the future.

They ask for money. But there is no single penny left. The son goes mad. He knocks down the clay pot in rage. They think the problem will be resolved somehow.

The final play is Mero Samba Dada. It has mythical characters like Krishna, Samba, Charuvakya, Shyama, and Jambati. The story revolves around Krishna's regime and the life in the palace. Therefore, the dialogues also depict elitism. Shyama is in secret love with Chudak. Charuvakya also loves Shyama. Krishna knows this and they are cursed to become birds. Samaba opts for a penance and asks for a boon to make them human again. The play is structured into ten sections and is filled with mythical, surreal and romantic love stories.

Having discussed the theme and subject matter of the plays, I now shed light on few other aspects of the plays.

Significant Features of the Plays

Plays by Malangiya depict the lively rural cultures of the plains. They show the agrarian lifestyle and how a section of the society is living in poverty for ages. Their food, clothes and ornaments and their attitude about life paint a distinct life of Tarai culture. Some of them are found asking for food, others are living bare life due to the flood. Most of the characters are from the downtrodden section: agriculture labourers, cattle grazers, domestic servants, and the unemployed. These characters and their surrounding force us to imagine a barren province, where people are suffering due to intolerable hunger and poverty. They are helpless. The exploitation is unimaginable; injustice is sickening.

The major element in all the plays is conflict. In his plays, there is a clear division between the body and mind, dharma and law, conscience and nature, affection and duty, and love and discipline. In most cases, we see the flame of struggle between people who are poor and helpless. One brings a sachet of poison to give relief to his wife while the other takes the life of his own father with an axe. Similarly, there are characters that go mad. The final play portrays the characters that have to negotiate their conflict between love and duty. All the plays fulfill the elements of performativity probably because they were scripted for the purpose of performance.

The key aspect of these plays is the lively use of language. The simplicity and lucidity of language, the natural development of the plot including its exposition, climax and resolution, and the dialogue of the characters appear very convincing. These qualities make the plays worth reading.

Translator's role is very crucial in making the play so lucid. Though I had considered Nepali as the mother tongue for Dhirendra Premarshi in the beginning, I later learnt that Maithili is his first language. Translation done by a person who can handle both the languages with equal competency is bound to be of a higher standard.

According to translation science, readability is the essence of translation. It should be able to create similar kind of feelings in the target audience as it does in the source language. The power of equivalence should create similar experiences. I also had a similar experience reading these plays. There are different terms and concept like "paseri", "charuwa" and "magauna" that represent the life in Terai. Premarshi has kept them as they are. This is an appropriate technique. The readers of a translated text should try to affectionately understand the cultural nuances of the society they are reading. Translation is not finding equivalence for everything in the target language.

On the other hand, words and sentences used in the plays belong to illiterate people or people with basic literacy. So it appears natural and easy. Nepali translation also maintains that simplicity. Because both Nepali and Maithili are sister languages with similar cultural and religious contexts, such similarities become obvious. Most of the people in Mithila province are bilingual. Cultural, religious and philosophical similarities are responsible for this affinity.

Words of Praise

At this moment, I want to eulogize Dhirendra Premarshi; but I am afraid that people will think I have become obsessive for love to my brother. In case I dare to do so, I find that words are not adequate. No words are enough for his praise.

I read these plays eleven times but the magic was no less. I memorized many dialogues but I was even more pulled by the power of the plays. This is the power of the playwright. We have been witnessing various kinds of splits in the country. There are fears that we might go far from each other. In such a context, this translation is obviously a praiseworthy work that helps us understand each other better than before. This work allows us to listen to the voice of the country spoken in Maithili; it creates an affinity with the innocent villagers. Those voices of protest, solidarity and change were for the betterment of our rural villages.

Our hearts are filled with joy to learn that these plays are written to eliminate the illiteracy, superstition and feudalism existing in the villages. We are grateful to the playwright for his artistry; we are filled in with affection for the language and culture; and we are obliged to Dhirendra Premarshi for exposing to us that light within the infinite store of Mithila culture. Not only has he brought Mithila culture to the public, but also with his hard work, love and patience, he has accomplished a great responsibility. There might be more important cultural heritages in different other national languages. Let us try to mainstream them through translation.

To conclude, Dhirendra Premarshi has accomplished an important work by translating an invaluable asset. I hope that his work will be an inspiration to many others. I take this opportunity to praise Dhirendra: you have become immortal along with Mahendra Malangiya.

(Translated from Nepali by Keshab Sigdel)

Criticism

Female Consciousness in Gopal Prasad Rimal's *M asan*

Prof.Dr. Hem Nath Paudel

1. Gopal Prasad Rimal as a Playwright

In the arena of modern Nepali theatre, Gopal Prasad Rimal (1975-2030 BS) who adapted realistic style and presented new values and standard of life, is a playwright, who handled with great craftsmanship the issues of female consciousness and their problems. In Nepali dramatic tradition, after Balkrishna Sama's social-idealistic dramatic current, Rimal created conscious female characters searching for female rights and justice, and started prosaic style, symbolic presentation and socialist approach in the production of things. Besides these, his stylistic simplicity and clarity have established social realistic trend in Nepali drama.

Even though he has written and published only two dramas: *Masan* (Crematorium, 2003) and *Yo Prem* (This Love, 2017), Rimal has established himself as a great dramatist. Gopal Prasad Rimal, besides being a staunch patron of freedom, equality, democracy and patriotism, is also a solid singer of revolution. Because of this, we find a strong expression of vigorous rebellious consciousness in his dramas. Rimal is influenced by Norwegian playwright Henrik Ibsen. Ibsen's plays focus on characters, deal with their problems, have on-board a very few characters and are based on realistic life. Adoption of this trend in Nepali theatre led to the rise of a new movement with Sama's moral idealistic tradition, and Rimal got established as a realistic playwright.

Gopal Prasad Rimal is a playwright of female problematics. In his plays, there is a threat and warning against the brutal society that takes women as consumable goods and objects. However, while demonstrating female aggression, the playwright has not given punishment to the brutes and justice to the victims. Being a realistic playwright, there is neither idealism nor any feeling of tragedy in his plays. He only portrays realistic life. There is no compulsion to die and the person must die when unusual situation comes in life and in this present world, there is no certainty and reality that the cruel persons gets punishment or their misfortune happens. Thus, in Rimal's plays, there is no solution but there is only problem.

Balkrishna Sama in his dramas like *Mukunda Indira*, *Ma* and *Andhaveg* also presents female characters but Sama, being an idealistic dramatist, expresses the message of moral idealism, be it in his comedies or tragedies. In *Mukunda Indira*, Indira is presented as a chaste woman and a devotee of her husband, an approach thorough which she gets benefits whereas in *Abdhaveg*, Pampha gets harm and loss by not being chaste and devoted. So, Sama conveys a message that women should be chaste. and devotees of their husbands but this tendency is not found in Rimal's dramas. After knowing Krishna's injustice on her, *Masan*'s young character, generically called 'Lady' abandons him and his house saying 'the house where a woman is burnt alive is a crematorium'. Another character, 'Bride' dies expressing on being unable to receive her husband's love. Against the husband of Bagmati and her co-wife, she involves in a job with a determination to living single.

Rimal has portrayed various forms and situations of the females. It is a feudalistic

character on the parts of the males to deny women the respect they deserve for their feelings and desires, consider them as objects of pleasure and machines for running lineage and the habit of collecting as many wives as they can. Because of the suppressed, wounded and victimized condition of the Nepali women at the hands of such tendencies, Rimal, in his dramas, encourages Nepali women to struggle and revolt for justice. Therefore, Rimal is considered a dramatist of female consciousness.

Rimal's dramas are not comedies or tragedies. For him, life does not end in comedy or tragedy. In his opinion, life is complicated and vast, and is neither comic nor tragic, but mixed. So, he has not adapted Aristotle's theory of tragedy. There is no priority to murder, violence and death in his plays. He has not accepted the Greek tradition to murder the criminal or any other victim, or show the suicide of the criminal after self-realization. Therefore, unlike the tendency of Bankrishna Sama, Rimal does not end his plays in comic or tragic situations. In his plays, there is a development of events and incidents in a simple way. The outer and inner conflicts are strongly presented. Thus, Rimal is also a playwright of inter-conflicts of human psychology.

Although the language of Rimal's plays is artistic, it is also simple and lucid as such. There is no language complexity like the one found in Sama's drama. Because of small plots, there is no amalgamation of irrelevant events, incidents and scenes in his plays. Language and dialogue of the actors, the balanced use of three unities, artistic actions, and the inseparable relationship between dialogues, characters and events are the stylistic qualities of Rimal's plays. Presenting realistic events of life by emphasizing on characters rather than on the story and effective-productivity rather than character is the dramatic quality of Rimal.

In totality, Rimal, as a realistic progressive dramatist, is the beginner of the second phase of the modern Nepali dramas.

2. Voice of Female Consciousness in *Masan*

In the field of Nepali drama, *Masan* (2003) marks the beginning of the second phase and, is a trend-setter in realistic tendencies. It is a well-known play. Divided into two parts, this play has five plus five, that is ten scenes. Apart from this, the play also includes a concluding part. Focused on a middle-class family from Kathmandu, the tyrannical characteristic of the males in a feudal society and various other problems of the females victimized by such a situation have been portrayed in this play.

Masan is a social-realistic drama. In it, the Nepali society plagued by feudal traditions and conventions has been portrayed. This drama reveals how men treat women with injustice and tyranny in a feudalistic society.

The story of the drama is related to a woman's aggression for not getting love and happiness as a child in Nepali society that does not give any value and importance to women's feelings. In such a society, women are cheated by their own husbands though they become beloved or wives. Krishna, the hero of the drama is a feudal person, who has three servants. He lives with his father, mother, two wives, a miserable sister and a nephew. In the society, polygamy is rampant. Women are not respected as creators but are considered objects of luxury. The desire to keep one's wife always young and if that is not possible bringing another young wife for the sake of pleasure is the characteristic of the man described in this play. Not only Krishna but also the husband of his female servant Bagmati has married a second wife ousting his wife from his house after she has given birth to children thinking that he cannot get extreme sexual pleasure from a woman who has had children. Krishna's sister has also been victimized by her husband in the same way. This is also true for this servants. When the male servants of his house are not satisfied with their first wives, they express their desire to marry another woman. These all are the characteristics

of a feudal society.

The society depicted in Masan is traditional. Superstitions and conservatism are rampant in the society. Discussion about second wife's birth-chart and elderly people's pilgrimage, calling young ladies by the name of Helen imitating the culture of the royalists, alleging a wife of being gigolo or male prostitute (e.g. Krishna's sister), and *mana-pathi* tradition in wedding are examples of traditional conservatism. In order to show women victimized by the males in such a society, Rimal has created a feudal society in this play.

The main characters of *Masan* are Krishna, Young Lady (Helen) and Bride. Their characteristics are presented here. The main person around which the dramatic problem revolves is Krishna. Due to his irresponsible and selfish nature, the lives of Bride and Lady have become worthless. He is a heartless wicked man. Outwardly, Krishna appears to be simple, serious, ideal, civilized and honest but inwardly he is complex, cruel, tyrannical, deceptive and extremely selfish. Although he seems to be an unstable character, he is rigid and unchangeable because the feelings of his heart have never changed. Without her knowledge, he has destroyed the fertility of Young Lady (Helen), whom he had love-married, by giving pills to enhance his sexual satisfaction. He has made three mistakes: making Lady barren, bringing Bride as his second wife and unloving his new-wed Bride. In order to fulfil his sexual passion, he has done injustice on Lady on one hand, and on the other, for the compensation of this mistake, he has done injustice to Bride. Krishna, who is the destroyer of one woman's fertility and murderer of another woman is a trivial virus of irresponsible passion. He represents the contemporary men of Rana class.

Lady is the heroine of the drama. Most of the actions of the play are conducted by her. Unlike Krishna, she has played a successful role as a wife, a daughter-in-law, a housewife and a beloved. Lady has represented the suppressed Nepali women contaminated by feudal conservatism. Lady, who is extremely faithful, loving and skilled as a housewife, is also an honest daughter-in-law, a non-jealous and non-envying mistress and a lovely and sympathizing woman for all, and has great enthusiasm for motherhood. For the sake of her sacred feelings of motherhood, she encourages Krishna to bring in his second wife. She is not happy about having the nephew 'Motu' as their adopted son. He is a so-called love of her family. She needs a child from her own husband's blood. Therefore, she wants 'not a so-called love but a mandatory real love'. Later, she becomes very happy after Bride gives birth to a son.

This drama has exposed her inner, suppressed desires and humiliation of not being a mother. Lady has used this feeling in the path of service, devotion and love but her nervousness and occasional faintness on the occasion of Bride's wedding show that she has extreme psychological conflicts going on inside her mind. When Lady knows that she has been made bondage by Krishna, she begins to threaten all males and advocates for the freedom and rights of the females. She becomes aggressive and rebellious. In this way, Lady appears in this drama as an unstable round character.

Bride is a co-heroine of *Masan*. Seen from the first scene to the penultimate scene of the drama, Bride is a semi-mute, self-suppressed and a humiliated character, unable to compromise with actual situation.. She represents an average woman. Bride receives a lot of love from her rival woman, Lady, because she was brought in by Krishna in that house at the request of Lady in order to produce children. But she never receives actual love from her husband. In spite of getting any amount of love, kindness or sympathy, women are never satisfied until they become mothers. On one hand, it is clarified by the character of Lady that after becoming mothers, women's existence and pride ensue in the society. On the other hand, the character of Bride depicts that

material pleasure and bodily satisfaction are not enough; we also need mental satisfaction and women are not satisfied until and unless they get husband's love and property right.

The two women characters created by Rimal are quite different from each other. 'Lady' is the symbol of emerging female consciousness and revolution whereas 'Bride' is the symbol of Nepali traditional women mentality. Bride is not able to alter the unjust act of depriving her of her due love from her husband and the property right. Rather she suppresses these desires within her, becomes melancholy, and ends her life herself. On the other side, Lady, after knowing that her husband has made her barren and unproductive, revolts against the tyrannical male character crying "the house that burns women alive is a crematorium".

By the medium of these two women characters, Rimal has tried to present the problems of Nepali women and their consciousness. Lady is sympathetic, self-controlled and practical toward her co-wife. She can adjust with any situations. However, Bride never understands the real situation. She is uncontrolled and impatient and a character too weak to fight against insufficiency. In spite of having like-minded father-in-law and mother-in-law, sympathetic servants, and a baby boy in her lap, Bride is not satisfied due to psychological reasons. A co-wife always wants from her husband more love than the love the husband gives to his first wife, and she wants the key and padlock of the house with her, but Bride does not get all these things. She is victimized in the house, because Lady is more beautiful than her, all the house members like Lady, all members work due to the guidance of her rival, while going to her husband's room to meet him after wedding, she gets humiliatedby her husband and again only after the kindness of her step-woman, she gets chance to meet husband. These are some of the causes of Bride's sadness. This is the average mentality of Nepali women. Bride represents this mentality in the drama *Masan*.

Lady is the symbol of Rimal's female consciousness. She has echoed Rimal's rebellious voice. The purpose of Rimal is to portray various situations of women who are dominated and suppressed by men, and to encourage them to stand against the suppression and domination for justice. In this play, Rimal has tried to convey the message that the rights and responsibilities of man and woman should be equal. The expression of Lady: "One has absolute rights to do anything but the other should not do the same thing as responsibility; whose law is it"? is the crux of this drama. Expressing progressivist consciousness with the above opinion, Rimal has raised the voice of female consciousness. This is the main purpose of the drama.

From the viewpoint of its subject matter, atmosphere and result, the title of the drama *Masan* is justified. The word '*masan*' (crematorium) refers to the desolate and terrified graveyard after the death of a human. Here, it is used literally for a dramatic purpose. The woman, Lady of *Masan,* being a victim of passion that made her infertile, arrives at that crematorium whereas another woman, Bride, also has reached with horrified, heart after being deprived of the chance of being alive. The house where a wife does not get her husband's love is *masan*—a crematorium where someone is burnt alive. Supression with injustice and cruelty is analogous to reaching a crematorium. This justifies the title of the play.

The structure of the drama, *Masan* is simple because it is written in a realistic style. The drama is short due to the abandonment of unnecessary story and characters, and the inclusion of only necessary events and characters. The use of dialogue that matches and reveals the intellectual level of the characters' personality has created naturalness. The style is polished, experienced and aesthetically refined. There is enough use of proverbs, wits and literary expressions. In this drama, Rimal has used simple and sweet prose, breaking the tradition that the

language of a drama should be complex and written in verse. In order to make the story and characterization effective and impressive and to highlight the inter-conflicts of the characters, Rimal has used appropriate language and dialogue in appropriate time and place. Thus, *Masan* has simplicity and clarity as well as effective productiveness.

In conclusion, *Masan*, in the arena of Nepali drama, is a strong progressivist drama that highlights the women's problems and rebelliousness based on the new value of life.

References

Joshi, Ratnadhoj. (2037). *Nepali Natakko Itihas* (History of Nepali Drama). Kathmandu: Nepal Royal Academy.

Pradhan, Hreedaya Chandra Singh. (2027). *Kehi Nepali Natak* (Some Nepali Dramas). Lalitpur: Sajha Prakashan.

Rimal, Gopal Prasad. (2003). *Masan* (Crematorium). Nepal Bhasa Prakasini Samiti.

Upadhyaya, Keshav Prasad. (2055). *Rimal: Byakti ra Kriti* (Rimal: Life and Works). Kathmandu: Sajha Prakashan.

Upadhyaya, Keshav Prasad. (2056). *Natakko Adhayan* (A Study of Drama). Lalitpur: Sajha Prakashan.

Translation of Prof. Dr. Hem Nath Paudel's "Gopal Prasad Rimalko Masan Natak ma Nari Chetana" done by Prof. Rudra Paudel

Criticism

Playwright Balkrishna Sama and His Play *Amar Singh*

Prof. Jagat Upadhyaya 'Prekshit'

1.A brief introduction to Balkrishna Sama as a playwright

Balkrishna Sama is a pioneering playwright in Nepali literature. Balkrishna Shumsher Jang Bahadur Rana is the person who is well known as Sama, i.e. equal in Nepali literature. Sama was born on 24th Magh 1959 B.S. in Gyaneshwar Kathmandu. He was the youngest son of Samar Shumsher Jang Bahadur Rana and Kirti Rajya Lakshmi. Pushkar Shumsher, another famous literary figure, was his elder brother. Since his parents were residing in the Palpa district, he was brought up byhiswet nurse and father's sister in Kathmandu. As a grandson to the army chief Dambar Shumsher, he was born with fortune. Sama got an opportunity to start his education from Pandit Til Madhav Devkota. He grew his interest in music by listening to his wetnurseand aunt singing the verses from *Ramayana* and *Krishna Charitra.* He studied in Durbar High School and completed matriculation from Kolkata. Sama received education on Sanskrit, English, Mathematics, Music, etc. in the palace itself. After matriculation, he continued his study majoring in Science. Before he completed the intermediate level, he was appointed to the post of captain. Later, he was promoted to the post of Lieutenant Colonel. However, he had a feeling of loss throughout his life for not being able to complete his study.

Though born in an aristocratic family, Balkrishna Sama was decent, polite, peace-loving, contemplative, and emotional since his childhood. Primarily, two factors contributed to his emotional, peace-loving, and rebel disposition later. Firstly, he was envious of his brother who was 13 months older than him. His brother Pushkar Shumsher was suffering from paralysis that attracted more sympathy from his family members and relatives. Seeing this, Sama always felt that if he was not able-bodied, he would also get love and care from others. Moreover, though he had his own mother, she didn't breastfeed him. The wet nurse suckled him instead. It is because of the aristocratic mentality that a mother's charm would decline if she breastfed a child. Sama was plagued by deep-rooted agony. As a result, he started to stay aloof, anxious, often sobbing, and getting lost in his own imagination. This ultimately made him an intellectual poet.

Secondly, Sama's grandfather Dambar Shumsher was the bodyguard of Maharaja Sir Bir Shumsher Jung Bahadur Rana. He was brutal and tyrant in nature. He used to thrash and threaten helpless people for no reason. In contrast, his grandmother was a perfect example of a humanitarian woman. She would share love and care for all. Sama hated his grandfather, but had deep respect for his grandmother. Inhis grandmother's company, he developed a loving, compassionate, peace-loving, and outgoing attitude, whereas he grew rebellious towards his grandfather's unjust, cruel and inhuman behavior. Sama has portrayed his wicked and despotic grandfather as Hiranyakashyapu, the demon in his play 'Prahlad', and as Edwil in his play 'Prempinda'.

The story behind Sama's rejection of the aristocratic title 'Sher Jung Bahadur Rana' is painful but worth mentioning. Sama wrote 'Mutuko

Byatha', (The Pain in the Heart) in 1986 B.S. which expresses his pain of leaving his study and suffocation in the Army. Fortunately, his life took a new turn after the publication of this play. He was appointed as a faculty at Tri-Chandra College in 1987 B.S. He might have enjoyed the job in an academic institution because he always dreamed of completing Master's level. Sama also got a chance to design question papers and check answer sheets as an expert.

He once found an answer sheet where it was written, 'If Prithvi Narayan Shah had not united Nepal, the cowardly Ranas would be nowhere today.' Surprised, Sama showed it to the education director Mrigendra Shumsher who later informed Padma Shumsher about this shocking note. Padma Shumser later reported it to the Prime Minister Judda Shumsher. Nobody knows why Sama reported that statement to the Ranas. There are two possibilities; he wanted to show people's anger towards the Ranas or he wanted to winthe Rana rulers' favor. Judda Shumsher flew into rage and put Laxmi Nandan Chalise in jail where he suffered a lot. Later he suffered from tuberculosis. When he grew very fragile and looked as if going to die, he was released in 2002 B.S.at the humble request of his father Chakrapani Chalise. However, he died shortly after his release. The incident haunted Sama a lot, for he felt guilty for Chalise's death.

Though born into the Rana family, he grew to hate them. He thought that such a cruel and tyrannical hereditary rule would not last for long. Along with the liberation movement in India, the freedom-seeking wave entered Nepal. With this, some secrete political organizations were also formed in Nepal. After the incident of killing four anti-Rana activists in 1997, the feelingof hatred towards the Ranas spread all over the nation. As soon as the 'Angrej Bhagao' (Drive the British Away) movement freed India from the British Rule, the anti-Rana protest started formally in Nepal. Sama thought that it was the right time to show his support for the people. Therefore, he resigned from the position of president at the Nepali Bhasa Prakashani Samit (Nepali Language Publication Committee), and joined the protest. While delivering an anti-Rana speech in a public program, he was arrested along with his son Janardhan Sama. Sama made three commitments as he saw his comrade Nhuchheman, who was arrested together with him, was killed by the police. The first commitment he made was that he would never follow the tradition of saying 'Swosti' or touching feet of the elders, rather he would say 'Namaste' to all. Secondly, he would use honorific terms to respect all the people equally. Sama's third commitment was that he would introduce the Bhadgaunle cap as a symbol of nationalism and wear it. Sama, who made those commitments in prison, was released after the success of the anti-Rana movement in 2007 B.S. Then he visited the family members of Nhuchheman. There and then he decided to abandon the suffix 'Sher' (literally 'lion')from his surname. He took this word or suffix as the symbol of violence and cruelty against people. In addition, he made a commitment to abandon the term 'Jung Bahadur Rana' from his name. He returnedhome with a commitment that he would use 'Sama', meaning 'equal',to commemorate the martyrs. This is how Balkrishna ShumsherJunga Bahadur freed his name of 'Sher Jung Bahadur Rana' and kept only Balkrishna with the addition of Sama. Not only him but also his wife and children started to write Sama thereafter. It can be termed as a great and historical leap forward in his life.

Balkrishna Sama was a versatile Nepali writer. He contributed to almost all genres of Nepali literature. Inspired by his guru Teel Madhav Devkota and father Samar Shumsher, he had written a poetic line '*Makha muthiko sabalai heri, raj hunchha Narayan Bishnu meri*' (My Lord Narayan Hari reigns the world taking care of a fly in the fist and all others) in 1967 B.S.It was his initiation into creative life. Then continued his creative journey. Sama started to write plays as

early as 1977-78 but his creation got published in 1986 for the first time. We can discern five dimensions of his life:philosopher, artist, writer, educationist and political figure. As a literary figure, he penned in almost all genres ranging from epics to a short play of just 126 words. Similarly, he wrote 12 stories and many memoirs and essays. His published works include 16 plays, 10 one-act plays, 221 poems collected in 'Balkrishna Samaka Kabita' (Poems of Balkrishna Sama), and epics 'Chiso Chulho' (Cold Hearth) , and 'Aago ra Pani' (Fire and Water). Other published works arehis autobiography 'Mero Kabitako Aaradhana' (Upasana 1-3) (Invocation of My Poetry), a book on Nepali fine arts 'Nepali Lalitkala', and biography 'Hamra Rastriya Bibhutiharu' (Our National Heroes).

His work 'Niyamit Akasmikata' (Regular Incidentals) is a trailblazing philosophical treatise in the Nepali language. His philosophy is syncretismof spiritualism and materialism. In this philosophical text, he has attemptedto project *niyamit*(regular) as spiritualism, whereas *akasmikata* (incidentals)as materialism. In this work, he has projected himself as an ideal socialist philosopher. Besides, his play 'Prahlad', and epics 'Aago ra Pani' and 'Chiso Chulho' also represents his syncretic philosophical thought. The following lineshows how Sama focused on the syncretic approach to spiritualism and materialism:

gyan bigyanko hat jodnu pardachha karmama
(In our deed inner knowledge should join with science)
(Prahlad)

Sama advocates the philosophy of class syncretism rather than the philosophy of class struggle. He says,

One day fire should die out and water should be hot to be compatible with each other.

The one falling on the ground should rise and the one standing should bend down to share their kisses.

(Ago ra Pani)

Sama's philosophy has got its inspiration from eastern philosophy, culture, and civilization. He looks like an enlightened thinker of the Vedanta philosophy and a relentless seeker of 'let all be happy'. He also appears as an ideal Vaidik philosopher with his deep love for equity:

Let no one be ruled
Let no one ever need to rule others
Let there be no fence,
Let there be no door
Let nobody win
Let nobody lose

(Ago ra Pani)

His ideology echoes the essence of Shrimad Bhagwat Mahapuran-There was neither a king nor a ruler in the primitive socialist system. There was no one to punish. Rather the people used to take care of each other keeping religion, self-knowledge, and duty in their minds.

Humanism is another important aspect of Sama's philosophy. He always keeps man at the center of his philosophy. For him, human welfare lies at the heart of region, caste, color, wealth, etc. He says,

Man has no other caste than man itself.
Where he stands is his own country, there is no foreign land for him.

(Chiso Chulho)

Sama had immense love for his language. He was worried to see the Ranas' craze for English. He always advocated for the equal status of all languages. Sama played a significant role to change 'Gorkha Bhasa Prakashini Samiti' (Gorkha Language Publication Committee) to 'Nepali Bhasa Prakashini Samiti' (Nepali Language Publication Committee) established in 1970 B. S. Since 1990 B.S, the yearthat Juddha Shumsher became the Prime Minister, Sama led the organization as a chairperson. He strongly believed that the identity of a nation lies in her language, civilization, and culture:

Language is civilization, it's our achievement
Victory and prosperity live long in the

language
Language is our life.

(*Mukunda-Indira*)

I am indignant and so is my language but I love my mother tongue. When you love something, you think it's great. That's why I say, our language is a (great) language.

('Dhruba' Preface to the first edition)

The following are the published works of Sama, who dedicated his whole life serving Nepali language and literature, and art and philosophy:

Plays

1.*Mutuko Byatha* (1986)
2.*Dhurba* (1986)
3.*Mukunda Indira* (1994)
4.*Prahlad* (1995)
5.*Andhbeg* (1996)
6.*Bhakta Bhanubhakta* (2000)
7.*Ma* (2002)
8.*Prempinda* (2009)
9.*Amar Singh* (2010)
10.*Bhimshenko Antya* (2012)
11.*Talamathi* (creation 1978-80, published 2023)
12.*Tansenko Jhari* (creation 1978-80, published 2027)
13.*Amit Basana* (creation 2016, published 2027)
14.*Swasni Manche* (creation 2007, published 2033)
15.*Motiram* (creation 2023, published 2033)
16.*Wu Mareki Chhaina* (creation1999, published 2035)

One-act plays

1.*Bokshi* (1999)
2.*Bhater* (2009)
3.*Tapobhumi* (2014)
4.*Bidhyadhanam* Sarbadhanapradhanam (2020)
5.*Nalapanima* (2020)
6.*Ranadullav* (2020)
7.*Buhartan* (2020)
8.*Atyadhunikata* (2020)
9.*Matoko Mamata*
10.*Birami ra Kuruwa* (2027)

Poetry

1.*Aago ra Pani* (short-epic, 2011)
2.*Chiso Chulo* (epic, 2015)
3.*Balkrishna Samaka Kabita* (a collection of around 221 published and unpublished poems written between 1991 and 2038 BS, 2038)

Philosophy

1.*Niyamit Aakasmikata* (2005)

Prose

1.*Mero Kabitako Aaradhana*-1 (2023)
2.*Nepali Lalitkala* (2022)
3.*Hamra Rastriya Bhibhutiharu* (biography, 2024)
4.*Gaaunpharka* (2024)
5.*Mero Kabitako Aaradhana*-2 ra 3 (2054)

Narrative essays

1.*Tyo* (1992)
2.*Paani* (1993)

A Collection of Short Stories

1.*Taltal* (2046)

Edited by Dr. Dayaram Shrestha, this collection comprises of the following stories:

1.Bardahama Shikar (*Sharada*, 1991)
2.Parai Ghar (*Sharada*, 1992)
3.Dewrali (*Sharada*, 1993)
4.Taltal (*Sharada*, 1993)
5.Khukuri (*Sharada*, 1994)
6.Sharan (*Kathakusum*, 1995)
7.Kaikeyi (*Kathakusum*, 1995)
8.Phukeko Bandhan (*Kathakusum*, 1995)
9.Harisiddi (*Sharada*, 1997)
10.Yoban ra Sundarata (*Sharada*, 1998)
11.Tanganghoda (*Jhyalbata*, 2006)
12.Rupko mulya (*Nepali Paathsangraha*,

2012)

13.Nauli (*Rooprekha*, 2019)

14.Bhut (*Bhalupuran*, 2031)

Sama's play, poetry, prose, and fiction evince the artistic infusion of intellect, imagination and his knowledge of philosophy, art, and culture. Sama also contributed to Nepali literature by leading various organizations related to language, literature, culture, and communication. Hebecame the chairperson of Nepali Bhasa Prakashani Samiti in 1990 and the director of Radio Nepal in 2008 B.S. Later, he served as the Editor-in-Chief of Gorkhapatra in 2012. In 2014, he was appointed member of Nepali Sahitya Kala Academy (later changed to Nepal Academy and Royal Nepal Academy (The organization is called Nepal Academy now). In 2025 B.S., he became the Vice-Chancellor of the Academy and remained a life member. In recognition of his incomparable contribution to Nepali literature, he was honored with Sajha Award (2027), Tribhuvan Pragya Award (2029), Prithvi Pragya Puraskar Award (2035), and D Litt(2029).

Sama left this world on Srawan 6, 2038 B.S.He is best remembered for his unparalleled contribution to the nation as a thinker, playwright, classical poet, and artist. Like Shakespeare, he wrote comedy and tragedy. He mostly drew the subject matter for his play from history and mythology. Moreover, he wrote the plays in un-rhyming verse. That is why, he is also known as the Nepali Shakespeare and 'the king of Nepali drama'.

This article aims to analyze Sama's play *Amar Singh*. The purpose of presenting biographical information on the playwright is to familiarize the younger generation with the contribution of this literary giant who dedicated himself for the cause of Nepali literature, forsaking his power and prosperity.

2Analysis of *Amar Singh*: A Historical Play

Amar Singh is a tragedy revolving around the life of a historical figure. In terms of date of creation and publication, it is the second historical play by Sama. This play was published in 2010 B.S. after the publication of another play 'Bhakta Bhanubhakta' (Devotee Bhanu Bhakta) in 2000 B.S. *Amar Singh* is set in the context of the Anglo-Nepal war (1814-16A.D) when so many brave Nepalis sacrificed their lives fighting against the British troops. Further, the play projects the helpless condition of Nepalis while signing the Sugauli Treaty to stop the war. This is a poetic play written in un-rhyming verse. This87-page-long play comprises four acts, and fourteen scenes from Kathmandu, Makawanpur, Thankot, Sindhuligadhi, and Gosaiunda in Nepal, whereas Ludhiyana (Punjab), Surajgarh, Satalaj, and Kumaon in India. Though the subject matter is taken directly from history, Sama has constructed its plot in a rather unique fashion. The historical fact shows that Amar Singh Thapa, who got teachings from Prithvi Narayan Shah, raised voice against the Trade Treaty with the British, saying, 'The trade treaty with foreigners sucks blood of our citizens.' It was the time when Damodar Pande was the Prime Minister of Nepal. Amar Singh was arrested and imprisoned for his rebellious remark. Later, Rana Bahadur Shah released him and assigned the duty to end the brutality of Sansar Chand, the king of Kangra. Amar Singh conquered the princely states like Karnali, Doti, and annexed Almoda, Kumaun, Gadhwal, Kangada to Nepal. The British Empire was encroaching on the Nepali territory from the south. During this time, there was a dispute regarding the villages lying on the borders. The British claimed Butwal and Syuraj of Nepal as theirs. Amar Singh loved the villages like his own children. In the beginning, Nepal left some villages in an attempt to make the peaceful settlement. But the British didn't stop the encroachment. This ultimately led to the Anglo-Nepal war. Amar Singh Thapa suggested Prime Minister Bhimsen Thapa that the time was not favorable for war but the Prime Minister didn't heed his suggestion. As the war was declared, Amar Singh Thapa as a commander threw himself into

battle. The play is set against this historical background. It revolves around the Anglo-Nepal war fought to protect sovereignty, and inculcate the sense of patriotism in the citizens. What follows is the analysis of the play *Amar Singh*.

2.1 Acts, scenes and story

The play begins with a prologue. The four-act play comprises four scenes in the first act, three scenes in the second, four scenes in the third act, and again four scenes in the final act. With the prologue by the *sutradhar*[1], the storyunfolds. The story constitutes the historical facts (the authentic story) as well as some contextually relevant imaginative elements. The prologue reveals the background information about Amar Singh's ancestors, and his role and position in the Nepal Army before the Anglo-Nepal war. It also reveals the arguments for and against going to war. In the first scene of the first act, there is an eleven-hour long meeting regarding this dilemma. In the meeting, Guru Ranganath Paudel, Dalbhanjan Pande, Ranadhoj Thapa etc. are against war, while Bhimsen Thapa, the seventeen-year old king Girvan Yuddha, Queen Mother Lalit Tripur Sundari, and other courtiers are in favor waging war against the British. Amar Singh thinks that it is not a good idea to go to war without adequate preparation. His suggestion goes unheard, and finally war is declared. When King Girvan asks the Prime Minister about the possibility of victory, he enthusiastically says that there are thousands of brave and patriotic Nepalis who have courage to build a human fort against British soldiers. He further tells how the Chinese soldiers were unable to conquer Nepali soldiers and they had to retreat from Jitpur. Likewise the British soldiers were unable to advance beyond the fort in Bharatpur. With these words, he emboldens the young king and consoles him.

The second scene of the first act takes the audience to the British barracks in Ludhiana. The British soldiers under the command of General Ochterlony make a plan to invade Nepal. Ochterlony believes that Nepal can be invaded by diplomatic conspiracies, not by war. With his diplomatic dexterity, he establishes friendly relations with Ram Sharan Singh, the king of Hindur. General Ochterlony takes all the information he requires about Nepali soldiers from one of the citizens of Hindur. The General claims that he has every right to live in the beautiful Himalaya. At this juncture, Kisan Singh, King Nahan's brother, reveals that the British treat the Indian rulers of the princely states as their slaves.

Kisan's remark 'Lord, we can't dance with those wild hilly monkeys in trees. Rather, we are ready to follow British and eat their leftovers' clearly shows that they had accepted British supremacy. *Ochterlony* mentions that he gave Amar Singh an option to surrender. In return, Thapa would receive 50,000 rupees annually from the British government. He further says his offer infuriated Amar Singh.

The third scene concerns the bank of River Satalaj where the Nepali soldiers are staying. The soldiers under the command of Amar Singh Thapa are taking rest on the riverbank. Amar Singh thinks that they should retaliate only if the British attack them. Suddenly, without any warning, the British force attacks the Nepali soldiers under the command of Balbhadra Kunwar in Nalapani. The British troop blocks the water supply and surrounds them. In this scene, we see how Nepalis including children, women, and the elderly use stones, sickles, axes, etc. to fight back against the British troop. Without food and water supply, they fight from the fort destroyed by the cannons. A Nepali soldier shares the news of the death of General Gillespie. Amar Singh and Bhakti Thapa are infuriated to learn about British's attack without any warning. Bhakti Thapa, who wants to attack the enemy first, and Amar Singh, who is waiting for retaliation, both ready themselves to fight against the British force.

In the first scene of the second act, two

1. Sutradhar is the central character that introduces and structures the play. It originates from Sanskrit play.

Nepali messengers meet by the Sarayu riverbank near Almora of Kumaun. One of them has returned from the west after examining the situation of Nepali soldiers, while the other has come from Kathmandu to see the current situation of the battle. The messenger from the west narrates the brutality of the British force. He further narrates that the Nepali soldiers with stones, axes, etc. couldn't get victory over the well-equipped British troops. Despite the fact that the Nepalis fought bravely, they couldn't save territories like Nalapani, Nalagadh, Dibru, Ramgadhi, Taragadhai, Jurjure and Chamba. He says that though the warriors like Balbhadra, Bhakti Thapa, Amar Singh Thapa, and Ambar Panta fought bravely, they couldn't get victory for want of support from the headquarters. The messenger also shares information that only seventy out of five hundred Nepali soldiers survived the battle. The messenger from the west tells that British soldiers have surrounded Amar Singh Thapa and Bhakti Thapa in Malau. According to him, Chandra Shekhar, who was arrested by the British, has been rescued by Gajraj Mishra. He says that some Nepali soldiers have betrayed their own comrades. An armed British messenger, hiding beside the bushes, is listening to their conversation, and he captures both of them. The English messenger searches their bodies, and finds a letter in the pocket of the messenger from the west. The letter by Bam Shah to be sent to Kathmandu contains the information about war. The British messenger takes the letter and walks away.

The second scene of the second act is about Surajgarh located on the right of Malau beside the Satalaj riverbank where we can see Amar Singh Thapa and his soldiers. The sounds of cannons and guns are heard in the background when the English messenger hands a letter from Ochterlony to Amar Singh Thapa. In the letter, Amar Singh Thapa is offered the kingship of Garhwal and his family is offered the land that gets thirty thousand rupees in revenue each year. Amar Singh takes the offer as an insult to all Nepalis:

They are showing me beef, and mocking me like a dog,
They are tempting and calling me.

He takes the letter and throw sit on the ground. His soldiers chop it into pieces with the *khukuris*. On the other hand, the British is continuously attacking the fort of Malau. A Nepali soldier drenched in blood comes out of the fort and informs that the other side of the fort has collapsed. Thisinfuriates both Amar Singh Thapa and Bhakti Thapa and send the British messenger with a message that they will fight to the last breath. Bhakti Thapa expresses his patriotic feelings with a belief that dyingthe battlefield far better than accepting such a disrespectful proposal. The septuagenarian enters the fort to assault the enemies. Ramdas Singh, the son of Amar Singh Thapa, and Hridaya Singh Thapa, the son of Bhakti Thapa talk about the deteriorating situation. According to them, despite the good leadership of Amar Singh Thapa and Bhakti Thapa's irrepressible courage and strength, the Nepalis couldn't get victory over the British because of poverty, destitution, and lack of support from the headquarters. In this scene, the play reveals a love affair between Ramdas and Chunari. Amidst the terror of war, the talk about love and marriage makes the situation romantic in some way. In this scene, Bhakti Thapa makes the ultimate sacrifice. Some eight hundred Nepali soldiers die in the war. Respecting his bravery and patriotism, Amar Singh Thapa drapes the national flag in his body, while Ochterlony has sent a *dosalla*, a woolen shawl in his honor. The white soldiers also feel overwhelmed to see thedead body of the warrior like Bhatki Thapa. Amar Singh Thapa shows discontentment saying that some Nepalis deceived him. Despite this, he is resolved to fight for the nation until his last breath. Bhatki Thapa's two wives go to *sati*, burning themselves on their husband's pyre. Before processing for *sati*, the elder wife dips her index finger in the blood oozing from her husband's chest and puts it as *tika* on Amar Singh's forehead. Here, she openly praises

the British soldiers for honoring her husband's bravery.

In the third scene of the second act, two *gaines, the traditional fiddle players*, seated beside the pyre of Bhakti Thapa, are singing a song inspiring and emboldening Amar Singh Thapa and his soldiers. Here, a *jamadar* open-heartedly praises Bhakti Thapa's honesty, patriotism, and heroism. To bring soldiers out of the grief and encourage them to fight bravely, the *gaines* sing a song in a heroic mood. The patriotic song says 'Nepali brothers, come and join hands, wield the swords to keep our motherland free'.

The act has altogether four scenes. The first scene is about a letter from Ghamanda Thapa to the royal council in the Hanumandhoka palace after Nepal lost the battle of Malau. Before the council Chandra Shekhar reads the letter addressed to Bhimsen Thapa. In this letter, the lack of arms, foods, and the insufficient number of soldiers are pointed out as the main causes of the defeat. The letter mentions that Nepal lost the war due to Bam Bahadur Shah. It further suggests that since British soldiers have occupied a large territory of Nepal, Nepali soldiers should stop the war. Lalit Tripur Sundari, the Queen Mother, shows her dissatisfaction and seeks suggestions regarding the British's proposal to sign the treaty claiming the lands from Mechi in the east and Mahakali in the west. The British proposal also mentions that Nepal will get two lacs annually from the British Government in India. Guru Gajaraj Mishra opines that Nepal should sign a treaty with the East India Company and should be content with the territory between Mechi and Mahakali. Royal Priest Rangnath also supports Gajraj Mishra's view. Ranadhoj Thapa, the son Amar Singh Thapa, supports Gajraj's view and becomes happy to know that Nepali youths will get a chance to join the British force. Amar Singh Thapa is enraged by his son's attraction to the British force. It saddens Amar Singh Thapa to see the royal council's move because it led the nation to war against his suggestion and now it is going to sign the treaty at the cost of national sovereignty and interest. He accepts the fact that Nepal lost the war because of the insufficient number of soldiers and weapons and a lack of trustful environment. But he still has the hope of getting victory if fought united. Amar Singh's son and his assistant Ramdas support his ideas. Gajraj remains in the minority before Amar Singh's patriotism. Kaji Dal Bhanjan Pande is also in favor of war. Finally, the king announces, 'I will go to war and it is necessary. For a king, it is better to be burnt in the battlefield than to flee from it.' After listening to the king's view, Bhimsen Thapa finally decides to go to war against the British. In the second scene of the third act, Kathmandu dwellers are talking about the upcoming war. This section of the play shows people making guns, cannons, and other weapons. They are talking to each other. According to them, Kaji Amar Singh Thapa is going to Sindhuligadhi, Samsher Rana to Makawanpur, and Kaji Ranajor to Hariharpuri to fight against the British. Invoking the Bhairav, the god of war and Lord Shiva seated atop Mt. Everest, a trisul in his hand, the *gaines* sing a song encouraging the Nepalis to wield swords to protect the nation. In the third scene, the soldiers and the singers reach a village far from Kathmandu singing and playing music to arouse feelings of patriotism in the people. In this scene, an elderly woman who has lost two of her sons in the war condemns the *gaines* and the soldiers and tries to stop her youngest son from going to war. However, the youngest son feels his blood boiling inside and joins the force, unheeding his mother's word. The fourth scene is similar to the second and the third ones. This short scene has no dialogue. Singing patriotic songs, the soldiers and singers are walking uphill in Thankot.

There are four scenes in Act Four. Devinach, the dance of goddess, at Asan Chowk alludes to the ongoing dreadful war. This is the shortest scene in the play. There are hundreds of people watching the dances related to Mahakali,

Mahalaxmi, and Maha Sawaswoti. This scene shows the sense of emergency prevailing in the nation. As the peaceful Himalayan region turned into a battle field, goddess Parwati takes the role of Kali, the destroyer, and even Laxmi, goddess of wealth, and Saraswoti, goddess of knowledge, are bound to wield swords to protect this land. This scene shows that the blood boiling in the youths' veins can be assuaged only by using it for the sake of the nation. Furthermore, there is also an order issuing from the motherland to fight against the enemies. There is no dialogue at all. The whole country is united in a single string of nationalism and people are contributing to the war against the British physically, emotionally and financially. Amidst the fight, a messenger comes with news from the government in the second scene. Amar Singh is shocked to know that the government has surrendered to the British and signed the treaty. Historically, the treaty was signed on March 3, 1816 after the Nepali force was in different places. Shocked, Amar Singh questions how one can call it a defeat while he is still fighting with all might. For him, retreats some places do not mean that it is a defeat. He is shattered by the news. He also knows from the messenger that Ranajor deployed in Makwanpurgadhi and Shumaser Rana in *Hariharpur* have already surrendered, whereas Balbhadra Kunwar left the battlefield and went to Punjab to joinKing Ranajit's force. It further frustrates him. He concludes that the treaty is signed to divide the nation and there is no reason to return to Kathmandu. He wants to go to Gosainkunda, a holy lake in the Himalaya, to wash the blood of war off himself. The third scene is related to the barracks of British soldiers in Makawanpur. In this scene, Chandra Shekhar Padhya, the *taksar* of Nepal, and his son Uma Shankar Padhya present the treaty with the royal seal to the British General Ochterlony. Following the British's demand, Chandra Shekhar kneels down and presents the treaty. He feels insulted and torn by guilt while doing so. The British soldiers look happy and victorious. In the same scene, Ochterlony praises Nepali soldiers for their courage. The fourth act is the final section of the play which is related to Gosainthan. Amar Singh moves towards Gosainkunda with frustration and disappointment. There is a fair going on by the lake. While Amar Singh is about to sit near the fire after having a bath, he overhears the pilgrims talking to each other. One of them says that Amar Singh killed many youths by confronting the British force. It was fruitless. He further says that he should have joined hands with the British rather than confronting them. The pilgrim also says, 'Amar Singh ruined the country.' Amar Singh Thapa, who devoted his life to the country, found this accusation too heavy to bear, 'Amar Singh ruined the country.' He vomits blood and dies then and there. As the pilgrims recognize him, they ask him to forgive them for their irresponsible remarks. They hail his bravery. The play ends with the death of the hero.

2.2 Characterization

A character in a play is a means to act out the thought of the playwright, whereas characterization is the projection of mental and physical attributes, activities as well as the development, flaws, complexity, or simplicity of the character. In this play, there are 25 characters and some insignificant ones that appear only in the groups. Since it is impossible to describe all the characters, I introduce only the major one here. The major characters with significant roles are Amar Singh Thapa, Ochterlony, Ramdas, and Hridaya Singh Das. The play has the historical significance, as its subject matter emanates from the Anglo-Nepal war of 1871-73. Other historically significant characters are King Girvan Yuddha Bikram Shah, Queen Mother Lalit Tripur Sundari, Prime Minister Bhimsen Thapa, Guru Gajaraj Mishra, and Royal Priest Ranganath. Likewise, Kaji and Military General Amar Singh Thapa, Kaji Dalbhanjan Pande, Ranadhoj Thapa, Commander Bhakti Thapa, Ramdas Singh Thapa, *Taksari* Chief Chandra Shekhar Padhya,

Hridaya Singh Thapa, both wives of Bhakti Thapa, British Commander-in-Chief Ochterlony, Major Enis, Captain Hamilton, and Lieutenant Boyalu are other characters of the play. This play presents the national heroes like Amar Singh Thapa, Bhakti Thapa, Balbhadra Kunwar, and Bhimsen Thapa who were fully dedicated to national sovereignty, integrity, and liberty on the one hand and the characters like Bam Shah, Chandra Shekhar Padhya, Ranganath etc. who deceived their country on the other hand. Prime Minister Bhimsen Thapa is seen only twice in the play. He takes a courageous step to wage the war against the British. As a *sutradhar,* he infuses a *heroic mood* in the play. He exhibits the feeling of patriotism, and unshakable confidence in winning the war. Likewise, the young king Girvan Yuddha is also noted for his courage. Though doubtful about the victory, he is aware of national sovereignty. In the beginning, he thinks that if they are going to lose, it is better not to go to war. Finally, he decides that it is better to kill oneself than to die at the hand of the enemy. Similarly, General Ochterlony is depicted as a diplomatic character, a master at conspiracy. He is a cunning man who lures naïve and poor Nepalis to get secret information. He is calm and commands the respect of his soldiers. In this play, Amar Singh is presented as a main protagonist (hero), Bhakti Thapa as a supporting protagonist (co-hero), and Ochterlony as an antagonist (villain). Similarly, among the female characters, Lalit Tripur Sundari is presented as a gentle and esteemed woman, whereas both wives of Bhakti Thapa are portrayed as devoted wives. In what follows I discuss two major characters i.e. Amar Singh Thapa and Bhakti Thapa.

2.2.1 Amar Singh Thapa

Amar Singh Thapa is the protagonist of the play. He is regarded as a warrior, a national hero. According to the *sutradhar*, he was born in the Siranchowk village of the Gorkha district. He was born into a lineage of Bagale Thapa Chhetri. His grandfather Ranjai Thapa was a farmer, while his father Bhimsingh Thapa was an army officer serving Prithvi Narayan Shah. Amar Singh Thapa was just 12 years old when his father Bhim Singh Thapa died. Amar Singh Thapa joined the army of Prithvi Narayan Shah at the age of 12 and served the nation throughout his life. He is the quintessence of bravery and heroism, and the pride of the nation. His course and warfare inspired Nepali warriors to confront the British force even if they were small in number and lacked training and modern weapons.

The play is named after him. He has a major role throughout the play which ends with his death. His life as a warrior has been the central focus, while his personal and family life is presented only peripherally. In the beginning, Amar Singh thinks that it is not a good idea to go to war without sufficient preparation. However, as the war is declared, he thinks that it is not practical to worry about victory or defeat beforehand. He therefore leads the force and exhibits bravery, determination and dedication until the end of the war. The play is infused with his love for the nation and self-integrity. He is portrayed as an ideal patriotic and gallant character. He is not tempted at all by the offers from the imperialist and expansionist British government in India, and fights against them courageously. He throws General Ochterlony's offer letter. He loathes the all sorts of offering from the British Government. Infuriated by the letter, he roars:

> *Am I a dog? See, in this letter,*
> *They are showing me beef, and mocking me like a dog,*
> *They are tempting and calling me.*
> *Instead of a bowl full of pure milk from mother, Nepal,*
> *They are showing pus and inviting me mockingly.*
>
> (Act 2, Scene 2, p. 31)

Amar Singh mocks the traitors who support the British force and run after money and facilities, while he shows immense love and

parental care to those who are loyal to the nation. He says that the reasons behind the loss of Kumaon and Garhwal in the first war are sabotage, the insufficient number of soldiers, arms, and ration. He sees the possibility of winning getting victory over the British force if there are sufficient resources and a trustworthy environment. When his son Ranadhoj supports the proposal of Gajraj to stop the war, to sign the treaty with the East India Company, and to allow Nepali youths to join the British force, the 65-year-old Amar Singh shouts furiously:

........Shame! Shame on you, Ranadhoj,
Why do you thrust fire into your father's mouth?
I'm still alive, breathing. See, I'm still alive.
(Act 3, scene 1, p. 56-57)

He remains adamant in his determination to go to war again, turning down the British offer for the treaty. At that time, he also clearly says that it is better to die than to sign the treaty that puts the national sovereign at stake.

Amar Singh is fighting in Sindhuligadhi when a messenger comes and informs him about the treaty. As soon as Nepali soldiers are defeated in Hariharpur Gadhi and Makwanpurgadhi, the government decides to sign the treaty in fear of losing more territories. It frustrates him to know about it. Of course, it breaks his heart to hear that the commanders like Ranajor and Shumsher Rana lost the battle and Bal Bhadra Kunwar has left the country for Punjab. Still, he thinks that unless he dies and the fort of Kirtipur is destroyed, they should not stop the war.

We haven't lost the war. No bullets are there in my chest.
How did I die?
...
Did you listen, the martyrs? We're betrayed.
We couldn't die. The survivors become losers.
Don't forgive them, this crime is done knowingly.
...
Kirtipur was the largest fort,
How did they feel defeated before it's destroyed?
(Act 4, scene 2, p. 74)

These lines are infused with patriotism, dedication and sacrifice. He feels his self-integrity wounded and doesn't return to Kathmandu. Rather he goes to Gosainkunda straight from Sindhuli. He cannot bear the accusation of the pilgrim who says 'Amar Singh ruined the country.' and dies there. As a brave man, he accepts death, but he can't tolerate the treacherous treaty signed by succumbing to the enemy. Amar Singh is a man full of pride. Heroism guides his thoughts, words and deeds. His heroism has made the story sensational. At the age of 65, he stands as an emblem of valor and self-integrity. Viewed from the perspective of the eastern dramaturgy, he is a great hero. However, his death as depicted in the play does not fit for a brave man.

2.2.2. Bhakti Thapa

Aged 70, Bhakti Thapa is the second important protagonist of the play. Presented as a deputy chief and army commander, he appears from the third scene of the first act to the third scene of the second act until he loses his life in the battle of Malaun. Thapa stands out from other soldiers owning to his uncanny bravery and vigor. His words and deeds are completely in harmony with each other. The playwright has presented him as a true follower of Amar Singh's ideals. He enthusiastically takes part in the fight for national sovereignty and sacrifices his life for the noble cause. All this proves that he is a real patriot and a brave fighter. He is all familiar with the crooked imperialist policy of the British. While taking with Amar Singh, he says that the rulers of Indian princely states have exchanged their kingships with money offered by the East India Company and have succumbed to the British rulers. In such a situation, these kings also want Nepal to lose her sovereignty and become the follower of the

Whites. It shows how farsighted he is. So he does not trust these rulers of princely states in India. Instead he is ready to face the British force alone. In one scene, he seems ready for the fight, holding a sword in his hand. Amar Singh requests him to show patience. But he senses that the British force can attack anytime without warning. He is determined to stop them:

...Wherever I run into the enemies,
I'll stop them with this sword.
Standing like a rock,
I'll stop the wave.

Though older than Amar Singh, Bhakti Thapa demonstrates youthful enthusiasm, courage, and vigor. As he suspected, the British force declares war on Nepal without warning. The British soldiers surround the Nalapani fort and attack from all sides. He expresses the feeling of patriotism as:

We all are from this soil and we'll return to it,
Before turning into ashes, we should spark.
Being adamant like a stone, we have to serve like the stone,
We should fight transforming ourselves into a stone.

(Act one, scene 2, p. 23)

He died a hero's death. He falls dead to the bullets of the enemies in the battlefield. The British General Ochterlony sends *dosalla* via his soldiers and orders them to present a final salute to the deceased warrior.

2.3 Setting

The play centers on the Anglo-Nepalese war. The soldiers in the camps are taking about heroism and sacrifice. In a single act, the playwright has presented two or more incidents from different places to bring novelty and variety. In the beginning, the play takes us to the palace where there is a discussion on whether to go to war. After the royal council decides to engage in war, the play centers on the army camps where the army chiefs and others are talking about the preparation of the war against the British force. Some characters enter the enemy's camps to share secret information about Nepali soldiers. Some scenes in the play also signal that some powerful people are working for the British troops. These scenes suggest that the leakage of information is one of the major causes of the defeat of Nepali soldiers. An English spy captures two Nepali messengers and takes the letter from one of them. It shows the effectiveness of the British intelligence agency. The decision of Bhakti Thapa's wives to go sati happily evokes *karuna* (pathos) and veer (heroism) *rasas* [2] at the same time. There is an old woman who has lost her husband and two of her sons in the war. She is grief-stricken when her youngest son goes to war against her will and falls in the battlefield. Even this scene evokes the *veer rasa, the sentiment of heroism.* Even though the death of Amar Singh at Gosainkunda creates some pathos, the play retains the spirit of heroism, as the pilgrims hail his bravery, patriotism, and adamant courage. The playwright is aware of the historical setting as well. To retain the authenticity, he has clearly specified at the beginning of every scene the places where actual events took place.

2.4 Conflict

The conflict is an essential element of a play. That 'if there is no conflict, there is no play' is the guiding assumption. The conflict brings mobility, authenticity, and creates excitement and sensation in a play. Since the play 'Amar Singh' is fully based on war, the conflict lies at its heart. In this respect, the play has been very successful in creating different types and layers of conflict among the characters. The playwright has used both internal and external conflicts. The war between British and Nepali soldiers is presented as the external conflict in the play. The external war is not limited to the physical one though. It also appears in the form of diplomatic conflict.

---

2. Rasas can be loosely translated as sentiments or ruptures. There are nine rasas known as navarasa.

Similarly, there is a conflict among the Nepali courtiers and even among common people with respect to the treaty and the war. Bhimsen Thapa and the majority of the courtiers are in favor of the war in the beginning, but they are in favor of the treaty later. However, some people including Amar Singh Thapa are against the war in the beginning, but are not happy with the treaty later. The dispute between patriotic army chiefs, rulers, and opportunist courtiers and corresponding confusion among them have led to the internal conflict.

2.5 Dialogue and language

There is the use of both poetic and prosaic dialogues in the play. Long dialogues are used with the major characters, while dialogues by the minor characters are short. The form and style of the dialogues mirror the attitude, intellectual depth, and ability of the characters. The playwright has used the refined and poetic language. The play abounds in high diction to reflect intellectuality of the major characters. Despite this, the language used by Amar Singh Thapa and Bhakti Thapa in the royal council, the songs by fiddle players and the exchanges between the soldiers are infused with emotions. The playwright has employed three types of style: poetic, prosaic, and lyrical. Many of the important dialogues are in the unrhymed *unustup*[3] meter. The prologue is composed in the prosaic form. The songs by fiddle players and soldiers to encourage, embolden and incite the people and other soldiers to go to war are in the *jhyaure* meter. Except for the dialogue delivered by the soldier who attends the funeral ceremony of Bhakti Thapa, all the dialogues by the British soldiers are in the prose. We can see the difference in the standard of language used by the main protagonist, the supporting protagonist, and other minor characters. Nepali used by the British soldier sounds as natural as other non-native speakers. Some dialogues by the Britishsoldiers are in English itself. The play makes use of several native Nepali words, *tatsam* (Sanskrit words), *tatbhav* (words derived from Sanskrit), and English words. Each dialogue in the play is audible.

3. Conclusion

Balkrishna Sama (1959-2038 B.S.) was a versatile Nepali literary figure. He internalized and assimilated the style of the world famous English playwright Shakespeare and wrote one-act plays as well as tragedies and comedies drawing on the matters from history, mythology and contemporary society. Following Shakespeare, he wrote plays in unrhymed metrical verse and won the heart of readers and audiences alike. Because of this, he is regarded as the Shakespeare of Nepal. His published works include dozens of poems and two epics. Moreover, he is also noted for his writings on philosophy, art and culture. He was an intellectual writer who had extensive knowledge of Eastern and Western literatures. His ideology is based on the synchronization of knowledge and science, or spiritualism and materialism. The crux of his thought is humanism. In the wake of democracy in Nepal, Sama rejected the title 'Sher Jung Bahadur Rana' and went with 'Sama', a term that symbolizes equality. Though he contributed to almost all literary genres, he is best remembered as a playwright. He is also called the 'king of Nepali drama'.

'Amar Singh' is Sama's best historical play which presents patriotism, bravery and heroism exhibited by the national hero Amar Singh in the Anglo-Nepal war of 1871-73 (1814-16 AD).

Moreover, the play also depicts the character of other patriots like Bhakti Thapa, Balbhdra Kunwar, and Bhimsen Thapa. Except for a few selfish ones, the majority of the Nepalis are ready to sacrifice themselves for the national sovereignty. By this, the play aims to transfer the feeling of patriotism to the succeeding generation. The playwright has introduced some fictional or

3. A meter consisting of four padas of eight syllables, each one stanza consisting of 32 syllables.

context-related characters and events in some scenes to make the play more interesting and reader-friendly. In its preface, Surya Bikram Gyawali, a noted historian and critic, writes that the fictional and context-related characters and settings have added imaginative muscles to the factual skeleton of history, transfused warm blood to the historical characters and animated them. The love affair between Ramdas Singh and Chunari is one such example. Also, the historical documents state that Amar Singh went to Gosainkunda in Jestha, 1873 B.S.with his plan to return to Kathmandu after the fair of Janai Purnima, a Hindu religious festival. Unfortunately, he died on 12 Srawan, 1873 because of *shul*, a disease causing a sharp pain in the stomach. Instead of this historical fact, the playwright has presented the accusation by the pilgrim as the cause of his death in order to give an interesting and emotional twist to the story. Contrary to the historical fact, the death of the warrior like Amar Singh due to a common man's accusation does not sound convincing. Such a cowardly death does not suit him either. In this case, Sama has failed to do justice to the protagonist. Similarly, Sama presents Chandra Shekhar Padhya kneeling down before Ochterlony while handing him the treaty. This scene contradicts with the central motif of the play that aims to valorize national supremacy and pride and the valor of the Nepalis. This contradiction undermines the playwright's attempt to deliver this message of national supremacy. Another self-contradictory aspect is that despite being the Chief of the Army, Amar Singh's views and opinions are endorsed neither before going to war nor during the treaty. Going to war against and signing the treaty with the British both are against his will. Frustrated, he leaves the fort for Gosainkunda resigning from the position of the Chief. We cannot see his strategic leadership and participation in decision-making. These are the weak aspects of this play. Despite being complex in stage setting and performance, the play is successful in conveying the feelings of patriotism and valor of the Nepalis. Nepal is undergoing a constant encroachment of imperialism and expansionism in different forms even today. In such a context, the message of this play is instrumental in arousing the feeling of patriotism in the Nepalis and inspiring them to safeguard their national sovereignty.

References

Baral, Ishwar. (2055). ***Balkrishna Sama: Byaktitwo ra Krititwo***. Kathmandu: Balkrishna Sama Foundation.

Upadhyaya, Keshab Prasad. (2045). ***Samako Dukhanta Natyachetana.*** Kathmandu: Royal Nepal Academy.

Upadhyaya, Keshab Prasad. (2056). ***Natakko Adhyayan.*** Lalitpur: Sajha Publication.

Gyawali Surya Vikram. (2056). 'Preface', ***Amar Singh.*** Lalitpur: Sajha Publication.

Prasain, Narendra Raj& Indira.(Eds.)(2054). *Euta Amar Pragya Balkrishna Sama*, Kathmandu: Sama Foundation.

Sharma, Taranath. (2048). ***Sama ra Samaka Kriti*** (Fourth Edition). Lalitpur: Sajha Publication.

Sama, Balkrishna. (2054). ***Mero Kavitako Aaradhana*** (Upasana 1-3, Integrated first edition). Lalitpur: Sajha Publication.

Sama, Balkrishna. (2056). ***Amar Singh.*** Lalitpur: Sajha Publication.

(Translation of "Natakkar Balkrishna Samar a unto Amar Singh", done by Bal Ram Adhikari & Hari Prasad Paudel)

Aswatthama and *Andha Yug* in their M otifs to Liberate this Age from the Catastrophe and Terror of War

Prof.Dr. Usha Thakur

Devise humanity before the pain of war befalls
Create immortality ere an inkling of death occurs

-Madhav Ghimire

An epochal poet creates a beautiful age and a beautiful world and thus gives way to a golden age, because such a poet is also the creator of an age, besides being a visionary of that age. By depicting the evil practices, vices, falsities, faithlessness, lack of trust, anger and sense of revenge prevalent in the society, a good poet attempts to establish decorum, truth, faith and trust, and thus by developing compassion, pity, love, cooperation, goodwill and fraternity, he makes attempts to develop a pristine and peaceful world.

Madhav Ghimire, the exponential Nepali poet, and Dr. Dhamabir Bhatari, the famous Indian poet, storywriter, playwright, essayist, critic, translator and editor are among such great poets, who, through their writings, gave a boost to such new-epochal consciousness and universal humanism. The poet duo, Madhav Ghimire (b. 1919) and Dharmabir Bharati (1926-1996), in their highly famous works *Aswatthama* (2053) and *Andha Yug* (1954) respectively, have attempted to generate awareness for the reestablishment of peace, fraternity and humanity in the human world, beset by terror, fear and illusion so that it can be delivered from warring tendencies.

Aswatthama and *Andha Yug* are famous poetic dramas in Nepali and Hindi literatures respectively. In these works, the poets have made successful endeavors to depict a world beset by the catastrophe and terror of war, and to show its futility. By showing the negative fallouts of war, the poets have appealed for annihilating all sorts of wars from the face of the world, and have sent the message for such consciousness. In order that warring inclinations are eliminated, poet Madhav Ghimire has appealed to other sensitive writers, through his authorial voice, to depict the pain that appears before a war actually breaks out, because it is through the realization of pain that one can think about its alleviation. In order that humanity frees itself from the terror of war, it is imminent for it to sense the pre-war trepidation first. That prior sense allows us to evoke the consciousness inside us. Only then will we become alert against war, and will be able to stop future wars. Similar is the message of Dharmabir Bharati's poetic drama.

Aswatthama and *Andha Yug*, laden with modern sensibilities and thought, are both based on mythological contents, and are highly famous works. In addition, they are matchless instances of the extraordinary talents of the two poets. Though the *Mahabharat* is the inspiration for both these creations, they are both characterized by the consciousness of the present time and by a challenging appeal to combat with contemporary problems. These two works are extremely significant as timeless and universal creations, and are greatly inspiring. They are successful endeavors toward making humanity brighter.

In the plot of *Andha Yug* divided into five parts, one can find the story beginning with the last part of the *Mahabharat*, i.e. from its eighteenth canto, till the death of Krishna at Prabhas Tirtha. Similarly, *Aswatthama*, in the seven cantos it is organized in, makes a character analysis of Awatthama, the famous warrior form the *Mahabharat*. Aswatthama, the immortal warrior and son of a Brahman loses the gemstone of his head to Krishna mainly because of his stupidity and evil conduct, and in its place, he gets a wound that is never healed. As a mark of remorse, he wanders around with this never-healing pain all his life, even beyond the apocalyptic time. This creation makes a touchy representation of the same painful story of Aswatthama, a war convict.

After the Second World War, the entire world was inflicted by malice, absurdity and such other worthless circumstances, casting upon it a shadow of fear and terror. The catastrophe and terror emanating from war has driven away humanity from the humankind. Morality has receded, and decorum, ideal, responsibility, human values and such other ideas have not been left intact anymore. In such odd circumstances, Madhav Ghimire and Dharmabir Bharati wrote anti-war plays like *Aswatthama* and *Andha Yug* in order to engender the feelings of humanity, responsibility and dignity once again the human mind, and thus generate the feelings of love in human heart. In spite of being based on events from the past, these two words are very much contemporary, and are filled with modern ethos. Those works not only show present-day pictures in the mirror of ancient mythology; they also show the life-images of the time yet to come. They are not the manifestations of any particular age or time. Instead, they are works that embody the past, the present and the future in their domain. In the same context, poet Bharati says:

That day when the blind age dawned on the earth
It passes not, but stays only to recur again and again!

A poet, through his long-range vision, foresees the upcoming future. Poet Madhav Ghimire, through a touchy description of Aswatthama, have presented today's terrified humanity, and has experienced, much before hand, the pain informing the future of the coming generation of human beings. With an aim to annihilating such pain, he has made vivid description of the devastation of war, and by showing painful realities of Aswatthama he has presented the negative effects of war. By doing so, he has presented the possible but extremely painful destiny of the humankind in the days to come. By making us face-to-face with such heart-rending pain, he has inspired us to shun war. To tell it in the words of poet Madhav Ghimire himself, "In reality, the pain of war is something we cannot bear, though we are having to bear it. If we can depict the pre-war anxiety in our art and literature, humankind will be able to stand it, and shall be able to stop all future wars." To this end, *Aswatthama* makes the following appeal to creative writers:

I am a war-convict, deeply pained with the war I faced
You are a pure soul, deeply pained with the war you saw
Poet! I also wail in the sarangi you play
And I shall show up, as long as war lasts here.

The human values and faiths that are perishing because of war have been basically caused by science and the progress it has registered, aided by our stupidity. Progress in science has given us bloodshed, repression, hatred, revenge, delinquencies, fear, worthlessness, ghastliness and destruction, and it is only literature that can tender a solution to all these problems. But acting as our torch-bearer, it can enlighten our murky path. In this context, a statement of poet Bharati becomes relevant: "This condition of science has led to the evolution of a strange moment. Man was the centre of all this movement, and he has ended up in a strange

vacuity. Its result has been the devaluation of the entire human race, a grand anarchy, a fatal dark void. Such devaluation of values has begun to render humanity empty from inside, as cancer does. Before science and philosophy could feel this crisis, literature made a sense of such emergency.

The use of terrifying atomic bomb during the Second World War left the entire human race benumbed, terrified and fear-stricken. These terrifying incidents left the sensitive writers of the world quite alarmed. Accordingly, they wrote their works, describing the catastrophe and destruction of war, and trying to orient human beings in a direction away from war, making them aware of the need for a pious future of the human race. The Second World War left not only the human society and intellectuals from countries affected by the Second World War terrified, fear-stricken and alert, it also alerted writers from Asia against this crisis befalling Europe, and made them cautious. In this context, Dharmabir Bharati says, "We the writers, intellectuals and thinkers are artists of the human soul. For us, this crisis has additional meaning. For us, the biggest question is that all those values, on which the entire civilization rested, have proven to be wrong. Its result is that there is a terrible dissolution present before us." And the remedy for such dissolution and depreciation of values lies in literature. Expressing his view on the human values and literature, Bharati says, "The value and social utility of literature lies in the fact that by tendering deep answers to our intellect, it refines our tendencies, and lends them a liberal social orientation. If literature has the capacity to culture our orientations, such literature is benefitting."

Highlight this benefitting merit of literature, poet Bharati has reverberated the modern temporal awareness through a description of the post-world circumstances.

After the war
This blind-age dawned
In which, circumstances, attitude and faiths
are all malicious
......
Strayed, with swayed souls
The dwellers of blind caves within themselves
This story is of the same blind folks
This story is that of light, through the medium of the blinds.

These lines have depicted the terrible war experiences of the *Mahabharat* era. This also is the nature of the mass-destructive war in the present time.

Poets Madhav Ghimire and Bharati have felt the pain of *Mahabharat* era war from formidable depths, in an extremely sensitive manner. This must be the reason why, through the apt evaluation of the wartime circumstances and environment, they have penned anti-war dramas *Aswatthama* and *Andha Yug*. In these works, poets Bharati and Ghimire have clearly articulated that the catastrophe of war has completely destroyed the beautiful aspect of human life, and gave birth to Aswatthama. Aswatthama, presented as the central character in both the works *Aswatthama* and *Andha Yug*, is depicted, in one hand as the only son of Guru Dronacharya who is capable of using Brahmasthra, a highly sophisticated weapon, and in the other hand, he is presented as a modern man, who is victim of atomic bombardment. Aswatthama, whose ugliness is the ugliness of the modern humankind, is also the one, whose bestiality is the bestiality of the modern humankind.

At night, while they are deep asleep, Aswatthama enters a camp and beheads all five sons of Draupadi by using his Brahmastra. Not only this, he also used the weapon to destroy the fetus of Uttara with an aim to cleansing the entire clan of the Pandavs, but Krishna intercepts the same. This picture of war-prone time pertaining to the *Mahabharat* Era also very much applies to the present time. The use of Brahmastra made by Aswatthama reminds us of the present-day nuclear

bomb, and brings before our eyes the macabre pictures of Hiroshima and Nagasaki. Though Aswatthama, described in both the works is a mythological character, he appears before us as a metaphor of the bestial attributes of the present man. Since the humans today are also oriented toward war, they are doomed to live, like Aswatthama, a pathetic life of struggle. Bothe the poets Madhav Ghimire and Dharmabir Bharati highlight the condition man has landed at owing mainly to Aswatthama's ghastliness and bestial nature, and by doing so, counsel Aswatthama to accept and redeem his mistake and crime. By depicting a volatile time in the Mahabharat Era, and by foregrounding Aswatthama's deplorable condition, poets Ghimire and Bharati have cautioned us against the destructive nature of war, and have thus tried to cleanse all of our inclinations towards war. By making us alert against heavily-armed wartime, they have appealed that wars should stop, and we should save the world from their devastating fallout.

In both these works, the outer structures suggest that the authors are alerting us against the devastation and damage brought about by the use of Brahmastra, and by corollary, made a description of the damage and devastation nuclear war would bring about. In addition, the two poets have also tried to say that such war cultures and suicidal tendencies destroy the fecundity of the earth in one hand, and on the other, forsake from the human soul its knowledge, rationality, intellect and all virtues. As a result, human life becomes terror-stricken, following which, it sinks into a pit of darkness. *Andha Yug*, in the following way, evaluates a time infected with problems generated by the culture of war:

I am Vyas
How would you know the impact of this Brahmastra?
Oh human-animal! If it becomes successful
Then, for centuries in the days to come
There would be no luscious plants on earth
Children will be handicapped and smothered by repression
And the entire human race will become stunted

Therefore, words appealing for a movement toward light from darkness, and for stopping wars and annihilate warring tendencies have come from Madhav Ghimire in the following way:

Like a cockatoo, someone constantly asks for water!
Why, fried, does this universal thirst go unquenched?

Poets Ghimire and Bharati appear fully aware of the fallout effects of scientific, nuclear culture. According to those poetic hearts, the warring tendencies of today and newer and modern weapons that are being manufactured are destroying the feelings of humanity from the face of the earth, and are finishing off the ideal of universal fraternity. Humanity is at quandary. The demons in nuclear powers have unleashed a reign of devastation everywhere out of their inebriation, thereby rending the humankind stupid, faithless and suicidal. On seeing such pathetic and terrible condition of the world, the humanist poets Madhav Ghimire and Dharmabir Bharati seem deeply pained in their hearts, and are disturbed. And through their creations, they are seeking solutions to such problems.

Besides *Aswatthama*, Ghimire has authored other works of repute like *Shakuntala*, *Malati Mangale*, *Deuki*, *Bak Kumari*, and many other works, in which too he has given voice to his humanist feelings in abundant measure. His creations—*Kinnar-Kinnari*, and poems like "Manchhe Mari Manchheko Badhai" (Felicitation of man by killing man) "Kallai Bhetna Aauıan Bir" (Whom does the warrior come to meet?) also take a position in favor of humanity by opposing war, and by citing its terrible fallouts and the turmoil, mess and faithlessness it gives rise to, by depicting bizarre imageries of terror pertaining to war. Poet

Ghimire opines that by manufacturing the most sophisticated weapons, modern science has unleashed a reign of terror and fear in the world. He writes:

I cannot, through electricity, rip an atom bomb
And spread an all-devastating repulsion in the wind

Poet Bharati also is a humanist poet, filled with temporal consciousness. Awareness of the present time and alliance with humanitarian feelings can be spotted in many of his creations. The philosophy that underlies *Andha Yug* is fully humanitarian. In his collection *Thanda Loha* (Cold Iron), the poet has, in the following lines, addressed the responsibility of a poet, and has made an appeal for faith, thereby articulating his humanitarian inclination:

Wait, wait! We are coming!
We are moving and incessant steps of new awareness
Though the invincible and progressive regime of the soil
We shall free the poet's heart from all curses.

In fact, as opined by poet Ghimire, there is nothing as beautiful and pious as a creation in this world. Poet Bharati also says, "Listen, my heart! Never give in!" Addressing the entire world, he says:

Whenever an individual
Challenges history out of delusion
That day the direction of constellations change

Similarly, Poet Ghimire also evokes hope and faith in humanity and appeals to make the human mind bolder:

What is not achievable if man wants!
Even the moon becomes accessible.

In sum, poets Ghimire and Bharati, in order to save the humankind from the terrible fallout of war, image a healthy and beautiful human society free of war and inspire the readers for the same. By wishing world peace, they promote the idea of universal fraternity. Poet Ghimire writes: "Let the vast world become a site of our grand meeting."

In fact, these two creations *Aswatthama* and *Andha Yug* that back-support the glorification of humanity and human values, are invaluable treasures of literature, and are message they have articulated have its relevance not only at national levels but also all over and world. And so, their message is praiseworthy, commendable and inspiring.

It is a matter of great pleasure that *Andha Yug* had been performed on the stage of Nepal Academy on 11 February 1999, and the impressive performance had moved the spectators. In the same way, *Aswatthama* should also be staged in Indian theaters. Both the works mentioned above are excellent and inspiring creations in world literature which lend light to the world blinded by darkness and lead them along the right path. These works are undoubtedly very important for the reestablishment of humanity, world peace and world unity. Therefore, these works deserve translation in several other languages of the world as well.

The delivery of creations like *Aswatthama* and *Andha Yug*, which are excellent, useful, peace-invoking and socially useful is the demand of the day, and is an utmost necessity of our times.

(Translation of Prof. Dr. Usha Thakur's critical essay "Yuddhako Bibhishika ra Santrasbata Mukti Dilaune Prayasma Aswatthama ra Andha Yug. Translator: Mahesh Paudyal)

Developmental History of Nepali Dramatic Tradition

Mahesh Paudyal

It is believed that the theatrical event started between medieval and 18th century. Later on during 18th century, the system of Persian theatre commenced. The artists were brought from India but only for the personal entertainment of Rana's. Then on 19th century, Balkrishna Sama, founder of modern Nepali theatre brought revolution; theatre became common property i.e. open for general public. With the performance of *Mukunda Indira* in 1995 B.S. at Durbar High School, the modern era of theatre was initiated.

Tracing its development history enables us to classify Nepali Dramatic tradition into two phases:

A. Pre-modern Era (1892-1986 BS)
B. Modern Era (1986 BS to the present)

Pre-Modern Era:

Initial stage shows the influence of the dramatic tradition of Sanskrit, Persian (especially Theatre culture), and English dramatic tradition, before the evolution of original Nepali models. This era is roughly divided into the following four stages:

Four stages:

Stage I (1892-1943)

In 1992, the tradition was kicked off with ***Sri Krishna Chatripakhyan*** by an anonymous writer. It was staged in front of British Ambassador. Its prose was in Khadi Boli, and verses in Avadhi and Braj languages. ***Lalhira*** by an unknown dramatist was staged, at the partronage of queen mother Rajya Laxmi Devi; it too was probably in Hindi ***Hasyakadamba*** (1955) by Shaktiballabh Aryal and ***Mudrarakshyas*** (1892) by Bishakthdutta both written in Sanksrit

Stage II (1944-1962)

Motiram Bhatta was prominent in this age. His ***Shakuntala***– transalted from Sanskrit– was performed in 1944. Besides this, he wrote ***Gulsanovar***, ***Padmavati***, ***Kashiroaj Chandrasen***, and ***Husna Afroz Aaraan Din.*** However, these plays are not available. The oldest available written play is Motiram's ***Priyadarshika*** – from Sanskrit sources, and from here, researchers consider the beginning of Nepali Dramaic tradition. This very state showed the development of Theatre culture, following the practice of Persians in India. In most of the cases, songs and dialogues therefore were either in Urdu or Persian. Promient writers of this time were Damber Shamsher Thapa and Manik Man. The first originally Nepali play to be published was Tirtha Prasad Acharya's ***Naya Upanyas*** (1960 BS)

Stage III (1963 BS to 1970 BS)

Appearance of Pahalman Singh Swar! His first play ***Atal Bahadur*** was an epoch-making work. It was first staged in Darjeeling. Critics saw the influence of Shakespeare's ***Hamlet***, and that of other tragedies. Of his original works, ***Samadevi***, ***Laalubhaga***, ***Jagat Singh***, ***Bishnumaya*** are important.

Stage IV (1971-1985)

This stage is dominated by

Shambhuprasad Dhungel. He was basically a translator, though a lot of covert originality can be seen. Major plays he produced are ***Ratnawali***, ***Priyadarshika***, ***Sachibiyog***, ***Madan Manjari***, ***Madan Mohini*** etc. Proment plays of this era are Lekhanath Paudyal's *Bharihari Nirved* (with Ram Mani AD, 1973), ***Bhavitavya, Radhakrishna Keli*** etc. Kedar Shasher Thapa's contribution is important in stage shows. His major works inlcude ***Bir Sudarshan*** (1972), ***Bir Savitrai*** (1073), ***Madalsa*** (1972), ***Bir Prahlad*** (1972) etc.

Modern Era (1986 to the present)

This era starts with Balkrishna Sama and continues through Bhim Nidhi Tiwari, Gopal Prasad Rimal, Hridaychadra Singh Pradhan, Govindara Bahadur Gothale, Bijay Malla, Mohan Raj Sharma, Asesh Malla, Sarubhakta etc. The early part of this age is dominated by idealistic and romantic tendencies, while the later part is overtly realistic, with special influence of Marxits and progressive tendencies.

This era can also be divided into four major stages:

Stage I (1986-2002)

This marks the movement from translation to original writing. The initial phase is more idealistic and romantic and dominated by Balkrishna Sama. His plays include ***Mutuko Vyatha*** (1986), ***Prem*** (1992), ***Mukunda Indira*** (1994), ***Andhabeg*** (1996), ***Boksi*** (1999) and ***Ma*** (2002). This tradition continues with Bhim Needhi Tiwari, whose plays were better fitted for staging than that of Sama. His plays include ***Sahanshil Sushila*** (1995), ***Putali*** (1999), ***Sashibas*** (1998). ***Kashibas*** of Tiwari is the first one-act play to be published in Nepali language. There also is a Puranic/historical cult that developed during this era. Some plays were performed as poetic drama.

Stage II (2003-2017)

This stage is dominated by realistic plays, later part dominated by Marxist thoughts. Of the social and psychological realism, Gopal Prasad Rimal his prominent. His ***Masan*** (2003), ***Maya*** (2010) and ***Yo Prem*** (2015) are prominent. Govinda Bahadur Malla Gothale followed Rimalian tradition, and wrote social realities in ***Bhoosko Aago*** (2012), ***Chyatiyeko Parda*** (2016), ***Bhoko Ghar*** (collection of one-act plays 2034). Bijya Malla belongs to the same tradition; his major plays are ***Bahula Kajiko Sapana*** (2004), ***Jeevan Samashya*** (2012), ***Antardwanda*** (2011), ***Kina Kohi Barbad Hos*** (2015), ***Sapanako Deshma*** (2014), ***Jiudo Laas*** (2014), and ***Nepal Sanskrit Bhandar*** (one act play, 2016). Basu Pasa's ***Kisan Ho*** (2008) is the dawning of Marxist Dramtic tradition in Nepal. Bhupi Serchan's ***Parivartan*** (2010), Hridaya Chandra Singh Pradhan's ***Gangalalko Chita*** (2011), and ***Unko Murad*** (2011) are other important progressive plays. Though Marxist writers dominated the scene, the idealistic and romantic tradition continued with Sama and Tiwari. Sama's most popular ***Prempinda*** (2009), and ***Tiwari's Kisan*** (2003) appeared during this period.

The social-realistic tendency of the period was largely dominated by Hridayachandra Singh Pradhan. His important plays of this period are ***Satishko Rahar, Ma Janna, Tripashaka Dui Kheladi, Boksi Banera*** and ***Khairati Master*** – most of them being one-act plays. Those who perpetuated Puranic/historical tradition include Balkrishna Sama (***Amarsing***, 2010; ***Krantikari Bhanu***, 2011; ***Bhimsenko Antya***, 2013), Bhim Nidhi Tiwari (***Satya Harishchandra***, 2013; ***Siddhartha Gautam***, 2013; ***Bise Nagarchi***, 2008). Poetic Drama also developed during this period, the prominent practitioners being Mohan Bahadur Malla (***Pagal Dunia***, 2008). No other information is available.

Radio Plays made their appearance for the first time in this period. With the establishment of Radio Nepal in 2007, this tradition fostered. It made its beginning by airing Shyam Das Vaishnav's radio play ***Dhamira***. Later Janardan

Sama, Laxman Lohani, Kiran Kharel contributed to this tradition.

Stage III (2018-2036)

This stage is basically experimental. There is a conspicuous western influence. Experimental plays dominated this scene, thanks to the vibrant political culture of the time. Still Sama has a dominant presence. His Swasni Manchhe (2007) is considered first experimental play. Gothale's *Chyatiyeko Parda*, and *Bhoko Ghar* are other excellent experimental plays.

Bijay Malla's later plays, like Gothale's, are experimental. His ***Jiudo Laas, Kankal, Ko Sanga Judhou, Paththarko Katha, Puranko Harayeko Pana*** and ***Bholi Ke Hunchha*** can better be classed under experimental plays.

Parijat rose to limelight in the later parto of this period, and furnished some fo the finest experimental plays, that inlcude ***Ek Kathin Niskarsha*** (2023), Andhyaro ***Nadi*** (2027), ***Aafno Raat*** (2028). Though Parjit has tried to infuse existential and absurd insight into plays, these forces became dominant with Dhruva Chandra Gautam. His play ***Tyo Euta Kura*** (2030) is modeled after absurdist Samuel Backett's ***Waiting for Godot***. Following his was Gopal Parajuli, who wrote absurd plays like Gopal Post, Aakash Khuldai Janchha, Bidhit Kinaraharu etc. Social, idealistic-romantic plays too appeared in sufficeint number in this period. Sama's last play ***Ashim Basna*** (2027) inaugurated this stage, to be followed by other playwrights like Bhimnidhi Tiwari. Social and psychological realism in plays appeared in early thirties. Bijay Malla, Govinda Bahadur Gothale, Phanindraja Khetala and Shyam Das Baishnav produced some of their finest plays in this period. Later on, like Satya Mohan Joshi rose to the limelight with his record-breaking plays like ***Pharkera Herda*** (2033), ***Jaba Gham Lagchha*** (2035), that were staged at Pragya Theater, Kamaladi.

Closely following these masters were Saru Bhakta and Asesh Malla. Saru Bhakta's ***Asina Paglanchha*** (2030), ***Sarap Pareko Ghar*** (2033), ***Dadhelole Khayeko Ban*** (2034), ***Jiuda Awaseshharoo*** (2040) and ***Euta Gharko Katha Haina*** (2036). Asesh Malla gave his projection of realism in his play ***Tuwalole Dhakeko Basti*** (2032). On the radio, Dhuva Kuma Deuja's ***Yangi*** (2021), and Janadran Sama's two plays ***Chetana*** (2025) and ***Aamako Aasha*** (2025) kept the culture alive.

Stage IV (Contemporary Stage, from 2037 to the present)

This phase was that of experimentation and high modernism. These plays are basically written for stage. Pioneers of this tradition are Dhuva Chandra Gautam (***Bhasmashurko Nalihad***, 2037; ***Dwanda***, 2039 and ***Samanatar***, 2042), and Mohan Raj Sharma (***Jemanta***, 2039; ***Yatanama Chhatpatayekaharu***, 2039, ***Yamaa***, 2040, ***Baikuntha Express***, 2041.) Prominent playwrights of this stage are Avinash Shrestha, Shiva Adhikari and Sarubhakta. Sarubhakta produced some of his finest plays in this period. He is fundamentally inspired by nihilistic thoughts, confirmed by his Itiharbhitrko Itihas, staged in 2039. Other plays he wrote are ***Sishirka Dinharu*** (2042), ***Coll***age (2042), and ***Golardhako Kaalo Aakash*** (2044), besides others. Latest plays are written for stage. Aseh Malla's ***Kumarji Agya Garnuhunchha*** (2051), ***Prashna Yathawat*** (2054), ***Kumari*** (2056), ***Raktabeej*** (2060) are some of his finest plays. Similarly, ***Sarubhakta's Siruma Rani*** (2061) and ***Saranarthi*** (2062) are important. Gopi Sapkota's absurd plays collected in his book ***Purnaviram*** (2055) are representative of the contemporary modernist tendencies.

Abhi Subedi has a prominent position as playwright in contemporary Nepali theater. His plays ***Aaruka Phoolka Sapana*** (2058), ***Agniko Katha*** (2059), ***Yuma, Thamelko Yatra, Runga Lageko Aakash and Natakpachhiko Natak*** (all 2060). Lately, his ***Bruised Evening*** has been published in English. All these plays were staged by Aarohan Gurukul.

Krishna Shah Yatri is one of the most prominent playwrights of our days. His ***Samaya Awasan*** (2061) collects some of his finest plays. His contribution to staging of plays too has been commendable.

Groups and theatrical performances

In Udaipur, place in inner Tarai of eastern region, "Jyotipunja Theatre Group" came into existence in late forties (2049 B.S.) And now, this very theatre is expanded around 40 districts of country which emphasizes mostly on differently able people and that too, deaf and dumb.

There are two Governmental Drama school: Nepal Music and Drama Academy and Sanskritik Sansthan, while there are around 10 to 12 private drama schools. Some of them are discussed below:

Sarwanam:

Asesh Malla started the Sarwanam theater group in 1982. It was a time when Nepal was reeling under the repressive Panchayati system. People were totally suppressed and scared of voicing their rights. After some years of Proscenium Theater, Sarwanam pioneered the modern street theater in Nepal by staging a drama, "We are searching for spring" under the open sky at the TU ground.

Aahoran Gurukul:

In 2030s BS, a group of artists gathered together to establish Aarohan theatre group which started its journey through street plays which played a significant role in promoting Nepali Theatre. The same theatre group portrayed itself well by establishing "Gurukul" the first school of theatre where gurukul system of learning is adapted. For many years, it performed its plays at its own theater at Old Banwshwar Kathmandu, until the theater here was pulled now. Presently, it performs from Biratnagar and other locations.

Actors' Studio:

The Actors' Studio is a sister organization of renowned theatre group Pratiwimba – A highly innovative and experimental theatre group established in 1990 at Pokhara. The Actors' Studio has been imparting intensive three months training in Dramatic Arts and Acting in a very organic and interdisciplinary way from last several years. Studio has been continuously performing plays – both in Nepali and foreign for more than a decade and half.

Shilpee:

Shilpee is one of the most prominent theaters in Kathamndu, staging regular plays. Conceptualized and led by young playwright, actor and directed Ghimire Yuvaraj, the group has produced some of the post popular plays in the past one decade. The group excels on reproduction of classical works in dramatic form with overwhelming popularity. It is located at Battisputali, Kathmandu. It also publishes creative and critical works on drama from time to time.

Mandala:

Founded in 2009 by a group of young artists, Mandala performs at its own theater at Anamnagar. Led by young directed and actor Rajan Khatiwada, the group has, over the years, produced some of the finest plays concerning socio-political transformation of Nepal.

Shaili:

Founded in 2064, Shailee initially performed at Russian Culture Centre, before moving to its own theater at Ratopul. Led by Nawaraj Buddhathoki, it has performed more than a dozen of plays, both Nepali and Russian. It is the first theater group to organize Children's Drama Festival, and the trend continues every year. It has also performed many street plays for raising social awareness.

***One World Theatre*:**

It is a group formed lately by the initiative of American Fulbright scholar Deborah Merola, and actively coordinated by Mita Hosali. It organized trainings, workshops, and at times, plays.

Other groups:

.Shilpi, Kathmandu
. Actor's Studio
·Dabali, Kathmandu
·Paathsala, Kathmandu
·Shreeantu Pictures, Jhapa
·Letang Natya Samuha, Morang
·Narayani Kala Mandir, Chitawan
·Mithila Natya Kala Parishad, Janakpur
·Mandapika Kala Samuha, Kathmandu
·M.Art Theatre, Kathmandu
·Satweek Natya Mandir, Kathmandu
·Miteree Kala Kendra, Nepalgunj
·The Himalayan Theatre, Kathmandu
·Udhghosh, Kathmandu
·Aarambha Nepal, Nawalparasi
·way of life) by Taranga,Hetauda
·Kamlari Samuha,Deukhuri,Daang
·Shristi Natya Samuha, Dharan
·Natyagriha Nepal, Udayapur
·Shreekala Natya Samuha, Lalitpur
·Kshitiz Natya Samuha, Paanchthar
·Renew Art Theatre Sarlahi
·Jhorahat Natya Samuha, Jhorahat
·Matribhumi Theatre, Bhojpur
·Jyotipunj Sign Theatre, Kathmandu
·Anaam, Dharan.
·Theater Mall, Kirtpur, Kathmandu.
·SEED Nepal, Parbat
·Bageena Smuha, Surkhet
·Marangburu Santali Kalakar Parisad, Morang.
·Sanskritik Sansthan, Kathmandu
·Ranga Sarathi, Kathmandu
·Pumpkin Theater, Kathmandu
·Kunja Theater, Kathmandu
.Lok Drishti Thater, Kathmandu

Some other, whose names could not be mentioned here for lack of information.

(Translation: Mahesh Paudyal)

One-Act Play

Petrified

Bijay Malla

Characters:

Bipin Babu Saheb – Landlord
Lady (Jwalá Maiya) – Bipin Babu's wife
First man (Shreekant) – School teacher
Second man (Shatrugna) – Jwalá Maiya's butler
Third man (Raghubir Singh) – Bipin Babu'sadherent
Lady (Krishná Rani) – Second wife to Bipin Babu
Ravi JwaláMaiya's children Sama

(A dark, desolated, remote area. Some blurry human-like figures appear. After light prevails over darkness, some of these idol-like figures assumedto be stirring. It seems after all, those figures are not just effigies. But for quite a while,nothing seems to be happening in them other than bodily procedures. A figure yells all of a sudden—agitates the silence. The others too seem to wake up followed by some faltering feet. Astounded, they touched their body all over; feelthe others' the same way. Apersonearlier shouted, from one of the corners stands and approaches.)

First person : What's with the world today? My eyes seem to see something. Are you all alive?

Second person: I palpated myself; my limbs are moving, sounds come off the mouth. Am I alive? (A woman approaches): Who're you?

Lady : Me, who am I? I came to senses after many days. Where am I? Could you tell? Tell me who you people really are. I'm being unnerved. Is someone chasing me again? I tend to remember something.

First person : Remember! Yes, it feels I too recall something. What is it? The wires in my brain tingling, woke me up all at once; there's none—no figure, no object nor shape. There is nothing but a feeling of horror, just nothingness. I remember a house with an elephant tied up, I can see it! Am I alive?

Lady : A monstrous house, so big! I do recall a large house with enormous windows and domes, hung over by trailed vines in a protrudedbalcony. I was there I say.

Second person: You're there? In that very house? I was, too. You must know me. Your name?

Lady : My name? My...my name...I don't remember. Who am I? (Another person staring there for no reason suddenly approaches): Who's he?

Third : Me! Nameless, like you. What's in a name? What's but going on with us today: he's speaking; he's shouting; I'm talking, we're walking. As if one knows the other and yet in oblivion.I..I remember my name—it's, Ah!Raghuveer Singh.

All three : Raghuveer Singh! (All three stand in unison)

Raghuveer Singh : Did I scare you or what?

First person : I remember you now. You're that Raghuveersingh. Your vocal ambience too goes with the Raghuveer I know of. Similar face, in fact same—you should know me; I'm umm . . . the school teacher Shreekant?

Lady : Say you Shreekant? Shreekant, the *master saheb*?

Raghuveer Singh : You Shreekant?

Second person: Then in that case I must be...

Lady : I'm Jwalá—I remember now. I'm sure. Yes, I am. I do recall now. But, why do I fear? Raghuveer, you a murderer?

Shreekant : Raghuveer, how long since have you been here?

Raghuveer Singh : I don't know. What I only recall is a man, a servantin that very house—Satrugna...I killed him and went back—then to sleep. A cold bullet or something hit my head. Then, I don't remember; I see you today.

Shreekant : So then you too were killed?

Jwalá : Raghuveer, you remember something? You had gagged me, carted me with you and then had an axe blown to my head. I had begged you so much in earnest, in my meagre voice, to let me at least meet my kids. My poor children, they—you didn't let me meet them. Aw! You're implacable.

Second person : I'm Satrugna, brother Raghuveer. I remember now. You killed me for nothing. What was my fault? Killed me—a trifling, petty dishwasher, only abutler of Jwalá*maiya*!

Jwalá : Satrugna, you! Oh Lord! You're too killed; I knew today of late.

Raghuveer Singh : Yes, I did kill everyone.

Jwalá : I don't want to see even your face. Master *Saheb*, who and why brought him amongst us?

Shreekant : I dreamt something horrible tonight—something must have happened. In that house, something big has happened.

Raghuveer Singh : I too feel the same...Master is coming.

Jwalá : Who the master?

Raghuveer Singh : Bipin Babu*Saheb*.

Jwalá : Bipin, the one who had espoused me by seducing? And after engendering children...my god! Don't utter his name Raghuveer! I still have his whipping bruises all over my body. His countenance only inflames my body. Where am I to run should he arrive here?

Raghuveer Singh : If he comes, I too shall take revenge. I do know—he's the one to contract on cash to kill you. There was anoth er woman he liked. Listen—this woman, after she came, he couldn't wait to kill you, and you were killed along with your two children; they must be somewhere around here.

Jwalá : What did you say? Are Ravi and Shama too murdered? Am I listening to this!

Raghuveer Singh : These are the hands to kill them too. Who else were not killed by these hands? Is there a slave that cannot do a thing when his landlord, his master, decrees? Master *Saheb*, you manipulated and swayed the village, truth you told to the tenants and so you have been killed. I'm the one to stabyou—with a knife to death. You were reading a book in the *lampha*. I gored you from behind—you were spot dead. Ick! What a scene to recall. Your blood-smeared back bled like a fountain! But in no time I lifted you over and buried you under the ground. You know what—those tenants who came to your rescue were arrested, and the issue—it was a huge case. Rotten to this day might be the tenants in jail because I was the one to testify against them.

Jwalá : Gah! Both my children are killed. Shama was so pretty, just into babbling. She would adorably come to kiss me in the cheek: "Mommy, Mommy," she'd exclaim—and now they're dead. Oh! What do I have to hear?

Shrikant : Regretting is to no avail, please keep calm.

Jwalá : How can I forget those all? I'm a mother. Am I supposed to listen to my children's murderous story and expect me not to cry?

Shrikant : The agony is only because ofmemories now cropping up our brains. We had no trouble until now, no anguish, and we won't have them anytime later. These memories—they are the key to misery. What of misery here, but? Our tears are neither valued here nor on earth. So, no need to feel tormented.

Satrugna : Sinners! What evil had the kids done as to kill them without giving a thought? Aw! Ravi *Babu* wouldn't want to sit anywhere but my lap and Shama—I'd piggyback Shama. Strolling around carrying both on these shoulders—such young adorable kids they were.

Jwalá : Yes, they'd so much accompany you. I know it.

Raghuveer Singh : These hands have done so much evil. I've burned villages because they wouldn't comply with my master. Many would join their hands lamenting for taking their baggage and stuff outside. I wouldn't even let them touch; I'd stand along with a gun in hand. Meanwhile, many babies would be cooked to death; some oldies would subtly get roasted, many would go homeless, stony broke! I've led to these happenings. These hands—they stink, because they're involved in such sins and atrocities.

Shrikant : Didn't you know what you're doing was atrocious then?

Jwalá : Enough! Don't talk to this devil. This bloody man killed me. Fine!What need those kids be killed? Couldn't he pronounce them dead and give them away to someone? He is heinous, a nefarious man. Sinned is the one to see even his face. How do I endure this, Aah! My kids!

Raghuveer Singh : OK I am—heinous, nefarious, and evil. Oh come on! Did it happen on my will? Am I the only one who wants to do evil? Don't you think I felt sorry...Jwalá Rani, how could I even touch such a gentle mistress like you? I couldn't even stare at you for a moment. But that night I was taken aback when I was ordered to kill you. I couldn't believe him. How could I? After all you were such a gentle, beautiful, virtuous lady. But, I was at my master's gunpoint. I would've been killed. That's why I started off. I went to your bedroom—I gagged you. He was watching from one of the corners—believe me it was such a fierce countenance. An axe yes, it was for chopping wood—my eyes went on it. Eyes closed—I blew it on you. Couldn't approve of the fact that I could kill you. My god! You had a frightened horrible face, and those adorable eyes. One had to have some guts to strike you. Alas! These hands, why don't they fall? Why?

Shrikant : Let it go, you're not a killer. You were ordered to kill—and you complied. You were an honest servant.

Raghuveer Singh : No, master *saheb*. I'm a sinner. Jwalá Rani, please don't cry. I killed your children that following night. They were crying "Mommy, Mommy" at one instant and then summoning "Pappa, Pappa." I was restless; my hands trembled with pain, eyes wetted. I cried, Jwalá Rani, I did. I really cried but, what father wouldn't be bothered to witnesssuch a scene? They went on "Papa, Papa" but he wouldn't give them even a hug—not a flash of love kindled in his eyes.

Jwalá : Stop it! I can't listen to it, I cannot bear it.

Raghuveersingh : Was I the only one to hit those kids, the only soul willing to kill them? What grudge would I hold against those babies or any anger? They were lamenting in despair.God knows how I sold my soul to the devil; how I had to contain it!How I had to drink my own tears and ended up doing the hangman's job. Why didn't I die before my hands were raised? Why didn't I die before I hurt them? Rotten should've been my hands the moment before I squashed them.I shut my eyes and killed them. Later at home, I cried. Cried and cried until vertigo. The day since, I ran insane. I was no longer human. And, I would pretty much kill anyone if told, like a crazy man. I killed you master *saheb,* out cold.

Shrikant : You were ordered to kill me, and you did. I don't regret that. But, like you said before, I neither manipulated the peasants into rebellion against Bipin Babu nor do I know Bipin Babu in person. Yes, but I totally would say in my class not to bear oppression, not to habituate toleration. Yes, I totally would

distribute medicines, train and assist the common peasants.

Raghuveer Singh : This was exactly what he hated. You didn't adhere to him like one of his bondsmen, and you walked with your head held high. Isn't this exactly that envenomed him? He used to call you 'king cobra'. He doesn't wait a second to destroy anyone going against him. Do you think he liked the school being in the village? No. Liked anyone reading-writing? Never. For him, this was the very crime you committed. That was why I was hired—and I knew you were very benevolent but had I not killed you, he would've on account of murders I'd committed before—got me apprehended or killed.

Satrugna : So then why did he have to kill you, brother Raghuveer?

Raghuveer Singh : This duffer doesn't even know that.

Jwalá : Raghuveer, I wonder how those little children like flowers of mine died of yearning. Boo, my mind is not working!

Shrikant : Stop straining your brain. What's gone is gone—earth's tales left behind on earth. We're not physically there, that is not our existence; we're here now.What is intriguing is why we're awaken in these memories...as if alive; why did we revert back to that being again?

Jwalá : To bear this mess. To have to listen to my own children's death. If only those children of mine had been alive there...

Raghuveer Singh : I shouldn't have told you. But I couldn't keep it in me—I was burning inside-out with remorse. These stuffs dance in my brain every now and then. I'll avenge this agony.

Shrikant : What revenge are you taking about? Is there any going back? We're stuck down here. Wish we never had been woken: still incognizant, utterly formless, pulseless, and immersed in vacuity. . . Look who's coming! (A woman enters): Who're you?

Woman : Mind your own business. Whoever I may be. Tell me if I can find a hotel or something around here?

Shrikant : Hotel?

Woman : You heard it, yes. . . . Why're you staring at me? . . . Lady, ah maybe you could tell me something about it?

Jwalá : You just in, aren't you?

Woman : Ah, yes. And I'm in a haste.

Raghuveer Singh :I see...that's why she's heedless. Why don't you Master Saheb tell her this is no party place?

Woman : You mean no hotels at all? What freakingtown is this, jeez!

Shrikant : So how did you get in here... on foot or...maybe (inaudible)

Woman : Oh please stop fussing around. Of course in a car.

Jwalá : Car? Really?

Raghuveer Singh : You took a car, oh yes...but you unrolled out in here, mam. We're all dead. Dead dead, here.

Woman : Dead? You kidding me, right? If so, I wasn't born yesterday, I'll tell you...Why don't you tell me,lady,where I can find some place to stay? I've gotta go. He's chasing me down here.

Shrikant : Who's chasing you?

Woman : None of your business, I've told you... Sister, if he finds me, I'm finished—he'll just kill me. If you're not into saying, let it be, I'll manage.

Shrikant : Wait... you didn't say who's going to kill you...who is that *he*? But, listen to the truth: You're dead, okay...maybe an accident or killed by someone for sure. You're not on earth, that's not where you are, fair enough? This is Death Land...now understand why come no hotels around here?

Woman : You saying I'm dead? Like dead? I'm ALIVE. How can I die? That's not just possible. He can't have killed me. Could've killed me for sure, but I ran away from home without notice. Yes, if I'd stayed another second, I'd be dead straight. He was expecting to poison or maybe

strangulate me to death. Such a ferocious cold-blooded man he was! "I'll trample you to death by an elephant," that's him.

Jwalá : Elephant?

Raghuveer Singh : You owned an elephant?

Woman : Don't be silly. An elephant and that in a landlord's or say a reputed man's—what's the big deal?

Raghuveer Singh : OK, then I should know you. You're that woman, aren't you? I remember your name...that face...the voice. I bet you're Krishnárani, Bipin Babu's wife?

Woman :I am... so what?

Raghuveer Singh : Don't you recognize me? I'm the one—Raghuveer Singh, remember?

Krishnárani : Raghuveersingh, is it? But, you were dead—isn't it...bitten by a snake. I was the one to see you cremated—with my own eyes!

Raghuveer Singh :I'm that very, yes. And she's Jwalárani, Bipin Babu's ex-wife...I mean your predecessor.

Krishnárani : I do recognize her now. Seen her in the photo...umm am I..I mean...

Shrikant : Yes, you're no more alive.

Krishnárani : But how come dead? I don't buy it. I feel alive. I can talk...I'm walking, see. He can't have killed me. I remember running towards the car. And, and...I did refuse to eat that thing he gave me...I didn't eat it. How can I die?

Raghuveer Singh : OK, did you know the car driver in person; you didn't, did you? What if he was compromised already? Did the car stop somewhere?

Krishná : It kind of did, once.

Raghuveer Singh : So, what happened after? You don't remember that, do you? He must'vekilled you and dumped you in a river or somewhere...and then...finally you're here. I know that conniving Bipin Babu's scheme.

Krishná : That can't be. Oh that can't be. I don't believe it. Not a bit. How can I die? How can he...

Jwalá : ...kill the same way he killed me—that monster...he must've killed you too. Like the way he killed my children, he can do that to you as well. He totally can do it; that scoundrel can. I'm sure he had you murdered, sister.

Krishná : So then I died in the car...? Is this not me escaping to this place?

Raghuveer Singh : You surely passed out. Thought you went by a car.

Krishná :I'm dead, gah. I'm dead! I won't die...not by him at least.

Shrikant : Don't panic.

Krishná : The moment I knew he was plotting my murder; I tricked him and ran away from there. I had learnt how he had murdered you...ever since then, I had been vigilant. It was apparent: his love for me...it was bogus...took merely a month to realize! Until he found another woman, he loved me...cared for me. And when he did find one, his abuse found me...beat me like hell...killed my small one and dumped somewhere. Snakebite—he said!Liar. That—for me was a lightning bolt. Hadn't that old maid exhorted me to run away, I would've died then and there! I woke up to his plan—this...poison, all set and arranged for me. I didn't even touch anything leave alone eating after that. I kind of fasted along...Didn't know he was such a capricious fickle womanizer. Kill one...replace her—easy when he had enough...I but managed to run away, though. In that case, how can I die? I can't die god...No, I can't.

Jwalá : I was his first victim. You became the second. God knows who the next is...

Raghuveer Singh :I swear...will take revenge for all he's done. Tell you something Maharani? He got me to kill everyone...you, them, all—and what choice I had? And what do I get in return at the end: death!No surprise. If only I'd encounter that bastard affront...

Shrikant : Krishnárani, you must have abhorred death. I mean who wants to die, anyway? And to miss the irradiant warmth...of sunbeams kissing the earth? You were ambushed to death by deceit.

Krishná : Did I really die? I now give in...please tell me. Am I dead, really?

Shrikant : I still see that old elephant full of life. And we? Devoid of. Dead here. And that old elephant still robust.

Krishná : Still living is the elephant...

Shrikant : That swindler...he won't die easy! Not until that elephant's dead. Neither will his atrocities...anyway, is it...someone's coming towards us?

Krishná : Who's that? God forbid if he's Him. Shouldhe turn out to be, what do we do?

Raghuveer Singh : Who you said? Ah! Him? Got it. Hey, he's coming towards us. It's a wish come true!

Jwalá : Hey, who's this Him?

Raghuveer Singh : Bipin Babu.

Jwalá : Bipin Babu? Oh, no! What should I do? I can't stand that brute...can't see his face. (Tries to flee, but is glued) What's with my feet? I can't move, what's going on?

Raghuveer Singh : He's coming. Let him come.

Shrikant : He's here. (Bipin Babu enters)

Raghuveer Singh : Come Bipin Babu, come. Glad to see you after so long. You're welcome here.

Shrikant : Hell, it's him for real!

Bipin : (looks around) How did I...I mean how am I here?

Raghuveer Singh : Don't you recognize us? She's Jwalárani; she's Krishnárani; and he's Satrugna—your butler; and he's *Mastersaheb*Shrikant. You don't know me too? I'm Raghuveer, your special devoted servant.

Bipin : (startling) Raghuveer, you! ... Krishná...how come you reach here?

Shrikant : The way you came here, obviously.

Bipin : Krishnáwas already dead!

Krishná : Krishná died for sure...yes, I did die. And, why the hell are you here? Hadn't you had enough that you've followed here to trouble us?

Jwalá : You really talking to this jerk? Just ignore him, leave it. Bloody monster stooped to killing even my kids!

Bipin : Who to you say, Jwalá? I'm your husband. Shame! How dare you say a monster?

Krishná : Such a vulture husband! (Looks at Bipin's face) Such a man who doesn't even spare his own kids. Got us all killed. And, now you pretend to be a sincere husband? Shame on you for even uttering that word!

Bipin : Raghuveer, are you listening to this? Just...

Raghuveer: They say old habits die hard. You've barely changed. But, you're not a boss anymore, you understand? You barely a dead dummy like us.

Bipin : Me dead! ... Did I then really drink poison? I was suspicious...that old woman must have brought me poison by mistake.

Shrikant : You mean you died by mistake? No wonder—some slip to murder and some made to sleepforever. You got us all killed. And by fault yourself too. See, we're now even. Death for both akin, by all means.

Raghuveer Singh : Akin? You ought to be answerable for all your wrongdoings here.

Bipin : Am I really dead? ... Alas! I'm dead. What a faux pas in the heaven's name! Should've made sure about that bottle! What a mistake...great mistake...What might Chanchala be doing right now?

Krishná : Maybe chanting your name, or must be suffering...wailing in lamentation, eh?

Bipin : You better shut up, Krishná. I can do anything I want, to you, here. You understand?

Jwálá : What can you do here? Still not satiated even after wiping us out? Where are those kids of mine? Aren't you satisfied even after exterminating them?

Bipin : Oh shut up...nobody's talking to you. It's been ages since you've been out of my mind.

Raghuveersingh : Don't you command me here anymore...mind you. Satrugna is too here with us.

Bipin : Have I really died, Shrikant? It's getting strange. What do I do now?

Raghuveer Singh : Listen, Bipin Babu. You may

ease yourself here if you like. Can't promise you a big house like back in earth though. Nor any people whom you can rule over. In fact, you will have someone you know here—us. We hold all your aces—the sins, atrocities and murders you've committed. Wewill remind you this on and off and torture you like hell. You will see people you've killed constantly before your eyes. They'll be able to spit at your face for eternity.

Bipin : Shrikant, you hear this guy? A mere butler of mine fearlessly reprimands me!

Raghuveer Singh : Bipin Babu, you got me to break the butterfly in a wheel—kill them all. I kept completely danced to your tune. You then slayed me—a bit thick but I endured that too. And now you try to scare me?

Shrikant : Let it be, why raise the devils?

Jwálá : I wouldn't even spit on his face, Raghuveer.

Krishná : Still not done away with the old hectoring and show off, brought it along even down here.

Raghuveer Singh : Step aside Shrikánt*Babu*, will you? I will pay him back in his own coin.

Bipin : Revenge, eh?—you good for nothing!

Raghuveer Singh : Revenge, yes! Because you made me take innocent lives, and I massacred them.Settling the score you know now! Come on, I'm ready to fight you today, kill you if god willing!

Shrikant : What in heaven's name you talking about Raghuveer? We're all already dead.There can't be killing him again. Stop arguing. Nothing to do with such a disgusting animal! Let's finish off with him and go.

Raghuveer Singh : Even so, I'm not sparing this man!

Bipin : Ready to take you on Raghuveer, come on! (Bipin forces his hand for a blow but to no ail, and then leg—that too in vain) What's wrong with me...Shrikant? I can't move my limbs.

Shrikant : Just wait for your speech to be impaired! You're turning into a rock.

Raghuveer Singh : Yes, you've turned into a rock. We can spit on your face now. (Raghuveer spits on his face)

Bipin : Spit you ras....(transforms completely into a rock)

Krishná : Turned into a rock finally! That's our fate too. I'm so scared!

Shrikant : Our fate is all destined—be idle as a rock. A mere boulder. Thoughtless, Nameless, Non-existent.

Krishná : Sister!

Jwalá : I...Oh My children (turns into a rock)

Raghuveer Singh : Glad I got to spit on his face. Nothing bad if I turn to a rock now...

Krishná : Shrikant, speak up! I will be petrified. (Shrikant lies dead, rigid, unmoving) Oh no! I'm turning. Everyone's turned. To a rock. What do I do? (She tries to escape, run, then returns, drags herself, cries, prostrates, and turns into a rock)

Translation of Bijaya Malla's play "Pattharko Katha", done by Umesh Bajgain

One-Act Play

Conflict

Dhurva Chandra Gautam

Characters

Man : 1
Woman : 1
Woman : 2
Man : 2

[A room. Time: convenient to call it 'night'. Though it's a room, there is nothing that characterizes a room, except for the walls. The frontal part of the stage is brilliantly bright; the rear is rather dim. The reason for dividing its as 'front' and 'rear' is that, the play continues in two parallel scenes. In the front part of the stage, there is a round table and three chairs beside it. One of the chairs is empty. When the stage is lighted, a man and woman sit on two chairs facing each other. They are husband and wife from a lower middle class family. They shall be recognized as Man 1 and Woman 1 respectively. Between themselves, they can use the names of their choices. On the table, spectators can see cards scattered. Both have cards in their hands too. In other words, spectators can see them in the middle of a card game. No paper-weight is necessary on the table.]

In another section of the stage, further away from Man 1 and Woman 1, there is yet another pair, sitting around a similar round and bare table, on two chairs. A third chair can also be seen lying upside down. It's not clear who they are. They shall be introduced as Man 2 and Woman 2. Their table also shows cards scattered all over its surface. As soon as the curtain is lifted, the man in this pair is seen tearing off a couple of cards, unlike the earlier pair. In front of Woman 2, one can see a pile of cards placed with face down. Same is the sight in front of Man 2.

Mysteriousness might appear in the acting of Man 2 and Woman 2 at times. One might turn emotionless when the other is emotionally charged, or both getting aggressive for no reason or both might get emotionless.

On the table (of Woman 2) there are masks (at least two). They don't show many men or women's face; rather they show different expressions. The characters can use the masks a couple of times besides at directed moments but in doing so, they need to do it only for a while to manifest a certain expression, and return to the original face immediately after.

Since the play continues in two parallel scenes, the characters are required to keep doing certain things other than what is appropriate (or directed).

The stage lights up. Before it, it was quite dark. When things brighten up, Man 1, Woman 1, Man 2 and Woman 2 are seen in positions stated above.

Man 1 : Move. You have no option but to throw a seven.

Woman 1 : Why? I also have a five for throwing, by the way.

Man 1 : Throw a five if you are willing to lose immediately.

Woman 1 : What if I throw a seven?

Man 1 : Will be defeated a bit later.

Woman 1 : What then is the difference?

Man 1 : In a game, even a short difference counts.

Woman 1 : But then, ours is not a game proper.

Man 1 : Why?

Woman 1 : We have neither laid a stake, not any

desire. Does this count as a game? You also start a game you are good at. It's you who knows the rules; so most of the time you come out winner.

Man 1 : But I take up newer games to entertain you.

Woman 2 : (pointing her forefinger towards Man 1) What a lie the scoundrel tells!

Woman 1 : Entertainment as well as defeat! (laughs). That's why I say it's not a game; it's something else.

Man 1 : What else is this, then?

Woman 1 : (stands up, walks behind her chair, and holds it) It's like living. We started the game on the first night of our marriage. It has been years; we have been playing incessantly, though many things got snapped in between.

Man 2 : Maybe his hints are towards his mind, heart, tears or something tragic. How clever he looks in interpretation, doesn't he?
[Woman 2 appears unaligned.]

Man 1 : Sushi! Tell me: are you happy with me or not? I am asking you this after so many years. (Man 1 stands near Woman 1, and holds the woman's chair.)

Woman 1 : You have asked this many times, and every time you do, you mention you have been asking it after so many years.

Man 1 : But you never gave me an answer.

Woman 2 : (moving her hands in the air in denouncement) What answer should I give you? Doesn't one have the guts to hear and face the reality?

Man 1 : Oomph! Only an own has such guts, because at times it is blind.
[Man 2 stands. Immediately after, Woman 2 stands as well. They start gawking at each other incessantly.]

Woman 1 : As for answer, I am not giving one today as well. (Before delivering this dialogue, she turns away from Man 1, turning her back on him.)

Man 1 : Why?

Woman 1 : Because by engaging me on such a serious issue, you want to win the game of cards. But this time, I am defeating you at any rate. (There are gestures of laughter while this dialogue is being uttered.)

Man 1 : (apparently serious) Leave the cards, Sushi. I'll teach you a different game. Rather tell me today: how do you take life?
(He holds the hands of Woman 1)

Woman 1 : This way! We can take it like this.

Man 1 : (removing his hand from the chair) That's not a reply of any sort.

Man 2 : That's hypocrisy—pretention to show you know about life.

Woman 1 : I learned to take life in such a way that this game (pointing at cards) is a party of my day...my essence.

Man 1 : But in my opinion, life can be a mix of many weird things. It can also be a laughter engendered by sort of tickling, but playing it is not a matter of triviality.

Woman 1 : I cannot play cards anymore (sits).

Man 1 : Why?

Woman 1 : I don't know why; I am feeling drowsy, something like half-sleepiness.

Woman 2 : Look! She hasn't been able to tell, but she is impatient for a bed. Gradually... (laughs)

Man 2 : I know (silent). Shall we go?

Woman 2 : We can't go. Because they are not yet gone.

Man 1 : If so, allow this old philosophy about life to go to the dungeon. (moves close to Woman 1)

Woman 1 : If that is the case, let our frustrations and flames cry out in a few powerful bouts.

Man 1 : Forget it! We have till date found the world in the form of a powerful hunger and nothing else.

Woman 1 : (stands) If so, forget it. We are dilemmas who escaped from some moments in the past. We are in action today to add more dilemmas tomorrow.

Man 1 : As for me, I want to remember love and things like that, owning to the spells of drowsiness coming between your dialogues. (touches the chin of Woman 1)..the immortality of your looks (Woman 1 lowers her head)it also gives some yummy thing to eat at times

(strokes the hand of Woman 1)

Man 2 : (charges one powerful slap on Woman 2 from standing position)

Woman 2 : (also raises her hand. But Man 2 stops and jerks Woman 2's hand away). I shall finish you off (grinds her teeth).

Man 2 : When did you ever leave me alive? Frail woman!

Woman 1 : (raises her head, but the former coyness has lingered) Now we ought to forget that...we do have emptiness from poverty...at least for the moment.

Man 1 : (changed gestures can be seen) But it seems, some sort of frustration is bothering me.

Woman 1 : How did you know?

Man 1 : I want to look at the sky. In fact, I don't want to stay without looking at somewhere and I feel (walking a few feet away) by doing all this, we are living a big lie. We are not as close as we appear to be. A ditch from olden times lies between us; and unable to cross the same, we are willing to jump into it and kill ourselves (laughs). Don't you feel the same?

Woman 1 : Whenever I mention something that can please you, you always feel the same, don't you?

Man 1 : Because we are not the safety of each other. Instead, we can be threats.

Woman 1 : Do you fear me?

Man 1 : No. What I fear is, you are not a frightening thing and yet....leave it. I long for something you long for too...but has for years remained unattained. Imagine it's a coin that has rolled into a rat's hole...but was my last cash to pay for bus fare. (short pause) I have become the woods of a cave...one who can't decide what's what...in me if there is such darkness (laughs) tell what I really want.

Woman 2 : Scoundrel! You want dedication. You want an assurance—that she would be yours for many lifetimes.

Woman 1 : Forget this issue—this vigorous and influential dialogue. Cards are far better.

Man 1 : If so, I remember: you were supposed to withdraw cash from the bank yesterday. Did you do that?

Woman 1 : Yesterday was Saturday.

Man 1 : What about today?

Woman 1 : There's no balance in the account.

Man 1 : What's that you are saying?

Woman 1 : When I went to the bank with a check, I found my balance was only ten rupees.

Man 2 : This is the biggest mishap of this age.

Man 1 : Still that might work.

Woman 1 : That ten rupees was the only remaining balance. Withdrawing that would mean collapse of my account. For that, I need yet another application from you.

Man 1 : But you didn't come to tell that to me.

Woman 1 : Isn't it a shame to collapse an account merely for ten rupees?

Man 1 : That's true, but what will we do tomorrow. Such shame is imminent tomorrow as well.

Woman 1 : Tomorrow, we shall again discuss about possibilities. We shall decide if it is proper or not to withdraw ten rupees from the account.

Man 1 : I thought you or your account has some cash.

Woman 1 : And?

Man 1 : I have invited some friends for meal.

Woman 1 : Why did you do that without understanding the situation?

Man 1 : For having spent other's cash for many days. Yesterday, in the spell of booze, they charged me from all quarters. In a fit of emotions, I invited for meal everyone that was present there to drink.

Woman 1 : You were heavily drunk yesterday. You were indiscriminately spelling my name. After I laughed (laughs) you asked me my name three times.

Man 1 : Didn't I call you Sushi?

Woman 1 : Not even once.

Man 1 : What else did I say, then?

Woman 1 : Except mine, you took several other names.

Man 1 : Whatever the case, my friends won't spare me before coming here tomorrow.

Woman 1 : We should either loan cash, or do as we did before.

Man 1 : What had we done before?

Woman 1 : You were to a relative's funeral.

Man 1 : But this time they won't spare. They will reach me, finding the location of the pyre. Some day, in a fit of booze, I have leaked that secret as well.

Woman 1 : Now you ought to think of a more serious but unusual trick.

Man 1 : What can it be? (apparently thinking)

Woman 1 : You can tell them I quarreled with you and walked away to my parents.

Woman 2 : She wants to stay satisfied in the same way, by gathering some sympathy or by showing some cruelty....but see how placid she looks.

Man 1 : But this trick too doesn't appear very promising. If they don't get a chance here, they will leave stripping me off all the cash I have.

Woman 1 : Tell them I made away with all cash and jewels. (she appears unaligned even as she is telling newer tricks.)

Man 1 : I don't want to make it a social or legal issue.

Woman 1 : If so, what was the problem between us all these years? (while delivering this dialogue, she moves a little closer to Man 1)

Man 1 : We didn't have any.

Woman 1 : Then?

Man 1 : That's why we don't have any solution, either.

Woman 1 : If so, let's go (stretches herself). I am really sleepy now.

Man 1 : Are you impatient to have a dream?

Woman 1 : No. Let's whatever is left to be dreamt of now. After that, let's either sleep without any dream or stay awoken all the time...This is the type of haste I am in.

Man 2 : All these are nothing. They care caught in trivial question-answer. They are apparently despondent, but cruel without. Or, cruel outside and despondent within. If we rip and inspect, this is what we will see in turn.

Woman 2 : Cruel, like you.

Man 2 : He maybe like or me, but that won't make any difference. It's alike; that's all. With time, this has become the only reality—that there is no reality at all.

Man 1 : Sushi, I hold the wish to add some pleasure to your dream.

Woman 2 : Traitor (in high scream), what did you give me till this day—except some torture, an imprisonment, a touch like that of a dead fish, a sunrise of a day to be wasted,....your hubris and the burden of making yourself great. All your ideals, claims of humanity or other great manifestations are bogus because they are fragments of your lust. Yet you boast that you give me all you have. But for giving me, you neither have any wealth, nor any love for me...(in a lowered tone). All you have is thirst. What else do you have?

Man 2 : And you remember all these issues, point out my defect and thus resort to avenging against me. More than me, you are...an animal...a beast...you always need a thing which is akin to my helplessness....in which I am myself quite meek. That's why your love is not love for me, as is your living not living. Whatever you think best is for me the worst...a mishap. Did you understand? (at this point, his voice against some harshness or sharpness)

Woman 2 : You call it a mishap? (appears agitated)

Man 2 : Yes, because all the time you pronounce these dissatisfactions not through any other means but my making them collide with me, and seeing them fragment into innumerable pieces. This is because when this happens you will find it easy to invent yet another accusation against me and nurture yet dissatisfaction. You....are a person of such nature...who safeguard your cruelty, frustration and dissatisfaction as your desires, and if they are not fulfilled, you curse whoever is in front you, as you do it to me. But such fake desires will never be fulfilled, because they are not desires of any kind. That is rather a show engendered by killing the desires by yourself. Oh, what a sort of person you are! Else,

whatever I did for you in the name of life till today is....

Woman 2 : (in a satirical manner) Whatever you did in the name of life consist of nothing but a few saris you often bought for me. Where was anything called freedom...anything called my own worth? Where did you come burying them in the name of life?

Man 2 : You....you are mean! Whatever you are seeking as your freedom or wroth is nothing but your bygone days. But then, how can I become your past? Can you become my past? In that forest, I am myself hanging at some point (agitates), vehemently....(jerks his hand in air for want of words)

Woman 2 : Vile! Leave me alone. We can never agree on this (Woman 2 and Man 2 wear a mask each.)

Man 1 : Will you wait for a while?

Woman 2 : For what?

Man 1 : I will return after making some arrangement for your dreams.

Woman 1 : How?

Man 1 : By borrowing or by inventing some way out for tomorrow (laughs). Till then, you can stay playing cards, will you?

Woman 1 : Fine. You go. I will stay until you are back.

[Exit Man 1]

Woman 1 : [Stands, places her hand between her nose and forehead, and closes her eyes for a while. Silent. She turns back ands sees; she can see Man 2 and Woman 2 standing or walking. They sit. Woman 1 walks closer to them. She stares at Man 2.] Who are you? How did you come inside my room?

Man 2 : I can be some of your invisible possessions, something you can feel at times or see as you are doing now, but can never own.

Woman 1 : I don't believe such a thing exists.

Man 2 : Why? I can be your past; your history.

Woman 1 : Are you Ramesh?

Man 2 : Is your past merely Ramesh for you?

Woman 1 : (dejected...pauses for a while) Yes. I don't remember anything else.

Man 2 : Don't you even remember the life you are living now?

Woman 1 : What sort of life is that? Doest it have any name or location? (laughs). What if it reaches nowhere like a letter without any address? Tell me.

Man 2 : In most of the cases, past is the name of a force that drowns you.

Woman 1 : (to Woman 2) And you? Who are you?

Woman 2 : I? I can be your dejections, or some sort of wish that is always so verdant though apparently dry. Or consider, at least, I can be your unconscious...or say, I can be yourself.

Woman 1 : Are you Sarala?

Woman 2 : Who is that?

Woman 1 : My oldest friend. She often talked such things. But why are you wearing such masks atop your faces?

Man 2 : ...

Woman 2 : If we, here we remove the masks. (they pull the masks over their heads).

Woman 1 : (to Man 2) You are not Ramesh. (To Woman 2) Nor are you Sarala.

Man 2 : I can very much be Sarala. Time can transmute faces as you know, or say, the fact that appears real can itself be a mask, and in our life, we are doomed to wear it in order to be human.

Woman 2 : Forget Sarala. I can even claim I am yourself.

Woman 1 : Can I stay here for some more time? It must be quite interesting to meet one's past of unconscious, shake hands with it and talk for a while.

Man 2 : ...

Woman 2 : Come; sit with us.

Woman 1 : But I will be just only for a while. I have to wait until Raju returns.

Woman 2 : Liar...

Woman 1 : (turns quickly towards Woman 2)

Man 2 : You are willing to stay here because of me.

Woman 2 : In fact, you want to stay with us all the time, and wish your husband is late in returning.

Or say, ne never returns, and if he does, you want him to come back dead.

Woman 1 : (enraged) Don't talk bogus with me.

Man 2 : There's no point in you cheating yourself here. Feel free and sit comfortably. (corrects the chair lying upside-down; Woman 1 sits on it.)

Woman 1 : How am I cheating anyone? In reality I was waiting for him. I heard you make a noise and saw you...

Woman 2 : In fact, we were not making any noise that time.

Man 2 : We are silently waiting for you to see us and walk close to us.

Woman 1 : Why did you I wish my husband to return home dead? Does a dead person ever return?

Woman 2 : It's not reality we always talk about. We also talk about wishes sometimes. You want your husband to return dead, or way you want to see him in such a condition...like something the holder of an inferior weapon thinks sometimes...in fact...

Woman 1 : (laughs) Oh, poor thing! Why say such a thing to him? He is my husband, and in all cases, he is the only person who loves me.

Man 2 : That's true for now. But how can you say Ramesh doesn't love you anymore?

Woman 1 : (apparently dejected) Don't mention Ramesh. He left me an entire hell to endure! How can I forget such a man! (appears satirical)

Woman 2 : You had also given a hell of the same model to him, hadn't you?

Man 2 : I don't know that.

Woman 1 : By the way, are you Ramesh?

Man 2 : Yes, I am. (stands up)

Woman 1 : (stands and walks close to the Man 2) If so, tell me why you tricked me that day by saying you would return? You made me wait for so long and didn't return.

Woman 2 : That's why I say the word 'waiting' is of great import for you.

Man 2 : Sushi, leave all these things. If we start telling the story of all these things, we will find emotionality, childishness, tragedy and dream-like realizations, but everywhere, they are dotted by nothing but sorrow. What use is prolonging the issue? You tell it yourself: if I had returned that day, would you marry me?

Woman 1 : Hmm...maybe I would.

Man 2 : You should not be telling me what you would do then. Tell me frankly why you wanted to meet me that day, and why you said it was essential.

Woman 1 : I wanted to meet for the last time and tell our meeting won't be possible anymore because...but you regret the inability of meeting me that moment, don't you?

Woman 2 : I don't have any of such regrets. But I regret missing something I wanted to possess, and now onward...

Man 2 : That's an illusion...and that's what I wanted to avert. Perhaps this is the difference between you and me. You can live in one sort of illusion or another; I can tell it and try to snap it. Yet, we both are not free (silence). Those days, our greatest failure and misfortune was our poverty. If at least one of us had been well-off, we would be going smoothly. We should have some guts to revolt...We were obliged to abandon everything, but our poverty lingered...it didn't stop following even after death.

Woman 1 : Shut up. Who has died here at this moment?

Woman 2 : Such sentences are quite complicated, though short. Life has no death of such sentences. Sometimes, things are quite mysterious and funny. They are neither right nor wrong; they are just amazing and funny; they are merely entertaining. (laughs)

Woman 1 : Put a stop on such things now. How about talking something pleasant?

Man 1 : Okay. (silent). I remember: one day, you had cried as I was teasing you.

Woman 1 : Scoundrel. After that how you...(shies away)

Man 2 : So I was on look for making you weep.

Woman 1 : Those days, we were always short of time, weren't we?

Man 2 : We used to meet at 5 and return home by 6 o'clock. After that, we started meeting at 4, then at 3. Still short of time, we started meeting at 2, and then at 1. Then we meet at 12, and then at 11. And yet (laughs), we felt the clock struck 6 so soon.

Woman 1 : On one of our holidays, we went about moving from one place to another from 8 am to 8 pm, didn't we?

Man 2 : We ate out that day. But who cared about eating?

Woman 1 : Oh, what sort of letters you wrote!

Man 2 : Do you remember all those?

Woman 1 : I do.

Man 2 : Tell how they were.

Woman 1 : Was there any flower you didn't compare me with? Do you remember what Sarala said after reading one of your letters one day?

Man 2 : What did she say?

Woman 1 : She said you should either be insane or are a son of a gardener who knows nothing but flowers. (laughter)

Man 2 : One day I had told you at the park: "If I die..."

Woman 2 : That you had said to me.

Man 2 : I don't agree. If you're right tell me what the time was —what hour and what minute— when I said that.

Woman 2 : Ask her to tell all those things.

Woman 1 : You used to make a ring of grass and make me wear it (laughs), calling it our engagement, didn't you? Those days, even minor incidents used to appear mysterious as though we were doing mysteries in life one after another.

Man 2 : What went wrong later?

Woman 1 : That I don't know. Maybe we aged, or the world left us, or else, something was cut away from ourselves. What shall I say? Everything has today become like a voice an unconscious man utters in a hospital.

Man 2 : You started becoming quite serious, considering the past time. This is a good way to become emotional if there is ample time in hand, together with a slice of the present with some defects. What do you think?

Woman 1 : I will go now. I must keep myself away from you. I know you no longer exist. Yet...at least...

[Exit Woman 1 in the direction opposite to the one taken by Man]

Man 2 : What did you see?

Woman 2 : She is a foolish woman. She is always tormented by things she could nor procure, or incurred loss from things of her own choices. She takes up problems that can never be solved.

Man 2 : Like?

Woman 2 : She always asks her husband to shower a little more love than the measure her husband gives. I mean, if she gets more love today that what she got yesterday, she asks for even more. When will such a thing ever end? Will the craving of such a person ever been fulfilled?

Man 2 : What sort of love are you talking about?

Woman 2 : If we could tell that, love would definitely have some shape and form. It would have boundaries. I mean we would stay aloof from people who are always unhappy and unsatisfied. I mean, we don't know its edges; so we often make mistakes in telling it.

Man 2 : Poor thing! She regrets the absence of Ramesh now. If only she had married him! In that case, her regrets...if this is the case, tell where a person should go or stay safe? It's utterly useless....did you understand? But then, what of it? Saying this is even more trivial....I mean, there a difficulty here...a manacle that lasts forever.

[Enter Man 1. Man 2 and Woman 2 wear masks.]

Man 1 : I never had any idea of such a flirty world. Loneliness in a Crowd! Will this title befit place called a city, or the world, to our own mishandling in the city? (turns back and faces Woman 2) Who are you to be here in my room so late in the night? You were not here until a while ago?

Woman 1 : I? I can be your history, your past, I mean that thing which you maybe able to see at times, but won't be able to possess.

Man 1 : Are you Sarala?

Woman 2 : Who's Sarala? Does the past mean nothing but Sarala for you?

Man 1 : What more than that? What is the price of my past? An incident, a person or a memory, like I am pathetic because I was pathetic, was poor and so I am one today as well...this reality...what more than that?

Man 2 : It's unwise to arrive at such any kind of outcome so soon. One's capacity falls short of that.

Man 1 : But then, is this an outcome of any kind? (concentrates on Man 2). But then, who are you? It's difficult and mysterious too. I never know how many kinds of people walk in and...

Man 2 : I...could be your unconscious...I could be you....your desire that was never fulfilled....owing to which you are dissatisfied, hopeless and remorseful because of that unfulfilled desire.

Man 1 : If so, you are Ramesh—my friend who was inseparable with me at some point in time. Please remove this mask from your face.

[Man 2 and Woman 2 pull their mask toward their heads.]

Man 2 : But whatever you said is wrong. You sometimes call me Ramesh, and sometimes some other thing. But you are never yourself ready. Why? Are you afraid to face yourself? The same thing happened with us a while ago, and now again! Not a good thing.

Man 1 : It's OK Mister Unconscious! I shall shake hand with you. (Gets hold of Man 2's hand). I shall make a deal with you. With folded hands I also pray: Will you lend me some freedom? (everyone laughs) For a while I want to talk with her (turns towards Woman 2).

Man 2 : Such a senseless thing! (walks close to Man 1 and Woman 1 and starts playing cards; he can put or take out his mask from time to time.)

Man 1 : If so, Sarada Devi, you must remember...you used to be my lover.

Woman 2 : Did you say I 'used to be'? Did you consider that a game?

Man 1 : No. I considered it love, out and out. But I am caught in a fix at the moment. After having been in love for so many years, I have been unable to sort out the difference that exist at places between love and card games.

Woman 1 : It seems you are utterly disgusted with me.

Man 1 : What poetry or aesthetic lies in puking out anger that has lasted for so many years? (silence) Did you gain anything that moment?

Woman 2 : Leave that issue now. At times, the gainer loses the most. Take, for example, a ring I once had. It had fallen somewhere the moment I had...with you. I have been looking for it even today (looks here and there), even now...

Man 1 : Hmm. It must be a ring...I too have been searching for...and Sushi too. (a short pause) You must find it weird: we all have been bound together by the same search. It will be good if we find it.

Man 1 : (suddenly, from afar) Don't burst into laughter at what I am saying; I too am looking for the same ring. And all our spectators too. I can see, they are changing 'ring, ring'.

Man 1 : Gentleman, aren't you myself? Why are you searching then?

Man 2 : Because you are searching too.

Man 1 : I take leave of you now. This issue has no certainty.

Woman 2 : Which issue?

Man 2 : I mean, certainty itself has no certainty.

Woman 2 : Yet, it does have some certainty. It has some dream. Or say, we are being awaited by something besides this, the same way as we searched for it...

Man 2 : (returning to his own place) Else, our time can slip off as an absurd irritation.

Man 1 : (as everyone looks amused) True. Else, man starts considering himself a soaked shoe.

Woman 2 : Else, a relation can become a burnt pot.

Man 2 : Else, living can become like a joker's make-up.

Man 1 : Else, the world could be like one's rags after death.

Woman 1 : It's enough now. (acts of shielding with her palm). The central issue becomes diffused, covered by these many 'elses'.

Man 1 : In fact, where had we begun? From the tears you had shed in those olden days? (laughs)

Woman 1 : If you start mauling me this way, I won't take part in anything (starts contemplating in silence). We had taken up an issue from some achievements, some living, some destination, some hope, some dream...Did you get me?

Man 2 : (nudging Man 1) You should not start misusing your memory so soon. You should be more sensible.

Man 1 : Here I go. Thank you, Mister...We enjoyed a lot. It was good meeting my own unconscious or memory or history or past or some desire of my own... (waves his hands and exits)

Man 2 : How strange! They are so frail, and we depend on them! What an irony! But in their absence, we can't continue to exist as ourselves.

Woman 2 : In such a circumstance, if there no point in keeping us together?

Man 2 : This is nothing but the meanness of a playwright.

Woman 2 : If I meet once, I will show him my guts.

Man 2 : Fool! How will you come out of the play and reach the playwright? Or else, how can the playwright come to you unless he is himself a character? And if, by some means, such a thing comes about....you are so beautiful he shall make you speak only soft dialogues laden with love.

[Enter Man 1 and Woman 1 separately, apparently thoughtful.]

Woman 2 : Yet another irony! (directed at Man 1 and Woman 1) They always want support from us and look for us. At such a circumstance, how safe will our existence be?

Man 2 : Compared to getting killed by them, it will be better for us to kill ourselves and free ourselves from them.

Woman 2 : If only that was possible! As soon as I think of finishing off, I shudder.

Man 2 : You exposed your soft nature. Say what you may. But do you see them? They can commit suicide any moment. And we wait till that moment, what will happen of us?

Woman 2 : With all those scarcities and frustrations hanging from them, whatever time they have lived is great (laughs). There is plenty of hunger; but consumption less than a pint of votive offering. In such a circumstance...

Man 2 : Enough! Don't explain me such a great philosophy. I know there is a great relationship between food and human existence. But the opposite too is true.

Woman 2 : What?

Man 2 : Whatever hunger makes of a human is there. But too much of consumption can make someone less of a human. What do you say to that?

Woman 2 : I don't know. You always end up messing up a thing into complicacies.

Man 2 : Is this a complicacy? What then is simple?

Woman 2 : Nothing on earth is simple anymore.

Woman 1 : (as Woman 1 and Man 1 stand face to face) You have been away to find money or a way out. Where did you end up?

Man 1 : I didn't find money. But I did find a way out.

Woman 1 : What's that? Tell it quick.

Man 1 : Wait. Why should we haste like a fire brigade?

Woman 1 : (laughs) Do you need the news of arson somewhere?

Man 1 : Sushi, we have become utterly lonely after an incessant fight—you know why?

Woman 1 : Why?

Man 1 : Because when we fought, we were fighting separately and alone, getting encaged in the provinces of our past and accepting that imprisonment.

Woman 1 : This is not a way out.

Man 1 : Call it a way out or a necessity. But we

need to fight together now. We cannot make any of such wars personal for a long time. I mean, look at the condition of our room; how much of it can we alter?

Woman 1 : I don't believe.

Man 1 : You mean nothing is possible here?

Woman 1 : I know it's we who are supposed to do, if we think of doing anything. And if nothing is to do be done, it's we who won't be doing. It can be both way, can't it?

Man 1 : That means you have at least fifty percent of hope.

Woman 1 : (satirically) True. All that's left in life is to calculate the percentage of hope. But always failed mathematics.

Man 1 : Failed? As for me, I scored this. (shows a zero with his fingers). But that made many things better. Even with our mistakes, we can increase the percentage of hope.

Woman 1 : (seems delighted) That's fine. If so, let's accept that the cloud of frustration, helplessness and loneliness we were engulfed in till today was because we lacked the knowledge of mathematics. Be it due to hundred percent mistakes or ninety-two percent mistakes. But whose? We can sort this out later.

Man 1 : True. That is what I, or say my life, was seeking. I mean, nurture some hope; light some measure of what they call struggle. What if everything is inferior; your life will start becoming clearer, if not better.

Woman1 : At times, whatever happens seems be quite trivial.

Man 1 : If that is the case, let it happen. After all, that is not an impossible thing in life. We can consider all things in whatever we do. First you remove your despondency and pick up arms. This is called foolishness in a war. But if there is any way out, this is the only one.

Woman 1 : If so, we need emancipation from whatever we endured, sought for or achieved in the past.

Man 1 : We ought to break the layers of latent danger inside us and step up.

[Man 1 and Woman 1 press closer to each other.]

Woman 1 : If so, I will arrange this room in a different way. This one doesn't work.

Man 1 : If so, may I go shopping? I will return soon. Who knows the ring can be found somewhere here this moment.

Woman 1 : We won't search for the ring anymore. Let's search for something else...I don't know what.

Man 1 : We will jump over a few ditches. That can benefit out beds and health at least.

Woman 1 : What do you mean?

Man 1 : We can spend the night smoothly. The counterpane won't wrinkle. We won't feel we have been sleeping in different countries, either.

[Man 1 and Woman 1 get lost in each other's arms. In the meantime, Man 2 and Woman 2 (in masks) lean against each other and get hold of each other's chins. The curtain falls and shields Man 2 and Woman 2. Man 1 and Woman 1 separate.]

Man 1 : Shall we play cards?

Woman 1 : The problem in us started with the cards, didn't it? Are we solving it with cards themselves? Won't that be mysterious?

[Both sit like in the beginning of the play.]

Man 1 : Should we start the same game?

Woman 1 : Whatever you say. I know you will win again, albeit with foul play.

Man 1 : No. Don't worry. I shall pick up a game in which you shall learn to play and cheat equally well. Do you agree to that?

[Woman 1 nods. They both laugh. Man 1 starts shuffling the cards. Curtain.]

Translation of Gautams' play *Dwandwa*, done by Mahesh Paudyal

One-Act Play

Maya

Gopal Prasad Rimal

[Eastern frontier of Kathmandu. It's 11 o'clock in the morning. In the rooms and porch of Murali, one can clearly see affluence. Mumari, a young man of about twenty-five and apparently quite agile but stubborn, is busy making his hair in front of the mirror. Except for his coat and *istacoat* spread on the chair, he has put other clothes. On his face, one can see waves of worry rippling from time to time. No soon has he finished doing his hair than his sister Leela (a graceful widow of around 14-15) walks in straight and stands at the back side of her brother, sending the notice of her coming through the mirror where her image reflects. Murari smiles.]

Leela : (jocularly) Only now you look like someone attending Mahadev's nuptial procession (laughs).

Murari : (laughing) Wow! I look so handsome! Wait until I fully make myself up. I am yet to wear my *istacoat*. (puts it on). See I haven't worn my shoes yet. (he puts them as well); the cap is still out (puts it, and keeps everything in place looking into the mirror. Now?

Leela : Only now you befit to be called my brother. (Murari pulls the chair in front of the mirror and sits there. Leela stands in front of him.)

Murari : Isn't it like a magical chant? How soon I happened to become so handsome! Only a while ago you said I would attend Mahadev's wedding, didn't you? (Leela laughs). Why aren't you complimenting now?

Leela : (in a strange tune) It's superb.

Murari : (in the same way) It's superb.

Leela : (suddenly) Superb. But mere words won't suffice; we also need a superb girl now. (airing his preferences) She should be fair and beautiful, with a slender nose, thin lips, and graceful eyes—you could marry and bring her home straight.

Mumari : What did you say? Is that so easy?

Leela : What's there to worry about? Do you think you can brush me aside that way? No, I won't comply. Mom shan't agree; sisters too won't say yes. Do you think you can escape? Wah! Why are you gawking like that? Say if that does. We should leave unless we nail her heart. (Murari gawks in the same way)

Murari : Sister, are you aware what you are saying?

Leela : Oh no; I really don't know. Go and see the girl for yourself straight. They say she is stunningly beautiful. What more do you want? Rest of the thinks I know. (Some commotion is heard outdoors; both look thither.) Look there; sisters have also turned up. Sister! Sister! Brother is here.

(The commotion dies out.)

Shit, they walked upstairs perhaps. Maybe sisters have returned to take you along, making everything ready there. Shall I go and ask? (Murari says nothing). I can guess that. Sending you out from here is becoming like sending a bride away. Shall I remove the veil? (Murari is silent. Leela tries to laugh, but her brother's seriousness forces her to twitch her mouth with efforts.) If so, leave it; I will go to Mom and tell her Brother is not willing to go. (Murari says nothing. After walking a few steps away, Leela stops and looks at her brother once. Then she

walks out of the room, commenting that Murari was not speaking at any rate. Murari stands gawking.)

[Maya, 18-19, is a beautiful maiden, serious of nature, willing to come out but crushing her personality by force but unsuccessful. With a garland of jasmine (jai) in her hand, she enters the room. Murari is not aware of Maya's entry. Maya walks slowly from the rear and puts the garland around Murari's neck. Murari gets startled, and tries to smile on seeing Maya. The lips of both appear fluttering for a while, but none speaks.]

Maya : I finished reading that book. It's wonderful. Do you have any other?

Murari : Select one yourself. All these have been bought for you (points at the cupboard) and you know that.

[Maya moves toward the cupboard.]

Maya : (Maya is returning with a book in her hand) Are you still standing still? Yes, the book is wonderful. It's a good book.

Maya : You help me develop a habit of choosing books in time. Thank you for the favor...

Murari : Maya! (The way Murari pronounces her name makes Maya change her lips and view.)

Maya : Besides putting a garland around your neck with a forlorn face, what else can I do? Whatever doing, quarrelling, nagging and bargaining I had to do, I have done with Mother-in-law. Now (commotion is heard outside again), yes, the book is wonderful, isn't it? It's good for me to stay outside. Here I go.

Murari : (Maya has reached fairy far) Wait; one thing! (Maya returns) Help Leela develop reading habit gradually. She is a little freakish, and people have started commenting. (Maya displayed a listless smile) You are not in bad terms with her, are you? (appears even more distressed)She is very childish, and speaks thoughtlessly, without realizing what her words could mean.

From without, Bubu (Murari's elder sister, about thirty years of age, apparently quite listless as though we no essence of her own), Mithu (Bunu's sister, younger to Bunu by about 3 years, quite robust, rather short-tempered but seemingly quite methodical) and Leela enter one after another. Maya clears the way for them. All of them (Leela in particular) stare at Murari seeming trying to smell him with their noses and stand around Murari. Maya pays a quick look at Murari and exits.)

Mithu : Why delay now? Can't we move? They must be waiting for us on the other side. Wow, how well the garland suits!

Murari : Maya put it.

(They all stare at one another. Murari smiles) Am I under any sort of compulsion to go? You and Mom can go; if you are satisfied, that works.

Mithu : Fie! What a thing you are telling? How can we decide unless you have a look?

Leela : You had said only a few days ago the boy should himself decide his bride. What use is his parents deciding one? After all, it's the boy and the girl who are marrying, and not anyone else. You said it recently. How can you become double-standard now?

Bunu : That's it.

Murari : It's not like that, Didi. I had said that about those who are not willing to bring in a second wife. If a second wife is to be pulled in, there's no need to see. You can decide it with blind eyes. If we didn't like, we can marry yet another, and yet another.

Mithu : Why should we have another wife over her again?

Murari : How can anyone predict? What if you and Mom have complaints against the new one too?

Leela : They say it won't happen.

(Murari smiles)

Murari : You don't speak so impertinently in the middle. I am speaking with sisters. yes, Didi! (Leela seems annoyed.)

Mithu : See, Leela said it. They won't complain.

Murari : If so, did we marry Maya to bear a co-

wife later?

Mithu : It's not like that. What can we do if her habit is like that?

Murari : What about the habits of the new one? I think Mom has found out everything. And you all too. Only that, the boy and girl do not talk. What do you say?

Mithu : (By the time she speaks, others too are ready to say something. Seeing her speak, they stop, though they look smiling.) It's fate that decides if a woman gets a co-wife. One cannot undo, if it is destined. How can anyone get a wife, whose habits are fully known? We can never tell how the later wife will turn to be. We should talk what is sensible. Do you talk with your sisters the same way you talk with that spoilt woman—getting hold of her chin? No one here—mother or sisters—likes your wife. No one. Do you have an option but to remarry now? You don't have one. If you can forget your mother and sisters, you can stay glued to the same wife. But be warned: no one will set a foot at your home (acts of walking away even as she speaks)

Leela : (amazed) Well said. No sparing, until the heart is nailed! He thinks Maya is exceptionally beautiful, like a thrown stone, like someone whose eyes have been ripped with a stick. Like someone that deserves death by lynching. More, she has to see books every time. Isn't it, Sister (to Mitthu)? Doesn't she look like Mai who sits with a begging basket at Gaurighat? (Everyone laughs. Then they all sit down. Leela puffs at her own words.)

Bunu : You're right. More, why does she appear so frightened these days?

Murari : (pulling her chair to face everyone else) Will you also listen to my opinion?

Leela : And mine to.

Mithu : Maybe it's about the same woman Maya. Is it?

Bunu : How about Mom's?

Murari : Oh God! Each of your opinions is agreeable to me.

Mithu : Why do you need to deride us, saying 'opinions'?

Murari : (taking a turn) First listen to me. You all say I ought to get married. What I think is...

Leela : And yours is...you won't want to marry. You would rather thrust into your wife's loin, ignore your mother and sister, no matter what happens to them. Isn't this your opinion?

Murari : (to Nanu and Mithu) Will you be happy if you also have co-wives? Will you love that?

Mithu, Bunu : (at once) If our husband decides, what option would we have but to like it?

Leela : Say you would love it.

Murari : (to Bunu and Mithu, ignoring Leela) Say, would you love that?

(Bunu and Mithu stare at each other.)

Leela : (to Bunu and Mithu) How meek you people are! Tell him you would love that. After all, a co-wife is not a bear or a tiger.

(No one listens to her. She walks to the mirror and start fidgeting the comb.)

Mithu : (softly) I got you. But what opinion does Mom have? We also need to respect her sentiments. Else, the tears of our aged Mom will torment us. How can we stand Mom having tears in one hand and rice balls in the other?

Murari : That's true, but Maya is not the same these days. She doesn't hurt anyone. She was a child before. It will be unwise to consider her the same now. Isn't her habit our primary concern? She has improved her habits remarkably. She is not like before. If she continues as before, we'll see her.

Leela : (doing her hair from the mirror stand) Wasn't she cursing Mom only a few days ago? Just recently?

Murari : Leave it. Forget everything of the past...of the days we got married.

Bunu : That makes sense, Mithu. Brother says it right. How, Mithu?

Mithu : True. It works if Mom says yes.

Murari : Mithu Di, you should be convincing Mom, instead of convincing me, shouldn't you? I said, I shall remarry if my wife continues with bad

habits. (I ought to do that, for I also love my mother. Look, there is advantage in averting this marriage. If one is bothering us, what will we do when there are two of them? There will be quarrels day in and day out; both will become reckless and we will be in difficulty. On my part (Murari laughs; Bunu and Mithu laugh too), I will be in problems as husband to two wives. More, that will be a sinful act.

Leela : Eunuch! Does a macho man speak like that? A man can have a thousand wives, leave alone two. What sin are you talking about? If that is the case, are all husbands of two wives sinners? All of them? As for improving, they will improve out of envy, when they are two.

Murari : (with a laughter) Leela, do you envy your daughter-in-law?

Leela : (with no daunt) I do.

Murari : If so, out of envy, how much did you read? Tell us.

Leela : Brother, are you saying? Am I a co-wife to Sister-in-law?

(They all laugh.)

Murari : Come on; go and see Mom once. Counsel her. Why should we spoil someone's life in vain out of whims?

Bunu : That's true. Mithu come; let's go.

(Bunu, Mithu and all others stand. Leela speaks faintly, stammering.)

Leela : I am not going. Oh, what a pleasure it would be, if there is wedding? I could put on new clothes and show my swaggers! There would be a wonderful band playing, and we would partake in *rateuli* [1]!

(As long as Leela speaks, Bunu and Mithu face the mirror turn by turn, manage the hairs flying this way and that and exit. Leela follows, willy-nilly.)

Murari : Leela!

Leela : (stopping) Why?

Murari : Come here.

(Leela walks near. Murari cannot speak out his mind outright. He hesitates for a while and holds Leela's hand, standing up from his place.)

Won't you follow what your brother says? (Leela nods, showing her agreement.) Don't feel bad, will you? (Leela nods in the same way, but is unable to speak, as she cannot figure out her brother's mentality.) You have become rather cheeky, haven't you? (the left hand locked between in released; Murari is bent on explaining his mind as far as he can) I know it's an age issue in you; it's natural at this age. But what have you made of yourself? What have you become...marriage....yes, what have you made of yourself? That's why, no one likes the way you move about and talk mindlessly like your friends do. So they criticize you. They say how free we have let our sister be! And that hurts me. (Leela seems shocked.) Mom too doesn't like that. I know I am also partly responsible for that. In the first place, you are yourself a wid...oh, no! When that happened with you, and when you wore black threads and broke off your bangles, (Leela suddenly feels her wrists; feels her locks and snivels) You have become utterly listless. You look skeletal. We can't stand that. Our hearts could not stand. Seeing us sad and weepy, you used to burst into tears. That made us even more pathetic. (Unable to see Leela sniveling, Murari lifts his eyes from her and concentrates on himself). Unable to see you in that condition, we let you play as you life, hiding all our woes as though nothing had happened. But you cannot continue in the same way now. Why should you invite scorn from others in vain? Like Mom, you should also (laughs forcibly) go for fasting and worshipping. Like her, visit the Bagmati, visit the Pashupati Temple, maintain fasting, listen to the readings of the *Puranas*. When free, either weave wicks for lamps, or read books with Daughter-in-law. (Leela seems confused; in the same state, she

---

1. extensive singing and dancing that takes place at night at the boy's home, aft er he leaves to bring his bride.

nods in agreement) Now you can go upstairs. (Exit Leela)

Leela : (turning back after reaching some yards away) Mom is perhaps going to tell me the same thing upstairs. Isn't she, Brother?

Murari : (uneasily) She is.

Leela : (apparently depressed) Why should I go upstairs, then? I will remain here. (Stupefied, she leans against the wall. Murari moves here and there in a suspicious manner. In the meantime, Mother Bidya Devi walks in. She is graceful, with hairs all grey, beautiful round eyes, freakish lips, of age about fifty or fifty-two. She is here to reprimand her son, but stops short, seeing her daughter lean against the wall. She pays her son a sharp look and turns towards her daughter.)

Bidya : Why are you crying, dear? Can anyone that hurts your be a human? (Murari pays an awkward look at his mother. Leela doesn't answer her mother. Instead, she looks at her brother once and rubs her eyes). What can you do when you have such an unwise brother? He doesn't need mother and sisters. Your daughter-in-law is a witch. Your brother was ready to look for a new wife until yesterday; overnight, she cast *mantras* and *tantras* (with stress on these words) and sent him on back foot (uttering these words like puking sputum). The sharp-tongued witch! She won't allow me to stay at home anymore. She will chew us raw. (Murari suddenly stops moving). But then, I am not a fearing woman! If nothing works, holy men have their inns. If not, we can always to go Kashi and find a handful of grams to keep going.

(There is stillness for a while. Loitering, Murari comes in front of the mirror, sees the Jai garland around his neck and starts mauling it recklessly. Bidya looks at his activity with interest.

(Apparently disgusted) We have no shelter to safeguard our honor anymore. Moreover, what could the girl's family have said? Fie; what a whore we happened to tangle with! Would anyone agree to offer a daughter now? Leela, my dear, they will give us a befitting reply. Forget me; I will die any time soon. After all, I am a moon on the top of a hill. At any rate, I am now a dead woman. But what will happen of you, an orphan? You, the unfortunate one! How can I abandon you in the hands of such cruel people? (She leans against Leela's arms, quite distressed.)

Murari : Mom, isn't Leela my sister? Aren't I a brother to her and a son to you? Does it befit you to say such a thing? (Mother and son stare at each other seeming seeking their identities.) The mother leaves Leela; it seems Leela has escaped from her clutch. Her face turns even more neutral, like that of an unaligned audience. She retains the stupefaction she wore after listening to her brother only a while ago. Her mother's words make her graver.)

Bidya : (just to say something finding the staring unbearable) Why would it befit? Why would anything I say or do ever befit?

(Murari's confidence to counsel his mother and appease her falls low. He continues to stand where he was. He holds the chair and starts looking downward. His mother too continues standing where she was. Leela moves to the window nearest to her. Bunu and Mithu enter with delightful faces. Mithu presses closer to her mother; Binu to Murari.)

Mithu : (To her mother) Mom!

Bunu : (To her brother) Babu! (Murari turns toward his mother)

Mithu : What's wrong in that, Mom? Brother has made it clear. If it becomes necessary, he is ready for remarriage. Why should we be in hurry now? It's something as serious as brining in a co-wife. Let's see for a few more months. If she improves her manners, what more do we need?

Bidya : (unwilling to stoop) Her improving is impossible! Does anyone abandon a set habit? Nymphet!

(Murari tries to say something but Mithu signals him to be quiet.)

Bunu : (walking close to her mother) Mom, come with me; let's go upstairs. Mithu, you come too. Let's go.

Bidya : How should we appease the girl's party? What must they be saying?

Bunu and Mithu; We'll deal with that.

(Exit all three of them.)

Mithu : (in a cautious way) Brother, look here. If you again do injustice to Mom!

Bidya : (from the threshold in a loving fashion) My child, you are my single son.

(Exit)

Murari : (Having seen Leela there as he looks here and there) Leela!

Leela : (Seeing her mother and sisters exit) Oh! (runs and moves out)

(Murari takes a long breath and follows her with his eyes. Strolling, he comes near to the mirror again. On seeing himself, he smiles, opens the nearby cupboard and manages his cap and coat. He looks here and there again, remembers his cigarette packet and takes the same out. He lights a stick and puts the box and the matchbox into his pocket. In the meantime, Maya walks it and stands at a distance.)

Murari : Maya! I am ashamed. What should I say? (remembers the entire thing) Fie!

Maya : (with a mild smile) Why should you be ashamed? You—who come out winner all the time! It's I who should be ashamed. We lose all the time. It's I who would get a co-wife if I do, and lose one if I don't. Should it me I who should be ashamed? You wrangled with Mom for no reason. You hurt her sentiments. You should have allowed the wedding to take place.

Murari : That means you are unhappy for not getting a co-wife, aren't you?

Maya : (with no daunt) I am.

Murari : Why?

Maya : (in the same way) I can myself get it...any time, tomorrow if not today.

Maya : This means you have no trust in me.

Maya : Faith? (finding that that the talk is getting heated, she becomes ambiguous) Why should anyone trust you? (walking closer and closing the open cupboard) I came to know the old woman only today. (she has closed the cupboard; she turns her back towards it) I felt, the relation between a mother-in-law and daughter-in-law is something like a step relation. The person both love is the same. A mother-in-law has ample rooms to envy her daughter-in-law. She bears a son, raises the slice of her own lever with all love and care, helps him stand up, raise him high, and one day, he becomes someone else's. Which mother on earth doesn't feel bad about that? A mother becomes like a snake that has lost its gemstone. Imagine how much she writhers, seeing the luster of that gemstone spill over her daughter-in-law's youth, each of her gestures. (her countenance turns so grim as through she were herself feeling that pain). Measureless! When she considers the love and soul she invested on her son on raising him up, she spills all her hatred upon her daughter-in-law the thief, the witch. (Murari listens spellbound; he stares at Maya as though he had never seen her before.) The daughter-in-law says, 'Skinny hag! He is now my property. I also need to become a mother,' and what follows this is the thing that's happening here now. There is falling out for no reason. They wrangle a lot, ending up in brining in a co-wife. (pause) I have no grudge against the old woman, promise! Rather, I pity her. She must be thinking her headache would disappear her daughter-in-law finds a co-wife. That will appease her anger.

(Murari forgets smoking. He is not even aware that the cigarette has died out. He lights it again. Maya tries doing something else but suddenly remembers a thing and speaks.) We, the womenfolk, give birth to sons and daughters. We raise them. But in terms of wisdom, we are

always like kids. You saw how your sisters spoke today; what they might be thinking about themselves! Fie! Ironically, they are themselves mothers to their girls.

Murari : (stops looking at Maya and speaks) I was astounded on seeing Leela. She kept taking incessantly. She even said, "Unless we nail the heart..."

Maya : Oh, she is a poor thing!

Murari : We should gradually help her develop reading habit. That way, she can at least have some excuse to spend her time very day.

Maya : Fine; why not?

(Maya starts managing things scattered here and there and keeping them in order. Murari broods as though he had reservation against certain things.)

Murari : By the way, aren't you happy about not having a co-wife?

Maya : (in the midst of her tiny chores) I said it earlier, didn't I? (Murari appears disheartened. If you want, can't you find one yourself?

Murari : I can, but I won't do that.

Maya : That is your mercy at the most like you the male folks consider it an act of great mercy to see the girl once before really marrying her. A wife doesn't come with her husband merely for the alms of mercy. (Murari widens his eyes). Really speaking, being a subject of mercy is the greatest sin. You tell it yourself: Why should I be so pathetic? It is much better to be slighted than to be pathetic. Under the spell of mercy, one hardly knows how he or she gets lost, having been completely canopied by others. In being slighted, one can find ample rooms for development. (after a short pause) Why do you puff up, simply because you get a chance to choose a girl and have a look of her once before marriage? Do you know if the girl also chooses you? A macho should not be one who chooses; he should be one who is chosen. Being chosen vindicates your masculinity.

Murari : (unable to speak)

Maya : (Stands abruptly and presses closer to Murari. It's difficult to tell if it is urge for motherhood, or true devotion or honor that inspires her to do that.) I pray: Whatever I just said are things that sometimes erupt inside me suddenly. There is a different feeling that constantly works in my heart. My heart always pines: I should fully commit myself to you; should completely dedicate myself to your service and get lost in it. May I find your lap where I can spill entirely. May I find the refuge of your feet and may I touch them in a way as soon as I do that, I may lose all my sense and let my thoughts be suspended. The day I heard about the coming in of a co-wife, I started imagining you and her as Krishna and Radha for unknown reasons. I was planning to worship you both a lot. But I am disheartened now.

Murari : (feeling debased) Why do you belittle? Do not satirize like that.

Maya : Oh no. I mean it, promise. What ill you think of me!

(Maya stares at Murari vacantly and resumes her tidbits.)

Murari : (remembering something with a start) Did you give the thing I assigned you to sisters?

Maya : (remembering) Yes, I did, much earlier. You are going out for work now, aren't you?

Murari : Yes, I am. Here I go.

Maya : (smiles, and speaks connecting a snapped subject once again) It's true that the issue of getting a co-wife is disgusting and annoying. Why won't I be frustrated? And why should I be happy knowing that she is not coming? (Murari, who is looking at the mirror, is delighted.) There were times when I had sudden fits of anger— on this issue and not on anything else. After all, what serious mistake had I made, inviting a co-wife in punishment? What was I guilty of? The only allegation is that, being a child, I am rather disobedient and talkative! I think I am no longer like that. Mother-in-law, however, could not forget those old things and pardon me.

Murari : (happily) That's what I think too. Had I

listened to their conspiracy, things could have gone wrong. That would have made things messy.

Maya : (seeing the mutilated jasmine garland) Who did this? Shit! Why you must have done so?

Murari : (remembering) Yes, I did it.

(Maya looks at Murari with annoyed looks and starts gathering the flowers. Murari lights yet another cigarette. He tightens the laces of his shoes that were not fully in place and starts joking as through they were still short of the regular doze of their amusement. They have grown used to it, though they retrain interest in it.) What much did you say you love me? Why aren't you saying anything?

(None of them is aware that Leela has come and is listening to them from the threshold. She looks depressed.)

Maya : Full of my heart. (Laughs. Murari follows suit.)

(Maya concentrates on managing things. While making his exit, Murari sees his sister at the threshold and strokes her chin with love and exits. Leela enters.)

Leela : Brother is not bringing in a co-wife besides you.

Maya : I think you know it. Why ask me again?

Leela : (gawking) Yet, I loved to hear it from your mouth too.

Maya : (trying to read her gestures) Yes, he says, he is not brining in anyone.

Leela : (in the same way) He said calling me a *jogini* [2]. Said, I should do nothing... nothing... being as *jogini*...

Maya : Sister, what's that you are saying? Why *jogini*?

Leela : (making an exit) I think you understand it now. One who is not getting a co-wife is you; one who is not getting a nail on the heart is you. Now onward, your and my ways are different. (stops at the threshold, turns back and speaks in a louder voice) He says, I should do nothing...but become a jogini.

(Leela goes out. Stupefied, Maya stands staring at her.)

Translation of Gopal Prasad Rimal's one-act-play "Maya", Trans: Rama Adhikair

2. a female recluse a female recluse

One-Act Play

One Night in Singh Durbar

Govinda Bahadur M alla (Gothale)

[A square in ruin, Singh Durbar after the great fire. Midnight. A thin light coming through the fog from the bulb hung on electric wire. Here and there, some burnt and some unburnt ceiling woods, and scattering things in messy condition. Similarly, heaps of ruined bricks everywhere. Messy scattered files and documents of office. Broken unburnt tables, chairs and cupboards everywhere. By unextinguished fire, snake-shaped smoke coming out from nook and cranny. A man's entry cleaning the smoke from the messy crevice. That person is Chandra Shamsher who has worn red cap and long black coat. He is in black boots. He steps in walking saving the messy scattered bricks and woods, documents and files. While walking, he bumps on one of the broken tables. For sometimes, he looks around being confused and looks at the paper and goods fallen on the floor. He smiles and the smile remains on his face for sometimes.]

Chandra Shamsher: This Ministry. The Ministry of Ranajee's sole rule. However, I'm Chandra Shamsher. (*Walking*) I'm Shree 3 Maharaja, Prime Minister of Nepal, Supreme Commander-in-Chief of Nepal Army. (*Pride*) And Honorary Colonel of British Army. (*Screams and looks around. And, looking at nook and cranny while walking*) Here isn't, there isn't. (*Peace*) What am I looking? Yes, sheaves putting in line, treasure; I have hidden that. All said (*looking at scratching here and there*), hereisn't, there isn't. They said I have hidden treasure. Abundant wealth. If I had hidden, that would have lost. Somebody brought it; somebody transported it overnight.Otherwise, this fire had burnt it.(*Peace*) I had built this palace with great effort, this Singh Durbar. A lot of property was spent to build this Singh Durbar. Like Buckingham Palace, I had built this palace to exceed Versailles Palace (*murmuring sound of poem is increasing from offstage)*. Aye, who's there, catch and bring him here. (*Entry of Shambhu Prasad*) Yes, Shambhu Prasad. *AashuKabi* (Instantaneous poet).I've given that designation.

Shambhu Prasad: (*Reciting poem*) As big as Indra's throne decorated with gems, you always sit on it, Singh Durbar is for noblemen, unique things shine around the truth, the nymphs talk time and again looking at the sunlight praying the god's glory.

Chandra Shamsher: (*Reaching his hand on his own lips*)All right, be silent.

Shambhu Prasad: (*Being emotional*) There's two kosh (about 6 km) round and......

Chandra Shamsher: (*Angrily*) Shut up.

Shambhu Prasad: A little bit shortened.......

Chandra Shamsher: I request you, shut up.

Shambhu Prasad: Last line only. In such a palace sitting on the throne, ruling the people with lawful decree, losing the glory of the foe making the public agreeable.

Chandra Shamsher: No no.

Shambhu Prasad: Forgive me...... my poem.

Chandra Shamsher:(Grinning) Very good.

Shambhu Prasad: (*Listening the sound from*

offstage attentively) What's that sound? What's that voice?

Chandra Shamsher: Voice? (*On the offstage, horse's gallop with the sound of running carriage, horse's neigh with the sound of women's laughing*) Why did they laugh? (*Angrily*) Why did they laugh?

Shambhu Prasad: Don't you like other's laughing even here?

Chandra Shamsher: You say me 'you'?

Shambhu Prasad:Here's no discrimination in the language of addressing, all equal.

Chandra Shamsher: All equal?

Shambhu Prasad: How long epoch it takes to omit worldly culture of *tapainhajur*.

(*Woodcutting and brick-piling sounds with sigh of relieffrom the offstage*.

Chandra Shamsher: How long I did use this Singh Durbar.

Shambhu Prasad: In spite of the long time, it is only an ounce. (*Arriving someone riding a horse on offstage, "arrived" sound. The sound of the victory of Shree 3 Maharaja. Chandra Shamsher grins*) That laugh is as usual. Not changed. (*On the offstage ....women's weeping sound "....today the case is in your court*.")

Chandra Shamsher: Who's that weeping?

Shambhu Prasad: That might be case looser.

Chandra Shamsher: I think that I haven't done any injustice.

Shambhu Prasad: The Maharajas after you might have done. However, the powerful people's injustice is considered as justice.

[*Male's and female's laughing and angry sound and weeping noise on the offstage – "Summon that* ***aathpaharia*** *(eight-hour watchman).Another sound – "Hajuria Generalarrived." Sound of vehicle. A sound – whip. Again other sound – handcuff. A thin sound – who have been arrested and brought here? A sound of the song* ***"Badaliyosarajamana"*** *(All time has been changed). Another sound – "That song was sung by Ganga Lal". Sound of vehicle."Who arrived?" one asked, other replied – "Kanchhi Maharani." Silence, no sound, only like the sound of the movement of wind. Murmuring sound of reading "Death penalty to Sukra Raj Sastri," again the reading sound "Death penalty to Dharma Bhakta", similar type of reading sound, "Death penalty to Dasarath Chanda", "Life imprison to Tanka Prasad Damal", "Life imprison to Ramhari". Various sounds with sigh. One voice, "Finally this happened". Another voice "What happened?" Announcement by His Majesty the King to form Ministry, "Congress and Rana's Ministry, Ranajee's authority." "Don't speak".Finally, that happened. This Singh Durbar now Ministry". [Pulling sound of cupboard, table, furniture.*]

Chandra Shamsher: Where am I?

Shambhu Prasad: (*Trying to recite poem*) Singh Durbar (*peace*) I'm not confused. I forgot.

[*Someone's walking sound comes from offstage*.]

Chandra Shamsher: Who came?

Shambhu Prasad: Seems to be a man.

Chandra Shamsher: Man? Who man?

Shambhu Prasad: Perhaps a great man.

(*Entry of Madav Raj Joshi. Lean, thin, and bloodless black spot on his forehead with grey beard. He has worn white shawl*.)

Madav Raj: (*Looking at both one by one*) He looks like a known person.

Shambhu Prasad: I'm Shambhu Prasad.

Madhav Raj: Yes, poet. I'm Madhav Raj. Madhav Raj Joshi. (*Looking at Chandra Shamsher*) He? Yes, yes what am I? I have known to the Maharaja.

Shambhu Prasad: Maharaja and *hajur* in this world too? All are equal here.

Madhav Raj: Yes, that's true. But in this world, the meaning of Maharaja and *hajur* is also "you".

Shambhu Prasad: If so, I address you *tapain*.

Madhav Raj: Any address refers to the same meaning.

Shambhu Prasad: Still fresh blood on your

forehead? (*Pointing to Chandra Shamsher*) He had broken this forehead. This blood might have dried. The spot of blood might have omitted.

Madhav Prasad: This is not omitted. This is history. It has carried history.

Chandra Shamsher: History?

Madav Raj: Why are you so afraid of seeing that history?

Shambhu Prasad: This is that this fear continues like history.

Chandra Shamsher: (*Watching here and there uneasily*) What have I to speak? (*Touching his neck*) The matter has been halting here.

Shambhu Prasad: Perhaps it will remain halting for immemorial time, but in this place, there is no existence of time. Here, present, past and future are merged in one. (*Looking at Madhav Raj*) Yes, I ask you one thing. Have you seen the presence of that abstract God, your God that is absent in statue?

Madhav Raj: What have you said? It is not the matter of getting the grace of God. I have been merged with it. Perhaps this the presence of God

Shambhu Prasad: Is there the existence of "suspicion" in this world?

Madav Raj: The "suspicion" of that world (*laughs*).

Shambhu Prasad: But you have already gone to the otherworld.

Madav Raj: But now I'm in the imaginative world of writer. I'm living on the memory of writer. You're also like this. (*Looking at Chandra Shamsher*) He is also like this. Now writer is activating us, (*laughing*) doesn't he?

Chandra Shamsher: But the writer's ferocity is towards me. My history has been made hatred.

Madhav Raj: May be that.

Shambhu Prasad: But my poem. (*Stops and looks at a person coming – Subba Krishna Lal's entry*)

Krishna Lal:I'm the same Subba Krishna Lal. (*Searching in the smoky crevice*) I haven't forgotten myself remembering Subba Krishna Lal. (*Chandra Shamsher laughs slowly*) Who's that laughing? It looks like Chandra Shamsher's face. Same laugh.

Chandra Shamsher: I'm the same Chandra Shamsher, Shree 3 Maharaja.

Krishna Lal: The same?

Chandra Shamsher:Yes, the same. What are you looking for?

Krishna Lal: *Makaiko Kheti.* The book that I've written.

Chandra Shamsher: That I myself have burnt. This fire is not the fire by burning the *Makaiko Kheti*, (*grins*) that is not found here.

Krishna Lal: Again the same laugh.

Chandra Shamsher:I've brought this laugh from the earth.

Krishna Lal: (*Trying to sit on the log as being tired*) I've a pity looking at the laugh even now. Kindness emerges in me. I like to caress your face with love blending all your sins within me. (*Standing and going ahead*) You're suppressed by suspicions that trick of yours; I like to look at your cruel laugh. I was suppressed by my kindness towards you due to the handcuff and chain that you had used on me in that time. You had suffered me so much. But I didn't accept that suffering, I refused that pain inattentively. I had not felt pain anymore. I had been dreaming the end of Rana regime somewhere. That end was your life, your salvation. Later, being sick I was lying on the floor of prison, I arrived in this place feeling relief like the blooming flower. I arrived in this world after getting life in the earth. (*Laughing*)The disaster was so pleasant that it was like the insect of corn, red insect like your red cap. The other black insect of corn was like the black cap of Bhim Shamsher. Black rightly fitted, this destiny was the black pleasant disaster. Why should be blamed to anyone? Isn't it? (*Laughs*) [*Entry of Bhim Shamsher, heavy body, grey beard, lame while walking. Worn black cap.*]

Bhim Shamsher: Did anyone call me? I came

thinking that somebody might call me.

Krishna Lal: That black cap over there.

Bhim Shamsher: Yes, this black cap. (*Looks at the cap takingit off*) Why? What happened to the cap?

Krishna Lal: hat was disaster. But it was natural of striking you that you have the painful feeling of having done sins. That was also a destiny.

Bhim Shamsher: This is also not destiny; I feel hatred looking at the book, great hatred. *Makaiko Kheti* is not only the book, I feel hatred to all books, all books published in the world. Therefore, I punished to all those who signed the request letter to open a library.Wasn't it right?

Krishna Lal: That was Rana regime, all right. (*Chandra Shamsher grins*)

Bhim Shamsher: (*Looking at the laugh*)Are you laughing like this because I did some wrong?

Chandra Shemsher: The meaning of wrong here. There is no meaning of wrong here.

Bhim Shamsher: (*Watching the coming smoke*) This fire is the fire produced by the burnt *MakaikoKheti.* This fire is the disaster that burnt the Ministry.

Bhim Shamsher: Ministry?

Chandra Shamsher: Let's say this is not our Durbar, it already became Ministry. Poor, he seems to be stoned.

Bhim Shamsher: I had become unconscious in this cell of this place and had died from unconsciousness. This palace is mine; I think I haven't gone anywhere from this palace. I think I seem to be here.

Chandra Shamsher: (*Laughing thinly*) Look at the brother's manner. (*Listening attentively*) Someone seems to have come. (*Entry of a newcomer*) (*He is Koiralabaje. Krishna Prasad Koirala. Thin and lean Krishna Prasad Koirala has worn white dhoti and white shawl and there are sandal on his feet.*)

Krishna Prasad: Yes Maharaja, I am Krishna Prasad Koirala. I have met with Maharaja here accidently.

Chandra Shamsher: Am I Maharaja?

Krishna Prasad: Yes. There is no difference to be Maharaja or not to be Maharaja here. However, (*thinking*) I want to say something. I've also brought the memory of parcel here, the tattered cap of the people that I sent to you, that patched *langauti* (underwear).

Chandra Shamsher: Yes, that tattered cap that patched *langauti.*

Krishna Prasad: Later, you tried to arrest me, I escaped. Now we met here, this place of fired.

Chandra Shamsher: Yes, in the memory of writer, that became unforgettable history.

Krishna Lal:Helpless.

Krishna Prasad:Helpless.

(*Entry of Juddha Shamsher from the crevice of smoke*)

Juddha Shamsher: Who's helpless?

Krishna Prasad: Also Majesty Maharaja.

Juddha Shamsher: I don't like saying helpless to Ranajee. Neither I like saying impotent.

Krishna Prasad: Still you have got this arrogant in this otherworld.

Juddha Shamsher: If that is not what I become.

Krishna Prasad: Nothing happens.

Juddha Shamsher: I don't like being nothing.

Krishna Prasad: Do you have still desire to get luxury? Is it that body for luxury? That body isn't here.

Juddha Shamsher: Soul is here.

Krishna Prasad: Soul cannot consume. Again, here consumer and consumed become one. Matter and matterless become one. Here, male and female become one.

Juddha Shamsher: (*Sitting on stump of wood*) If so, is this body a female body?

Krishna Prasad: (*Laughs*) You consumed when you were majesty there. How much do we consume the female body?

Juddha Shamsher: I find salvation in that.

Krishna Prasad: If so, haven't you found salvation here?

Juddha Shamsher: No. I haven't found. I haven'tseen God here. It seems that my soul

is flying in confusion.

Krishna Prasad: That wandering thing is soul. Wandering is natural. Here is no sense of Rana regime, which was in extreme power.

Juddha Shamsher: (*Screaming*) Sukra Raj.

[*Entry of Sukra Raj Shastri. On his face, there is full of black beard. He has worn only vest and wrapped white loincloth. He has empty feet trodden on sand.*]

Sukra Raj: (*Gazing Juddha Shamsher*) Are you seeing the paper hung on my chest? There is no need of that now. "This is the punishment to one who wishes the throne." What is the use of paper here? I revolted only against injustice, it was considered as royal treason.

Juddha Shamsher: I killed you. I have still seen blue-spot of rope on your neck.

Sukra Raj: (*Smiling and touching on neck*) There's no one's energy to end me. I myself put the rope on my neck.

Juddha Shamsher: You put it by compulsion. Otherwise, my man could put it.

Sukra Raj: This is a destiny. It is because of God's force. I had to be a martyr. God made.

Madhav Raj: (*Wiping out the extended smoke*)You baby is my son, here is no relation of father and son. However, I didn't abandon to say you as my son. I haven't got salvation.

Sukra Raj: Yes, I'm son. In the memory of history, I'm son.

Madhav Raj: At that time, your dead body was hanging on the air. The sentence that I told you resounds within me – "Baby, you're not dead, you're living". Did your dead-body listen it?

Sukra Raj: I'd listened. I'd listened with earless ear. I'd understood with wordless word.

Madhav Raj: Baby!

Sukra Raj: Yes, please.

Madhav Raj: (*Pointing to Chandra Shamsher, Bhim Shamsher, Juddha Shamsher*) Baby, did you forgive them?

Sukra Raj: (*Laughing*) I don't have that arrogance to forgive. One thing is that I've not remembered that they are criminals. I had to come in this world, I came. The people of the earth have remembered the criminals. They have been written in writer's memory. They were helpless creatures. They were helpless creatures to hold Ranajee's selfishness. Those were the only poor creatures. (*Chandra, Bhim, Juddha Shamsher look at each other*)

Shambhu Prasad: (*Approaching*) Yes, that is.

Sukra Raj: What's about you?

Shambhu Prasad: Yes, I was poet there. Even after flattering these people, I could not live in my place, I migrated, now I'm here in this otherworld. (*Laughs*) But history always remembers them as criminals.

(*Wiping out the smoke, Dharma Bhakta, Dasarath Chanda and Ganga Lal appear one after another*)

Dharma Bhakta: (*Looking towards Juddha Shamsher*) How fat Dharma Bhakta's neck is. How difficult it was for him to die. The rope was almost broken itself. (*He was in the same pose of attempt*)

Sukra Raj: Do you also attempt here?

Dharma Bhakta: (*Surprising*) Where did this body come from? I'd become a bodiless.

Shambhu Prasad: From the memory of writer.

Dharma Bhakta: If so, it is limited in writer's memory of my attempt to end Rana regime (*looking towards Juddha Shamsher*), isn't it?

Juddha Shamsher : Oh! He would talk proudly.

Dharma Bhakta: Still the energy of earth wouldn't be ended.

Shambhu Prasad: That doesn't end easily. How long epoch it takes. "Epoch" is also the word of the earth. There should be wordless here.

Sukra Raj: Yes, silence. We should vanish in silence.

Shambhu Prasad: But writer? Here's the problem.

(*Except Chandra, Bhim, Juddha Shamsher, all laugh. Going near to Juddha Shamsher, Dasarath Chanda laughs mockingly*)

Juddha Shamsher: This is that laugh. (*Goes

another side, returns quickly, looks at Dasarath's laugh being spellbound) Yes, that laugh. The laugh at the time of announcing death penalty.

Dasarath Chanda: That laugh has been sticking on my face. It has not been omitted even in this otherworld. I myself see that laugh. (*Going near to Juddha Shamsher*) How pleasure it is to accept death or how warm it is when death embraces! The death has embraced my forefathers untimely like this. Death is our ancestor.

Dharma Bhakta: How sweet talk it is!Liking to be listening.

Ganga Lal:(*Going near to Dasarath Chanda*) But.

Dharma Bhakta: But what? Didn't you feel pleasure when you had accepted death? We were near to each other on the poles tied and gunshot, and came in this otherworld.Didn't you feel pleasure?

Ganga Lal:Yes, I felt pleasure. However, I felt lost due to the incomplete task.

Dasarath Chanda: Who are we to complete? There's future to complete it. We're just beginners. The future will complete every age. Your song "The whole age changed" means the world always changes according to the change of time. The future always changes that. Thing always ends and the ended thing approaches.

Dharma Bhakta: It means that the memory of virgin youth is still inside him.

Sukra Raj: That youth is evergreen and immortal. The eternal is youth though it disappears finally.

Dasarath Chanda: (*Looking towards Juddha Shamsher*) Is it like that?

Juddha Shamsher: I do not know. I only know that he was going to die by my hand. (*Peace*) That was death penalty.(*Sighing*) Death penalty cannot discriminate young and old. (*Looking at Chandra Shamsher*) Maharaja elder brother, why are you so silent?

Chandra Shamsher: Look at me, I'm laughing. I've arrived in this world with that laugh. How much justice and injustice of this famous laugh of Chandra Shamsher did.

Juddha Shamsher: Please tell us how much reform this laugh did.

Bhim Shamsher: That is to request. This Bhim had also tried to reform a lot. He died without getting satisfaction of life and had to come in this world. I had also tried to do a lot for the happiness of the people.

Juddha Shamsher: (*Looking towards Chandra Shamsher*) Eradication of slavery system, eradication of cast system, Tri-Chandra electricity office, ropeway, N. G. R. Train, establishment of Tri-Chandra College.

Chandra Shamsher: (*Taking a long breath*) What happened after doing all these things? Our selfishness always comes ahead though we work hard. All these reforms go into the ditch of injustice done for the sake of our selfishness.

Bhim Shamsher: I request you the same. I also made Bhim Tap – that also went into the ditch of Library Barva. (*Ganga Lal laughs loudly. All look towards Ganga Lal. Entry of Padma Shamsher. He is wiping his uncontrolled tear out*)

Padma Shamsher: What can I do without weeping? Yes, people say me Weeping Maharaja, Weeping Padma Shamsher. Didn't I try to give democracy to people? Didn't I encourage women education? But.

Ganga Lal: (*Laughing*) Didn't I distribute kindness? Didn't I lure people by showing lollipop in the name of reformation?

Padma Shamsher: But Mohan destroyed all these. He came over there.

Mohan Shamsher: (*Entered*) Who called me? I came. (*Arriving at Chandra Shamsher*) Would you have called me? Why didn't you give me your grace?I'm your son, Mohan Shamsher.

Chandra Shamsher: Now there's no relationship between you and me. I've only begotten you. Now there's no relationship. I was the Maharaja there you were also Maharaja there. Don't call me father.

Mohan Shamsher: But I'm your son in genealogy.

Chandra Shamsher:But you're the last Maharaja who ruined Rana regime. You're the history's black spot.

Mohan Shamsher: I went to the track that you'd made, I tried to rule in accordance with the same rules and regulations.

Chandra Shamsher: You couldn't have to be coward.

Mohan Shamsher: That was not my guilt. I was unlucky the time had been opposite. Hindustan became independent, East India Company went back. Their support left me.The wave of democracy everywhere trapped us.

Padma Shamsher:(*With weeping sound*)I had seen. I didn't come out from the trap in spite of the request of God. Not these all brothers accepted my idea. They kicked me out from the country by mocking me as weeping Maharaja.

Mohan Shamsher: (*Went near to Chandra Shamsher with hands joining*) But father.

Chandra Shamsher:Say son.

Mohan Shamsher:In spite of being confused and not getting salvation here in this world, we'll not be living in the history of Nepal.

Chandra Shamsher: (*Looking at all, looking at all from top to bottom with suffocative sound*) Certainly we'll be living, now our heart-beating has remained in Panchayati democracy. Who can say we are not living in that?

Bhim Shamsher: Yes, who can say?

Juddha Shamsher: It seems me too.

PadmaShamsher: I had given the same type of contribution. (*Except Chandra, Bhim, Juddha, Mohan Shamsher, all others laugh with a one voice. Wiping the smoke out, entry of Gopal Prasad Rimal lamely who is thin and has defective elbow*)

Gopal Prasad: (*Singing*) "In an epoch a day comes once. That brings upside down, upheaval and change."

Chandra Shamsher: Who is he?

MohanShamsher:Gopal Prasad Rimal – that mad one.

Chandra Shamsher: What tuneless melody is sung.

Gopal Prasad: (*Going near to Chandra Shamsher*) Upheaval for you – every upheaval is tuneless.

Ganga Lal: But it is revolution for us.

Gopal Prasad: (*Singing again*), "In an epoch a day."

English translation of Govinda Bahadur Malla Gothale's *"Singh Durbarko Ek Rat"*, done by Prof. Rudra Prasad Paudel

One-Act Play

An Evening in the M iddle of a M onth

Roshan Thapa Neerav

Place : Middle of a newly constructed bridge
Time : Evening, after sunset
Season : Environment slightly cold
Characters : I and She

(After a brief pause)

I : When will you go now?

She : After a week.

I : Hope your trip of Nepal this time was wonderful.

She : (paying me a quick look) How much intimacy does your question have?

I : Didn't you realize that?

She : It has been long since I have turned devoid of comprehension. But you are unaware of that.

I : Twenty-two divine years, isn't it?

She : You take most of the thing easy and use irony in them. You haven't changed this habit yet.

I : And I haven't changed, either.

She : (in a flirty manner) And what about me?

I : (stealing a glance at her) But you look changed altogether.

She : (in a shrill voice) What do you mean?

I : (as if stammering) I mean you have gained weight compared to it before.

She : (smiles and takes my hand to touch her forehead) I am extremely fond of this habit of yours.

I : Only my habits?

She : Yes. Why?

I : What about me?

She : You also are my favorite.

I : 'Also'? Do you mean you also have other favorites?

She : You know that.

I : But why so?

She : I am as you are, you know.

I : (apparently not understanding anything) Means?

She : I mean, I am fully a family woman, as you are a family man.

I : (staring at the sky once, and then looking as her face) Oh, you're right. How soon twenty-two years has elapsed since we broke up.

She : Why do you pick up the break-up issue so often?

I : (averting the issue) By the way, what do your husband and two daughters do in Australia?

She : Whatever your wife and two sons are doing in Nepal.

I : Oh, you're right. We do have our own families. I had almost forgotten.

She : (paying me a squinted look once) I knew you write poems and stories. But it took me years to know you also act like this.

I : What else do you know?

She : What is left to know now?

I : You can ask you own heart, madam.

She : Mister, you are still there in my heart.

I : Where? Can I see?

She : (shyly) Shut up, naughty man!

I : Why? No matter how long you have been in the West, you are my ex lover.

She : But mister, I never made you an ex.

I : If so, did you make me '–post'?

She : An illogical argument again! What do you mean by –post'?

I : I mean you made me post-modern.

(She smiles and looks the darkening sky above. After doing so for a while, she turns to me and speaks.)

She : Look at a pair of stars over there.

I : (looking at where she pointed in the sky, gluing my cheek to hers) Where?

She : (keeping herself way in a startled fashion) Naughty!

I : Why?

She : Should you always take advantage of the chance?

I : (feigning ignorance) What sort of advantage? I didn't quite get you.

She : (pointing at her cheek) Didn't she this?

I : Should I call it a red rose or an apple? You decide it yourself.

She : You never learnt to be serious in our love, did you?

I : I never learnt that in my whole life. What can I do, my love? This weakness in me has lingered till this day.

(A fleck of light coming from the distant horizon falls on earth and gets lost somewhere.)

She : Look there. Did you see a star falling?

I : That perhaps happens every day.

She : We saw it together after so many years.

I : After twenty-two years, isn't it?

She : Yes, twenty-two divine years.

I : What difference does seeing it make, after all?

She : Why? Should it lead to anything?

I : Same is the sky. Similar are the stars. Only we have...

She : (apparently annoyed) Only we have changed. This is what you wanted to say, didn't you?

I : (smiling) No. I wanted to know what difference seeing those stars would make for now.

She : If we close our eyes and make a wish, God will fulfill it, they say.

I : But my heart has no wish of any kind.

She : Is that possible?

I : Why not?

She : You are marching along a path of listlessness.

I : When I was trying to be jolly a while ago, you scolded me.

She : (with squinted looks) What do you mean?

I : I mean, when I was trying to stroke your cheeks...

She : Even in the middle of your life, you are still so romantic.

I : Being romantic is counted among masculine achievements, isn't it?

She : I like it.

I : And me?

She : I like you too: my first and last love.

I : If so, don't go abroad, leaving me here.

She : But the familial reality between us...?

I : Leave it in the hands of time.

She : (sniveling) But time has moved fairly away from our hands.

(Ding-dong rings a bell, far away. In between, there is a spell of silence. We can experience a sort of chill in the atmosphere. She shivers and tries to press herself close to me.)

I : You're feeling cold?

She : (shivering even more) To some extent.

I : Come; let's go.

She : Wait; let's stay for some more time.

I : It's very cold. You may find it difficult.

She : No, I won't.

I : Have you carried the pills with you?

(She checks her pockets, but doesn't find any.)

She : Shit, I forgot. I left them back at the lodge.

I : For how long have you been running sick?

She : For the past six-seven months.

I : When did you realize this?

She : When I fell off during my daughters' graduation in Australia.

I : What did your husband do on knowing this?

She : He started loving me even more.

I : Do you daughters know about it?

She : Yes, they know everything.

I : (reprimanding fondly) In such a condition, was it proper for you to come here alone?

She : I asked my family to fulfill the last of my wishes.

I : What's that?

She : To meet you.

I : (startled) What? But then...

She : I have told that everything about you, me and our relation.

(I am left gawking. I sense standing before me is not my ex-lover but a character from a fairy

tale.)

I : Why did you do that?

She : Don't be panicked. My family is free, frank and advanced. They have heard our love story—yours and mine—with interest and sympathy.

I : In fact, the world is mysterious.

She : The world is as it is. Love, however, is truly mysterious.

I : Why?

She : Love, as I can see it, is away from every definition of the heart and the body. Even in such a fast world of today, its value has not subsided, no matter how the number of lovers has fallen.

(I check my ringing phone. It was a call from home.)

I : What next?

She : Call from your home, wasn't it?

I : Yes.

She : We used to come and meet here some twenty-two years ago, much earlier than the coming up of this bridge. I like this spot equally even today. Who knows we may never come back here, once I fly away tomorrow.

I : Why shouldn't we?

She : Once I had left you here, and we got separated for a long time. You leave me behind today. That equals our deal, doesn't it?

I : *'Yo hisab bhulera timilai behisab mann paraye; je hos maile timilai chupachap mann paryae.'* [But I loved you beyond measures, forgetting all those deals. In all circumstances, I loved you.] (I suddenly hum this song.) So never mention such deals again.

She : How sweet!

I : Come on; let's go. We are quite late.

She : You go. I come after a while.

I : And tomorrow...?

She : I have my return flight early tomorrow.

I : If so, shall I bye-bye today itself?

(She comes closer to me, stokes both my cheeks with her hands and pulls me gently down. Then she plants a long kiss on my forehead.)

She : Bye, my love!

I : Once back, when will you be here again?

She : God knows. Let's see how much my life supports. Maybe I won't be here again.

I : (in a startled voice) Why?

She : A lover much more powerful than you are is running in each of my nerves.

I : What? What do you mean?

She : The one...whom people call 'cancer'.

I : Oh God!

She : Do not apologize on anything for me, please.

I : Which stage are you at?

She : I shall see my doctor upon reaching there. Maybe it's in its first stage, or even in the second. After reaching Nepal, I had puked some blood in vomiting.

I : (sitting helplessly on the sidewall) What shall I say to it, God?

She : Do not blame God. Perhaps this was the destined finale of our story.

I : Now, I cannot see you off, either.

She : Why?

I : (in a pathetic voice) A farewell is given to one who is likely to come back. But you...

She : (smiling) Do not worry, my love. I shall also make a comeback.

I : (excitedly) When?

She : In another birth, if not in this.

I : In another birth?

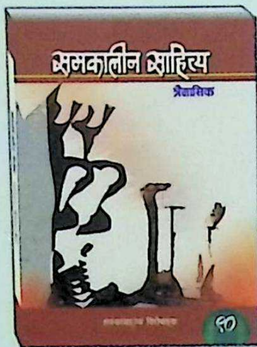
She : Yes, in another birth. After that, there will be no hurdle, impediment, compulsion, helplessness, sacrifice or penance, familial gravity and things like that, which shall force us to part again.

(We suddenly embrace each other. Some faint sound of weeping comes. The beatings of our heart escalated together with the dingdong of the bell, far away.)

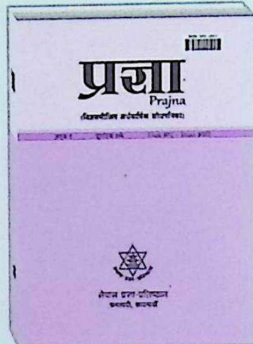
Curtain

*(Translation of Thapa's play **2075 Madhyadinko Ek Saanjh**) Translator: Mahesh Paudyal*

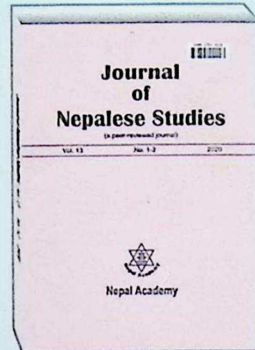
नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठानबाट प्रकाशन हुने विभिन्न पत्रिकाहरू



गद्यप्रधान त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका



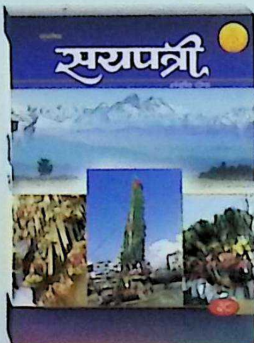
विज्ञसमीक्षित अर्धवार्षिक शोधपत्रिका



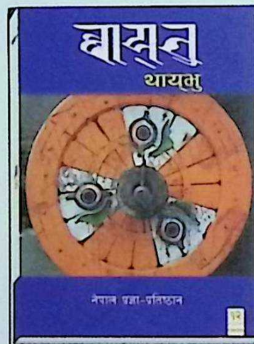
अनुसन्धानमूलक अर्धवार्षिक अङ्ग्रेजी जर्नल



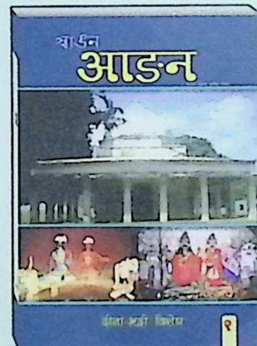
समाचारप्रधान त्रैमासिक पत्रिका



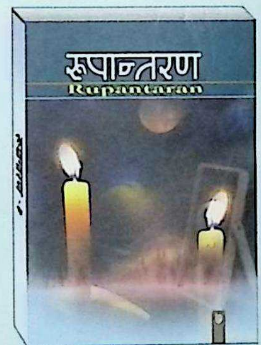
बहुभाषिक अर्धवार्षिक पत्रिका



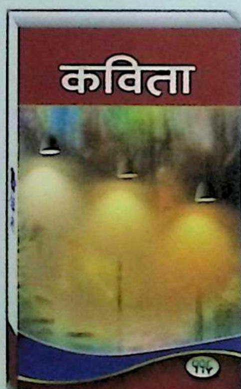
नेपालभाषाको अर्धवार्षिक पत्रिका



मैथिली भाषाको वार्षिक पत्रिका



हिन्दी, नेपाली, अङ्ग्रेजी अनुवादप्रधान वार्षिक पत्रिका



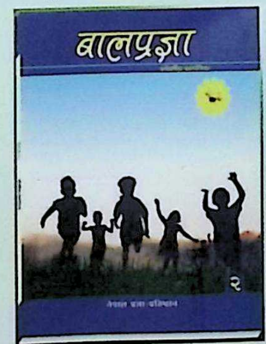
कविताप्रधान चौमासिक पत्रिका



लिम्बू भाषाको वार्षिक पत्रिका



भोजपुरी भाषाको वार्षिक पत्रिका



अर्धवार्षिक बालपत्रिका



नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान
कमलादी, काठमाडौं । फोन : ०१-४२२१२४२, ४२२१२८३
Website : www.nepalacademy.org.np